ISSN 0975-4083

रिसर्च जरनल ऑफ आर्ट्स, मैनेजमेन्ट एण्ड सोशल साइन्सेस

Peer-Reviewed Research Journal
UGC Journal No. (Old) 2138 Impact Factor 6.375 (IIFS)
Indexed & Listed at: Ulrich's Periodicals Directory
ProQuest, U.S.A. Title Id : 715204

अंक-28 | हिन्दी संस्करण | वर्ष-14 | मार्च 2025

2025
www.researchjournal.in

आई. एस. एस. एन. 0975-4083

रिसर्च जरनल ऑफ आर्ट्स, मैनेजमेन्ट एण्ड सोशल साइन्सेस

Peer-Reviewed Research Journal
UGC Journal No. (Old) 2138
Impact Factor 6.375
Indexed & Listed at: Ulrich's Periodicals Directory ©, ProQuest, U.S.A. Title Id : 715204

अंक-28	हिन्दी संस्करण	वर्ष-14	मार्च 2025

डॉ. अखिलेश शुक्ल
प्रधान सम्पादक (ऑनरेरी)
प्राध्यापक, समाजशास्त्र एवं समाज कार्य विभाग
उच्च शिक्षा उत्कृष्टता संस्थान, नैक 'ए' ग्रेड
शासकीय ठाकुर रणमत सिंह महाविद्यालय, रीवा (म.प्र.)
प्रतिष्ठित भारतेन्दु हरिश्चन्द्र एवार्ड तथा पं. गोविन्द वल्लभ पंत एवार्ड से सम्मानित
akhileshtrscollege@gmail.com

डॉ. संध्या शुक्ल
प्राध्यापक एवं विभागाध्यक्ष, राजनीति विज्ञान विभाग
उच्च शिक्षा उत्कृष्टता संस्थान, नैक 'ए' ग्रेड
शासकीय ठाकुर रणमत सिंह महाविद्यालय, रीवा (म.प्र.)
drsandhyatrs@gmail.com

डॉ. गायत्री शुक्ल
अतिरिक्त निदेशक, सेन्टर फॉर रिसर्च स्टडीज, रीवा
shuklagayatri@gmail.com

डॉ. आर. एन. शर्मा
सेवानिवृत्त आचार्य, उच्च शिक्षा, रीवा
rnsharmanehru@gmail.com

सेन्टर फॉर रिसर्च स्टडीज, रीवा
की मुख्य शोध पत्रिका

Experts & Members of Advisory Board

- Prof. Hemanta Saikia, Assistant Professor, Department of Rural Development,Debraj Roy College, Circuit House Road, Golaghat, Assam, India.Pin-785621
  jio84hemant@gmail.com
- Dr. K. S. Tiwari, Professor, Regional Director, Regional Centre Bhopal, IGNOU, Bhopal
  kripashankar19954@gmail.com
- Dr. Puran Mal Yadav, Department of Sociology, Mohan Lal Sukhadia University
  UDAIPUR – 313001 (Rajasthan)
  pnyadav1964@gmail.com
- Dr. Ram Shankar. Professor of Political Science, RDWVV Jabalpur University, (M.P.)
  rs_dubey@yahoo.com
- Prof. Anjali Bahuguna, Department of Economics, School of Humanities and Social Sciences (SHSS),, HNB Garhwal University, (A Central University), Srinagar-246174 (Garhwal)
  anjali shss@gmail.com
- Dr. Sanjay Shankar Mishra, Professor of Commerce, Govt. TRS PG College, Rewa (M.P.)
  ssm6262@yahoo.com
- Dr. Pramila Shrivastava, Associate Professor, Department of Economics, Govt. Arts College Kota (Raj),
  dr21pramila@gmail.com
- Dr Alka Saxena, D. B. S. College, Kanpur (U.P.)
  alknasexna65@yahoo.com
- Dr. Deepak Pachpore, Journalist
  deepakpachpore@gmail.com
- Dr. C. M. Shukla, Professor of History Government Maharaja College, Chhatarpur District Chhatarpur(M.P.),
  rajan.19shukla@gmail.com
- डॉ. देवेन्द्र मुझाल्दा
  आचार्य, भूगोल विभाग, माधव विश्वविद्यालय, पिण्डवाड़ा, सिरोही (राजस्थान)
- devendranuzalda@gmail.com
  डॉ. रामेश्वर मिश्रा
  सह प्राध्यापक, शोध एवं विकास समन्वयक, संजीव अग्रवाल ग्लोबल एजुकेशनल विश्वविद्यालय भोपाल (म.प्र.)
  rameshwar.s@sageuniversity.edu.in

Guide Lines

- **General:** English and Hindi Editions of Research Journal are published separately. Hence Research Papers can be sent in Hindi or English.
- **Manuscript of research paper:** It must be original and typed in double space on the one side of paper (A-4) and have a sufficient margin. Script should be checked before submission as there is no provision of sending proof. It must include Abstract,Keywords, Introduction, Methods, Analysis, Results and References. Hindi manuscripts must be in Devlys 010 or Kruti Dev 010 font, font size 14 and in double spacing. All the manuscripts should be in two copies and in Email also. Manuscripts should be in Microsoft word program. Authors are solely responsible for the factual accuracy of their contribution.
- **References :** References must be listed cited inside the paper and alphabetically in the order- Surname, Name, Year in bracket, Title, Name of book, Publisher, Place and Page number in the end of research paper as under- Shukla Akhilesh (2018) Criminology, Gayatri Publications, Rewa : Page 12.
- **Review System:** Every research paper will be reviewed by two members of peer review committee. The criteria used for acceptance of research papers are contemporary relevance, contribution to knowledge, clear and logical analysis, fairly good English or Hindi and sound methodology of research papers. The Editor reserves the right to reject any manuscript as unsuitable in topic, style or form without requesting external review.

लेखकों से निवेदन-

- रिसर्च जरनल ऑफ आर्टस एण्ड मैनेजमेन्ट एण्ड सोशल साइंसेज (ISSN-0975-4083) सेन्टर फॉर रिसर्च स्टडीज की मुख्य शोध पत्रिका है।
  शोध पत्रिका उलरिच इन्टरनेशनल पीरियाडिकल्स डाइरेक्ट्री प्रोक्वेस्ट, संयुक्त राज्य अमेरिका से इंडेक्स्ड और लिस्टेड हैं।
- शोध पत्रिका का अंग्रेजी एवं हिन्दी संस्करण अलग-अलग प्रकाशित होता है।
- रिसर्च जरनल ऑफ आर्ट्स, मैनेजमेन्ट एण्ड सोशल साइंसेस का प्रकाशन प्रतिवर्ष मार्च तथा सितंबर में किया जाता है।
- रिसर्च जरनल ऑफ आर्ट्स, मैनेजमेन्ट एण्ड सोशल साइंसेस को इम्पैक्ट फैक्टर एवं आई.एस. एस.एन प्राप्त हैं। शोध पत्रिका Peer-Reviewed हैं।
- शोध पत्रिका के नवीनतम अंक में प्रकाशित शोध पत्रों को हमारी वेबसाइट www.researchjournal.in (Current Issue) में देखा जा सकता है तथा डाउनलोड किया जा सकता है।
- शोध पत्रिका का प्रिंट एडीशन सदस्यों को अलग से डाक द्वारा भेजा जाता है।
- शोध पत्र में शीर्षक, नाम, पद, पदस्थापना का विवरण, पत्र व्यवहार का पता तथा दूरभाष क्रमांक, मोबाइल नं., ई-मेल एड्रेस अवश्य दिया जाये।
- शोध पत्र के प्रारम्भ में कम से कम 50-100 शब्दों का सारांश दिया जाये।
- मुख्य शब्द सारांश के नीचे टाइप कराया जाये।

- शोध पत्र में शोध पद्धति तथा शोध में प्राप्त तथ्यों का विश्लेषण किया जाना चाहिए।
- शोध पत्र में निष्कर्ष और अंत में संदर्भ ग्रंथ सूची दी जाये। संदर्भ ग्रंथों का विवरण पूरा दिया जाये। लेखक का नाम, वर्ष, पुस्तक का नाम, प्रकाशक का विवरण, प्रकाशक का स्थान और पृष्ठ संख्या आदि का विवरण दिया जाना चाहिए।
- शोध पत्र माईक्रोसॉफ्ट वर्ड की फाइल में टाइप किया हुआ होना चाहिए। (नोट- पेज मेकर की फाइल, पी.डी.एफ. फाइल, स्कैन मैटर आदि में कदापि शोध पत्र न भेजें) शोध पत्र हिन्दी लिपि में कृतिदेव या देवलिस फांट 010(फॉन्ट साइज 14, स्पेस डबल, मार्जिन ए-4 साईज के कागज में चारो तरफ 1 इंच) में भेजा जाना चाहिए।
- शोध पत्र के साथ यह घोषणा अवश्य संलग्न करें कि शोध पत्र मौलिक है तथा इसे कहीं अन्यत्र प्रकाशनार्थ प्रेषित नहीं किया गया है।

सर्वप्रथम शोध पत्र ई-मेल द्वारा भेजें-

- **researchjournal97@gmail.com,**
- **researchjournal.journal@gmail.com**
- शोध पत्र की स्वीकृति की सूचना सम्पादकीय कार्यालय द्वारा लेखक को ई-मेल एवं दूरभाष द्वारा प्रदान की जाती है।

© सेन्टर फॉर रिसर्च स्टडीज

एक अंक रुपये 500.00	-सदस्यता शुल्क -	
अवधि	व्यक्तिगत सदस्यता	संस्थागत सदस्यता
वर्ष एक	2000-00	2500-00
वर्ष दो	2500-00	4000-00

सदस्यता शुल्क की राशि गायत्री पब्लिकेशन्स के स्टेट बैंक ऑफ इण्डिया, ब्रांच-रीवा सिटी (आईएफएस कोड 0004667 MICR Code 486002003) के खाता क्रमांक 30016445112 में जमा की जाय।

प्रकाशक: गायत्री पब्लिकेशन्स
रीवा- 486001 (म.प्र.)

मुद्रक: ग्लोरी ऑफसेट
नागपुर

संपादकीय कार्यालय

186/1, विन्ध्य विहार कालोनी
रीवा- 486001 (म.प्र.)
E-mail- researchjournal97@gmail.com, researchjournal.journal@gmail.com
www.researchjournal.in
दूरभाष - 7974781746

रिसर्च जरनल में प्रस्तुत किये गये विचार और तथ्य लेखकों के है, जिनके विषय में सेन्टर फॉर रिसर्च स्टडीज, सम्पादक मण्डल, प्रकाशक तथा मुद्रक उत्तरदायी नहीं है। रिसर्च जरनल के सम्पादन एवं प्रकाशन में पूर्ण सावधानी रखी गई है, किन्तु किसी त्रुटि के लिए सेन्टर फॉर रिसर्च स्टडीज, सम्पादक मण्डल, प्रकाशक तथा मुद्रक उत्तरदायी नहीं है। सम्पादन का कार्य अव्यावसायिक और ऑनरेरी है। सभी विवादों का न्यायालय क्षेत्र, रीवा जिला रीवा (म.प्र.) रहेगा।

सम्पादकीय

आज का युग परिवर्तन और विकास का युग है। समाज के हर क्षेत्र में निरंतर नए-नए शोध, प्रयोग एवं नवाचार हो रहे हैं। विज्ञान, प्रौद्योगिकी, सूचना, संचार, शिक्षा, स्वास्थ्य, कृषि, उद्योग तथा सामाजिक संरचना सभी क्षेत्रों में हो रहे व्यापक परिवर्तन इस युग की विशेषता बन गए हैं। इस परिवर्तनशील युग में शोध और नवाचार की भूमिका अत्यंत महत्वपूर्ण हो गई है। शोध किसी भी समाज की समस्याओं को समझने, उनका विश्लेषण करने और समाधान प्रस्तुत करने का एक प्रभावी माध्यम है। नये विचार, नये दृष्टिकोण एवं व्यवहारिक प्रयोग किसी भी राष्ट्र की प्रगति का आधार होते हैं। आज समाज की विविध समस्याओं जैसे ग्रामीण विकास, महिला सशक्तिकरण, शिक्षा, स्वास्थ्य, रोजगार, पर्यावरण संरक्षण, सामाजिक विषमताएँ आदि पर गंभीरता से शोध किए जा रहे हैं। इन शोधों से प्राप्त निष्कर्ष और सुझाव सामाजिक सरोकारों को नई दिशा देने में सहायक सिद्ध हो रहे हैं। विशेषकर ग्रामीण परिवेश में महिलाओं की भूमिका, उनकी स्थिति एवं उनके सशक्तिकरण को लेकर हो रहे शोध वर्तमान समय की बड़ी आवश्यकता बन चुके हैं। क्योंकि ग्रामीण भारत की तस्वीर बदले बिना सम्पूर्ण भारत का विकास अधूरा है। इस प्रकार यह स्पष्ट है कि शोध और नवाचार वर्तमान युग की अनिवार्यता है। विचारों का विस्तार, समस्याओं की पहचान और उनके समाधान की खोज यही सच्चे अर्थों में प्रगति और विकास का मार्ग प्रशस्त करते हैं। शोध से प्राप्त निष्कर्ष और सुझाव किसी भी देश या समाज की प्रगति में महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं।

प्रस्तुत अंक में विविध विषयों पर आधारित शोध-आलेख सम्मिलित किए गए हैं, जिनमें सामाजिक, आर्थिक, शैक्षिक, ग्रामीण विकास, महिला सशक्तिकरण, पर्यावरण, स्वास्थ्य तथा सांस्कृतिक पहलुओं से जुड़े कई गंभीर विचार प्रस्तुत किए गए हैं। इन आलेखों के माध्यम से समाज की जमीनी सच्चाइयों, समस्याओं एवं संभावनाओं को उकेरने का प्रयास किया गया है। विशेष रूप से ग्रामीण समाज में महिलाओं की स्थिति, उनकी जीवनशैली, संघर्ष एवं स्व-सहायता समूहों की भूमिका पर केंद्रित शोध लेखों से यह स्पष्ट होता है कि महिला सशक्तिकरण केवल नारा नहीं, बल्कि सामाजिक परिवर्तन की सच्चाई बन सकता है। शोधार्थियों ने अपने अध्ययनों में ग्रामीण अंचलों की वास्तविक परिस्थितियों को प्रस्तुत कर एक सार्थक विमर्श की शुरुआत की है।

यह अंक शोधकर्ताओं, विद्यार्थियों, प्राध्यापको तथा समाज के जागरूक नागरिकों के लिए उपयोगी सामग्री उपलब्ध कराती है। हमें विश्वास है कि प्रस्तुत शोध

पत्रिका पाठकों के चिंतन, मनन एवं अध्ययन की दृष्टि से उपयोगी सिद्ध होगी तथा शोध की दिशा में नई प्रेरणा प्रदान करेगी।

अंत में, मैं सभी लेखकों, शोधार्थियों एवं सहयोगियों को हार्दिक धन्यवाद देता हूँ, जिनके सक्रिय सहयोग से नियत समय पर इस अंक का प्रकाशन संभव हो पाया है।

डॉ. अखिलेश शुक्ल
प्रधान सम्पादक

अनुक्रमणिका

01.	ग्रामीण महिलाओं की जीवन शैली और संघर्ष: ग्राम कोठी, जिला रीवा का अध्ययन **अखिलेश शुक्ल**	09
02.	सूचना संचार में सोशल नेटवर्किंग साइटों का उपयोग: देवी अहिल्या विश्वविद्यालय के विद्यार्थियों के संदर्भ में एक सर्वेक्षण आधारित अध्ययन **फुलसिंह अनारे, संजीव कुमार शर्मा**	19
03.	महिला स्व सहायता समूह चुनौतियां एवं संभावनाएं (रीवा जिले के विशेष संदर्भ में) **रेखा पाण्डेय, महेश शुक्ला**	24
04.	पिछड़ा वर्ग की मुस्लिम महिलाओं में सामाजिक परिवर्तन के आयामों का समाजशास्त्रीय अध्ययन: छतरपुर जिले के विशेष संदर्भ में **आजाद अली, सुयश सागर बाजपेयी**	28
05.	सामाजिक परिवर्तन में मीडिया का योगदान **रुचि सिंह**	37
06.	19वीं सदी में महिलाओं की आर्थिक भागीदारी: एक ऐतिहासिक विश्लेषण **पल्लवी निशा**	43
07.	बिहार की महिलाओं के आर्थिक सशक्तिकरण में 'मील का पत्थर' साबित होती 'मुख्यमंत्री महिला उद्यमी योजना' **अर्चना सिन्हा**	51
08.	ग्रामीण क्षेत्रों में विकास की योजनाओं का अध्ययन (बड़वानी जिले के विशेष संदर्भ में) **रमेश मुझाल्दा, सुधा पाण्डेय**	59
09.	कृषि ऋण वितरण और आर्थिक सशक्तिकरण बैंकों की प्रभावशीलता का मूल्यांकन **केशर सिंह डोडवे, सुधा पाण्डेय**	67
10.	जनसंख्या वृद्धि का आर्थिक विकास प्रभाव एक विश्लेषणात्मक अध्ययन (विकासशील अर्थव्यवस्था के संदर्भ में) **आर. बी. एस चौहान, सरला पाण्डेय**	74
11.	राजस्थान के अनुसूचित क्षेत्र में बहुआयामी गरीबी की स्थिति का तुलनात्मक विश्लेषण **हितेष कुमार सुथार, नेहा पालीवाल**	79
12.	भारत- नेपाल संबंध (1990 से आज तक) एक विश्लेषणात्मक अध्ययन **प्रतिभा पाठक, अमरजीत कुमार सिंह**	90
13.	महात्मा गाँधी की राजनीतिक दृष्टि **संतोष यादव, रश्मि सोमवंशी**	98
14.	धर्मनिरपेक्षता का प्राचीन भारत में ऐतिहासिक अध्ययन **अमोल कुमार**	102
15.	प्राचीन भारतीय महानगरी चम्पा एवं दक्षिण पूर्व एशिया (सुवर्णभूमि) स्थित चम्पा : एक ऐतिहासिक विश्लेषण **पवन शेखर**	110
16.	पलामू डाक जब्ती अभियान (1929-30) : भारत के स्वतंत्रता आंदोलन की क्रांतिकारी कथा **शत्रुघ्न कुमार पाण्डेय**	118
17.	भारतीय धर्म का विकास **माया सिंह**	126

18.	आधुनिक कृषि भूमि से उत्पादकता एवं ऋणग्रस्तता में बदलाव (धार जिले के बाग विकासखण्ड के विशेष संदर्भ में) **मडिया डावर, देवेन्द्र मुझाल्दा**	138
19.	धार जिले में कृषि विपणन व्यवस्था का अध्ययन **विक्रम मुझाल्दा, मुकेश कुमार महावर**	144
20.	कोसी बेसिन में सामाजिक-आर्थिक परिदृश्य में हुए बदलाव: एक प्रादेशिक अध्ययन **मित्तु कुमारी**	152
21.	जोधपुर जिले में उत्पादित होने वाले विभिन्न फसलों में उत्पन्न होने वाली समस्याएँ **भींजाराम, देवेन्द्र मुझाल्दा**	162
22.	कोइलवर स्थित बालू उत्खनन में आप्रवासित मजदूरों की सामाजिक-आर्थिक दशा : एक भौगोलिक अध्ययन **शाहिद अख्तर, मो. नजीर अख्तर**	172
23.	हिन्दी साहित्य का दलित लेखन:कुछ अहम् सवाल,कुछ बुनियादी समस्याएँ **वीरेन्द्र सिंह यादव**	188
24.	प्रो. भगवती प्रकाश काम्बोज का आरम्भिक जीवन एवं प्रकृति प्रेम **कुलदीप कुमार, निशा गुप्ता**	193
25.	हरीप्रकाश राठी: कथा साहित्य और कथा कौशल का विवेचन **ममता तिवाड़ी, रेणुका**	198
26.	उर्मिला शिरीष की कहानियों में नारी चित्रण यथार्थवाद, संघर्ष और सशक्तिकरण **नरपत मोरी, रेणुका**	203
27.	छापाकला में महिला कलाकारों का योगदान **अर्चना**	207
28.	भारतीय संगीत में राग की ऐतिहासिकता **रेनूवाला, निष्ठा शर्मा**	210
29.	तत् वाद्यों का परिवर्तित स्वरूप : एक अध्ययन **राधा यादव, निष्ठा शर्मा**	216
30.	गंगा-गंडक दोआब में जीवन की गुणवत्ता: एक सूक्ष्म स्तरीय विश्लेषण **गणेश कुमार शर्मा**	222
31.	राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020- चुनौतियाँ **सीमा श्रीवास्तव**	230
32.	प्राथमिक क्षेत्र में महिलाओं की वर्तमान स्थिति व स्वरोजगार की भावी संभावनाएँ (सीधी जिले के विशेष संदर्भ में) **आर. बी. एस चौहान, राखी सिंह बघेल**	236
33.	बौद्ध साहित्य में वर्णित चिकित्सा **ज्योति सिंह**	241
34.	भारत में क्षेत्रीय ग्रामीण बैंकों के लाभदायकता का विश्लेषण **सुरेश कुमार जांगिड़, ज्योति कपूर भार्गव**	250
35.	भारत में लोकतांत्रिक प्रक्रिया का ऐतिहासिक विश्लेषण **अनिल हनवत्त**	259
36.	मानव जीवन मे शिक्षा व संस्कार का सामंजस्य **मधुबाला शर्मा** **सुकन्या तिवारी**	267
36.	श्रीमद्भगवद्गीता के विशेष संदर्भ में निष्काम कर्म का दार्शनिक विश्लेषण **विवेकानन्द मिश्र**	271

UGC Journal No. (Old) 2138
Peer-Reviewed Research Journal
Impact Factor 6.375, ISSN 0975-4083
Vol.- 28, Hindi Edition, Year-14, March 2025

ग्रामीण महिलाओं की जीवन शैली और संघर्ष: ग्राम कोठी, जिला रीवा का अध्ययन

• अखिलेश शुक्ल

सारांश- भारत का ग्रामीण क्षेत्र आज भी परंपरागत जीवन शैली, सामाजिक बंधनों और आर्थिक सीमाओं से जुड़ा हुआ है। ग्रामीण महिलाएं विशेष रूप से अनेक प्रकार की समस्याओं और संघर्षो से जूझती हैं। रीवा जिले के ग्राम कोठी की महिलाएं भी इस परिस्थिति से अछूती नहीं है। उनका जीवन मेहनत, त्याग, संघर्ष और सीमित संसाधनों से भरा हुआ है। इस शोध पत्र में ग्राम कोठी की महिलाओं की जीवन शैली, समस्याएँ और उनके संघर्ष का विश्लेषण प्रस्तुत किया गया है। प्रस्तुत शोध पत्र में ग्रामीण समाज में महिलाओं की स्थिति का विश्लेषण रीवा जिले के ग्राम कोठी के संदर्भ में किया गया है। 478 परिवारों में से 150 उत्तरदाताओ का चयन उद्देश्य पूर्ण निदर्शन प्रणाली के आधार पर किया गया है।

मुख्य शब्द- परंपरागत जीवन शैली, सामाजिक बंधन, आर्थिक सीमा

ग्राम कोठी की महिलाओं का जीवन संघर्षमय होते हुए भी प्रेरणादायक है। सीमित संसाधनों एवं कठिन परिस्थितियों में भी वे अपने परिवार व समाज के दायित्व निभा रही हैं। आवश्यकता है कि उन्हें शिक्षा, प्रशिक्षण, आर्थिक अवसर और सामाजिक सहयोग प्रदान कर उनके जीवन स्तर को बेहतर बनाया जाए। व्यक्तियों, परिवारों या अन्य श्रेणी के लोगों का समाज के एक वर्ग से दूसरे वर्ग में गति सामाजिक गतिशीलता कहलाती है। इस गति के परिणामस्वरूप उस समाज में उस व्यक्ति या परिवार की दूसरों के सापेक्ष सामाजिक स्थिति (स्टैटस) बदल जाता है। सामाजिक गतिशीलता से अभिप्राय व्यक्ति का एक स्थान से दूसरे स्थान तक पहुँचने से होता है। जब एक स्थान से व्यक्ति दूसरे स्थान को जाता है तो उसे हम साधारणतया आम बोलचाल की भाषा में गतिशील होने की क्रिया मानते हैं। परंतु इस प्रकार की गतिशीलता का कोई महत्व समाजशास्त्रीय अध्ययन में नहीं है। समाजशास्त्रीय अध्ययन में गतिशीलता से तात्पर्य एक सामाजिक व्यवस्था में एक स्थिति से दूसरे स्थिति को पा लेने से है जिसके फलस्वरूप इस स्तरीकृत सामाजिक व्यवस्था में गतिशील व्यक्ति का स्थान उँचा उठता है व नीचे चला जाता है। एक स्थान से उपर उठकर दूसरे स्थान को प्राप्त कर लेना, जो उससे उँचा है, निस्संदेह गतिशीलता है। सरल शब्दों में यह कहा जा सकता है कि समाजशास्त्र में सामाजिक गतिशीलता का अभिप्राय है किसी व्यक्ति, समूह या श्रेणी की प्रतिष्ठा में परिवर्तन से है।[1]

• प्राध्यापक, समाजशास्त्र शासकीय ठाकुर रणमत सिंह महाविद्यालय रीवा (मध्य प्रदेश)

अवधारणात्मक विश्लेषण- पुरुष प्रधान सामाजिक व्यवस्था में ग्रामीण और नगरीय दोनो ही समुदायों में स्त्रियों का जीवन आज भी एक बड़ी सीमा तक पुरुषों पर निर्भर है। दोनो ही समुदायों में स्त्रियों का मनुष्यों का मुख्य कार्य बच्चो का पालन-पोषण करना तथा गृहस्थी से सम्बन्धित दायित्वों को पूरा करना है। खेत पर काम करने वाली ग्रामीण स्त्रियों तथा कार्यालयों में नौकरी करने वाली स्त्रियों की प्रस्थिति में भिन्नता है। लोकतांत्रिक व्यवस्था में ग्रामीण और नगरीय सभी स्त्रियों को मताधिकार मिला हुआ है, लेकिन इस अधिकार का उपयोग पुरुष सदस्यो की इच्छाओं के अनुरुप ही होता है। दहेज, वैयक्तिक स्वतन्त्रता तथा आर्थिक साधनों के उपयोग को लेकर जिस तरह ग्रामीण समुदाय में स्त्रियों को प्रताड़ित करने की घटनाएँ सामने आती है, यह अत्यंत लज्जाजनक स्थिति है। नगरीय समुदाय में भी इस तरह की घटनाओं की कमी नही है। इसका तात्पर्य है कि आज भी ग्रामीण और नगरीय जीवन मे स्त्रियों के विरुद्ध होने वाली घरेलू हिंसा की प्रकृति मे काफी कुछ समानता है। जिस तरह गाँवो में स्त्री शिक्षा मे वृद्धि होने तथा राजनीतिक जीवन में उनकी सहभागिता बढ़ने से स्त्रियों की प्रस्थिति मे कुछ परिवर्तन हुआ है, उसी तरह नगरों में भी स्त्रियों में शिक्षा के प्रसार तथा आर्थिक क्रियाओं मे सहभाग बढ़ने से उनमे एक नयी चेतना स्पष्ट होने लगी है। इससे पारिवारिक जीवन के संगठित होने के साथ ही परिवार में नये प्रकार के तनाव भी पैदा हो रहे है।

अधिकांश समाजो में विशेषकर भारतवर्ष में महिलाओं और पुरुषो में असमानता एक प्रमुख विंसगति है। स्त्रियों के स्तर के बारे में किसी भी पूर्वानुमान के लिए सामाजिक ढाँचे को समझना जरुरी है। सामाजिक संरचना, लोक परम्परा और आदर्श सभी मिलकर पुरुषों और महिलाओं के व्यवहारों से सम्बन्धित सामाजिक अपेक्षाओं को प्रमाणित करते है और समाज में महिलाओं की प्रस्थिति तथा भूमिका को भी सुनिश्चित करते हैं। भारतवर्ष मे महिलाओं की प्रस्थिति संस्कृति , क्षेत्र और आयु जैसे विशेष कारको से निर्धारित होती है। संवैधानिक और कानूनी तौर पर महिलाओं की प्रस्थिति एवं भूमिका तथा सामाजिक परम्पराओं द्वारा थोपी गई प्रस्थितियों और भूमिका मे अंतर का प्रत्यक्ष उदाहरण हमारे देश में महिलाओं की सामाजिक स्थिति है। पितृसत्तात्मक मूल्यो एवं संस्थाओं पर आधारित होने के कारण महिलाओं की अच्छी आज्ञाकारी और त्याग करने वाली बेटी और बहू और पत्नी के रुप मे ही सामाजिक स्वीकार्यता है। उन्हे सामाजिक रीति-रिवाजों व सामाजीकरण के माध्यम से इस प्रकार ढाला जाता है कि वे सामाजिक ढाँचे के अन्तर्गत होने वाली असमानताओ, अधीनता और शोषण आदि का विरोध न करें। पुरुषो की संरक्षकत्व और आश्रय प्रवृत्ति की अधिकता बहुधा उनके व्यक्तित्व और निजता के विकास को अवरुद्ध कर देती है। महिलाओं की परिवार और समाज में स्थिति मुख्यतया देश के विभिन्न क्षेत्रो की सामाजिक, सांस्कृतिक, राजनैतिक, धार्मिक और भौगोलिक कारकों से निर्धारित होती है। संयुक्त परिवार मे पितृ पक्ष से सम्बन्धित पुरुषों का एक समूह होता है, जिन्हें सम्पत्ति संयुक्त खर्चो मे हिस्सेदारी, आवास तथा रसोई मे समान अधिकार प्राप्त होता है। यद्यपि औद्योगिकीकरण, शहरीकरण और आधुनिकता के प्रभाव के कारण इस प्रकार के रहन-सहन मे काफी परिवर्तन हुआ है, परन्तु संयुक्त परिवार की मान्यताएँ आज भी काफी हद तक प्रचलित है। वर्तमान समय में इन मान्यताओं में

परिवर्तन हुआ है। महिलाएं अब समाज के प्रत्येक क्षेत्र में पुरुषों के साथ कंधे से कंधा मिलाकर आगे बढ़ रही हैं तथा पुरुषवादी सोच में भी परिवर्तन परिलक्षित हो रहा है।

पूर्व साहित्य की समीक्षा -

डॉ. श्रद्धा सुमन ने अपने शोध अनुसूचित जाति की माहिलाओ के उत्पीड़न के सामाजिक प्रभाव में निष्कर्ष रूप में पाया कि अनुसूचित जाति की महिलाओं का उत्पीड़न होने से सामाजिक आधार पर बुरा प्रभाव पड़ा, अनुसूचित जातियों की महिलाओं का उत्पीड़न होने से उन्हें विभिन्न प्रकार की यातनायें झेलनी पड़ती है, जैसै- शारीरिक, मानसिक, परिवारिक तथा आर्थिक आदि।[2]

अमित कुमार वर्मा ने अपने अनुसंधान ग्रामीण समाज में दलितो की स्थिति : एक समाजशास्त्रीय विश्लेषण में पाया कि ग्रामीण सामज मे दलितो की स्थिति अभी भी निम्न ही बनी हुई है। क्योंकि उनकी वर्तमान स्थिति के आधार पर उनके आर्थिक स्त्रोतों के रूप मे कृषि एवं मजदूरी ही अग्रणी है। इन्ही स्त्रोतों से होने वाली आय के आधार पर ही वह अपनी आवश्यकताओं की पूर्ति के साधन जुटा पाते है। आय की दृष्टि से उनकी आर्थिक स्थिति आज भी दयनीय है, क्योंकि अधिसंख्यक सूचनादाता 3000 रूपये मासिक से कम आय वाले वर्ग का प्रतिनिधित्व करते है। दलित की शैक्षणिक स्थिति सुदृढ़ हो रही है और अपने बच्चो की शिक्षा को लेकर उनकी उन्मुख्ता बढ़ी है। उनमें सामाजिक एवं सास्ंकृतिक आयाम जो पहले थे, जैसे रहन-सहन, रीति-रिवाज, सामाजिक मूल्य आदि इन सभी मे परिवर्तन आया है, दलित उत्तरदाताओ में नये तरीके से जीवन जीने की लालसा स्पष्ट दिखाई पड़ रही है। वे अब राजनीतिक मुद्दो का भी ज्ञान रखते है जिससे उनकी राजनीति मे प्रवेश को लेकर रूचि बढ़ी है और उनके परिवारों के आकारों में भी परिवर्तन हुआ है जो संयुक्त से एकाकी परिवार को अधिक प्राथमिकता देते है।[3]

डॉ. शकील अहमद ने अपने शोध अन्वेषण अनुसूचित जातीय महिला नेतृत्व की राजनीतिक अभिरूचि एवं सजगता में निष्कर्ष रूप में पाया कि अनुसूचित जाति महिला नेतृत्व पंचायतो में कम प्रतिस्पर्धा से आया है। उनकी ग्रामीण विकास एवं सामाजिक सुधार की बात उत्साहवर्द्धक मानी जा सकती है। संचार माध्यमों के प्रति उनकी जागरूकता का स्तर निम्न होना अशिक्षा एवं कमजोर सामाजिक, आर्थिक स्थिति से जुड़ा विषय है। महत्वाकांक्षा का अभाव ही इस संदर्भ में अंतर सम्बंधी प्रतीत होता है। यदि अनुसूचित जाति के इन नेताओं, प्रधानों के उत्तरों को समग्र रूप से देखा जाए तो ग्रामीण स्तर पर महिलाओं का एक ऐसा नेतृत्व उभर रहा है, जिससे इस आशा का संचार होता है कि अनुसूचित जाति महिला नेतृत्व की पंचायतों में प्रथम औपचारिक भागीदारी आगे आने वाले समय मे ज्यादा सजग और जागरूक नेतृत्व देने मे सक्षम होगी। उत्तर प्रदेश की पंचायतो के लिए यह एक आशापूर्ण संकेत है।[4]

डॉ. अखिलेश शुक्ल ने अपने शोध अध्ययन महिला सशक्तिकरण दशा और दिशा में यह पाया है कि अब निरंतर महिलाओं की स्थिति में परिवर्तन आ रहा है वह अपने अधिकारों के प्रति जागरूक हो रही हैं और समाज के विकास के हिस्सेदारी में उनका महत्वपूर्ण योगदान है।[5]

अध्ययन क्षेत्र - ग्राम कोठी रीवा जिले के हुजूर तहसील में स्थित एक बड़ा गाँव है, जिसमें

कुल 1013 परिवार रहते हैं। कोठी गाँव की जनसंख्या जनगणना 2011 के अनुसार 4261 है, जिसमें 2264 पुरुष हैं और 1997 महिलाएँ हैं। कोठी गाँव में 0–6 आयु वर्ग के बच्चों की आबादी 598 है, जो गाँव की कुल आबादी का 14.03 प्रतिशत है। कोठी गाँव का औसत लिंग अनुपात 882 है जो मध्य प्रदेश राज्य के औसत 931 से कम है। कोठी में जनगणना के अनुसार बाल लिंग अनुपात 829 है, जो मध्य प्रदेश के औसत 918 से कम है। मध्यप्रदेश की तुलना में कोठी गाँव में साक्षरता दर अधिक है।[6] 2011 में मध्य प्रदेश के 69.32 प्रतिशत की तुलना में कोठी गाँव की साक्षरता दर 74.26 प्रतिशत थी। कोठी में पुरुष साक्षरता 84.05 प्रतिशत है जबकि महिला साक्षरता दर 63.27 प्रतिशत है। अध्ययन क्षेत्र ग्राम कोठी का सांख्यिकीय विवरण निम्न तालिका में प्रस्तुत किया जा रहा है।

सारणी क्र 01

अध्ययन क्षेत्र ग्राम कोठी का सांख्यिकी विवरण जनगणना 2011

विवरण	कुल	पुरुष	महिला
मकान की कुल संख्या	1013		
जनसंख्या	4261	2264	1997
बालक (0-6)	598	327	271
अनुसूचित जाति	457	247	210
अनुसूचित जनजाति	544	281	263
साक्षरता	74.26	84.05	63.27
कुल कामगार	1531	1177	354
मुख्यकामगार	1089		
सीमांत कामगार	442	282	160

उद्देश्य -

1 ग्रामीण महिलाओ की सामाजिक स्थिति का आंकलन करना।

2. ग्रामीण महिलाओ की गतिशीलता का अध्ययन करना।

अध्ययन विधि व क्षेत्र - प्रस्तुत शोध पत्र ग्रामीण समाज में महिलाओ की स्थिति में उत्तरदाता हेतु रीवा जिले के गाँव कोठी का चयन किया गया है, जिसमे 478 परिवारों में से 150 उत्तरदाताओ का चयन उद्देश्य पूर्ण निदर्शन प्रणाली के आधार पर किया गया है। प्राथमिक तथ्यो को उद्देश्यो के अनुरुप सारणी के द्वारा प्रतिशत में प्रस्तुत किया गया है एवं तदानुकूल विश्लेषण किया गया है।

उपकल्पना- अनुसन्धान या अध्ययन के क्षेत्र में पूर्व कल्पना या उपकल्पना का महत्वपूर्ण स्थान होता है। इसका निर्माण और प्रयोग वैज्ञानिक अध्ययन पद्धति का एक महत्वपूर्ण चरण होता है। सरल शब्दों में उपकल्पना का अर्थ होता है, एक ऐसा विचार या सिद्धांत जिसे शोधकर्ता अध्ययन के लक्ष्य के रूप में रखता है, उसकी जांच करता है और प्रमाणित करता है। इस शोध पत्र की कुछ उपकल्पना इस प्रकार है–

1 अध्ययन क्षेत्र में संयुक्त परिवार की प्रथा को महत्व प्रदान किया जाता है।
2 महिलाएं स्वयं और परिवार के भविष्य के प्रति सजग हैं।
3 सामाजिक साहचर्य के नियमों में परिवर्तन आ रहा है।
4 वर्तमान में लिव इन रिलेशनशिप को महिलाओं द्वारा मान्यता प्रदान की जा रही है।

अध्ययन का महत्व - प्रस्तुत शोध के आधार पर ग्रामीण महिलाओ की वास्तविक स्थित को ज्ञात किया जा सकता है।

अध्ययन की कठिनाई - साक्षात्कार हेतु महिलाओ की समय पर उपलब्धता व उनसे समय प्राप्त करने मे कठिनाई आयी।

तथ्यों का सारणीयन एवं विश्लेषण- साक्षात्कार से प्राप्त तथ्यों को सारणी में प्रस्तुत करते हुए उनका विश्लेषण किया गया है और तथ्यों को डायग्राम में भी प्रस्तुत किया गया है।

ग्रामीण महिलाओ की शैक्षणिक स्थिति- देश की कुल जनसंख्या में ग्रामीण साक्षरता दर 68.9 प्रतिशत तथा शहरी साक्षरता दर 84.9 प्रतिशत है, जिसमें ग्रामीण महिला साक्षरता केवल 58. 75 प्रतिशत जबकि शहरी महिला साक्षरता 79.92 प्रतिशत है। अध्ययन क्षेत्र ग्राम कोठी में ग्रामीण महिलाओ की शैक्षणिक स्थिति को निम्नलिखित सारणी द्वारा प्रदर्शित किया गया है–

सारणी क्र.02
महिला उत्तरदाताओं की शैक्षणिक स्थिति

क्र.	शैक्षणिक स्तर	आवृति	प्रतिशत
01	निरक्षर	50	33
02	प्राथमिक	50	33
03	माध्यमिक	25	17
04	हाईस्कूल	15	10
05	उच्च शिक्षा	10	07
	योग	150	100

उक्त स्थिति को हम नीचे पाई डायग्राम में प्रस्तुत कर रहे हैं–

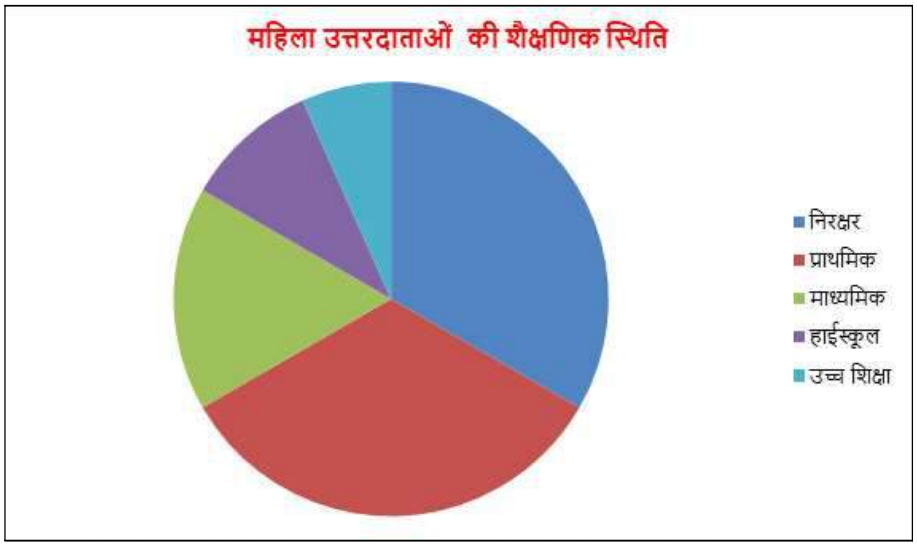

अध्ययन क्षेत्र ग्राम कोठी में महिला साक्षरता की दर 63.27 प्रतिशत है। उत्तर दाताओं की शैक्षणिक स्थिति से प्राप्त तथ्य यह बताते हैं कि 33 प्रतिशत निरक्षर, 33 प्रतिशत प्राथमिक स्तर तक की शिक्षा प्राप्त, 17 प्रतिशत माध्यमिक स्तर तक की शिक्षा प्राप्त, 10 प्रतिशत हाई स्कूल तक की शिक्षा प्राप्त और 07 प्रतिशत महिला उत्तरदाता उच्च शिक्षा प्राप्त करती हुई पाई गई है।

परिवार का स्वरूप- परिवार एक ऐसी सामाजिक संस्था है, जो आपसी सहयोग व समन्वय से क्रियान्वित होती है और जिसके समस्त सदस्य आपस में मिलकर अपना जीवन प्रेम, स्नेह एवं भाईचारा पूर्वक निर्वाह करते हैं। संस्कार, मर्यादा, सम्मान, समर्पण, आदर, अनुशासन आदि किसी भी सुखी-संपन्न एवं खुशहाल परिवार के गुण होते हैं। कोई भी व्यक्ति परिवार में ही जन्म लेता है, उसी से उसकी पहचान होती है और परिवार से ही अच्छे-बुरे कार्यों का ज्ञान उसे होता है। परिवार सभी लोगों को जोड़े रखता है और दु:ख-सुख में सभी एक-दूसरे का साथ देते हैं। कहते हैं कि परिवार से बड़ा कोई धन नहीं होता हैं, पिता से बड़ा कोई सलाहकार नहीं होता हैं, मां के आंचल से बड़ी कोई दुनिया नहीं, भाई से अच्छा कोई भागीदार नहीं, बहन से बड़ा कोई शुभ चिंतक नहीं, इसलिए परिवार के बिना जीवन की कल्पना करना कठिन है। एक अच्छा परिवार बच्चे के चरित्र निर्माण से लेकर व्यक्ति की सफलता में महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है। परिवार दो प्रकार के होते हैं। एक एकाकी परिवार और दूसरा संयुक्त परिवार। भारत में प्राचीन काल से ही संयुक्त परिवार की धारणा रही है। संयुक्त परिवार में वृद्धों को संबल प्रदान होता रहा है और उनके अनुभव व ज्ञान से युवा व बाल पीढ़ी लाभान्वित होती रही है।[7] अध्ययन क्षेत्र में महिला उत्तरदाताओं के परिवार के स्वरूप के संबंध में तथ्य एकत्रित किए गए जिन्हें सारणी में प्रस्तुत किया जा रहा है-

सारणी क्र. 03
महिला उत्तरदाताओं के परिवार का स्वरुप

क्र.	परिवार का स्वरुप	आवृति	प्रतिशत
01	एकल	40	26
02	संयुक्त	110	74
	योग	150	100

उक्त स्थिति को हम नीचे पाई डायग्राम में प्रस्तुत कर रहे हैं-

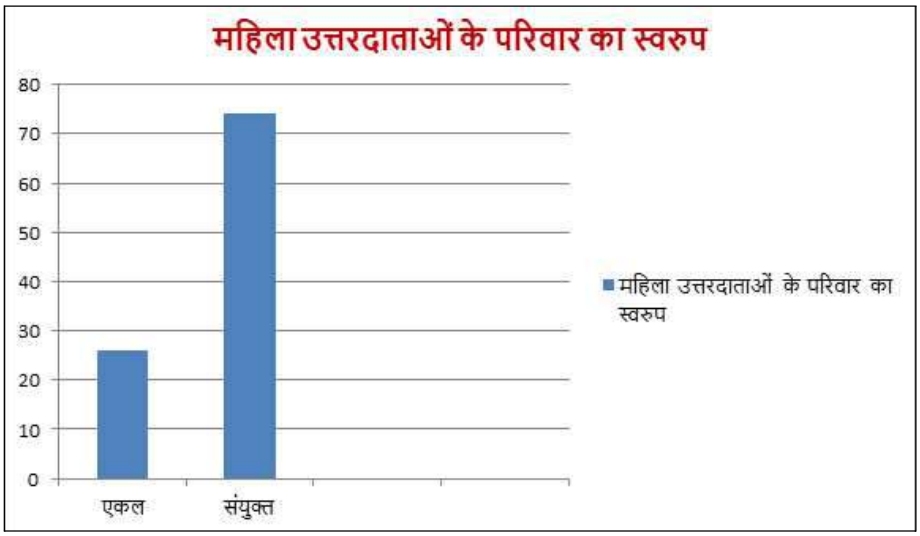

उपरोक्त सारणी एवं डायग्राम के विश्लेषण करने से यह तथ्य सामने आता है की अध्ययन

क्षेत्र ग्राम कोठी में आज भी जहां वर्तमान भौतिकवादी संस्कृति तेजी से अपने पैर फैला रही है, इस स्थिति में वहां 74 प्रतिशत परिवार संयुक्त पाए गए हैं और जबकि 26 प्रतिशत परिवारों की स्थिति एकल रही है, जो यह दर्शाती है कि भारतीय संस्कृति की मूल धारणा जो परिवार के संबंध में रही है वह ग्राम कोठी में दिखाई देती है। उपरोक्त विश्लेषण से उपकल्पना क्रमांक 01 पूर्णतया सिद्ध होती है।

सारणी क्र. 04

महिला उत्तर दाताओं की व्यावसायिक स्थिति

क्र.	व्यवसाय	आवृति	प्रतिशत
01	परम्परागत	20	13
	स्वतन्त्र व्यवसाय	20	13
02	मजदूरी	40	27
03	सरकारी सेवा	20	13
04	कृषि	50	34
	योग	150	100

उक्त स्थिति को हम नीचे पाई डायग्राम में प्रस्तुत कर रहे हैं–

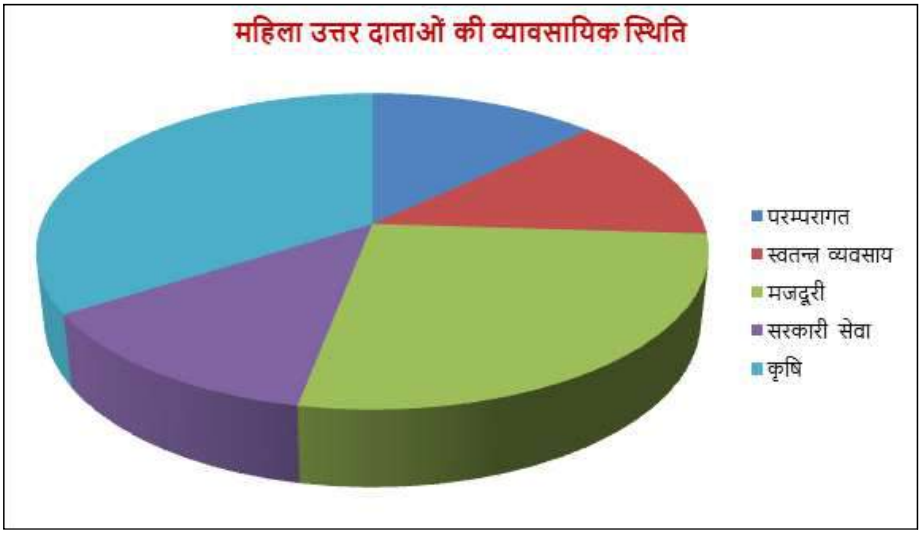

अध्ययन क्षेत्र कोठी में महिला उत्तरदाताओं की व्यावसायिक स्थिति के संबंध में साक्षात्कार के दौरान तथ्य एकत्रित किए गए और उसमें यह पाया गया कि 13 प्रतिशत महिलाएं परंपरागत व्यवसाय में, 13 प्रतिशत स्वतंत्र व्यवसाय में, 27 प्रतिशत मजदूरी के कार्य में, 13 प्रतिशत सरकारी सेवा में जो उच्च शिक्षा प्राप्त थी और 34 प्रतिशत महिलाएं कृषि के कार्यों में संलग्न है। अध्ययन क्षेत्र में महिला उत्तरदाताओं की व्यवसाय की स्थिति अच्छी पाए जाने का मूल कारण यह रहा है कि यहां महिलाओं में साक्षरता दर अच्छी है। महिलाएं सोचने और समझने में तत्पर है। अपने परिवार के भविष्य के प्रति सजग हैं। उक्त विश्लेषण से उपकल्पना क्रमांक 02 भी शत–प्रतिशत सिद्ध होती है।

परंपरागत सामाजिक स्थिति में बदलाव- अध्ययन क्षेत्र कोठी में सामाजिक गतिशीलता के संदर्भ में यह जानने का प्रयास किया गया कि क्या उत्तरदाता महिलाओं

की परंपरागत सामाजिक स्थिति में बदलाव आया है। साक्षात्कार से प्राप्त तथ्यों को निम्नलिखित तालिका में प्रस्तुत किया जा रहा है।

सारणी क्र.05
परंपरागत सामाजिक स्थिति में बदलाव

क्र.	सामाजिक स्थिति	क्या सामाजिक स्थिति में बदलाव आया है			
		हां	प्रतिशत	नहीं	प्रतिशत
01	जातीय स्थिति में परिवर्तन	110	73	40	27
02	खान पान के नियमों में परिवर्तन	120	80	30	20
03	सामाजिक साहचर्य में परिवर्तन	90	60	60	40
04	स्वतंत्रता के संबंध में परिवर्तन	100	67	50	33

उपरोक्त सारणी में प्राप्त तथ्यों का विश्लेषण करने पर निम्नलिखित तथ्य दृष्टिगोचर होते हैं-

- जातीय स्थिति के परिवर्तन के संबंध में 73 प्रतिशत महिला उत्तरदाता यह मानती हैं की परिवर्तन आया है तथा 27 प्रतिशत महिलाएं यह मानती हैं कि अभी भी जातीय स्थिति के संबंध में परंपरागत नियमों का पालन समाज में हो रहा है।
- खानपान के नियमों के संबंध में 80 प्रतिशत महिलाओं ने यह स्वीकार किया है कि अब पुराने परंपरागत नियम खानपान के संबंध में प्रचलित नहीं है, जबकि 20 प्रतिशत उत्तर दाताओं ने यह स्वीकार किया है कि अभी भी अध्ययन क्षेत्र में खानपान के परंपरागत नियमों का पालन किया जाता है।
- सामाजिक साहचर्य में परिवर्तन के संबंध में 60 प्रतिशत महिलाएं यह स्वीकार करती हैं कि सामाजिक साहचर्य के संबंध में परंपरागत स्थिति में परिवर्तन आया है, जबकि 40 प्रतिशत महिलाएं यह कहती हैं कि स्थिति अब भी वैसी ही है जैसी पहले थी। उक्त विश्लेषण से उपकल्पना क्रमांक 03 आंशिक रूप से सिद्ध होती है।
- महिलाओं के अधिकारों के संबंध में जब उत्तरदाताओं से बात की गई तो 67 प्रतिशत महिला उत्तरदाता यह स्वीकार करती हैं कि उन्हें अधिकांश अधिकार प्राप्त हैं और वह निर्णय लेने में सक्षम हैं। कभी-कभी निर्णय लेने के संबंध में अपने परिवारजनों से सलाह-मशविरा जरूर करती हैं लेकिन 33 प्रतिशत महिलाएं यह मानती हैं कि अब भी उनके अधिकार सीमित हैं।

परिवार में विवाह का स्वरूप- विवाह, जिसे शादी भी कहा जाता है, दो लोगों के बीच एक सामाजिक या धार्मिक मान्यता प्राप्त मिलन है जो उन लोगों के बीच, साथ ही उनके और किसी भी परिणामी जैविक या दत्तक बच्चों तथा समधियों के बीच अधिकारों और दायित्वों को स्थापित करता है। विवाह की परिभाषा न केवल संस्कृतियों और धर्मों के बीच, बल्कि किसी भी संस्कृति और धर्म के इतिहास में भी दुनिया भर में बदलती है। आमतौर पर यह मुख्य रूप से एक संस्थान है, जिसमें पारस्परिक संबंध, आमतौर पर यौन संबंध स्वीकार किए जाते हैं या संस्वीकृत होते हैं।[7] वर्तमान में विवाह के स्वरूप पर बात करें तो अपनी सहमति से, विवाह के बिना लिव-इन-रिलेशनशीप में रहना हो, बिना गर्भ धारण किये सरोगेट माँ बनना हो या बिना ब्याह किये सिंगल पेरेंट बनना हो, यह कुछ ऐसी

घटनायें हैं, जो हमें विवाह के बदलते स्वरूप की और इशारा करती है कि पिता बनने के लिए जरूरी नहीं है कि शादी ही की जाये। हालाँकि पश्चिम ने तो इस अवधारणा को पहले ही स्वीकार कर लिया था। इससे तो विवाह नामक संस्था ही बिखर जायेगी, समाज में अनाचार फैलेगा, अवैध बच्चे पैदा होंगे, वर्ण संकर पैदा होंगे जिनकी बुद्धि सीमित होगी। इस तरह के कई सवाल भी खड़े हुए है।[8] अध्ययन क्षेत्र में इन प्रश्नों के उत्तर खोजने का प्रयास किया गया और जो तथ्य सामने आए उन्हें तालिका में प्रस्तुत किया जा रहा है।

सारणी क्र.06

परिवार में विवाह का स्वरूप

क्र.	विवाह का स्वरूप	क्या विवाह के स्वरूप में बदलाव आया है			
		हां	प्रतिशत	नहीं	प्रतिशत
01	जातीय विवाह	110	73	40	27
02	अंतरजातीय विवाह	38	25	112	75
03	लिव इन रिलेशनशिप	08	05	142	95

अध्ययन क्षेत्र में उत्तरदाता महिलाओं का विवाह के प्रति क्या दृष्टिकोण है, इस संबंध में तथ्यों का एकत्रीकरण किया गया जो तथ्य प्राप्त हुए उनसे यह स्पष्ट होता है कि 73 प्रतिशत महिला उत्तरदाता अभी भी अपनी ही जाति में विवाह करना पसंद करती हैं, जबकि 27 प्रतिशत उत्तरदाता महिला जातीय विवाह के विरुद्ध विचार रखती हैं। 38 प्रतिशत महिलाओं ने अंतरजातीय विवाह का समर्थन किया है, जबकि 75 प्रतिशत उत्तरदाता महिलाओं ने अंतरजातीय विवाह के विरुद्ध बात कही है। लिव इन रिलेशनशिप के प्रश्न पर 05 प्रतिशत महिलाएं सहमति दर्ज कराती हैं, जबकि 95 प्रतिशत महिलाएं इस संबंध में अपनी असहमति दर्ज कराती है। उपरोक्त विश्लेषण से उपकल्पना क्रमांक 04 असत्य साबित होती है।

निष्कर्ष- प्रस्तुत शोध पत्र में अध्ययन के दौरान ग्रामीण समाज में महिलाओं की शैक्षणिक स्थित अच्छी है। अधिकांश ग्रामीण महिलाए साक्षर है। शोध के निष्कर्ष इस प्रकार रहे हैं–

- कोठी में पुरुष साक्षरता 84.05 प्रतिशत है जबकि महिला साक्षरता दर 63.27 प्रतिशत है।
- अध्ययन क्षेत्र ग्राम कोठी में महिला साक्षरता की दर 63.27 प्रतिशत है। उत्तरदाताओं की शैक्षणिक स्थिति से प्राप्त तथ्य यह बताते हैं कि 33 प्रतिशत निरक्षर, 33 प्रतिशत प्राथमिक स्तर तक की शिक्षा प्राप्त, 17 प्रतिशत माध्यमिक स्तर तक की शिक्षा प्राप्त, 10 प्रतिशत हाई स्कूल तक की शिक्षा प्राप्त और 07 प्रतिशत महिला उत्तरदाता उच्च शिक्षा प्राप्त करती हुई पाई गई है।
- अध्ययन क्षेत्र ग्राम कोठी में आज भी जहां वर्तमान भौतिकवादी संस्कृति तेजी से अपने पैर फैला रही है, इस स्थिति में वहां 74 प्रतिशत परिवार संयुक्त पाए गए हैं और जबकि 26 प्रतिशत परिवारों की स्थिति एकल रही है, जो यह दर्शाती है कि भारतीय संस्कृति की मूल धारणा जो परिवार के संबंध में रही है वह ग्राम कोठी में दिखाई देती है।
- महिला उत्तरदाताओं की व्यावसायिक स्थिति के संबंध में साक्षात्कार के दौरान

तथ्य एकत्रित किए गए और उसमें यह पाया गया कि 13 प्रतिशत महिलाएं परंपरागत व्यवसाय में, 13 प्रतिशत स्वतंत्र व्यवसाय में, 27 प्रतिशत मजदूरी के कार्य में, 13 प्रतिशत सरकारी सेवा में जो उच्च शिक्षा प्राप्त थी और 34 प्रतिशत महिलाएं कृषि के कार्यों में संलग्न है।

- 73 प्रतिशत महिला उत्तरदाता अभी भी अपनी ही जाति में विवाह करना पसंद करती हैं, जबकि 27 प्रतिशत उत्तरदाता महिला जातीय विवाह के विरुद्ध विचार रखती हैं। 38 प्रतिशत महिलाओं ने अंतरजातीय विवाह का समर्थन किया है, जबकि 75 प्रतिशत उत्तरदाता महिलाओं ने अंतरजातीय विवाह के विरुद्ध बात कही है। लिव इन रिलेशनशिप के प्रश्न पर 05 प्रतिशत महिलाएं सहमति दर्ज कराती हैं, जबकि 95 प्रतिशत महिलाएं इस संबंध में अपनी असहमति दर्ज कराती है।

संदर्भ ग्रन्थ सूची-

1. डॉ. के.एन. सिंह, ग्रामीण समाज एवं महिला सशक्तिकरण
2. सुमन,श्रद्धा – अनुसूचित जाति की महिलाओं के उत्पीड़न के सामाजिक प्रभाव, राधाकमल मुकर्जी चिन्तन परम्परा वर्ष 16 अकं 01 जनवरी–जून–2014 पृ.स. 153
3. वर्मा, अमित कुमार – ग्रामीण समाज मे दलितो की स्थिति: एक समाजशास्त्रीय अध्ययन, राधाकमल मुकर्जी, चिन्तन परम्परा ,वर्ष 14 अंक 2 जुलाई– दिसम्बर 2012 पृ.स.–120
4. अहमद शकील – अनूसूचित जातीय महिला नेतृत्व की राजनीतिक अभिरूचि एवं सजगता, राधाकमल मुकजी: चिन्तन परम्परा वर्ष 16 अकं 2 जुलाई–दिसम्बर 2014 पृ.स. 62
5. शुक्ल अखिलेश, महिला सशक्तिकरण दशा एवं दिशा, सेंटर फॉर रिसर्च स्टडी, रीवा 2016, पृ.स. 108
6. मध्यप्रदेश मानव विकास रिपोर्ट 2023 की रिपोर्ट
7. महिला एवं बाल विकास विभाग की रिपोर्ट
8. पंचायत एवं ग्रामीण विकास विभाग, मध्यप्रदेश सरकार की रिपोर्ट

UGC Journal No. (Old) 2138
Peer-Reviewed Research Journal
Impact Factor 6.375, ISSN 0975-4083
Vol.- 28, Hindi Edition, Year-14, March 2025

सूचना संचार में सोशल नेटवर्किंग साइटों का उपयोग: देवी अहिल्या विश्वविद्यालय के विद्यार्थियों के संदर्भ में एक सर्वेक्षण आधारित अध्ययन

• फुलसिंह अनारे
•• संजीव कुमार शर्मा

सारांश- वर्तमान समय में सूचना और संचार प्रौद्योगिकी के विकास ने हमारे जीवन के हर पहलू को प्रभावित किया है। विशेष रूप से, इंटरनेट और सोशल नेटवर्किंग साइटों ने सूचना आदान-प्रदान और व्यक्तिगत, शैक्षणिक और व्यावसायिक संचार के तरीकों में क्रांतिकारी परिवर्तन किया है। सोशल नेटवर्किंग साइटें जैसे फेसबुक, इंस्टाग्राम, व्हाट्सएप, लिंक्डइन, ट्विटर आदि आज के समय में न केवल व्यक्तिगत संपर्क बनाए रखने का माध्यम है, बल्कि ये शैक्षणिक और व्यावसायिक उद्देश्यों की पूर्ति का भी एक महत्वपूर्ण साधन बन चुकी है। इस अध्ययन का उद्देश्य देवी अहिल्या विश्वविद्यालय, इंदौर के विद्यार्थियों द्वारा सोशल नेटवर्किंग साइटों के उपयोग का विश्लेषण करना है। यह अध्ययन इस बात पर केंद्रित है कि विद्यार्थी किस प्रकार से सोशल मीडिया का उपयोग करते है, किस हद तक इसका शैक्षणिक कार्यों में योगदान होता है, और इसके सकारात्मक व नकारात्मक प्रभाव क्या है।

मुख्य शब्द- सूचना, सोशल नेटवर्किंग, इंटरनेट, व्यावसायिक संचार

अध्ययन की पृष्ठभूमि- सोशल नेटवर्किंग साइटों का उदय 21वीं सदी की शुरुआत में हुआ और तब से यह वैश्विक स्तर पर तेजी से लोकप्रिय हो गईं। प्रारंभ में इनका उपयोग मुख्य रूप से व्यक्तिगत संपर्क बनाए रखने और मनोरंजन के लिए किया जाता था, लेकिन धीरे-धीरे इनका उपयोग शैक्षणिक और व्यावसायिक उद्देश्यों के लिए भी बढ़ा।

भारत में इंटरनेट की पहुँच बढ़ने के साथ ही सोशल मीडिया का उपयोग भी तेजी से बढ़ा है। विशेष रूप से युवा पीढ़ी, जिसमें कॉलेज और विश्वविद्यालय के विद्यार्थी शामिल हैं, सोशल मीडिया का सबसे बड़ा उपयोगकर्ता वर्ग बन चुकी है।

देवी अहिल्या विश्वविद्यालय मध्य प्रदेश का एक प्रमुख शैक्षणिक संस्थान है, जहाँ विभिन्न पाठ्यक्रमों में हजारों विद्यार्थी अध्ययनरत हैं। यह अध्ययन इस बात पर केंद्रित है कि यहाँ के विद्यार्थी किस प्रकार से सोशल नेटवर्किंग साइटों का उपयोग करते

• शोधार्थी, ग्रंथालय एवं सूचना विज्ञान विभाग, माधव विश्वविद्यालय पिण्डवाड़ा, सिरोही राजस्थान
•• शोध निर्देशक, आचार्य, ग्रंथालय एवं सूचना विज्ञान विभाग, माधव विश्वविद्यालय पिण्डवाड़ा सिरोही राजस्थान

हैं और इसका उनके शैक्षणिक जीवन पर क्या प्रभाव पड़ता है।

अध्ययन के उद्देश्य- इस अध्ययन के मुख्य उद्देश्य निम्नलिखित हैं:

1. यह जानना कि देवी अहिल्या विश्वविद्यालय के विद्यार्थी सूचना प्राप्त करने और साझा करने के लिए किन-किन सोशल नेटवर्किंग साइटों का उपयोग करते हैं।
2. यह समझना कि विद्यार्थी कितनी बार और कितने समय तक सोशल नेटवर्किंग साइटों का उपयोग करते हैं।
3. यह ऑकलन करना कि सोशल नेटवर्किंग साइटें विद्यार्थियों की शैक्षणिक गतिविधियों को किस प्रकार प्रभावित करती हैं।
4. यह जानना कि सोशल मीडिया का विद्यार्थियों की मानसिकता, ध्यान केंद्रित करने की क्षमता और सामाजिक जीवन पर क्या प्रभाव पड़ता है।
5. यह पहचानना कि सोशल मीडिया के कारण विद्यार्थियों को किन-किन समस्याओं का सामना करना पड़ता है, जैसे ध्यान भंग होना या समय की बर्बादी।
6. यह सुझाव देना कि किस प्रकार से सोशल मीडिया का सकारात्मक रूप से शैक्षणिक उद्देश्यों में उपयोग किया जा सकता है।

अनुसंधान पद्धति- इस अध्ययन के लिए सर्वेक्षण पद्धति अपनाई गई। सर्वेक्षण में देवी अहिल्या विश्वविद्यालय के विभिन्न पाठ्यक्रमों (जैसे विज्ञान, कला, वाणिज्य, इंजीनियरिंग आदि) से जुड़े 200 विद्यार्थियों को शामिल किया गया। सर्वेक्षण प्रश्नावली तैयार करते समय निम्नलिखित बिंदुओं पर ध्यान दिया गया:

1. सोशल नेटवर्किंग साइटों का उपयोग- कौन-कौन सी सोशल नेटवर्किंग साइटें विद्यार्थियों द्वारा सबसे अधिक उपयोग की जाती हैं।
2. समय बिताना- विद्यार्थी प्रतिदिन कितने घंटे सोशल मीडिया पर बिताते हैं।
3. शैक्षणिक कार्य- क्या विद्यार्थी शैक्षणिक उद्देश्यों (जैसे नोट्स साझा करना, शोध सामग्री प्राप्त करना) के लिए सोशल मीडिया का उपयोग करते हैं।
4. ध्यान भंग- क्या विद्यार्थियों को लगता है कि सोशल मीडिया उनके ध्यान को भंग करता है या उनकी पढ़ाई में बाधा डालता है।
5. समस्याएं- क्या विद्यार्थी महसूस करते हैं कि सोशल मीडिया उनके मानसिक स्वास्थ्य या सामाजिक जीवन पर नकारात्मक प्रभाव डाल रहा है।

डेटा संग्रहण- सर्वेक्षण डेटा संग्रहण के लिए ऑनलाइन प्रश्नावली (Google Forms) का उपयोग किया गया। प्रश्नावली में बहुविकल्पीय प्रश्न (MCQ), रेटिंग स्केल वाले प्रश्न (Likert Scale), और खुले प्रश्न शामिल थे ताकि विद्यार्थियों की राय को व्यापक रूप से समझा जा सके। सर्वेक्षण डेटा को सांख्यिकीय विधियों द्वारा विश्लेषित किया गया।

परिणाम एवं विश्लेषण

1. लोकप्रिय प्लेटफार्म- सर्वेक्षण के परिणाम बताते हैं कि देवी अहिल्या विश्वविद्यालय के अधिकांश विद्यार्थी कई प्रमुख सोशल नेटवर्किंग साइटों का नियमित रूप से उपयोग करते हैं। इनमें सबसे अधिक लोकप्रिय प्लेटफार्म निम्नलिखित हैं-

फेसबुक– 80 प्रतिशत विद्यार्थियों ने कहा कि वे फेसबुक का नियमित रूप से उपयोग करते हैं। हालांकि पिछले कुछ वर्षों में इसकी लोकप्रियता थोड़ी कम हुई है, लेकिन अभी भी यह जानकारी साझा करने और समूह चर्चाओं के लिए एक महत्वपूर्ण माध्यम बना हुआ है।

इंस्टाग्राम: 85 प्रतिशत विद्यार्थियों ने इंस्टाग्राम को अपनी पसंदीदा सोशल नेटवर्किंग साइट बताया। इंस्टाग्राम मुख्य रूप से फोटो और वीडियो साझा करने के लिए प्रसिद्ध है, लेकिन अब इसका उपयोग शैक्षिक सामग्री साझा करने और प्रेरणादायक पोस्ट्स देखने हेतु भी किया जा रहा है।

व्हाट्सएप: 95 प्रतिशत विद्यार्थियों ने व्हाट्सएप को अपने दैनिक संचार का प्रमुख साधन बताया। व्हाट्सएप समूह चर्चा (ग्रुप चौट) और त्वरित संदेश सेवा (इंस्टेंट मैसेजिंग) के कारण अत्यधिक लोकप्रिय हो गया है।

लिंक्डइन: लगभग 40 प्रतिशत विद्यार्थियों ने कहा कि वे लिंक्डइन का उपयोग करते हैं। विशेष रूप से अंतिम वर्ष के छात्र और स्नातक छात्र लिंक्डइन पर अपने पेशेवर संपर्क बनाने और करियर संबंधी जानकारी प्राप्त करने हेतु सक्रिय रहते हैं।

2. समय बिताना- सर्वेक्षण में पाया गया कि अधिकांश विद्यार्थी प्रतिदिन 2–3 घंटे सोशल मीडिया पर बिताते हैं।

- 60 प्रतिशत विद्यार्थियों ने कहा कि वे प्रतिदिन औसतन 2–3 घंटे विभिन्न सोशल मीडिया प्लेटफार्मों पर बिताते हैं।
- 20 प्रतिशत विद्यार्थियों ने कहा कि वे प्रतिदिन 1 घंटे से कम समय सोशल मीडिया पर खर्च करते हैं। जबकि शेष
- 20 प्रतिशत ने स्वीकार किया कि वे प्रतिदिन 4 घंटे या उससे अधिक समय तक सोशल मीडिया पर सक्रिय रहते हैं।

यह परिणाम दर्शाता है कि सोशल मीडिया आज की युवा पीढ़ी की दिनचर्या का एक महत्वपूर्ण हिस्सा बन चुका है।

3. शैक्षणिक कार्य- सोशल नेटवर्किंग साइटों का शैक्षिक कार्यों में योगदान काफी महत्वपूर्ण पाया गया:

- लगभग 70 प्रतिशत विद्यार्थियों ने कहा कि वे अपने शैक्षिक कार्यों जैसे नोट्स साझा करने, असाइनमेंट्स पर चर्चा करने और शोध सामग्री प्राप्त करने हेतु व्हाट्सएप समूहों या फेसबुक समूहों का उपयोग करते हैं।
- इंस्टाग्राम जैसे प्लेटफार्म पर भी कई शिक्षण पेज उपलब्ध होते हैं जो छात्रों को विभिन्न विषयों पर जानकारी प्रदान करते हैं। लगभग 40 प्रतिशत छात्रों ने कहा कि वे इंस्टाग्राम पर ऐसे अकाउंट्स को फॉलो करते हैं जो उन्हें शिक्षा संबंधी सामग्री प्रदान करते हैं।
- लिंक्डइन छात्रों द्वारा करियर संबंधी जानकारी प्राप्त करने और पेशेवर संपर्क बनाने हेतु एक महत्वपूर्ण मंच बन गया है। लगभग 30 प्रतिशत छात्रों ने कहा कि वे लिंक्डइन पर उद्योग विशेषज्ञों से जुड़ते हैं या करियर गाइडेंस प्राप्त करते हैं।

4. ध्यान भंग- हालांकि सोशल मीडिया शैक्षिक उद्देश्यों में सहायक हो सकता है,

लेकिन इसके नकारात्मक प्रभाव भी सामने आए–

- 40 प्रतिशत विद्यार्थियों ने स्वीकार किया कि उन्हें अक्सर पढ़ाई करते समय ध्यान भंग होता है क्योंकि वे बार–बार अपने फोन या लैपटॉप पर नोटिफिकेशन चेक करते रहते हैं।
- कुछ छात्रों ने कहा कि उन्हें "फियर ऑफ मिसिंग आउट" (FOMO) होता है जिसके कारण वे बार–बार अपने दोस्तों द्वारा साझा किए गए पोस्ट्स या संदेश देखने लगते हैं जिससे उनका ध्यान पढ़ाई से हट जाता है।

5. समस्याएं- सोशल मीडिया के अत्यधिक उपयोग से कुछ समस्याएं भी उत्पन्न होती दिखीं:

- 30 प्रतिशत विद्यार्थियों ने कहा कि उन्हें कभी–कभी मानसिक तनाव या चिंता महसूस होती है जब वे अपने साथियों की सफलताओं या गतिविधियों को देखते हैं।
- कुछ छात्रों ने बताया कि अत्यधिक समय ऑनलाइन बिताने से उनका सामाजिक जीवन प्रभावित हुआ क्योंकि वे वास्तविक जीवन में दोस्तों या परिवार के साथ कम समय बिता रहे थे।

6. सकारात्मक पक्ष- हालांकि कुछ नकारात्मक प्रभाव सामने आए, लेकिन अधिकांश छात्रों ने माना कि यदि सही तरीके से प्रयोग किया जाए तो सोशल मीडिया एक शक्तिशाली उपकरण हो सकता है–

- कई छात्र ऑनलाइन शिक्षण प्लेटफार्म (जैसे YouTube चौनल्स) या ई–बुक्स डाउनलोड करने वाले पेजों का अनुसरण करते थे जो उन्हें उनकी पढ़ाई में मदद करता था।
- कुछ छात्रों ने ऑनलाइन समूह चर्चाओं (WhatsApp/Facebook Groups) को सहायक बताया जहाँ वे अपने सहपाठियों या शिक्षकों से त्वरित उत्तर प्राप्त कर सकते थे।

निष्कर्ष- इस अध्ययन से यह स्पष्ट होता है कि देवी अहिल्या विश्वविद्यालय के विद्यार्थी सूचना संचार और शैक्षणिक उद्देश्यों हेतु व्यापक रूप से सोशल नेटवर्किंग साइटों का उपयोग कर रहे हैं। फेसबुक, इंस्टाग्राम, व्हाट्सएप जैसी साइटें न केवल मनोरंजन बल्कि शिक्षा एवं पेशेवर विकास हेतु भी महत्वपूर्ण भूमिका निभा रही हैं।

हालांकि इसके साथ ही कुछ नकारात्मक प्रभाव भी देखे गए जैसे ध्यान भंग होना, मानसिक तनाव बढ़ना आदि। इसलिए यह आवश्यक हो जाता है कि विद्यार्थी एक संतुलित दृष्टिकोण अपनाएं ताकि वे सोशल मीडिया का सकारात्मक लाभ उठा सकें और इसके नकारात्मक प्रभावों से बच सकें।

सिफारिशें- विश्वविद्यालय स्तर पर ऐसे कार्यक्रम आयोजित किए जाने चाहिए जहाँ छात्रों को सिखाया जाए कि कैसे वे अपने समय प्रबंधन कौशल को सुधार सकते हैं ताकि उनका ध्यान भंग न हो।

संदर्भ ग्रन्थ सूची-

1. Afifi, M. (1996). Networking and the future of libraries.
2. The Journal of Academic Librarianship, 22(6), 471. https://doi.org/10.1016/s0099- 1333(96)90016-6.
3. लाल, सी.और कुमार, के. (2001). प्रलेखन एवं सूचना विज्ञान, भाग-2. नई दिल्ली: एस. एसपब्लिकेशन
4. सिंह, शकंर (2002) सूचना प्रौद्योगिकी के नए आयाम. नई दिल्ली: साइबर टेक पब्लिकेशन्स
5. जिंदल, सुरेष कुमार, संपा. (2013). सूचना प्रबंधन., दिल्ली: डेसीडॉक
6. इग्नू (2003). सूचना प्रौद्योगिकी मूलाधार (^{BLIS}&07), खण्ड-4.

UGC Journal No. (Old) 2138
Peer-Reviewed Research Journal
Impact Factor 6.375, ISSN 0975-4083
Vol.- 28, Hindi Edition, Year-14, March 2025

महिला स्व सहायता समूह चुनौतियां एवं संभावनाएं (रीवा जिले के विशेष संदर्भ में)

•रेखा पाण्डेय
•• महेश शुक्ला

सारांश- महिला स्व सहायता समूह की अवधारणा एक सामाजिक नवाचार के रूप में उभरी है, जो महिला सशक्तिकरण के क्षेत्र में क्रांतिकारी भूमिका निभा रही है। यह केवल आर्थिक विकास का माध्यम नहीं, बल्कि महिलाओं को उनकी पहचान, सम्मान और निर्णय लेने की स्वतंत्रता दिलाने का एक सशक्त मंच है। यदि इस अवधारणा को उचित संसाधन, प्रशिक्षण और समर्थन मिले, तो यह ग्रामीण भारत के सामाजिक-आर्थिक परिदृश्य को पूरी तरह बदल सकती है। समाज के विकास में महिलाओं की सक्रिय भागीदारी अत्यंत आवश्यक है। विशेष रूप से ग्रामीण और पिछड़े क्षेत्रों में महिलाओं को आत्मनिर्भर बनाने के लिए स्व सहायता समूह एक प्रभावशाली माध्यम के रूप में उभरे है। यह अवधारणा न केवल महिलाओं को आर्थिक रूप से सशक्त करती है, बल्कि उन्हें सामाजिक, राजनीतिक और मानसिक रूप से भी मजबूती प्रदान करती है।

मुख्य शब्द- स्व सहायता समूह, सामाजिक नवाचार, सशक्तिकरण, पहचान, सम्मान

स्व सहायता समूह की अवधारणा- स्व सहायता समूह एक छोटा, स्वैच्छिक समूह होता है, जिसमें सामान्यत: 10 से 20 सदस्य होते हैं, जो समान सामाजिक–आर्थिक पृष्ठभूमि से होते हैं। ये सदस्य नियमित रूप से बचत करते हैं, आपसी सहमति से ऋण लेते हैं और समय पर उसका पुनर्भुगतान करते हैं। स्व सहायता समूह का मुख्य उद्देश्य सामूहिक भागीदारी के माध्यम से आत्मनिर्भरता और सामुदायिक विकास को बढ़ावा देना होता है। महिला स्व सहायता समूह की निम्नलिखित विशेषताएं है–

स्वनियंत्रण एवं स्वप्रबंधन- समूह स्वयं द्वारा संचालित होता है और उसका प्रबंधन समूह की महिलाएं ही करती हैं।

सामूहिक बचत एवं ऋण प्रणाली- सदस्य नियमित रूप से बचत करती हैं और आवश्यकता पड़ने पर समूह के फंड से ऋण लेती हैं।

आर्थिक और सामाजिक सशक्तिकरण- महिलाएं छोटे व्यवसाय, कुटीर उद्योग,

• शोधार्थी, समाजशास्त्र, शासकीय ठाकुर रणमत सिंह महाविद्यालय रीवा (मध्य प्रदेश)
•• विभागाध्यक्ष, समाजशास्त्र विभाग, शासकीय ठाकुर रणमत सिंह महाविद्यालय रीवा (मध्य प्रदेश)

पशुपालन आदि के माध्यम से आत्मनिर्भर बनती हैं।

लोकतांत्रिक कार्यप्रणाली- समूह में निर्णय सर्वसम्मति से लिए जाते हैं और सभी सदस्य समान रूप से सहभागिता करते हैं।

महिला स्व सहायता समूह की अवधारणा भारत में 1980 के दशक के अंत और 1990 के दशक की शुरुआत में प्रमुख रूप से सामने आई। इसका व्यापक विस्तार 1992 में नाबार्ड की पहल से हुआ, जब बैंकों को स्व सहायता समूह से जोड़ने की योजना शुरू की गई। बाद में राष्ट्रीय ग्रामीण आजीविका मिशन (NRLM) और DAY&NRLM जैसी योजनाओं ने इसे और गति दी।

स्व सहायता समूह के प्रमुख उद्देश्य

- महिलाओं में आत्मविश्वास और नेतृत्व क्षमता का विकास।
- आर्थिक आत्मनिर्भरता के लिए स्वरोजगार के अवसर प्रदान करना।
- सामाजिक बुराइयों (जैसे घरेलू हिंसा, बाल विवाह) के विरुद्ध जागरूकता फैलाना।
- महिलाओं को वित्तीय सेवाओं (बैंक, बीमा, ऋण) से जोड़ना।
- सामुदायिक भागीदारी और सहयोग की भावना का विकास।

महिला स्व सहायता समूह की सफलता के कारण

- सामूहिकता की शक्ति
- सरकारी व गैर सरकारी संस्थाओं का सहयोग
- स्थानीय संसाधनों का उपयोग
- कम निवेश में व्यापार की शुरुआत की संभावना

अध्ययन क्षेत्र- रीवा जिला, विंध्य क्षेत्र में स्थित एक प्रमुख जिला है, जहाँ की अधिकांश आबादी ग्रामीण क्षेत्रों में निवास करती है। यहाँ की महिलाएं परंपरागत रूप से घरेलू कार्यों तक सीमित थीं, परंतु स्व सहायता समूह आंदोलन ने इन्हें बाहर निकलने और आत्मनिर्भर बनने का अवसर दिया है। रीवा जिले में महिला स्व सहायता समूह सामाजिक बदलाव और महिला सशक्तिकरण के एक मजबूत स्तंभ बनकर उभरे हैं। हालांकि, चुनौतियाँ अभी भी मौजूद हैं, परंतु यदि उचित प्रशिक्षण, सरकारी सहयोग, तकनीकी संसाधन और बाजार तक पहुँच उपलब्ध कराई जाए, तो ये समूह न केवल महिलाओं का जीवन बदल सकते हैं, बल्कि पूरे क्षेत्र की आर्थिक उन्नति में महत्वपूर्ण भूमिका निभा सकते हैं। स्व सहायता समूह छोटे-छोटे समूह होते हैं, जिनमें सामान्यत: 10-20 महिलाएं एकत्र होकर आपस में बचत करती हैं और जरूरतमंद सदस्यों को ऋण देती हैं। ये समूह स्वयं संचालित होते हैं और महिलाओं को सामाजिक, आर्थिक और मानसिक रूप से मजबूत बनाने में सहायक होते हैं।

महिलाओं के सशक्तिकरण में स्व सहायता समूह की भूमिका

1. आर्थिक सशक्तिकरण

- नियमित बचत एवं ऋण सुविधा के माध्यम से महिलाएं आत्मनिर्भर बनी हैं।
- स्वरोजगार, लघु उद्योग, कृषि, पशुपालन, सिलाई, ब्यूटी पार्लर, किराना व्यवसाय आदि से आय में वृद्धि हुई है।

2. सामाजिक सशक्तिकरण

- स्व सहायता समूह के माध्यम से महिलाओं में आत्मविश्वास, नेतृत्व क्षमता और निर्णय लेने की शक्ति का विकास हुआ है।
- सामाजिक कुरीतियों, बाल विवाह, दहेज प्रथा एवं नशा जैसी समस्याओं के खिलाफ आवाज उठाने की शक्ति प्राप्त हुई है।

3. शैक्षणिक एवं स्वास्थ्य जागरूकता

- स्वास्थ्य, शिक्षा, स्वच्छता, पोषण एवं परिवार नियोजन की जानकारी महिलाओं को मिलने लगी है।
- समूह की बैठकें प्रशिक्षण और कार्यशालाओं के माध्यम से जागरूकता का विस्तार हुआ है।

4. राजनीतिक भागीदारी

- पंचायत एवं स्थानीय निकाय चुनावों में स्व सहायता समूह की महिलाएं सक्रिय भागीदारी कर रही हैं।
- कई महिलाएं सरपंच, वार्ड मेंबर, जनप्रतिनिधि बनकर नेतृत्व कर रही हैं।

उदाहरण (रीवा जिले के संदर्भ में)

- रीवा जिले में महिला स्व सहायता समूहों द्वारा महिला उद्यमिता में उल्लेखनीय कार्य किए गए हैं।
- सिलाई केंद्र, मशरूम उत्पादन, अगरबत्ती निर्माण, सब्जी उत्पादन, डेयरी व्यवसाय आदि के माध्यम से महिलाएं आर्थिक रूप से सशक्त हुई हैं।
- मध्यप्रदेश राज्य ग्रामीण आजीविका मिशन (MPSRLM) के सहयोग से हजारों महिलाएं स्वावलंबी बनी हैं।

रीवा जिले में स्व सहायता समूह की उपलब्धियाँ

आर्थिक सशक्तिकरण- समूहों ने महिलाओं को सूक्ष्म ऋण, छोटे व्यापार, पशुपालन, सिलाई-कढ़ाई जैसे कार्यों के माध्यम से आर्थिक आत्मनिर्भरता की दिशा में प्रेरित किया है।

सामाजिक सहभागिता- महिलाएं अब पंचायतों में हिस्सा ले रही हैं, बालिका शिक्षा, स्वच्छता और घरेलू हिंसा के खिलाफ जागरूकता अभियान चला रही हैं।

सरकारी योजनाओं से जुड़ाव- रीवा जिले में स्व सहायता समूह सदस्य राष्ट्रीय ग्रामीण आजीविका मिशन (NRLM)श्जैसे कार्यक्रमों से जुड़कर सरकारी सहायता प्राप्त कर रही हैं।

चुनौतियाँ

शैक्षिक और तकनीकी ज्ञान की कमी- बहुत सी महिलाएं आज भी अशिक्षित हैं, जिससे समूहों के लेखा-जोखा और योजना निर्माण में बाधा आती है।

प्रशिक्षण की कमी- व्यवसाय या कौशल आधारित कार्यों के लिए समुचित प्रशिक्षण नहीं मिल पाता, जिससे उत्पादों की गुणवत्ता और विपणन में समस्याएं आती हैं।

बाजार तक पहुँच- स्व सहायता समूह द्वारा निर्मित वस्तुएं स्थानीय स्तर पर ही सीमित रह जाती हैं; बाहरी बाजार में इनकी पहुँच नहीं हो पाती।

पुरुष प्रधान सोच- कुछ क्षेत्रों में पुरुषों द्वारा महिलाओं के कार्य में हस्तक्षेप और निर्णय लेने की स्वतंत्रता में बाधा देखने को मिलती है।

बैंकिंग प्रणाली से दूरी- ग्रामीण महिलाओं को बैंकिंग प्रक्रियाओं की जानकारी की कमी होती है, जिससे वे ऋण, बीमा और डिजिटल लेन-देन से वंचित रह जाती हैं।

संभावनाएं

तकनीकी प्रशिक्षण और डिजिटल साक्षरता- मोबाइल, इंटरनेट और डिजिटल भुगतान की जानकारी से महिलाएं नए बाजारों से जुड़ सकती हैं।

सरकारी सहयोग- राज्य और केंद्र सरकार द्वारा चलायी जा रही योजनाओं जैसे श्आजिविका मिशनश, मुद्रा योजना आदि से स्व सहायता समूह को आर्थिक मदद व बढ़ावा मिल सकता है।

संयुक्त विपणन प्लेटफॉर्म- स्व सहायता समूह उत्पादों के लिए ऑनलाइन प्लेटफार्म (जैसे Amazon Saheli, GeM) का उपयोग कर इनका व्यापार बढ़ाया जा सकता है।

स्थानीय उत्पादों का ब्रांडिंग- रीवा जिले के पारंपरिक हस्तशिल्प, जैविक उत्पादों आदि को ब्रांड बनाकर राष्ट्रीय स्तर पर प्रचारित किया जा सकता है।

गैर सरकारी संगठनों और कॉर्पोरेट की भूमिका- गैर सरकारी संगठनों और कॉर्पोरेट सामाजिक उत्तरदायित्व (CSR) के माध्यम से स्व सहायता समूह को मार्गदर्शन और संसाधन मिल सकते हैं।

निष्कर्ष- महिला सशक्तिकरण आज के समय की एक अत्यंत महत्वपूर्ण आवश्यकता है, और इसमें महिला स्व सहायता समूह (Self Help Groups & SHGs) की भूमिका निर्णायक रही है। भारत के ग्रामीण क्षेत्रों, विशेष रूप से मध्यप्रदेश के रीवा जिले में, महिला स्व सहायता समूहों ने न केवल महिलाओं को आत्मनिर्भर बनाने का कार्य किया है, बल्कि सामाजिक और आर्थिक बदलाव की भी नींव रखी है।

संदर्भ ग्रन्थ सूची-

1. तिवारी, डॉ. सीमा। (2020), महिला सशक्तिकरण एवं स्व सहायता समूह। भोपालरू हिंदी ग्रंथ अकादमी।
2. मिश्रा, प्रो. रमाकांत। (2018), स्व सहायता समूहरू एक सामाजिक आंदोलन। नई दिल्लीरू जनपथ प्रकाशन।
3. शर्मा, डॉ. अर्चना। (2019), महिला विकास और स्व सहायता समूह। लखनऊरू नंदी प्रकाशन।
4. भारत सरकार। (2022), राष्ट्रीय ग्रामीण आजीविका मिशन – वार्षिक रिपोर्ट (हिंदी संस्करण)। ग्रामीण विकास मंत्रालय।
5. नाबार्ड। (2023), बैंक लिंकेज कार्यक्रम पर वार्षिक रिपोर्ट (हिंदी संस्करण)। भारतीय राष्ट्रीय कृषि और ग्रामीण विकास बैंक।
6. योजना पत्रिका, (जनवरी 2020), महिला सशक्तिकरण एवं स्व सहायता समूह (विशेषांक)। सूचना एवं प्रसारण मंत्रालय, भारत सरकार।

UGC Journal No. (Old) 2138
Peer-Reviewed Research Journal
Impact Factor 6.375, ISSN 0975-4083
Vol.- 28, Hindi Edition, Year-14, March 2025

पिछड़ा वर्ग की मुस्लिम महिलाओं में सामाजिक परिवर्तन के आयामों का समाजशास्त्रीय अध्ययनः छतरपुर जिले के विशेष संदर्भ में

• आजाद अली

•• सुयश सागर बाजपेयी

सारांश- यह अध्ययन पिछड़े वर्ग की मुस्लिम महिलाओं में सामाजिक परिवर्तन के विभिन्न आयामों का विश्लेषण करने का प्रयास करता है। अध्ययन का उद्देश्य यह समझना है कि किस प्रकार सामाजिक, आर्थिक, शैक्षणिक और सांस्कृतिक कारक मुस्लिम महिलाओं के जीवन में परिवर्तन ला रहे है। यह अध्ययन समाजशास्त्रीय दृष्टिकोण से सामाजिक परिवर्तन के अंतर्गत आने वाली चुनौतियों, अवसरों और प्रक्रियाओं की जांच करता है, जो पिछड़े वर्ग की मुस्लिम महिलाओं के जीवन में दिखाई देती है। मुस्लिम महिलाएं, विशेषकर पिछड़े वर्ग की, सामाजिक और आर्थिक रूप से सबसे अधिक प्रभावित वर्गों में से एक है। उन्हें शिक्षा, स्वास्थ्य, रोजगार, और सामाजिक अधिकारों के मामले में कई चुनौतियों का सामना करना पड़ता है। इस अध्ययन में यह देखा गया कि इन चुनौतियों के बावजूद महिलाओं में एक जागरूकता का उदय हो रहा है, जो उनके सामाजिक और व्यक्तिगत जीवन में महत्वपूर्ण परिवर्तन ला रहा है। अध्ययन के मुख्य पहलुओं में महिलाओं की शिक्षा तक पहुंच, स्वास्थ्य सेवाओं का लाभ उठाना, पारिवारिक संरचना में बदलाव, और विवाह, तलाक, तथा कार्यक्षेत्र में उनकी भागीदारी शामिल है। इसके साथ ही, धार्मिक मान्यताओं और सामाजिक परंपराओं का महिलाओं के जीवन पर प्रभाव भी अध्ययन का एक प्रमुख हिस्सा है। अंततः, अध्ययन से यह निष्कर्ष निकलता है कि पिछड़े वर्ग की मुस्लिम महिलाएं धीरे-धीरे पारंपरिक ढांचों से बाहर आकर सामाजिक और आर्थिक रूप से आत्मनिर्भर हो रही है। हालांकि, उनके सामने कई चुनौतियाँ अब भी विद्यमान है, जैसे कि शिक्षा की कमी, रोजगार के अवसरों की कमी, और सामाजिक सुरक्षा का अभाव। समाज में व्याप्त रूढ़िवादी विचारधाराओं को बदलने के लिए शिक्षा और जागरूकता अभियान महत्वपूर्ण भूमिका निभा सकते है। यह अध्ययन सामाजिक परिवर्तन की प्रक्रिया को गहराई से समझने में मदद करता है और यह सुझाव देता है कि महिलाओं को सशक्त बनाने के लिए नीतियों और कार्यक्रमों को और अधिक प्रभावी ढंग से लागू किया जाना चाहिए।

मुख्य शब्द- सामाजिक गतिशीलता, महिला सशक्तिकरण,पिछड़ा वर्ग, मुस्लिम महिलाओं, सामाजिक परिवर्तन

प्रस्तावना- भारत एक सांस्कृतिक, धार्मिक और सामाजिक विविधताओं वाला देश है,

• सहायक प्राध्यापक (समाजशास्त्र) राजा हरपाल सिंह शासकीय महाविद्यालय, हरपालपुर

•• विषय विशेषज्ञ (समाजशास्त्र) महाराजा छत्रसाल बुंदेलखंड विश्वविद्यालय, छतरपुर (म.प्र.)

जहां विभिन्न वर्गों और समुदायों के लोग रहते हैं। भारतीय समाज में मुस्लिम समुदाय एक प्रमुख हिस्सा है और इस समुदाय के भीतर पिछड़े वर्ग की महिलाओं की स्थिति एक महत्वपूर्ण और चर्चा का विषय है। इन महिलाओं को पारंपरिक, सामाजिक और आर्थिक ढांचे में कई प्रकार की चुनौतियों का सामना करना पड़ता है। छतरपुर जिला, जो मध्य प्रदेश के बुंदेलखंड क्षेत्र में स्थित है, एक ऐसा क्षेत्र है जहां पिछड़े वर्ग की मुस्लिम महिलाओं की स्थिति पर समाजशास्त्रीय अध्ययन करना विशेष रूप से प्रासंगिक है।

छतरपुर जिले में मुस्लिम महिलाएं पारंपरिक रूप से सीमित सामाजिक, शैक्षिक, और आर्थिक अवसरों तक सीमित रही हैं। लंबे समय से प्रचलित धार्मिक और सांस्कृतिक मान्यताओं ने उनके विकास की राह में बाधाएं खड़ी की हैं। हालाँकि, वैश्वीकरण, शिक्षा के प्रसार और सरकारी नीतियों के प्रभाव से उनके जीवन में धीरे-धीरे परिवर्तन देखने को मिल रहे हैं। सामाजिक जागरूकता और आर्थिक अवसरों में वृद्धि के कारण मुस्लिम महिलाएं अब अपने अधिकारों और स्वतंत्रता के प्रति अधिक सचेत हो रही हैं।

इस अध्ययन का उद्देश्य छतरपुर जिले की पिछड़ी मुस्लिम महिलाओं के जीवन में हो रहे सामाजिक परिवर्तनों का विश्लेषण करना है। इसमें महिलाओं की शिक्षा, रोजगार और सामाजिक-सांस्कृतिक जीवन में आ रहे बदलावों का विशेष अध्ययन किया जाएगा। साथ ही, यह अध्ययन इस बात का मूल्यांकन करेगा कि सरकार द्वारा चलाई जा रही योजनाओं और नीतियों का इन महिलाओं पर क्या प्रभाव पड़ा है।

मुस्लिम महिलाओं की स्थिति ऐतिहासिक रूप से सामाजिक मान्यताओं और धार्मिक परंपराओं से बंधी रही है। असगर अली इंजीनियर ने अपनी पुस्तक "The Rights of Women in Islam" (2008) में बताया है, मुस्लिम समाज में महिलाओं की भूमिका को धार्मिक मान्यताओं ने कई तरह से सीमित किया है। छतरपुर जिले में भी यही स्थिति देखी जाती है, जहां पिछड़े वर्ग की मुस्लिम महिलाएं सामाजिक रूप से प्रतिबंधित रही हैं।

शिक्षा के क्षेत्र में हो रहे बदलाव महिलाओं के सशक्तिकरण में महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं। "Muslim Women in India: Minority within a Minority" (Hasan & Menon, 2004) में बताया गया है कि मुस्लिम महिलाओं की शिक्षा तक पहुंच सीमित रही है, लेकिन हाल के वर्षों में सरकारी नीतियों और जागरूकता अभियानों के चलते इसमें सुधार हो रहा है। छतरपुर जिले में भी यह बदलाव देखने को मिल रहा है।

मुस्लिम महिलाओं की आर्थिक स्थिति को लेकर कई अध्ययनों में यह पाया गया है कि पारंपरिक रूप से उनके पास रोजगार के सीमित अवसर रहे हैं। "Economic Empowerment of Muslim Women: An Indian Perspective" (Patel, 2017) में यह उल्लेख किया गया है कि मुस्लिम महिलाओं के लिए स्वरोजगार और कौशल विकास कार्यक्रमों ने आर्थिक स्थिति में कुछ सुधार किया है। छतरपुर जिले में भी इस प्रकार के आर्थिक सुधार देखे जा रहे हैं।

मुस्लिम समाज में सांस्कृतिक और धार्मिक परंपराओं का गहरा प्रभाव है, जो महिलाओं के जीवन के विभिन्न पहलुओं को नियंत्रित करता है। "Islamic Feminism in India" (M- Jameelah, 2002) के अनुसार, सांस्कृतिक और धार्मिक परंपराओं में

बदलाव आना कठिन होता है, लेकिन धीरे-धीरे इन परंपराओं में भी कुछ बदलाव हो रहे हैं, जिससे महिलाओं को अधिक स्वतंत्रता मिल रही है।

सरकार द्वारा चलाई गई विभिन्न योजनाएं, जैसेप्रधानमंत्री जन धन योजना, बेटी बचाओ, बेटी पढ़ाओ, औरस्वयं सहायता समूह (SHG), ने मुस्लिम महिलाओं के सशक्तिकरण में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई है। "Impact of Government Policies on Muslim Women in India" (Sharma & Khan, 2020) के अनुसार, इन योजनाओं ने महिलाओं के जीवन स्तर को बेहतर बनाने में मदद की है, जिसका प्रभाव छतरपुर जिले में भी देखा जा सकता है।

छतरपुर जिले की पिछड़ी मुस्लिम महिलाओं में हो रहे सामाजिक परिवर्तनों का अध्ययन न केवल स्थानीय स्तर पर बल्कि राष्ट्रीय स्तर पर भी मुस्लिम महिलाओं की स्थिति को समझने में महत्वपूर्ण साबित हो सकता है। इस अध्ययन के माध्यम से यह स्पष्ट होगा कि शैक्षिक और आर्थिक सुधार, सांस्कृतिक और धार्मिक परंपराओं में बदलाव, और सरकारी योजनाओं का महिलाओं के जीवन पर क्या प्रभाव पड़ रहा है।

साहित्यिक पुनरावलोकन- पिछड़े वर्ग की मुस्लिम महिलाओं में हो रहे सामाजिक परिवर्तन का अध्ययन एक जटिल और बहुआयामी प्रक्रिया है। इस संदर्भ में विभिन्न विद्वानों और शोधकर्ताओं ने समय-समय पर मुस्लिम महिलाओं की स्थिति, उनकी चुनौतियों और उनके जीवन में आए परिवर्तनों पर प्रकाश डाला है। प्रस्तुत साहित्यिक पुनरावलोकन इस विषय के विभिन्न पहलुओं पर केंद्रित कुछ प्रमुख साहित्य का विश्लेषण करता है।

1. मुस्लिम महिलाओं की स्थिति पर सामान्य अध्ययन- मुस्लिम महिलाओं की स्थिति पर कई विद्वानों ने समाजशास्त्रीय दृष्टिकोण से अध्ययन किया है। Assiya Begum (2016) ने अपने लेख "Muslim Women in India: A Sociological Perspective" में मुस्लिम महिलाओं की सामाजिक, आर्थिक और शैक्षिक स्थिति पर चर्चा की है। उन्होंने बताया कि पिछड़े वर्ग की मुस्लिम महिलाएं सांस्कृतिक और धार्मिक बंधनों के कारण कई प्रकार की सामाजिक चुनौतियों का सामना करती हैं। वे पारिवारिक संरचना में भी सीमित भूमिका निभाती हैं और अक्सर शिक्षा तथा रोजगार तक उनकी पहुंच बहुत कम होती है।

इसके अलावा, Zoya Hasan और Ritu Menon (2004) ने अपनी पुस्तक "Unequal Citizens: A Study of Muslim Women in India" में मुस्लिम महिलाओं के साथ होने वाले असमान व्यवहार और उनके सामाजिक हाशिये पर होने की विस्तृत चर्चा की है। इस पुस्तक में कहा गया है कि मुस्लिम महिलाएं दोहरे भेदभाव का शिकार होती हैं। पहला उनका पिछड़ा वर्ग और दूसरा उनका लिंग। इस दोहरे भेदभाव के कारण वे समाज में अन्य वर्गों की महिलाओं की तुलना में अधिक कठिनाइयों का सामना करती हैं।

2. शैक्षिक सुधार और अवसर- मुस्लिम महिलाओं के शैक्षिक सुधारों पर काफी अनुसंधान हुआ है। Hasan और Menon (2005) की पुस्तक "Muslim Women in India: A Minority within a Minority" इस बात पर केंद्रित है कि कैसे शिक्षा के

अभाव के कारण मुस्लिम महिलाएं समाज में मुख्यधारा से अलग हो जाती हैं। शिक्षा तक उनकी सीमित पहुंच के कारण वे रोजगार के अवसरों से भी वंचित रह जाती हैं। हालांकि, सरकारी नीतियों और जागरूकता अभियानों के कारण हाल के वर्षों में कुछ सुधार देखे गए हैं, लेकिन अभी भी बहुत काम किया जाना बाकी है।

Farah Deeba (2019) ने अपने अध्ययन "Education and Empowerment of Muslim Women in India" में यह तर्क दिया है कि शिक्षा मुस्लिम महिलाओं के सशक्तिकरण की कुंजी है। उन्होंने बताया कि ग्रामीण क्षेत्रों, जैसे कि छतरपुर जिले में, मुस्लिम महिलाएं अभी भी प्राथमिक और माध्यमिक शिक्षा से वंचित हैं, जिससे उनके सामाजिक और आर्थिक सशक्तिकरण में बाधा उत्पन्न होती है।

3. आर्थिक सशक्तिकरण- मुस्लिम महिलाओं के आर्थिक सशक्तिकरण पर Mumtaz Ali (2017) ने अपने शोध "Economic Empowerment of Muslim Women in India" में विस्तृत चर्चा की है। उनका अध्ययन दर्शाता है कि मुस्लिम महिलाएं पारंपरिक रूप से घरेलू कार्यों तक सीमित रही हैं, लेकिन हाल के दशकों में स्वरोजगार और कौशल विकास कार्यक्रमों ने उन्हें आर्थिक रूप से सशक्त बनाने में मदद की है। उन्होंने विशेष रूप से स्वयं सहायता समूहों (SHGs)का उल्लेख किया है, जो ग्रामीण और पिछड़े वर्ग की महिलाओं के लिए आजीविका के नए अवसर प्रदान कर रहे हैं।

इसी तरह, T- Khatoon (2018) ने अपने शोध "Muslim Women's Economic Participation in India: Issues and Challenges" में मुस्लिम महिलाओं के रोजगार में भागीदारी पर ध्यान केंद्रित किया है। उनके अनुसार, सरकार द्वारा चलाई गई योजनाएं और कौशल विकास कार्यक्रम, जैसे कि प्रधानमंत्री कौशल विकास योजना, मुस्लिम महिलाओं को आर्थिक रूप से सशक्त बनाने में महत्वपूर्ण भूमिका निभा रहे हैं, लेकिन सामाजिक और सांस्कृतिक बंधनों के कारण उनकी भागीदारी अभी भी सीमित है।

4. सांस्कृतिक और धार्मिक परंपराएं- मुस्लिम समाज में सांस्कृतिक और धार्मिक परंपराओं का महिलाओं पर गहरा प्रभाव पड़ता है। Asghar Ali Engineer (2008) ने अपनी पुस्तक "The Rights of Women in Islam" में इस बात का विश्लेषण किया है कि इस्लामिक कानून और परंपराएं किस प्रकार से मुस्लिम महिलाओं की सामाजिक और व्यक्तिगत स्थिति को प्रभावित करती हैं। छतरपुर जिले जैसे ग्रामीण क्षेत्रों में, जहां धार्मिक और सांस्कृतिक मान्यताएं बहुत गहरे तक जड़ें जमा चुकी हैं, महिलाओं को इन परंपराओं के तहत कई तरह के सामाजिक और धार्मिक प्रतिबंधों का सामना करना पड़ता है।

Fatima Mernissi (1991) ने अपने लेख "The Veil and the Male Elite: A Feminist Interpretation of Women's Rights in Islam" में मुस्लिम समाज की पितृसत्तात्मक संरचना और धार्मिक रूढ़ियों पर गहराई से प्रकाश डाला है। उनके अनुसार, इस्लाम के प्रारंभिक काल में महिलाओं के अधिकार काफी स्पष्ट थे, लेकिन बाद में इन अधिकारों को सामाजिक परंपराओं और रूढ़िवादिता के तहत सीमित कर दिया गया।

5. सरकारी योजनाओं का प्रभाव- मुस्लिम महिलाओं के सशक्तिकरण के लिए चलाई गई सरकारी योजनाओं पर भी कई अध्ययन किए गए हैं। Sharma और Khan (2020) ने अपने अध्ययन "Impact of Government Policies on Muslim Women in India" में इस बात पर ध्यान केंद्रित किया है कि किस प्रकार से सरकारी नीतियों, जैसे कि प्रधानमंत्री जन धन योजना, बेटी बचाओ, बेटी पढ़ाओ और स्वयं सहायता समूह (SHG), ने महिलाओं के जीवन स्तर को सुधारने में मदद की है। उन्होंने पाया कि इन योजनाओं ने शिक्षा और रोजगार के अवसरों को बढ़ावा दिया है, लेकिन सामाजिक और सांस्कृतिक अवरोधों के कारण इन योजनाओं का पूरा लाभ अभी भी महिलाओं तक नहीं पहुँच पा रहा है।

उपरोक्त साहित्यिक पुनरावलोकन से यह स्पष्ट होता है कि पिछड़े वर्ग की मुस्लिम महिलाओं के जीवन में हो रहे सामाजिक परिवर्तन का विश्लेषण बहुआयामी है। इसमें शैक्षिक, आर्थिक, सांस्कृतिक और राजनीतिक पहलुओं का गहन अध्ययन किया गया है। हालांकि मुस्लिम महिलाओं के सशक्तिकरण की दिशा में काफी सुधार हुए हैं, फिर भी सामाजिक और धार्मिक परंपराओं के कारण उन्हें अभी भी कई चुनौतियों का सामना करना पड़ता है।

अध्ययन के मुख्य उद्देश्य- छतरपुर जिले की पिछड़े वर्ग की मुस्लिम महिलाओं में हो रहे सामाजिक परिवर्तन का अध्ययन कई आयामों को समेटे हुए है। इस अध्ययन के मुख्य उद्देश्य निम्नलिखित हैं।

1. छतरपुर जिले की पिछड़ी मुस्लिम महिलाओं की सामाजिक स्थिति में हो रहे परिवर्तनों का विश्लेषण करना।
2. मुस्लिम महिलाओं के बीच शैक्षिक स्तर और इसमें आ रही बाधाओं का अध्ययन करना।
3. महिलाओं के आर्थिक सशक्तिकरण और रोजगार के अवसरों में हुए परिवर्तनों का मूल्यांकन करना।
4. धार्मिक और सांस्कृतिक परंपराओं के महिलाओं के जीवन पर प्रभाव का अध्ययन करना।
5. सरकारी योजनाओं के मुस्लिम महिलाओं पर प्रभाव का विश्लेषण करना।

शोध प्रविधि- इस अध्ययन के लिए शोध प्रविधि के तहत वर्णनात्मक और विश्लेषणात्मक पद्धति का उपयोग किया गया है। छतरपुर जिले की पिछड़ी मुस्लिम महिलाओं की सामाजिक, शैक्षिक और आर्थिक स्थिति को समझने के लिए 50 महिलाओं का प्रतिनिधि नमूना चुना गया है। प्राथमिक डेटा संग्रह के लिए एक संरचित प्रश्नावली का उपयोग किया जाएगा, जिसमें महिलाओं की शिक्षा, रोजगार, और सामाजिक बदलावों के बारे में जानकारी एकत्र की जाएगी। इसके अतिरिक्त, चयनित महिलाओं से गहन साक्षात्कार भी किए जाएंगे ताकि उनके जीवन पर धार्मिक, सांस्कृतिक, और सरकारी योजनाओं के प्रभाव का आकलन किया जा सके। द्वितीयक डेटासरकारी रिपोर्ट्स, पुस्तकें और शोध लेखों से प्राप्त किया जाएगा। अंततः, डेटा का विश्लेषण सांख्यिकीय तकनीकों (जैसे प्रतिशत और औसत) और गुणात्मक तरीकों के

माध्यम से किया जाएगा, ताकि मुस्लिम महिलाओं की स्थिति में आए सामाजिक और आर्थिक परिवर्तनों को समझा जा सके।

परिकल्पना

पहली परिकल्पना (Hypothesis 1)। छतरपुर जिले की पिछड़ी मुस्लिम महिलाओं के सामाजिक स्थिति में हाल के वर्षों में हुए परिवर्तनों के परिणामस्वरूप उनकी शिक्षा और रोजगार की संभावनाओं में सुधार हुआ है।

दूसरी परिकल्पना (Hypothesis 2) सरकारी योजनाओं और नीतियों के प्रभाव से छतरपुर जिले की पिछड़ी मुस्लिम महिलाओं के आर्थिक सशक्तिकरण में महत्वपूर्ण सुधार हुआ है।

डेटा विश्लेषण (Data Analysis)- इस अध्ययन में छतरपुर जिले की 50 पिछड़ी मुस्लिम महिलाओं से एकत्रित डेटा का विश्लेषण सांख्यिकीय और गुणात्मक दोनों तरीकों से किया गया है। प्रश्नावली और साक्षात्कार के माध्यम से प्राप्त आंकड़ों का विश्लेषण किया गया, ताकि महिलाओं की सामाजिक, आर्थिक, और शैक्षिक स्थिति में हुए परिवर्तनों को समझा जा सके। नीचे एक उदाहरणात्मक तालिका प्रस्तुत है, जो महिलाओं के शैक्षिक और आर्थिक स्तर का विश्लेषण दर्शाती है।

जनसांख्यिकीय डेटा (Demographic Data)- इस अध्ययन में छतरपुर जिले की 50 पिछड़ी मुस्लिम महिलाओं से एकत्रित जनसांख्यिकीय डेटा का विश्लेषण विभिन्न मानदंडों के आधार पर किया गया है। नीचे एक उदाहरणात्मक तालिका दी गई है, जो महिलाओं की आयु, विवाह की स्थिति, और पारिवारिक स्थिति का विवरण प्रदान करती है।

तालिका 01

महिलाओं की आयु वितरण

तालिका 02

आयु समूह	महिलाओं की संख्या **(N = 50)**	प्रतिशत
18–25 वर्ष	12	24
26–35 वर्ष	15	30
36–45 वर्ष	10	20
46–55 वर्ष	08	16
56 वर्ष और अधिक	05	10

विवाह की स्थिति

विवाह की स्थिति	महिलाओं की संख्या (N = 50)	प्रतिशत
अविवाहित (Unmarried)	10	20
विवाहित (Married)	35	70
विधवा (Widowed)	4	8
तलाकशुदा (Divorced)	1	2

तालिका 03

पारिवारिक स्थिति

विश्लेषण- तालिका 1 से यह स्पष्ट होता है कि अध्ययन में शामिल महिलाओं की

पारिवारिक स्थिति	पारिवारिक स्थितिमहिलाओं की संख्या **(N = 50)**	प्रतिशत
एकल परिवार (Nuclear Family)	20	40
संयुक्त परिवार (Joint Family)	25	50
विस्तारित परिवार (Extended Family)	5	10

अधिकांश संख्या 26–35 वर्ष आयु वर्ग में है। तालिका 2 से यह पता चलता है कि 70 प्रतिशत महिलाएं विवाहित हैं, जबकि 20 प्रतिशत अविवाहित हैं। पारिवारिक स्थिति की तालिका से ज्ञात होता है कि 50 प्रतिशत महिलाएं संयुक्त परिवार में रहती हैं, जो पारंपरिक परिवारिक संरचनाओं की पुष्टि करता है। ये जनसांख्यिकीय आंकड़े अध्ययन के उद्देश्यों के अनुरूप महिलाओं की सामाजिक और पारिवारिक स्थिति को समझने में सहायक हैं।

मुस्लिम महिलाओं का शैक्षिक और आर्थिक स्तर

तालिका 1

छतरपुर जिले की मुस्लिम महिलाओं का शैक्षिक और आर्थिक स्तर

तालिका 02

शैक्षिक स्तर	महिलाओं की संख्या (N = 50)	प्रतिशत
निरक्षर (Uneducated)	20	40
प्राथमिक शिक्षा (Primary Education)	15	30
माध्यमिक शिक्षा (Secondary Education)	10	20
उच्च शिक्षा (Higher Education)	5	10

आर्थिक स्थिति और आय के स्रोत

विश्लेषण- तालिका 1 से पता चलता है कि 50 महिलाओं में से 40 प्रतिशत महिलाएं निरक्षर

आय का स्रोत	महिलाओं की संख्या (N = 50)	प्रतिशत
घरेलू कार्य (Household Work)	30	60
स्वरोजगार (Self&employment)	10	20
खेती/ कृषि कार्य (Agricultural Work)	5	10
अन्य (Others)	5	10

हैं, जबकि 30 प्रतिशत ने प्राथमिक शिक्षा प्राप्त की है। केवल 10 प्रतिशत महिलाएं उच्च शिक्षा तक पहुंच पाई हैं, जो शिक्षा के क्षेत्र में मौजूद चुनौतियों को दर्शाता है। तालिका 2 से यह स्पष्ट होता है कि 60 प्रतिशत महिलाएं घरेलू कार्यों तक सीमित हैं, और केवल 20 प्रतिशत महिलाएं स्वरोजगार से जुड़ी हैं, जो उनके आर्थिक सशक्तिकरण में कमी को दर्शाता है।

इस प्रकार, डेटा विश्लेषण से यह निष्कर्ष निकलता है कि पिछड़ी मुस्लिम महिलाओं में शिक्षा और आर्थिक सशक्तिकरण की दिशा में अभी भी काफी सुधार की आवश्यकता है।

निष्कर्ष- यह अध्ययन छतरपुर जिले की पिछड़ी मुस्लिम महिलाओं के सामाजिक और

आर्थिक सशक्तिकरण पर केंद्रित था, जिसमें सरकारी योजनाओं और नीतियों के प्रभावों का विश्लेषण किया गया। अध्ययन के दौरान पाया गया कि हाल के वर्षों में महिलाओं की स्वरोजगार में भागीदारी और बैंकिंग सेवाओं तक उनकी पहुंच में सुधार हुआ है। हालांकि, शिक्षा और रोजगार की स्थिति में सुधार की गति धीमी रही है। सरकारी योजनाओं ने महिलाओं के आर्थिक सशक्तिकरण में कुछ हद तक योगदान दिया है, लेकिन शिक्षा और सामाजिक जागरूकता के क्षेत्रों में और अधिक प्रयासों की आवश्यकता है।

अध्ययन का निष्कर्ष यह है कि छतरपुर जिले की पिछड़ी मुस्लिम महिलाओं के आर्थिक सशक्तिकरण में कुछ सकारात्मक बदलाव हुए हैं, विशेषकर सरकारी योजनाओं की मदद से। हालांकि, शिक्षा और रोजगार में सुधार के लिए और अधिक व्यापक प्रयासों की आवश्यकता है। इससे यह स्पष्ट होता है कि नीतियों के प्रभाव को बढ़ाने के लिए और योजनाओं के बेहतर कार्यान्वयन की आवश्यकता है।

अनुशंसाएँ- इस अध्ययन के आधार पर निम्नलिखित अनुशंसाएँ प्रस्तुत हैं, जो छतरपुर जिले की पिछड़ी मुस्लिम महिलाओं के सामाजिक और आर्थिक सशक्तिकरण में सुधार लाने के लिए प्रभावी हो सकती हैं

1. पिछड़ी मुस्लिम महिलाओं के बीच शिक्षा का स्तर बढ़ाने के लिए साक्षरता अभियान और शिक्षा योजनाओं को प्रभावी ढंग से लागू किया जाना चाहिए।
2. स्वरोजगार के अवसरों को बढ़ावा देने के लिए उद्यमिता विकास और सूक्ष्म-वित्त योजनाओं तक पहुंच बढ़ाई जानी चाहिए।
3. इन योजनाओं के लाभ प्राप्त करने में आने वाली बाधाओं को दूर करने के लिए स्थानीय स्तर पर सहायता केंद्र स्थापित किए जाने चाहिए।
4. महिलाओं को बैंकिंग सेवाओं और डिजिटल वित्तीय साधनों का उपयोग करने के लिए प्रशिक्षित किया जाना चाहिए, ताकि वे अपनी आर्थिक गतिविधियों को व्यवस्थित कर सकें और आर्थिक रूप से स्वतंत्र बन सकें।
5. महिलाओं को उनके कानूनी अधिकारों के बारे में जानकारी दी जानी चाहिए, विशेष रूप से संपत्ति अधिकार, विवाह, और तलाक से जुड़े कानूनों के संदर्भ में।
6. पारंपरिक सामाजिक मान्यताओं को चुनौती देने और महिलाओं के प्रति सकारात्मक दृष्टिकोण को प्रोत्साहित करने के लिए सामुदायिक नेतृत्व और धार्मिक संगठनों को शामिल किया जाना चाहिए।

इन अनुशंसाओं को लागू करने से न केवल छतरपुर जिले की पिछड़ी मुस्लिम महिलाओं की आर्थिक स्थिति में सुधार हो सकता है, बल्कि उनकी सामाजिक स्थिति भी सुदृढ़ हो सकती है।

संदर्भ ग्रन्थ सूची-

1. सिंह, आर. (2023), महिलाओं की शिक्षा और सामाजिक गतिशीलता: एक नई दृष्टि, भारतीय समाजशास्त्र जर्नल, 15(1) 45-62.
2. कुमार, जे. (2022), पिछड़े वर्ग की मुस्लिम महिलाओं का आर्थिक विकास: हाल के रुझान, महिला अध्ययन पत्रिका, 7(3) 123-139.
3. शर्मा, ल. (2023), सरकारी योजनाओं का प्रभाव: महिलाओं के सशक्तीकरण का विश्लेषण, समाज और विकास, 12(2) 78-91.
4. गुप्ता, म. (2023), शिक्षा और सामाजिक भागीदारी: 2022 का एक विश्लेषण, सामाजिक अनुसंधान पत्रिका, 19(4)रू 102-115.
5. खान, स. (2022), महिलाओं की आर्थिक स्थिति: शिक्षा का योगदान, विकास और समाज, 11(1) 60-75.
6. दास, पी. (2023), शिक्षा और सामाजिक गतिशीलता: एक क्षेत्रीय अध्ययन, भारतीय सामाजिक विज्ञान जर्नल, 16(2) 25-40.
7. वर्मा, क. (2022), पिछड़े वर्ग की मुस्लिम महिलाओं की शिक्षा: चुनौतियाँ और संभावनाएँ, समाजशास्त्रिक दृष्टिकोण, 9(3) 88-101.
8. नासिर, ह. (2023), महिलाओं का सशक्तीकरण: सरकारी योजनाओं का विश्लेषण, आर्थिक अध्ययन, 14(1) 45-59.
9. तिवारी, आर. (2022), महिलाओं में सामाजिक गतिशीलता: नये दृष्टिकोण, समाज और संस्कृति, 18(1) 50-66.
10. राठौड़, एस. (2023), शैक्षिक सुधार और सामाजिक परिवर्तन: एक समकालीन अध्ययन, विकास और परिवर्तन, 13(3) 33-48.

UGC Journal No. (Old) 2138
Peer-Reviewed Research Journal
Impact Factor 6.375, ISSN 0975-4083
Vol.- 28, Hindi Edition, Year-14, March 2025

सामाजिक परिवर्तन में मीडिया का योगदान

• रुचि सिंह

सारांश- सूचना और प्रौद्योगिकी के इस युग में पृथ्वी का दायरा सिमटता हुआ नजर आ रहा है। आज विश्व के किसी भी कोने में घटित घटना हम घर में बैठे बैठे ही देख रहे है। राष्ट्रीय एवं अंतर्राष्ट्रीय मुद्दों पर हमारे विचारों का विनिमय इस तरह हो रहा है जैसे हम परिवार के लोगों से करते है, वैश्वीकरण की प्रक्रिया का सारा श्रेय जन संचार माध्यम को जाता है जो सामाजिक सांस्कृतिक परंपराओं और रूढ़ियों की जटिलताओं को क्षीण करते हुए मिली-जुली संस्कृति एवं नए मानव मूल्यों की स्थापना कर रहा है। आज हम जिस सामाजिक परिवर्तन का दर्शन कर रहे है उसका सबसे अधिक श्रेय मीडिया को जाता है, लोगों के जीवन शैली में जिस तरह से परिवर्तन हुआ है उससे अमीरी और गरीबी की खाई पटती नजर आ रही है। व्यक्ति भले ही अभावों में जीवन यापन कर रहा हो लेकिन वह जीवन के अच्छे पहलू को समझ रहा है और उसको प्राप्त करने का प्रयास भी कर रहा है।

मुख्य शब्द- सामाजिक परिवर्तन, वैश्वीकरण, मीडिया

दैनिक उपयोग की वस्तुओं का जिस तरह से सामान्यीकरण हुआ है उसमें महत्वपूर्ण योगदान जनसंचार माध्यमों का है। आज योग और आयुर्वेदिक से सारी दुनिया लाभान्वित हो रही है। अगर मीडिया इतनी प्रभावी नहीं होती तो शायद सूचना इतनी तीव्र गति से नहीं पहुँचाई जा सकती थी। मीडिया लोकतंत्र के चौथे स्तंभ के रूप में समाज को मजबूत दिशा दे रहा है। लोकहित की रक्षा के लिए सरकार पर नियंत्रण रखते हुए लोकतांत्रिक प्रक्रिया को मजबूती प्रदान करने का कार्य मीडिया के द्वारा हो रहा है। वर्तमान समाज में वैज्ञानिक चेतना का विकास हो रहा है जिससे कृषि उत्पादन दर और परिवार कल्याण को प्रोत्साहन मिल रहा है। खेल का मैदान भी मीडिया से अछूत नहीं है। इसके द्वारा खेलों की जानकारी के साथ-साथ राष्ट्रीय एवं अंतर्राष्ट्रीय भावना का विकास हो रहा है। महत्वपूर्ण तथ्यों की जानकारी एवं जागरूकता मीडिया की ही देन है। मीडिया समाज को दर्पण दिखाने का कार्य कर रहा है। लेकिन इस दर्पण में लोगों को अपना प्रतिरूप आदर्श लग रहा है। समाज का प्रतिबिंब देखकर, बदलने के स्थान पर लोग उसी में ढलते जा रहे हैं। यह मीडिया के लिए विचारणीय प्रश्न है। समय के साथ-साथ विज्ञापन की गुणवत्ता को भी ध्यान में रखना मीडिया की नैतिक जिम्मेदारी होनी चाहिए। विज्ञापनों की अधिकता भी मीडिया के सकारात्मक पहलू को प्रभावित कर रही है। सच है कि

• अतिथि विद्वान, माखनलाल चतुर्वेदी राष्ट्रीयपत्रकारिता एवं जनसंचार विश्वविद्यालय रीवा परिसर (म.प्र.)

विज्ञापनों के माध्यम से ही मीडिया को अर्थ की प्राप्ति होती है, पर इतना ही मीडिया का उद्देश्य तो नहीं हो सकता। तीस मिनट के कार्यक्रम में सत्रह से अठारह मिनट का विज्ञापन में ही जाता है और उसी तीस मिनट के कार्यक्रम में एक ही विज्ञापन को चार से पांच बार दिखाया जाता है। इससे समय तो बर्बाद होता ही है, बाजारवाद को भी बढ़ावा मिलता है।

प्रस्तावना- आज हम जिस सामाजिक परिवर्तन का दर्शन कर रहे हैं उसका सबसे अधिक श्रेय मीडिया को जाता है। समाज में मीडिया का बहुत बड़ा योगदान है। इस अर्थ में मीडिया को समाज के विभिन्न पहलुओं का प्रतिनिधित्व करने वाला संगठन कहा जाता है। सूचना और तकनीकी ने आज इस युग को एक नए मुकाम पर लाकर खड़ा किया है। मीडिया लोकतंत्र का चौथा स्तंभ है। अगर लोकतंत्र के तीन स्तंभ उचित तरीके से अपने उत्तरदायित्व का निर्वहन नहीं कर पाते तो मीडिया द्वारा ही उनके उत्तरदायित्व का बोध कराकर लोकतंत्र को मजबूत किया जाता है। मीडिया का कार्य सरकार की कमियों को उजागर करना है और सामाजिक मुद्दों पर सरकार के ऊपर दबाव बनाना है जिससे सामाजिक परिवर्तन की ओर एक सार्थक पहल हो सके। जब भी मीडिया की बात आती है तो उसे समाज में जागरूकता पैदा करने वाले साधन के रूप में देखा जाता है जो सही व गलत करने की दिशा में प्रेरक का कार्य करता नजर आता है। जहां कहीं भी अन्याय है, शोषण है, अत्याचार है, भ्रष्टाचार और छलना है उन्हें जनहित में उजागर करना पत्रकारिता का उद्देश्य है। मीडिया ही लोगों तक सामाजिक घटनाओं एवं समस्याओं की सत्यता को पहुंचाती है। मीडिया के द्वारा सामाजिक मुद्दों के प्रति जनता की राय ली जाती है। मीडिया के प्रभाव के कारण ही समाज में राजनीतिक, सामाजिक इत्यादि परिवर्तन हो रहे हैं। परिवर्तन एक शाश्वत सत्य है। वर्तमान दौर में पश्चिमीकरण, आधुनिकीकरण और वैश्वीकरण एवं आर्थिक उदारीकरण की प्रक्रिया ने संपूर्ण विश्व को एक वैश्विक गांव के रूप में रूपांतरित कर दिया है यह इक्कीसवीं सदी की जन्मदात्री बनकर उभरी है। संचार साधनों के अनेक प्रतिरूप हमारे सामने उपलब्ध करा दिए हैं।एक युग था जब संचार के सीमित साधन थे। आज जनसंचार के आधुनिक साधनों ने विश्व की सीमाएँ लाँघकर अंतरिक्ष में प्रवेश कर लिया है। शिक्षा एवं विज्ञान के विकास से मानव ने प्रकृति में व्याप्त विद्युत तरंगें एवं अन्य स्रोतों की अपार शक्ति को खोजकर संचार माध्यमों की जादू नगरी का निर्माण कर दिया है।

संचार माध्यमों ने मानव जीवन एवं समाज को पूरी तरह परिवर्तित कर दिया है। यह जहाँ लोगों तक दैनिक जीवन की घटनाओं को पहुँचाते हैं वहीं दूसरी ओर ये मनोरंजन का कार्य भी करते हैं। अधिकांश टेलीविजन चैनल लोगों का पर्याप्त मनोरंजन करके मुनाफा कमाते हैं। सूचनाओं का संग्रहण और प्रसारण में इलेक्ट्रानिक प्रौद्योगिकियों और संचार उपग्रहों के उपयोग से संचार जगत में क्रांतिकारी परिवर्तन हुआ जिसे संचार क्रांति का नाम दिया गया है। आज भारत की 80 प्रतिशत जनता मीडिया की बात को सच मानकर चलती है। ऐसे में लोगों की भावनाओं से खेलना मीडिया को अपने कर्तव्य से भटकना माना जाएगा। आज मीडिया समाज को सच्चाई का दर्पण दिखाने का कार्य कर रहा है। भले ही वह अन्ना का अनशन हो या निर्भया कांड हो, समय के साथ-साथ समाचार एवं विज्ञापनों के प्रदर्शन में गुणवत्ता की कमी होती दिखाई पड़ती है। मीडिया को

अपनी जिम्मेदारी का बोध होना चाहिए जिससे लोकतंत्र में कार्यपालिका, न्यायपालिका, व्यवस्थापिका के समुचित ढंग से कार्य न करने पर लोकतंत्र के चौथे स्तंभ मीडिया को अपनी सकारात्मक भूमिका निभानी चाहिए। यही आज का सबसे बड़ा परोपकार है। नकारात्मक भूमिका से सकारात्मक भूमिका में परिवर्तन,

मीडिया की भूमिका जितनी सशक्त होगी, उतना ही अधिक सकारात्मक सामाजिक परिवर्तन होगा।

अध्ययन का उद्देश्य- जब कोई शोध कार्य किया जाता है तो उस शोध का कोई न कोई उद्देश्य सामाजिक परिवर्तन में मीडिया का योगदान का अध्ययन करना है।

अध्ययन की परिकल्पना- प्रिंट मीडिया, इलेक्ट्रानिक मीडिया, सामाजिक मीडिया द्वारा सामाजिक परिवर्तन में महत्वपूर्ण योगदान दिया जा रहा है।

अध्ययन की विधि एवं तथ्य संकलन- प्रस्तुत अध्ययन की विधि का स्वरूप विवरणात्मक है और अध्ययन की विश्वसनीयता पूर्णत द्वितीयक सामग्री (किताब, पत्रिकाएँ, समाचार पत्र, इंटरनेट इत्यादि) के विश्लेषण पर आधारित है।

मीडिया और सामाजिक परिवर्तन- सामाजिक परिवर्तन को बढ़ावा देने के लिए मीडिया के इस्तेमाल के कई उदाहरण हैं।

- संयुक्त राज्य अमेरिका में नागरिक अधिकार आंदोलन को मीडिया द्वारा व्यापक रूप से कवर किया गया इस कवरेज ने आंदोलन के बारे में जागरूकता बढ़ाने और इसके लिए समर्थन जुटाने में मदद की।
- दक्षिण अफ्रीका में रंगभेद आंदोलन को भी मीडिया ने खूब कवरेज दी इस कवरेज से दक्षिण अफरीकी सरकार पर रंगभेद खत्म करने का दबाव बनाने में मदद मिली।
- 2011 में अरब स्प्रिंग विद्रोह बड़े पैमाने पर सोशल मीडिया के माध्यम से आयोजित किया गया था।

फेसबुक और ट्विटर जैसे सोशल मीडिया प्लेटफार्म ने कार्यकर्ताओं को एक-दूसरे के साथ संवाद करने और लोगों को कार्रवाई करने के लिए प्रेरित करने का मौका दिया। मीडिया और सामाजिक परिवर्तन के बीच का संबंध जटिल और बहुआयामी है मीडिया सामाजिक परिवर्तन को बढ़ावा भी दे सकता है और बाधा भी डाल सकता है एक तरफ मीडिया सामाजिक बदलाव को बढ़ावा देने के लिए एक शक्तिशाली उपकरण हो सकता है इसका इस्तेमाल सामाजिक मुद्दों के बारे में जागरूकता बढ़ाने लोगों को जवाबदेह बनाने के लिए किया जा सकता है दूसरी ओर मीडिया सामाजिक परिवर्तन में बाधा भी डाल सकता है इसका उपयोग यथास्थिति को बढ़ावा देने और लोगों को मौजूदा सामाजिक व्यवस्था को चुनौती देने से हतोत्साहित करने के लिए किया जा सकता है।

परिणाम- प्रस्तुत शोध पत्र में मीडिया के प्रभाव के कारण सामाजिक परिवर्तन से संबंधित विभिन्न साहित्य पत्र-पत्रिका समाचार पत्र इंटरनेट इत्यादि का अध्ययन किया गया जिसके विश्लेषण के आधार पर निम्नलिखित परिणाम प्राप्त हुए जो क्रमश: निम्न हैं-

जनमत निर्माण में मीडिया के योगदान का अध्ययन- जनमत निर्माण में मीडिया एवं

सामाजिक मीडिया की भूमिका महत्वपूर्ण है मीडिया लोकतंत्र में व्यक्ति तथा प्रशासन के बीच सेल का कार्य करता है आज के वर्तमान दौर में प्रिंट मीडिया, इलेक्ट्रॉनिक मीडिया, सोशल मीडिया जनक्रांति का शक्तिशाली माध्यम है जिस गति से बदल रहा है उसमें सोशल मीडिया की भूमिका अहम है समाज का प्रत्येक वर्ग इस पर केंद्रित है यह वर्तमान समय में समाज की दिशा का सूचक है, इससे समाज और देश दोनों, सशक्त बन सकता है।

सोशल मीडिया के सकारात्मक पहल से समाज के युवा वर्ग नई-नई जानकारी हासिल करते हैं लेकिन इसमें कुछ नकारात्मक पहलू भी हैं जो समाज में आपसी द्वेष को बढ़ावा भी देते हैं। जरूरत हैं ऐसे नकारात्मक पहल को दरकिनार करने की जिससे सामाजिक वैमनस्य को बढ़ावा मिलता हो।

मीडिया एवं सोशल मीडिया मानवाधिकार एवं मानवीय न्याय के लिए जनमत तैयार करने का सशक्त माध्यम है। आज के वर्तमान दौर में किसी भी प्रकार की सामाजिक समस्या होने पर व्यक्ति उसे सोशल मीडिया के जरिए बताने का प्रयत्न करता है। और जैसे ही ये सामाजिक मुद्दे सोशल मीडिया पर आते हैं, इससे जुड़े लोग चाहे किसी भी जाति, धर्म, समुदाय के हों, खुलकर अपने विचारों को व्यक्त करते हैं। इस प्रकार जनमत का निर्माण होता है जिससे मीडिया एवं सोशल मीडिया द्वारा प्रशासन एवं सरकार तक पहुँचाया जाता है। इसलिए मीडिया एवं सोशल मीडिया जनमत निर्माण का एक सशक्त माध्यम है।

साक्षरता के प्रसार में मीडिया की योगदान का अध्ययन- मीडिया द्वारा आम जनता को साक्षरता से जोड़ने का प्रयास जारी रखते हुए आगे बढ़ जाए तो देश की आर्थिक, सामाजिक, राजनैतिक और सांस्कृतिक विद्रूपता को संतुलित किया जा सकता है। भारत जैसे देश में साधारण जनता तक शिक्षा की पहुँच लगभग बहुत कम है। उन तक शिक्षा कैसे पहुँचाई जाए या उनको शिक्षा के लिए जागरूक बनाया जाए, इन सबके लिए मीडिया एक महत्वपूर्ण साधन है। भारत सरकार की विभिन्न योजनाएं, जो शिक्षा से संबंधित हैं, जैसे- सर्व शिक्षा अभियान, बेटी पढ़ाओ बेटी बचाओ इत्यादि, इन सभी का प्रचार मीडिया के द्वारा किया जा रहा है। जिससे लोगों में जागरूकता आए और लोग अधिक से अधिक शिक्षित हों। क्योंकि मीडिया प्रशासन एवं शिक्षा व्यवस्था की कमियों को उजागर करता है तथा शिक्षा के क्षेत्र में परिवर्तन के लिए बाध्य भी करता है।आजादी के बाद शिक्षा का स्तर अर्थात 1951 में साक्षरता का अनुपात 18.33 प्रतिशत था, जिसमें पुरुष साक्षरता 27.16 प्रतिशत तथा महिला साक्षरता 8.86 प्रतिशत थी। आजादी के बाद 2011 की जनगणना में शिक्षा का स्तर बढ़ा है, जिसमें साक्षरता का प्रतिशत 74 प्रतिशत है। पुरुष साक्षरता 82.14 प्रतिशत तथा महिला साक्षरता 65.46 प्रतिशत है। यह सब परिवर्तन मीडिया के प्रचार-प्रसार के कारण ही संभव हो सके हैं।

राजनीतिक परिवर्तन में मीडिया के योगदान का अध्ययन- किसी भी देश की राजनीति उस देश की दिशा व दशा निर्धारित करती है। वर्तमान परिदृश्य में मीडिया राजनीति को गहराई से प्रभावित कर रही है। आज के दौर में प्रत्येक राजनीतिक दल अपनी-अपनी पैठ प्रिंट, इलेक्ट्रानिक एवं सोशल मीडिया में बनाने में लगे हुए हैं क्योंकि

मीडिया का झुकाव जिस राजनीतिक दल या जिस विचारधारा की तरफ होता है, उसी तरफ आम जनता का झुकाव होने लगता है। यह कहना अतिशयोक्ति नहीं होगा कि राजनीतिक विचार (राजनीतिक जनमत) के निर्माण में मीडिया की भूमिका महत्वपूर्ण हो गई है।

यहां पर मीडिया को भी अपनी नैतिक जिम्मेदारी को देखते हुए पूरी निष्ठा एवं ईमानदारी के साथ बिना राजनीतिक प्रभाव के सामाजिक मुद्दों, सामाजिक समस्याओं एवं वास्तविकता को दिखाना चाहिए। सोशल मीडिया का जमकर इस्तेमाल करने वाले प्रधानमंत्री ने भी फेसबुक मुख्यालय में कहा कि सोशल मीडिया में गजब की ताकत और फायदे हैं। कोई भी गलत कदम उठाए जाने पर सुधार की आवश्यकता बनी रहती है। मीडिया सरकार की कमियों एवं मुद्दों पर सरकार पर दबाव बनाती है ताकि परिवर्तन हो सके।

प्रधानमंत्री जी अपने मन की बात कहने के लिए इलेक्ट्रानिक मीडिया का प्रयोग करते हैं, जिससे उनकी बातों को अधिक से अधिक लोगों तक पहुंचाया जा सके और उन्हें प्रभावित किया जा सके।

अत: हम यह कह सकते हैं कि मीडिया अपने दबाव के द्वारा राजनीतिक परिवर्तन करने की क्षमता रखती है क्योंकि मीडिया का झुकाव जिस तरफ होता है, तो जनता का झुकाव भी उसी तरफ होता है। इसलिए मीडिया को अपनी नैतिक जिम्मेदारी के साथ कार्य करना चाहिए।

लोकतंत्र में मीडिया के योगदान का अध्ययन

लोकतांत्रिक व्यवस्था को चलाने में मीडिया की भूमिका महत्वपूर्ण है। आधुनिक काल में मीडिया मानव मूल्यों की गरिमा बनाए रखने तथा मनुष्य के सामाजिक एवं राजनीतिक अधिकारों की रक्षा करने का एक सशक्त माध्यम है। इसीलिए इंग्लैंड के महान दार्शनिक एवं वक्ता एडमंड वर्क ने इसे राष्ट्र का चौथा स्तंभ कहा है।लोकतांत्रिक व्यवस्था में लोगों के लिए लोगों द्वारा शासन होता है। लोकतांत्रिक व्यवस्था में मीडिया सरकार की नीतियों का विश्लेषण, समीक्षा एवं आलोचना करते हुए इस पर नियंत्रण बनाए रखती है।मीडिया शासन के सभी अंगों की गतिविधियों से जनता को अवगत कराती है, उसमें जागरूकता लाकर लोकतांत्रिक संस्थाओं के प्रति अभिरुचि पैदा करती है।

यह संसद एवं कार्यपालिका को जनता की रुचियों एवं आवश्यकताओं से अवगत कराती है। मीडिया जनता की इच्छाओं और आकांक्षाओं को संसद तक पहुंचाती है, जिसके आधार पर तमाम नीतिगत मुद्दे संसद में तय होते हैं। कभी-कभी सरकार को अपने स्रोतों से यह ज्ञात नहीं हो पाता कि कहां-कहां उसके शासन में अन्याय एवं अत्याचार हो रहे हैं। किंतु मीडिया शासन को ऐसी खामियों से अवगत कराती रहती है, जिससे सामाजिक परिवर्तन होते रहते हैं।

निष्कर्ष- इस आधुनिक परिदृश्य में मीडिया ने समाज के प्रत्येक अंग को गहराई से प्रभावित किया है। मीडिया सामाजिक जीवन का एक अभिन्न अंग बन गया है। मीडिया द्वारा जहाँ एक ओर समाज के अनेक ज्वलंत मुद्दों को उजागर कर उन्हें दूर करने के लिए

सरकार पर दबाव बनाती है, नीति निर्माण में जनमत संग्रह द्वारा सरकार को सुझाव प्रस्तुत करती है तथा सरकार उन नीतियों की, जो जनविरोधी हों, आलोचना करके उन्हें दूर करने का दबाव भी बनाती है।नकारात्मक पक्ष भी हैं, जिसमें मीडिया कभी–कभी एक पक्षीय व्याख्या करते हुए सामाजिक मुद्दों एवं समस्याओं से प्रशासन का ध्यान भटका देती है। आज मीडिया केवल अपनी टी.आर.पी. बढ़ाने के लिए तथ्यों को तोड़–मरोड़ कर एक मसालेदार न्याय की तरह पेश करती है, जिससे वास्तविक समस्या लुप्त हो जाती है।

अत: मीडिया को भी अपने नैतिक दायित्व का ध्यान रखते हुए उसे अपनी सीमा के अंतर्गत रिपोर्टिंग करनी चाहिए, जिससे समाज में तार्किक ज्ञान का प्रसार हो और लोग वास्तविक मुद्दों एवं घटनाओं की सत्यता को जानें। समाज में मीडिया जो परिवर्तन ला रहा है, वह हमारे परिवार, सामाजिक संबंधों और राष्ट्र के प्रति किस प्रकार की सोच का प्रतिनिधित्व करता है, इस पर गंभीरता से विचार करना होगा। इंटरनेट (सोशल साइट्स) व्यक्ति की जीवनशैली और व्यक्तित्व को बदल रहा है। यह एक ऐसे समाज की रचना कर रहा है, जहाँ सब कुछ खुला है, बाजार की तरह। आप कहीं भी रहें, इंटरनेट आपके साथ रहेगा। मीडिया ने सूचना का व्यवसायीकरण कर दिया है और समाज को अपने मोहक जाल में समा लिया है।

संदर्भ सूची-

1. रावत, हरिकृष्ण, (2006), उच्चतर समाजशास्त्र विश्वकोश रू रावत पब्लिकेशन, जयपुर।
2. शर्मा, डॉ. राकेश, (2000), संचार एवं सामाजिक परिवर्तन रू आदित्य पब्लिशर्स, बीना (म. प्र.)।
3. दुबे, डॉ. श्यामाचरण रूसंचार और विकास, सूचना और प्रसारण मंत्रालय, भारत सरकार, 1986।
4. प्रभात रविंद्र रूआम आदमी की ताकत बना सोशल मीडिया, जन संदेश टाइम्स, 5 जनवरी 2014।
5. कुमार संजय रूदलित चेतना में मीडिया, दैनिक जागरण, 15 नवंबर 2015।
6. चटर्जी, पी.सी. ब्रॉडकास्टिंग इन इंडिया, सेज पब्लिकेशन, नई दिल्ली,
7. Basu. Narendra (2007) mass media and contemporary social issues: commonwealth publishers, Delhi.
8. Singh Jitendra (2008), media and society: Sumit Enterprises New Delhi.
9. UNESCO, (1955), many voice one world, New York Unesco
10. Guidens, Anthony, (2002), sociology, Londan, polity press.
11. Moore, WE, (1965), social change, prentice Hall of india, New Delhi.
12. दोषी, एस.एल. (2010), आधुनिक समाजशास्त्रीय विचारक: रावत पब्लिकेशन्स, जयपुर।
13. शर्मा, कुमुद, (2003), भूमण्डलीकरण और मीडिया, ग्रंथ अकादमी, नई दिल्ली।
14. Mediakhabar.com/media-role-in-janmat-nirman'
15. www.madhepuratimes.com/2016/12/seminar-on-social-media.html?m=1

UGC Journal No. (Old) 2138
Peer-Reviewed Research Journal
Impact Factor 6.375, ISSN 0975-4083
Vol.- 28, Hindi Edition, Year-14, March 2025

19वीं सदी में महिलाओं की आर्थिक भागीदारी: एक ऐतिहासिक विश्लेषण

• पल्लवी निशा

सारांश- 19वीं सदी में महिलाओं के आर्थिक विकास के लिए कतिपय अधिकारों की आवश्यकता होती है। क्योंकि पुरूष तो स्वतंत्र है, उन्हे अधिकार तो जन्म से ही प्राप्त है किन्तु महिलाओं के आर्थिक विकास हेतु उन्हे भी विशेषाधिकार प्राप्त होना चाहिए ताकि महिलाओं की आर्थिक दशा सुधारने के लिए विभिन्न प्रकार के कानून बनाये गए है जिसे आत्मनिर्भर बन सकें और स्वयं का आर्थिक विकास कर सकें। लेकिन भारतीय सामाजिक व्यवस्था में उँच-नीच की भावना में कमी को देखते हुए वैधानिक रूप से महिलाओं के रहन-सहन में परिवर्तन देखने को मिलता था। आज वे शिक्षित होकर नौकरी व व्यवसाय से जुड़ रही है। लेकिन उनके सोचने समझने तथा आर्थिक विकास में नई दृष्टि देखने को मिलती है । आर्थिक रूप से महिलाएं सुदृढ़ हुई है। किन्तु आज भी महिलाओं के मौलिक अधिकारों का हनन होते देखा गया। इस शोषण का मुख्य कारण उनका अशिक्षित होना है। 19वीं सदी में महिला को मुख्य रूप से पुरूष की काम एवं धर्म सहचरी के रूप में जाना जाता था। लेकिन महिलाओं की विभिन्न कालों में सामाजिक स्थिति व उसमें होने वाले परिवर्तनों के बारे में इसी परिप्रेक्ष में पहले प्रस्तुत करने का प्रयास किया गया है। यदि ध्यान पूर्वक विचार किया जाये तो पता चलता है कि महिला परिवार की अर्थ नीति को भी निर्धारित, नियमित एवं संचालित करने में पुरूष को महत्वपूर्ण सहयोग देती है। सभी स्मृतिकारों ने घर के आय-व्यय का हिसाब रखने क दायित्व स्त्री को ही सौंपा है। प्राचीन काल में साधारण परिवार की महिलाओं को साहित्य एवं ललित कलाओं की शिक्षा दी जाती थी, जिसका मुख्य उद्देश्य उन्हें आत्मनिर्भर बनाना ही नहीं था वरन् आपात काल में स्त्रियाँ अपनी इस योग्यता के आधार पर धनार्जन कर सकती थीं तथा अपना व अपने बच्चों का पालन-पोषण कर सकती थीं। इससे हमें ज्ञात होता है कि व्यापार वाणिज्य के क्षेत्र में स्त्रियाँ पुरूषों की संख्या भले ही कम रही हो किन्तु तत्कालीन आर्थिक क्रियाकलापों में स्त्रियाँ पुरूषों के समकक्ष जिम्मेदारियों का निर्वहन करने में सक्षम थी और सभी वर्गों की महिलाओं की आर्थिक स्थिति उन्नत थी।

मुख्य शब्द- धर्म सहचरी, सामाजिक स्थिति, परिवार, स्त्री

महिलाओं की 19वीं सदी में आर्थिक भागीदारी व उसमें होने वाले परिवर्तनों के बारे में इसी परिप्रेक्ष में पहले प्रस्तुत करने का प्रयास किया गया है। यदि ध्यान पूर्वक

• सहायक प्राचार्या, जे.डी.वीमेंस कॉलेज, पटना, पाटलिपुत्र विश्वविद्यालय, पटना

विचार किया जाये तो पता चलता है कि महिला परिवार की अर्थ नीति को भी निर्धारित, नियमित एवं संचालित करने में पुरूष को महत्वपूर्ण सहयोग देती थी। लेकिन सभी स्मृतिकारों ने घर के आय-व्यय का हिसाब रखने क दायित्व स्त्री को ही सौंपा जाता था।[1] लेकिन 19वीं सदी में साधारण परिवार की महिलाओं को साहित्य एवं ललित कलाओं की शिक्षा दी जाती थी, जिसका मुख्य उद्देश्य उन्हें आत्मनिर्भर बनाना ही नहीं था वरन् आपात काल में स्त्रियाँ अपनी इस योग्यता के आधार पर धनार्जन कर सकती थीं तथा अपना व अपने बच्चों का पालन-पोषण कर सकती थीं। सभ्रांत एवं मध्यमवर्गीय परिवारों के अलावा निम्नवर्ग में गृह उद्योगों में नारी का सहयोग स्पष्ट दिखायी देता है। इससे हमें ज्ञात होता है कि व्यापार वाणिज्य के क्षेत्र में स्त्रियाँ पुरूषों की संख्या भले ही कम रही हो किन्तु तत्कालीन आर्थिक क्रियाकलापों में महिलाएं पुरूषों के समकक्ष जिम्मेदारियों का निर्वहन करने में सक्षम थी और सभी वर्गों की महिलाओं की आर्थिक स्थिति समकक्ष थी।[2]

अतएव महिलाओं की आर्थिक स्थिति को सुधारने के लिए विभिन्न सरकारी अधिनियम पारित किये गये कुछ आर्थिक प्रयास किये और कुछ धनिक वर्ग के लोगों ने महिलाओं के संरक्षण गृहों की स्थापना की ओर ध्यान दिया परन्तु फिर भी महिलाओं को इनकी वैधानिक स्थिति में कोई विशेष महत्वपूर्ण परिवर्तन दृष्टिगोचर नहीं हुआ।[3] नि:संदेह हमारी सरकार अपनी पंचवर्षीय योजनाओं के माध्यम से महिलाओं के उत्तरोत्तर उत्थान के लिए प्रयासरत है उसने अपनी विभिन्न योजनाओं के द्वारा महिलाओ को स्वास्थ्य, सुरक्षा और शिक्षा आदि सुविधाएं प्रदान कीं। सरकार का मुख्य उद्वेश्य महिलाओं को अबला के स्थान पर सबला बनाना है। इस प्रकार सरकार 30 प्रतिशत महिला आरक्षण के द्वारा उनकी आर्थिक स्थिति को भी सुधारने का प्रयास किया अनेकानेक सुख सुविधाओं की प्राप्ति के फलस्वरूप एक ओर महिला साक्षरता की दर निरन्तर बढ़ती जा रही है और दूसरी उनकी औसत आयु में भी वृद्वि हुई है। अनेक सुविधाओं के बाद भी महिलाएं अपने आपको भयमुक्त अनुभव नहीं कर पा रही हैं और निरन्तर खतरों से जूझने के लिए बाध्य है।[4]

महिलाओं की आर्थिक स्थिति क्या बिगड़ी की उसे सम्भालने में सदियों लग गये। आज आधुनिक व तकनीकी युग में भी महिलाओं की स्थिति बहुत अच्छी नहीं कही जा सकती है। समाज का विकास महिलाओं के स्तर पर निर्भर करता है किन्तु सामाजिक संरचना में पुत्री के लिए पुत्र जैसा कोई विकल्प नहीं है। आर्थिक विकास में महिलाओं ने यद्यपि अपने स्तर को उँचा उठाया है किन्तु शादी शुदा महिला के लिए पति ही सबकुछ है। ग्रामीण इलाकों में महिलाऐं पुरूष से ज्यादा काम करती हैं किन्तु उनके कार्यों को केवल घरेलू कार्य ही समझा जाता है।[5] मजदूर के रूप में महिलाएं दिन भर पुरूषों के साथ ही काम करती है किन्तु शाम को जब पुरूषों लिए आराम करने का समय होता है महिलायें घरेलू कार्यों में लिप्त हो जाती है। संवैधानिक रूप से महिलाओं के लिए बहुत सारे कानून एवं अधिकार है किन्तु उसका पालन नहीं किया जाता है। आज की महिलाऐं कानूनी रूप से पुरूषों से ज्यादा सशक्त है। महिलाओं ने अपने बोधन स्तर को उँचा उठाया है। शिक्षा के क्षेत्र में निरन्तर आगे बढ़ रही है। शिक्षित होकर एवं आय अर्जित कर आत्मनिर्भर बन रही है। अपने अधिकारों के प्रति जागरूक हैं। सतत् विकास की प्रक्रिया में पुरूषों के तुल्य

समझे जाने वाले क्षेत्रों (जैसे सेना, पुलिस, वकील, राजनीति आदि) में भी अपने कदम बढ़ा रही है। आई.ए.एस., आई.पी.एस., पी.एस.सी. जैसे कठिन परीक्षाओं में भी सफलता अर्जित कर रही है। प्रशासनिक सेवाओं में उच्च पदों पर विराजमान है।[6] प्रदेश सरकार द्वारा ग्राम पंचायतों एवं सरकारी नौकरी करने वाली महिलाओं को दिये जा रहे आरक्षण से नौकरी करने वाली महिलाओं की संख्या में निरन्तर वृद्वि हो रही है। जहां एक ओर महिलाओं ने घर से बाहर निकलकर नौकरी की है वहीं इसका उन्हें खामियाजा भी भुगतना पड़ा है। वर्तमान में उनको घर व बाहर दोनों जगह का काम देखना पड़ता है। इससे परिवार व बच्चों पर विपरीत प्रभाव देखने को मिलता है। इन कठिन परिस्थितियों में भी महिलाओं ने स्वयं के उत्थान के लिए संघर्ष किया है एवं आत्मसम्मान की रक्षा की है।

लेकिन 19वीं सदी में अनेकानेक आर्थिक सुधार आन्दोलनों का सूत्रपात हुआ है। उन्होनें अपने व्यक्तिगत गुणों और ओजस्वी वाणी से लोगों का ध्यान समाज में विद्यमान कर्मकाण्ड़ों तथा आर्थिक कुरीतियों की ओर आकर्षित किया था तथा दुःखी और संतृप्त जनसाधारण को एक सरल व संतृप्त धर्म और समाज देने का आश्वासन देकर उन्हें अपनी ओर आकर्षित किया तथा आन्दोलन के माध्यम से जनजागृति का मार्ग प्रशस्त किया। प्राचीन भारतीय इतिहास के अध्ययन से हमे यह ज्ञात होता है महिलाओं के प्रतिभा का कोई ऐसा क्षेत्र नहीं है जहां महिलाओं ने अपनी भूमिका से यह सिद्ध न कर दिया हो क बुद्धि क्षमता तथा कर्तव्यनिष्ठा में वे पुरूषों से कम नहीं है। 19वीं सदी में आर्थिक हो या सामाजिक, राजनीतिक, वैज्ञानिक हो या व्यवसायिक एवं सांस्कृतिक। इसी परिवर्तन को अभियक्त करने के लिए इतिहाकारो ने आधुनिकीकरण जैसी अवधारणा का प्रतिपादन किया है। आधुनिकीकरण के बुहत सारे आयाम हैं इसे कई स्तरों पर देखा जा सकता है। आधुनिकता एक प्रकार से औद्योगिक अर्थव्यवस्था का आईना है यही अधुनिकता जब अत्याधिक विकसित हो जाती है तब उसे उत्तर आधुनिकता कहते हैं।

भारतीय समाज में विद्यमान परम्परागत कर्तव्यों एवं मार्यादा रूपी चहार दीवारी से निकल कर बाहरी संसार की हलचल में सम्मिलित होने से नारी की शिक्षा एवं रोजगार के अवसरों में काफी वृद्धि हुई। इस समय विशेषकर शहरी समाज में अधिकांश महिलाएं शिक्षा प्राप्त करने के उपरांत किसी न किसी व्यवसाय में स्वयं को व्यस्त रखना चाहती हैं। जिसे नवीन परिवर्तित सामाजिक व्यवस्था का परिणाम माना जा सकता है।

अतएव इस समाज में विभिन्न धर्मो व जातियों में महिलाओं की स्थिति भिन्न-भिन्न देखने को मिलती है।[7] हिन्दू धर्म में महिलाएं अपनी सांस्कृतिक धरोहर व धार्मिक परम्परा के अनुसार साथ-साथ जीवन यापन करती हैं आधुनिक युग में भारतीय महिलायें परम्परा व आधुनिकता के बीच झूल रही है वह न तो पूरी तरह से परम्परा को छोड़ पा रही है और न ही आधुनिकता में स्वयं को ढाल पा रही हैं। कामकाजी महिलाओं के साथ भी यही स्थिति देखने को मिलती है। समाज में पढ़ी लिखी एवं नौकरी वाली बहु की मांग तो बढ़ी है किन्तु इनसे भी वही घरेलू कार्यों व परम्परा के पालन की उम्मीद की जाती है। अब तक साहित्य महिलाओं के बारे में सम्मान से लिखता रहा था किन्तु विगत वर्षों में सस्ते साहित्य, उपन्यास, स्त्री टीप्पड़ी, फिल्म, टी.वी. सीरीयलों में महिलाओं का

बहुत उपहास उड़ाया है।[8] महिलाओं के व्यवहार को स्वच्छंद समझ लिया गया। पुरूषवादी मानसिकता व सोच ने समाज में बदलती महिलाओं की स्थिति पर गहरा प्रहार किया है। पुरूष आर्थिक उपार्जन के लिए तो महिलाओं को घर से बाहर निकलने देता है किन्तु महिलाओं के स्वतंत्रता पूर्वक घूमने फिरने पर प्रतिबंध लगाता है। कार्यस्थल पर महिलाओं का शोषण और बच्चियों पर अनाचार होना इस बात का सबूत है कि पुरूष आज भी नारी को सम्मान की नजर से नहीं देखता है। पुरूषवादी सोच में आज भी नारी भोग्या की ही विषय-वस्तु है।

महिलाओं के विकास में उनका व्यापक दृष्टिकोण स्पष्ट परिलक्षित होता है। कुछ समय तक महिलाएं शिक्षा अपने ज्ञान बढ़ाने एवं समय व्यतीत करने के लिए ग्रहण करती थी, किन्तु वर्तमान में महिलाएं शिक्षा ग्रहण कर नौकरी करना पसंद करती है अर्थात शिक्षा उनकी आय का प्रमुख साधन बनता जा रहा है। भारत जैसे कृषि प्रधान देश में महिलाएं पुरूषों के बराबर ही कार्य करती है। वे खेतों में निराई गुड़ाई से लेकर कटाई तक का काम करती है। पशुओं का दाना पानी करती है। दुध दुहती है। पहाड़ी क्षेत्रों में स्त्रियां मीलों दूर से पानी लेने जाती हैं। लकड़ी इक्कठा करती हैं। घर का सारा काम करती हैं। बच्चे भी पालती हैं। किन्तु उनका यह श्रम दिखाई नहीं पड़ता है। 1991 की जनगणना के अनुसार कामकाजी महिलाओं की संख्या में निरन्तर वृद्धि हो रही है। ग्रामीण क्षेत्रों में 87 प्रतिशत महिलाएं कृषक और श्रमिक के कार्यों में काम करती हैं, जबकि शहरी क्षेत्रों में लगभग 80 प्रतिशत महिलाएं कृषि के अलावा विभिन्न असंगठित क्षेत्रों जैसे उद्योगों, छोटे छोटे व्यवसायों, सेवाओं, भवन निर्माण आदि में काम करती हैं।[9]

19वीं सदी में महिलाओं को प्रत्येक क्षेत्र में कार्य प्रबंधन का विशेष गुण ईश्वर प्रदत्त है। एक महिला अपने संपूर्ण परिवार का प्रबंध सीमित आय में बड़ी कुशलता के साथ करती है। चूंकि महिलाएं स्वभावत: आकर्षक, सहनशील, मधुर भाषिणी एवं कार्य के प्रति निष्ठावान होती है। स्त्रियों के संदर्भ में भारतीय समाज में दो प्रकार के दृष्टिकोण देखे जा सकते हैं। एक पक्ष निस्वार्थ भावना से महिलाओं को पुरूषों के बराबर का हक देने की बात करता है तथा महिलाओं के स्तर को उँचा उठाने के लिए तत्पर रहता है। वहीं दूसरा पक्ष महिलाओं को अनेक अधिकारों से वंचित रखने के पक्ष में है। प्रथम पक्ष वाले नारी को शक्ति, ज्ञान और सम्पत्ति का प्रतीक मानते हैं। दूसरा पक्ष समाज में नारी के शोषण और दमन का प्रतीक है।

19वीं सदी के उत्तरार्द्ध में मनुष्य के व्यक्तित्व के विकास के लिए कतिपय अधिकारों की आवश्यकता होती है। पुरूष तो स्वतंत्र है, उन्हे अधिकार तो जन्म से ही प्राप्त है किन्तु महिलाओं के विकास हेतु उन्हे भी विशेषाधिकार प्राप्त है महिलाओं की आर्थिक दशा सुधारने के लिए विभिन्न प्रकार के कानून बनाये गए हैं। जिससे वे आत्मनिर्भर बन सकें और स्वयं का विकास कर सकें। भारतीय सामाजिक व्यवस्था में उँच नीच की भावना में कमी आयी है।[10] वैधानिक रूप से अनुसूचित जाति की महिलाओं के रहन-सहन में परिवर्तन देखने को मिलता है। आज वे शिक्षित होकर नौकरी व व्यवसाय से जुड़ रही है। उनके सोचने समझने, व्यक्तित्व विकास में नई दृष्टि देखने को मिलती हैं। सामाजिक व आर्थिक रूप से अनुसूचित जाति की महिलाएं सुदृढ़ हुई है। किन्तु आज भी

अनुसूचित जातियों के महिलाओं के मौलिक अधिकारों का हनन होते देखा जा सकता है। इस शोषण का मुख्य कारण उनका अशिक्षित होना है।

19वीं शताबदी की अत्याचार विरोधी अभियान और इसके नेता राजा राममोहन राय ने सती प्रथा के खिलाफ जो कठोर जेहाद छेड़ा उसके परिणामस्वरूप अन्ततः 1829 में सती प्रथा का पालन करने पर कानूनी प्रतिबन्ध लगा दिया गया। राजा राममोहन राय बहुविवाह के विरोधी थे और उन्होंने महिलाओं को जायदाद में हक देने पर भी जोर दिया। "मानव से ही मानवता का अर्थात इंसान से ही इंसानियत का जन्म होता है जो सभी धर्म दर्शनों का सार है जाति भाषा धर्म सम्प्रदाय क्षेत्रीयता वर्ग भेद आदि के संघर्ष प्रत्येक युग के इतिहास में मिलते हैं। दम्भ एवं मिथ्याभिमान किसी भी व्यक्ति समाज के पतन का कारण बनते हैं अपनी श्रेष्ठता का मिथ्याभिमान और दम्भ ही जर्मनी को ले डूबा। जातीय संकीर्णता एवं विविध अंधविश्वास मानवता के विकास के मार्ग पर बाधा बनते आये हैं। समय समय पर इन अमानवीय प्रयासों के विरोध एवं खण्डन हेतु अथक प्रयास होते रहे हैं। छुआछूत की भावना भारतीय समाज में कलंक की तरह रही है जिसने मानवता को कलंकित किया है।"[11] समय समय पर इन अमानवीय प्रथाओं के विरोध एवं खण्ड़न हेतु पुरजोर प्रयास होते रहे हैं। आज विभिन्न कानून के बनने के बाद भी अनुसूचित जातियों जनजातियों एवं पिछड़े वर्ग के लोगों के मौलिक अधिकारों एवं स्वतंत्रता का हनन हो रहा है। भारत के संविधान में इन जातियों के लिए विशेष प्रावधान है।

महात्मा ज्योतिराव फुले की पत्नी सावित्री बाई फुले ने महिलाओं की सामाजिक उपेक्षा के विरूद्ध अपनी आवाज बुलन्द की। उनके नेतृत्व में सती प्रथा के विरोध में और विधवा विवाह के पक्ष में आन्दोलन हुआ। सावित्री बाई फुले कन्याओं व महिलाओं की शिक्षा के प्रचार व प्रसार में अपने पति के साथ महत्वपूर्ण भूमिका अदा की। उन्होनें कई विद्यालयों की स्थापना की और निरक्षरता के विरोध में एक जोरदार अभियान चलाया। वस्तुतः इन दोनो महातम ज्योतिराव फुले और उनकी पत्नी सावित्री बाई फुले ने दलितों व उनकी महिलाओं में नवीन चेतना व जागृति उत्पन्न की नारी शिक्षा में उनका योगदान सदैव अविस्मरणीय रहेगा। एक विद्वान ने महात्मा फुले का मूल्यांकन करते हुए लिखा है कि वे आदर्श सामाजिक क्रान्तिकारी थे जिन्होने देश में दलित वर्ग तथा महिलाओं को उनके अधिकारों और कर्तव्यों से अवगत कराया था।[12]

उक्त सन्दर्भ में यह कहना अतिशयोक्तिपूर्ण नही होगा की जो लोग नारी को मात्रभोग की वस्तु मानते है वे भूल जाते हैं कि नारी सर्वप्रथम माँ है। माँ के रूप में करूणा, ममता, सस्ंकार आदि गणुों से ओतप्रोत है इस रूप में वह सृष्टि का आध्यत्मिक पक्ष बन जाती है जबकी पिता भौतिक पक्ष बनता है जीवन इन दोनों से ही चलता है प्रतिदिन सरलता से अनेक भूमिकाओं को निभाने वाली महिलाऐं निर्विवाद रूप से किसी भी समाज की रीड़ साबित हो सकती है। राष्ट्र के विकास व प्रगति के लिए उनकी भूमिका निसंदहे आवश्यक है। महिलाऐं वर्तमान समय में सक्रिय है।[13] कोई भी राष्ट्र उन्नति तब तक नही कर सकता जब तक देश की महिलाऐं कंधे से कंधा मिलाकर न चलें।

महिला विकास का सम्बन्ध प्रत्यक्ष रूप से राष्ट्रीय विकास के साथ है। भारत का सवंधिान सर्वाधिक प्रगतिशील संविधानों में से एक और महिलाओं के विकास के लिए

देश में बड़ी संख्या में योजनाएं और कार्यक्रम शुरू किये गये हैं। हमारे यहां विकास के किसी आदर्श की नकल नही की गयी है बल्कि हाल ही के वर्षों में महिलाओं के विकास के अंतर्गत लिंग सम्बन्धी पक्षपात दूर करते हुए महिलाओं को विकास के समान अवसर प्रदान करना। महिलाओं को अधिकार प्रदान करना और उनमें आत्मनिर्भरता लाने के उपायों पर बल दिया गया है। भारत सरकार ने 1976 में महिलाओं के लिए राष्ट्रीय कार्य योजना तैयार की जो महिलाओं के विकास संबंधी संयुक्त राष्ट्र की अन्तर्राष्ट्रीय कार्य योजना के दिशा-निर्देशों के अनुरूप थी और उसमें महिलाओं के रोजगार, शिक्षा तथा स्वास्थ्य पर बल दिया गया। महिलाओं से सम्बद्ध राष्ट्रीय परिदृश्य योजना (1988) तैयार की गयी जिसका लक्ष्य महिलाओं से सम्बद्ध मुद्दों की राजनीति और कार्यक्रमों को मुख्य धारा से जोड़ना और महिलाओं को पंचायतों से लेकर संसद तक निर्णय करने की प्रक्रिया में कम से कम एक तिहाई हिस्सेदारी प्रदान करना था। महिलाओं के विकास की नीति तीन पक्षीय होनी चाहिए।[14]

अत: महिलाओं के विकास के लिए आज उनके पास बेहतर अवसर है। अपने अध्ययन और घर के बाहर काम करने के लिए वे अधिक स्वतंत्र भी हैं। लेकिन 19वीं सदी में अधिकांश महिलाओं का जीवन बहुत कठिन था। कुछ सामाजिक प्रथाऐं जैसे कन्या बाल-विवाह, सती प्रथा, भ्रूण हत्या और बहुविवाह आदि भारतीय समाज में प्रचलित थीं। कन्या भ्रूण हत्या एवं कन्या हत्या बहुत ही आम बात थी। जो लड़कियां बच जाती थी अक्सर उनकी बहुत कम उम्र में शादी कर दी जाती थी। बड़ी उम्र के पुरूषों से भी शादी (विवाह) कर दी जाती थी। बहुविवाह यानि कि पुरूष की एक पत्नी से ज्यादा पत्नी रखना कई धर्म तथा जातियों में स्वीकार किया जाता था। देश के कुछ भागों में सती प्रथा का प्रचलन था जिसमें एक विधवा औरत को मजबूर किया जाता था कि वह अपने पति की चिता पर खुद को जला दें। जो महिलाएं सती प्रथा से बच जाती थी वे एक बहुत ही दुखी जीवन जीती थी।15 महिलाओं का संपत्ति में भी कोई अधिकार नहीं था। उनको शिक्षा भी नहीं दी जाती थी। इस प्रकार, सामान्य जीवन में महिलाओं की समाज में अधीनस्थ स्थिति होती थी। बाह्य आक्रमणें तथा परिवार के सम्मान में कमी होने के डर ने इन प्रथाओं को बढ़ावा दिया।

महिलाओं की स्थिति शिक्षा के अभाव में सोचनीय थी। वह घर में, परिवार में और समाज में उपेक्षित थी। घर में सास-ससुर तथा पतिदेव की इच्छानुसार ही रहती एवं कार्य करती थी। वह आर्थिक दृष्टि से परतंत्र और समाज से प्रताड़ित थी। नारी को प्रेम करने का अधिकार नहीं था। नारी केवल उपभोग की वस्तु मानी जाती थी। पुरुषों की उद्दाम विषय वासना का वह शिकार हो चुकी थी। "सामन्ती व्यवस्था में नारी एक वस्तु है, सम्पत्ति है, सम्भोग और सन्तान की इच्छा पूरी करने वाली मादा है।"[16] इन आत्मकथाओं के माध्यम से कहा जा सकता है कि स्वतंत्रतापूर्व नारी उपभोग्या नारी के रूप में समझी जाती थी। स्वातंत्र्योत्तर नारी की स्थिति में बदलाव आया है। भारतीय नारी के जीवन एवं समाज में उसकी स्थिति को लेकर निरंतर परिवर्तन आ रहे हैं। जब तक महिलाएं आर्थिक रूप से आत्म निर्भर नहीं हो जाती तब तक उनके प्रति सामाजिक दृष्टिकोण बदलना भी असंभव लगता है। फलत: आर्थिक आत्मनिर्भरता से ही महिलाओं को समाज में बराबरी का दर्जा

प्राप्त हो सकता है। आर्थिक आत्मनिर्भर और आर्थिक स्वातंत्र्य के विकास के आधार पर ही आज महिलाओं को परिवार में केन्द्रीय स्थान मिला है, जो उनके जीवन की महत्त्वपूर्ण उपलब्धि है।

महिला आत्मकथाओं की आर्थिक स्थिति में बहुत परिवर्तन आ गया इसका कारण अभिव्यक्ति से अधिक साधनों की उपयोगिता तथा तकनीकों के माध्यम से अभिव्यक्ति की कुछ क्षणों से सम्पूर्ण संसार में प्रचार व प्रसारण के कारण लेखन की सीमा व क्षेत्र विस्तृत हो चुके हैं। वर्तमान समय में नारी पर होने वाले अत्याचार, अपमान की अभिव्यक्ति तुरन्त ही संचार माध्यमों से समाज के समक्ष आ जाती है। इसी प्रकार से संचार तकनीकों ने कई आधार प्रस्तुत किये है जिनके माध्यम से नारी बिना नाम व पहचान के भी अपनी भावनाओं की अभिव्यक्ति दे सकती है। 19वीं सदी के शुरूआत में भारतीय समाज कई सारी सामाजिक बुराईयों से घिरा हुआ था जैसे सती प्रथा, जाति प्रथा, धार्मिक प्रथा, धार्मिक अंधविश्वास आदि।[17] राजा राम मोहन राय पहले व्यक्ति थे जिन्होंने ऐसी अमानवीय प्रथाओं को पचहाना और इनके खिलाफ लड़ने का प्रण किया । इन्हें भारतीय पुनर्जागरण का शिल्पकार और आधुनिक भारत का पिता माना जाता है। इसलिए उच्च स्तर पर महिलाओं की भागीदारी सुनिश्चित करने की दिशा में जोर–शोर से प्रयास किए जाने चाहिए। एक तरह का वृत्तीय चक्र यह बन जाता है कि अगर कुल महिला कामगार कम हैं तो ऊँचे स्तर तक कम महिलाएँ पहुँच पाँएगी और निर्णायक पदों पर महिलाओं की कम उपस्थिति प्रत्यक्ष–अप्रत्यक्ष तौर पर कम स्त्री कार्यबल का कारण बनती है। इस तरह काम में समानता एक मरीचिका बन कर रह जाती है। ऐसे में हम उपलब्धि का वह स्तर नहीं पा सकेंगे, जिसे पाने के लिए हमारे पास पर्याप्त क्षमता और योग्यता है।[18]

19वीं शताब्दी के बीच महिलाओं की आर्थिक स्थिति बहुत दयनीय थी। महिलाओं की स्थिति को देखते हुए 19वीं सदी के पूर्वाद्ध में राजा राममोहन राय, दयानंद जी ने सामाजिक व्यवस्था के विरूद्ध आवाज उठाई। अत: ब्रिटिश काल को महिलाओं के पूर्णरूउत्थान का काल कहा गया। ब्रिटिश शासन काल के 200 वर्षो की अवधि में स्त्रियों के जीवन पर प्रत्क्षय व अप्रत्क्षय प्रभाव पड़ा एवं सुधार हुआ। आजादी के बाद से सरकार की तरफ उनकी शैक्षिक और आर्थिक स्थिति में सुधार लाने के लिए अनेक कल्याणकारी योजनाओं का संचालन किया। शिक्षा के समुचित अवसर उपलब्ध कराकर उन्हें आर्थिक दृष्टि से आत्मनिर्भर तथा स्वालम्बन की ओर अग्रसर करके उन्हें अहम उदेश्य की पूर्ति हेतू कुछ दशक से विशेष प्रयास किए।

निष्कर्ष- निष्कर्षत यह कहा जा सकता है कि 19 वीं सदी में महिलाओं का परिवर्तन एवं संक्रमण के काल से गुजर रहा था। परम्परागत व्यापार एवं उद्योगों के स्वरूप में परिवर्तन हो रहा था। इन क्षेत्रों में कुछ आधारभूत प्रवृत्तियाँ जन्म ले रही थीं, जिनका विकसित रूप बीसवीं सदी के पूर्वाद्ध में दिखायी देता है। 19 वीं से 20 वीं सदी तक आते–आते महिलाओं की स्थिति में पुन: सुधार हुआ और महिलाओं ने खेलकूद, आर्थिक, धार्मिक, सामाजिक, शैक्षिक आदि क्षेत्रों में अनेक उपलब्धियां प्राप्त की। वर्तमान में महिलाएं स्वनिर्मित, आत्मनिर्भर एवं आत्मविश्वासी बनकर पुरूषों के बराबर योग्यता प्रदर्शित की है।

आर्थिक क्षेत्र में सफलता की ऐसी कई कहानियों के बावजूद परिदृश्य को संतोषजनक नहीं कहा जा सकता। आँकड़ों के आधार पर जो बुनियादी वास्तविकताएँ सामने आती हैं उनसे साफ जाहिर है कि अभी व्यावसायिक जगत में उचित प्रतिनिधित्व के लिए महिलाओं को बहुत से फासले तय करने हैं।

संदर्भ ग्रन्थ सूची-

1. खुर्राना एवं चौहान : भारतीय इतिहास की महिलाऐं।
2. श्रीवास्तव सु धारनीक : भारत में महिलाओं के वैधनिक स्थिति।
3. ब्होरा आशारानी (1983) : भारतीय नारी दशा-दिशा, नेशनल पब्लिकेशन हॉउस दिल्ली
4. गौतम हरेन्द्र राज, "महिला अधिकार संरक्षण", कुरूक्षेत्र
5. वही
6. नरेन्द्र कुमार सिंधवी (1981 : नारी परिप्रेक्ष एवं सिद्धांत भारतीय स्त्री सां स्कृतिक संन्दर्भ रावत पब्लिकेशन नई दिल्ली
7. मेनन रितु (2005), कर्मठ महिलाएं, नेशनल बुक ट्रस्ट, इंडिया
8. (डॉ.) मीनाक्षी श्रीवास्तव (2012), कामकाजी महिलाएं वास्तविक स्थिति, हरि प्रकाशन दिल्ली, पृ. 21
9. वही, पृ. 23
10. प्रभा खेतान, (2011) अन्या से अनन्या, राजकमल प्रकाशन प्रा.लि., नई दिल्ली।
11. डॉ. रघुनाथगणपति देसाई, (2012) महिला आत्मकथा लेखन में नारी, ए.बी.एस. पब्लिकेशन, वाराणसी, उत्तर प्रदेश।
12. सोनकर, मनोज (2006), प्राचीन एवं मध्यकाल की स्त्री शिक्षा का तुलनात्मक अध्ययन, एम.एड., झाँसी, बुन्देलखण्ड विश्वविद्यालय।
13. एम.सी. मेरी कॉम,(2014) मेरी कहानी, मन्जूल पब्लिसिंग हाउस, नई दिल्ली
14. रामाश्रय राय, "कास्ट एण्ड पॉलिटिकल रिक्रूटमेंट इन बिहार", रजनी कोठारी (सं.) कास्ट इन इंडियन पॉलिटिक्स, ओरिएन्ट लॉगमैन लिमिटेड, न्यू दिल्ली, 1970, पृ. 243-46
15. राम, जगजीवन, कास्ट चैलेंजेज इन इंडिया, विजन बुक्स, नई दिल्ली, 1980, पृ.72-73
16. वही, पृ. 75
17. विजय प्रसाद, अनटचेबुल फ्रीडम : ए सोशल हिंस्ट्री ऑफ दलित कम्युनिटी, नई दिल्ली, ऑक्सफोर्ड यूनिवर्सिटी प्रेस, 2000, पृ. 105-109
18. किरण सक्सेना, (एडिटेड) वुमेन एण्ड पॉलिटिक्स, ज्ञान पब्लिकेशन, नई दिल्ली, 2006, पृ. 106

UGC Journal No. (Old) 2138
Peer-Reviewed Research Journal
Impact Factor 6.375, ISSN 0975-4083
Vol.- 28, Hindi Edition, Year-14, March 2025

बिहार की महिलाओं के आर्थिक सशक्तिकरण में 'मील का पत्थर' साबित होता 'मुख्यमंत्री महिला उद्यमी योजना'

•अर्चना सिन्हा

सारांश- पिछले दशक में भारतीय अर्थव्यवस्था में नए-नए स्टार्ट अप्स व उद्यमियों की संख्या में उत्तरोत्तर वृद्धि देखी गई है। कई नए रोजगार अवसर उभरकर सामने आए है। प्राय: देखा गया है उद्यमिता के क्षेत्र में पुरुष वर्ग की प्रधानता या यूं कहा जाए वर्चस्व रहा है। इस क्षेत्र में महिला उद्यमियों की संख्या प्राय: कम रही है। परंतु बदलते समय के साथ-साथ महिलाओं ने भी इस क्षेत्र में अपने कदम रख दिए है और अपने उद्यमिय गुणों का परिचय देते हुए अपने व्यवसाय को सफलता की ऊंचाइयों तक ले गई है एवं खुद को एक सफल उद्यमी के रूप में उपस्थापित किया है। महिला उद्यमियों की बात की जाए तो चाहे वह संपन्न परिवार से संबंधित हो या साधारण परिवार से उन्हें इस क्षेत्र में आगे बढ़ने एवं खुद को साबित करने के लिए कड़ी मेहनत करनी पड़ी एवं अपने लक्ष्य को हासिल करने के लिए कई चुनौतियों का भी सामना करना पड़ा है। महिलाओं को अपना उद्यम लगाने या स्वरोजगार करने में सबसे बड़ी समस्या पैसों की कमी होती है। उनके पास पर्याप्त पूंजी का अभाव होता है एवं स्वामित्व में संपत्ति ना रहने के कारण बैंकों से ऋण आदि मिलने में भी कठिनाई होती है। उनकी इन परेशानियों को समझते हुए बिहार सरकार ने 'मुख्यमंत्री महिला उद्यमी योजना' की शुरुआत की जिसके अंतर्गत महिलाओं को उद्यम या स्वरोजगार के लिए सरकार की तरफ से वित्तीय सहायता दी जा रही है। यह महिलाओं को इस क्षेत्र में अधिक से अधिक संख्या में लाने के लिए प्रेरित करने हेतु मिल का पत्थर साबित होगा। साथ ही इस योजना से लाभान्वित कुछ महिला उद्यमियों के विषय में भी जानकारी ली जाएगी जो आगे अन्य महिलाओं को इस क्षेत्र में लाने में प्रेरणा स्रोत का कार्य करेंगी। इस प्रकार इस शोध के माध्यम से यह समझने का प्रयास किया जाएगा कि किस प्रकार बिहार में महिला उद्यमी योजना महिलाओं को उद्यमिता के क्षेत्र में आगे लाने में एवं उन्हें आर्थिक रूप से सशक्त बनाने में सहायक सिद्ध हो रहा है।

मुख्य शब्द- महिला उद्यमी, आर्थिक सशक्तिकरण,प्रेरणा स्रोत, उद्यमिता, आत्मनिर्भर,सरकारी योजना, अवसर, सफलता

प्रस्तावना- जनगणना 2011 के रिपोर्ट के अनुसार बिहार की कुल जनसंख्या 10.41 करोड़ है जिसमें पुरुष जनसंख्या लगभग 5.42 करोड़ एवं महिला जनसंख्या लगभग 4. 98 करोड़ है अर्थात यह कहा जा सकता है कि लगभग आधी आबादी महिला की है। ऐसी स्थिति में राज्य के आर्थिक विकास में भी महिलाओं की भागीदारी महत्वपूर्ण है। महिलाएं

• सहायक प्राध्यापक, अर्थशास्त्र विभाग, जयप्रकाश महिला कॉलेज, छपरा, सारण, बिहार

जब आर्थिक रूप से सशक्त होंगी एवं उत्पादन कार्यों में अपनी पूर्ण क्षमता का प्रयोग करेंगी अर्थात अपना सक्रिय योगदान देंगी तभी राज्य का द्रुत गति से आर्थिक विकास होगा। परंतु आज भी बिहार की महिलाएं आर्थिक क्षेत्र में अपना विशेष योगदान नहीं दे पा रही हैं जिसके लिए कई तरह के सामाजिक, आर्थिक, व्यक्तिगत, पारंपरिक एवं रूढ़िवादी कारक जिम्मेदार है। अधिकतर महिलाएं जो कार्य कर भी रही हैं मुख्यत: पारिवारिक, शिक्षा, नर्सिंग एवं असंगठित क्षेत्र में ही कार्य कर रही हैं। यह क्षेत्र महिलाओं की दृष्टि से सुरक्षित माने जाते हैं इसलिए महिलाएं भी सामाजिक एवं पारिवारिक स्थितियों को देखते हुए इन्हीं क्षेत्रों में अपना भविष्य देखती हैं।

हालांकि आज स्थिति बदल रही है और महिलाएं कुछ महिला केंद्रित क्षेत्र से हटकर अन्य क्षेत्रों में भी अब अपनी भागीदारी सुनिश्चित कर रही हैं। इसमें सरकार द्वारा लड़कियों एवं महिलाओं के लिए चलाई जा रही योजनाओं एवं आरक्षण का भी महत्वपूर्ण योगदान रहा है जिसके कारण आज लगभग सभी सरकारी एवं निजी कार्यालय में या यों कहें लगभग सभी क्षेत्रों में कमोबेश महिला भागीदारी देखी जा रही है। महिलाओं की यह भागीदारी देश एवं राज्य के आर्थिक विकास के लिए पर्याप्त नहीं है। आर्थिक विकास के इंजन को तेज करना है तो महिलाओं को उद्यम व स्वरोजगार के क्षेत्र में भी आगे आना होगा एवं अपने उद्यमिता क्षमता का परिचय देते हुए पुरुषों के साथ कंधे से कंधा मिलाकर इस क्षेत्र में भी बराबर की भागीदारी सुनिश्चित करनी होगी।

पिछले दशक में भारतीय अर्थव्यवस्था में नए-नए व्यवसाय एवं उद्योगों की संख्या में उत्तरोत्तर वृद्धि देखी गई है। रोजगार के कई नए अवसर भी उभर कर सामने आए हैं। प्राय: देखा गया है कि उद्यमिता के क्षेत्र में पुरुष वर्ग की ही प्रधानता या यों कहां जाए वर्चस्व रहा है। इस क्षेत्र में महिला उद्यमियों की संख्या अत्यल्प रही है,परंतु बदलते समय के साथ-साथ महिलाओं ने भी इस क्षेत्र में अपने कदम रख दिए हैं और अपने उद्यमिय गुणों का परिचय देते हुए अपने व्यवसाय को सफलता की ऊंचाइयों तक ले गई है एवं खुद को एक सफल उद्यमी के रूप में उपस्थापित किया है। परंतु महिलाओं के गृहिणी से लेकर उद्यमी बनने तक का सफर आसान नहीं रहा है इसमें कई समस्याएं जैसे पूंजी का अभाव, स्वामित्व का अभाव, तकनीकी एवं कौशल शिक्षा का अभाव, वित्तीय जटिलताओं को समझने में दिक्कत, सरकार की योजनाओं के बारे में जागरूकता का अभाव के साथ-साथ सामाजिक, पारिवारिक संरचना भी प्रमुख रही है। बिहार की महिलाओं को भी उद्यमी बनने के मार्ग में इन सभी समस्याओं से जूझना पड़ रहा है।

सैदापुर एटअल 2012 के अनुसार, सदियों से हमारा समाज पुरुष प्रधान रहा है। उद्यमिता के संदर्भ में अगर बात करें तो इसमें भी पुरुषों का ही वर्चस्व रहा है।परंतु अब समय एवं मान्यताएं बदल रही हैं। यह महिला को पुरुष के समान ही एक सफल उद्यमी के रूप में देख रही है।

सिंह (2008) ने उन कारकों की पहचान की जो उद्यमिता में महिलाओं के प्रवेश को प्रभावित करते हैं। उन्होंने बताया कि महिला उद्यमिता के विकास के बाधक मुख्य रूप से उनके सफल उद्यमी के साथ बातचीत की कमी, पारिवारिक जिम्मेदारी,महिला उद्यमी के रूप में सामाजिक इनकार, लैंगिक भेदभाव, नेटवर्क की

कमी,बैंकरों द्वारा महिलाओं को ऋण देने में कम प्राथमिकता आदि हैं। उन्होंने संस्थागत ढांचे को खोलने ,सूक्ष्म उद्योगों को बढ़ावा देने, विजेताओं को आगे आकर उनका समर्थन करने आदि जैसे कुछ उपाय की सिफारिश की।

अध्ययन का उद्देश्य-

1. बिहार में उद्यमिता के प्रति महिलाओं के रुझान का अध्ययन।
2. सरकार की योजना के प्रभाव का विश्लेषण।
3. उन कारकों का पता लगाना जो महिलाओं को सफल उद्यमी बनने को प्रेरित करें।

शोध प्रविधि- यह शोध कार्य वर्णनात्मक प्रकृति का है। शोध आलेख पूर्णत: द्वितीयक स्रोतों पर आधारित है। इसमें विभिन्न प्रकार के जनरल के आर्टिकल, पुस्तक, ब्लॉग, वेबसाइट आदि का सहयोग लिया गया है। यह अध्ययन बिहार में महिलाओं को उद्यम के क्षेत्र में आगे बढ़ाने में सरकार के 'मुख्यमंत्री महिला उद्यमी योजना' के योगदान का मूल्यांकन करता है।

बिहार की महिलाओं के आर्थिक सशक्तिकरण में मुख्यमंत्री महिला उद्यमी योजना का योगदान- आज बिहार में सरकार भी उद्यम के क्षेत्र में महिलाओं की भागीदारी बढ़ाने हेतु प्रतिबद्ध है ताकि महिलाएं सशक्त एवं सक्षम होकर आर्थिक सशक्तिकरण के माध्यम से राज्य की जीडीपी वृद्धि में अपना योगदान दे । इसी कड़ी में महिलाओं को उद्यम के क्षेत्र में आगे लाने के लिए वर्तमान सरकार द्वारा 'मुख्यमंत्री महिला उद्यमी योजना' वर्ष 2021 में शुरू की गई है। यह बिहार के उद्योग विभाग द्वारा शुरू किए गए 'छत्र योजना' 'मुख्यमंत्री उद्यमी योजना' का एक घटक है। मुख्यमंत्री उद्यमी योजना उद्योग विभाग के अंतर्गत ''तकनीकी विकास निदेशालय'' द्वारा संचालित की जा रही है। सरकार द्वारा बिहार के लगभग सभी वर्गों को लाभ पहुंचाने की दृष्टि से यह योजना आरंभ की गई। इस योजना को निम्न पांच घटकों में बांटा गया है।

मुख्यमंत्री उद्यमी योजना के मुख्य घटक

जन	योजना का नाम	लाभान्वित वर्ग
1	मुख्यमंत्री अनुसूचित जाति अनुसूचित जनजाति उद्यमी योजना	इस योजना का लाभ सिर्फ अनुसूचित जाति एवं अनुसूचित जनजाति वर्ग के पुरुष एवं महिला आवेदक उठा सकते है।
2	मुख्यमंत्री अति पिछड़ा वर्ग उद्यमी योजना	इस योजना के अंतर्गत केवल वहीं पुरुष एवं महिला आवेदन कर सकते हैं जो बिहार सरकार द्वारा निर्धारित अति पिछड़ा वर्ग की कोटि में आते है।
3	मुख्यमंत्री महिला उद्यमी योजना	इसके अंतर्गत सभी वर्ग की महिला आवेदन कर इस योजना का लाभ उठा सकती है।
4	मुख्यमंत्री युवा उद्यमी योजना	इस योजना के अंतर्गत केवल सामान्य एवं पिछड़ा वर्ग (BC 02) के पुरुष आवेदक ही आवेदन कर इसका लाभ उठा सकते है।
5	मुख्यमंत्री अल्पसंख्यक उद्यमी योजना	इसके अंतर्गत अल्पसंख्यक वर्ग के सभी पुरुष एवं महिला आवेदक आवेदन कर सकते है।

इस प्रकार बिहार राज्य के बेरोजगार युवा एवं युवतियों को आर्थिक रूप से सशक्त और आत्मनिर्भर बनाने एवं समाज की मुख्य धारा से जोड़ने के लिए कोटि-वार अलग-अलग वर्गों में मुख्यमंत्री उद्यमी योजना को बांटकर सभी वर्गों को इसका लाभ देने

के लिए बृहत स्तर पर इस योजना को लागू किया गया है। हालांकि मुख्यमंत्री युवा उद्यमी योजना को छोड़कर अन्य सभी योजनाओं में महिला उद्यमी पुरुषों के समान आवेदन कर योजना का लाभ उठा सकती हैं। फिर भी बिहार राज्य की कोई भी पात्र महिला इस योजना का लाभ उठाने से वंचित न रह जाए इसलिए सरकार की ओर से महिलाओं हेतु विशेष रूप से मुख्यमंत्री महिला उद्यमी योजना का संचालन किया जा रहा है जिसमें सभी वर्गों की योग्य महिलाएं आवेदन कर इस योजना का लाभ उठाने के लिए स्वतंत्र हैं। सरकार महिलाओं को समाज की मुख्य धारा से जोड़ने हेतु एवं उद्यमिता के क्षेत्र में अधिक से अधिक महिलाओं को आगे लाने तथा स्वरोजगार हेतु प्रेरित कर रही है।

मुख्यमंत्री महिला उद्यमी योजना का शुभारंभ वर्ष 2021 में किया गया। इसके अंतर्गत सरकार महिलाओं को उद्यम लगाने के लिए अधिकतम 10 लाख रुपए तक की वित्तीय सहायता प्रदान कर रही है जिसमें कुल परियोजना का 50 प्रतिशत या अधिकतम 5 लाख तक अनुदान के रूप में दिए जाते हैं जिसे लौटना नहीं पड़ेगा एवं शेष 50 प्रतिशत या अधिकतम 5 लाख रुपए तक ब्याज मुक्त ऋण के रूप में प्रदान किया जा रहा है। अर्थात यदि कोई आवेदक 10 लाख रुपए इस योजना के अंतर्गत प्राप्त करता है तो उसे मात्र 5 लाख ही सरकार को वापस करने होंगे एवं उस राशि पर कोई ब्याज देय नहीं होगा। लाभुकों को परियोजना राशि नियमानुसार किस्तवार दी जाएगी एवं पूर्ण राशि भुगतान होने के 1 वर्ष के पश्चात लाभुकों को कुल राशि का 50 प्रतिशत अर्थात ऋण के रूप में दी गई राशि का किश्तवार भुगतान करना होगा जो बहुत ही आसान किस्तों में जमा करने की सुविधा प्रदान की गई है। लाभुकों को किस्तवार ऋण राशि का भुगतान उद्यमी पोर्टल पर उपलब्ध ऑनलाइन पेमेंट गेटवे के माध्यम से करना होगा। राशि का भुगतान निर्धारित समय पर नहीं करने पर उनके विरुद्ध नियमानुकूल कार्रवाई का भी प्रावधान है। साथ ही यदि कोई लाभुक प्रथम, द्वितीय या तृतीय किश्त प्राप्त करने के बाद भी उद्यम स्थापित नहीं कर पता है तो उनके विरुद्ध परियोजना राशि का दुरुपयोग करने की स्थिति में पी.डी. आर. एक्ट के तहत कार्रवाई करते हुए एकमुश्त राशि की वसूली की जाएगी। सरकार द्वारा लाभुकों को स्वीकृत राशि नगद देय नहीं होगी। उन्हें RTGS या NEFT के माध्यम से ही राशि दी जाएगी। साथ ही लाभुकों को भी प्राप्त हुए राशि में से 10,000 से अधिक का सभी भुगतान ऑनलाइन माध्यम जैसे RTGS /NEFT/Cheque/DD/ Net Banking इत्यादि के माध्यम से ही करना होगा। इस प्रकार ऑनलाइन पेमेंट के कारण सीधे राशि संबंधित व्यक्ति, संस्था आदि के खाते में स्थानांतरित होती जाएगी एवं किसी प्रकार के बिचौलियों को कमीशन आदि देने का झंझट नहीं होगा। अर्थात सभी वित्तीय लेनदेन डिजिटल माध्यम से होने के कारण पारदर्शिता बनी रहती है एवं भ्रष्टाचार की संभावना कम होती है। यह नीति सरकार की एक दूरदर्शी सोच को दर्शाता है।

मुख्यमंत्री महिला उद्यमी योजना का लाभ वे सभी महिलाएं उठा सकती हैं जो निम्न अर्हता रखती हैं–

- वे बिहार की स्थाई निवासी हो।
- न्यूनतम इंटरमीडिएट या समकक्ष परीक्षा उत्तीर्ण हो।
- जिसकी आयु 18 वर्ष से 50 वर्ष के बीच हो।

- इकाई प्रोपराइटरशिप फर्म, पार्टनरशिप फर्म, एलएलपी अथवा प्राइवेट लिमिटेड कंपनी हो।
- प्रोपराइटरशिप व्यवसाय उद्यमी द्वारा अपने निजी PAN पर किया जाएगा।

न्यूनतम अर्हता प्राप्त महिला द्वारा आवेदन करने के उपरांत जब उनका चयन होता है तो उद्योग विभाग द्वारा उनके लिए 15 दिनों के प्रशिक्षण की भी व्यवस्था की जाती है। साथ ही समय-समय पर चयनित उद्योगों के लिए कार्यशाला एवं उन्मुखीकरण कार्यक्रम का भी आयोजन किया जाता है जिससे उन्हें योजना के विभिन्न चरणों से अवगत कराया जा सके। उन्हें प्रशिक्षण के दौरान इस बात की भी जानकारी मुहैया कराई जाती है कि उनके द्वारा तैयार किया जा रहे हो उत्पादों को किस प्रकार बेहतर बाजार सुविधा उपलब्ध होगी। साथ ही अन्य योजनाओं के बारे में भी जानकारी दी जाती है ताकि वह अपने व्यवसाय का संचालन सफलतापूर्वक कर सके एवं उसका विस्तार कर सके।

इस योजना से लाभान्वित महिलाओं की संख्या वित्तीय वर्ष 2023-24 में कुल 5053 है। वित्तीय वर्ष 2024-25 में जिलावार निर्धारित लक्ष्य के आधार पर महिला उद्यमी योजना के अंतर्गत 2000 आवेदनों का चयन कर इस योजना का लाभ प्रदान किया जाएगा।

इस योजना से बिहार में महिलाओं को उद्यमिता के क्षेत्र में आगे आने में सफलता तो मिली है साथ ही साथ इन्होंने अपने जीवन को संवार कर दूसरे के जीवन को भी संवारने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई है। उनकी सफलता की कहानियां अन्य स्त्रियों के लिए प्रेरणादाई भी साबित होगी। इस उद्देश्य से इस योजना से लाभान्वित कुछ महिला उद्यमियों के विषय में ,जिसमें उनके सफलताओं से जुड़े कुछ प्रेरक प्रसंग जो इस योजना के लाभ और वर्तमान परिप्रेक्ष्य में इसकी प्रासंगिकता दोनों को ही चरितार्थ करते हैं वर्णन किया जा रहा है-

1. **सुनीता सिंह (रेडीमेड गारमेंट्स उद्योग)-** बिहार के आरा की रहने वाली सुनीता सिंह पीएचडी उपाधि प्राप्त हैं। उन्होंने रेडीमेड गारमेंट्स में डिप्लोमा भी किया है। उन्होंने महिला उद्यमी योजना के अंतर्गत 10 लाख रुपए प्राप्त होने पर 'गार्गी फैब्रिकेट' नाम से अपना उद्यम स्थापित किया जिसमें बेडशीट एवं तकिया कवर का निर्माण किया जाता है। उनके अनुसार इस उद्यम से उनके जीवन को एक नई पहल और ठहराव मिला और उन्होंने ठान लिया कि जब सरकार ने उन पर भरोसा किया तो वह भी इस व्यवसाय को खूब आगे बढ़ाकर बिहार को बहुत आगे ले जाएंगी।
2. **रीमादेवी (पीवीसी फुटवियर उद्योग)-** काकर कुंड ग्राम, जिला गोपालगंज, बिहार की निवासी रीमा देवी जो पूर्व में गृहिणी थी और पति के बाहर रहने के कारण हमेशा आर्थिक तंगी में रहती थी। किसी काम के लिए पैसा आने का इंतजार करना पड़ता था। फिर इन्होने मुख्यमंत्री महिला उद्यमी योजना के अंतर्गत वित्त प्राप्त कर 'रीमा इंटरप्राइजेज' की शुरुआत की एवं PVC फुटवियर निर्माण का कार्य शुरू किया और अब यह आर्थिक रूप से आत्मनिर्भर हैं।
3. **आंचल कुमारी(रेडीमेड गारमेंट्स उद्योग)-** आंचल गया जिले के मानपुर

प्रखंड के रामबाग की रहने वाली हैं। पहले गृहिणी रही आंचल आज एक सफल महिला उद्यमी है तथा आज अन्य छः लोगों को भी रोजगार दे रखा है। उन्हें सिलाई का शौक था और इसका प्रशिक्षण भी ले चुकी थी। घर का काम करने के बाद बहुत समय बचता था तो मन में ख्याल आया कि क्यों ना कुछ काम शुरू कर परिवार की आर्थिक सहायता की जाए। इसके बाद 2022 में इस योजना की पूरी जानकारी प्राप्त कर आवेदन किया और चयन के उपरांत घर में ही रेडीमेड गारमेंट्स का उद्योग शुरू कर दिया तथा लगभग आधा दर्जन लोगों को काम भी दिया जिनकी आय लगभग 15 से 20 हजार रुपए प्रतिमाह है। इनके केंद्र में मुख्य रूप से ट्राउजर, टी- शर्ट,पैंट, शर्ट एवं अन्य तरह के वस्त्र बनाए जाते हैं। इसकी डिमांड बिहार, झारखंड के साथ-साथ केरल और गुजरात में भी है। इस उद्योग से उन्हें हर माह दो- तीन लाख की बचत भी हो रही है। कोलकता और गुजरात से कच्चा माल मंगाकर अपने उद्योग में कटाई- छटाई कर सिलाई करते हैं।

4. **रूपा कुमारी एवं बबीता कुमारी (फुटबॉल निर्माण उद्योग)-** बांका की रहने वाली रूपा कुमारी एवं बबीता कुमारी ने समाज में अपनी एक विशिष्ट पहचान बनाने के लिए एक नवीन मार्ग अपनाने का निर्णय लिया। उन्होंने जालंधर के स्पोर्ट्स फैक्ट्री में प्रशिक्षण प्राप्त करने के बाद अपने गांव में फुटबॉल निर्माण इकाइयां स्थापित की। वर्तमान में रूपा की फैक्ट्री में 100 एवं बबीता कुमारी की फैक्ट्री में 100 कर्मचारी कार्यरत हैं।
5. **खुशबू कुमारी (मसाला उद्योग)-** खुशबू कुमारी पूर्वी चंपारण की निवासी हैं। वह दिव्यांग है परंतु दिव्यांगता को उन्होंने कभी भी बाधक नहीं माना। वे स्वयं को हमेशा यह कहते हुए प्रेरित करती रही कि पंखों से कुछ नहीं होता हौसलों से ही उड़ान होती है। खुशबू ने अपने हौसलों से मसाला उद्योग स्थापित किया और उसमें सफलता भी प्राप्त की। बिहार सरकार के उद्योग विभाग द्वारा चलाए जा रहे मुख्यमंत्री महिला उद्यमी योजना के लाभुक के रूप में 'खुशबू इंटरप्राइजेज' की स्थापना कर उन्होंने चिप्स, बेसन व सत्तू निर्माण का कार्य भी शुरू किया। सरकार से मिली सहायता के बाद उन्होंने न सिर्फ अपने लिए रोजगार की तलाश की बल्कि पांच अन्य लोगों को भी रोजगार दिया जिसमें दो महिला एवं तीन पुरुष हैं। उनका उद्यम 10 लाख से अधिक का टर्नओवर हासिल कर चुका है। वह कहती हैं कि मुख्यमंत्री उद्यमी योजना उनके लिए वरदान साबित हुआ है। खुशबू की कहानी पूरे समाज को प्रेरित करने वाली है। यदि दृढ़ निश्चय कर लिया जाए तो किसी भी प्रकार की कमजोरी को मजबूरी बनाए बिना अपने भीतर छुपी क्षमता को पहचान कर आत्मनिर्भर बना जा सकता है।

योजना से संबंधित चुनौतियां- हालांकि मुख्यमंत्री महिला उद्यमी योजना बहुत ही प्रभावी साबित हुई है लेकिन इससे संबंधित कुछ चुनौतियां भी देखी गई हैं -

1. **योजना की जानकारी का अभाव**- बहुत सी महिलाएं विशेषकर ग्रामीण क्षेत्रों में बहुतायत महिलाएं आज भी इस योजना से अनभिज्ञ हैं।
2. **ऋण चुकाने की प्रक्रिया**- बिहार में विशेषकर ग्रामीण क्षेत्र की महिलाओं में

डिजिटल एवं वित्तीय शिक्षा का अभाव है जिससे कुछ महिलाओं को ऋण चुकाने की प्रक्रिया कठिन लग सकती है।

3. **बाजार की उपलब्धता**– कई महिलाओं के समक्ष अपने उत्पादों को बेचने के लिए सही बाजार की तलाश करने में भी कठिनाइयां आ सकती हैं।
4. तकनीकी ज्ञान की कमी– डिजिटल भुगतान और आधुनिक व्यापार तकनीक की कम जानकारी कुछ महिलाओं के व्यवसाय के क्षेत्र में आगे आने में बाधक बन सकती हैं।

संभावित सुधार व सुझाव -

1. **योजना का प्रचार प्रसार**– सरकार को इस योजना का प्रचार गांव–गांव तक करना चाहिए ताकि अधिक से अधिक महिलाएं इसका लाभ उठा सके।
2. **बाजार संपर्क**– सरकार को महिला उद्यमियों को उनको उत्पादों के लिए उचित बाजार उपलब्ध कराने में मदद करनी चाहिए।
3. **अतिरिक्त प्रशिक्षण कार्यक्रम**– महिलाओं को व्यवसाय प्रबंधन, डिजिटल मार्केटिंग और वित्तीय साक्षरता से संबंधित अतिरिक्त प्रशिक्षण दिया जाना चाहिए।
4. **ऋण पुनर्भुगतान में छूट**– विशेष परिस्थितियों में महिलाओं को ऋण चुकाने हेतु अतिरिक्त समय या छूट देनी चाहिए और किश्तवार ऋण चुकाने की प्रक्रिया को और भी लचीला बनाया जा सकता है।

निष्कर्ष-

1. वर्तमान में बिहार की महिलाओं ने अन्य क्षेत्रों के साथ–साथ उद्यम के क्षेत्र में भी अपने कदम रख दिए हैं। वे अपनी सूझबूझ एवं दूरदर्शिता से अपने व्यवसाय को सफलतापूर्वक संचालित कर रही तथा राज्य की आर्थिक स्थिति को सुदृढ़ करने में महत्वपूर्ण योगदान दे रही हैं। महिलाएं स्वरोजगार के माध्यम से आत्मनिर्भर बन रही हैं और साथ ही अन्य लोगों को अपने उद्योग में रोजगार देकर रोजगार प्रदाता भी बन रही हैं।
2. 'मुख्यमंत्री महिला उद्यमी योजना' बिहार की महिलाओं के आर्थिक स्वतंत्रता एवं सशक्तिकरण में एक महत्वपूर्ण पहल साबित हो रहा है। शोध से स्पष्ट है कि महिलाओं को उद्यमिता के क्षेत्र में प्रवेश करने में कई बाधाओ जैसे पूंजी की कमी, पारिवारिक जिम्मेदारियां, सामाजिक मान्यताएं, तकनीकी ज्ञान का अभाव आदि का सामना करना पड़ता है। सरकार द्वारा इस योजना के तहत दी जाने वाली वित्तीय सहायता ने महिलाओं के इस क्षेत्र में प्रवेश करने में बड़ी सहूलियत प्रदान करती है। यह न केवल महिलाओं को स्वरोजगार के लिए वित्तीय सहायता देती है बल्कि आत्मनिर्भर बनने के अवसर भी देती है। फलतः वर्तमान में बिहार की महिलाओं में उद्यमिता के प्रति रुझान तेजी से बढ़ रहे हैं।
3. इस योजना से लाभान्वित महिलाओं की सफलता की कहानी दर्शाती है कि यह योजना न केवल उनके व्यक्तिगत जीवन में बदलाव ला रही है बल्कि अन्य महिलाओं को भी उद्यम के क्षेत्र में आगे आने हेतु प्रेरित कर रही है। हालांकि अभी

भी कई महिलाएं योजना की जानकारी का अभाव, बाजार तक सीमित पहुंच, ऋण चुकाने की प्रक्रिया आदि जैसी चुनौतियों का सामना कर रही हैं। यदि सरकार बाजार उपलब्धता, वित्तीय प्रशिक्षण और प्रचार-प्रसार पर अधिक ध्यान दें तो यह योजना और भी प्रभावी हो सकती है।

4. निष्कर्षत यह योजना महिलाओं को उद्यमिता के क्षेत्र में आगे लाने के लिए एक प्रभावी माध्यम बन रही है और बिहार में महिला सशक्तिकरण की दिशा में मिल का पत्थर साबित हो रही है। यह महिलाओं को आत्मनिर्भर बनकर राज्य के आर्थिक विकास में योगदान देने हेतु प्रेरित कर रही है।

संदर्भ ग्रन्थ सूची-

1. सरस्वतीचौधरी (जनवरी-मार्च 2022) "भारत में महिला उद्यमिता अवसर एवं बाधाएं" International journal of education, (IJEMMASSS), ISSN:2581-9925, Vol-4, No.01(1), pg:97-103.
2. Vaishnavi Sharma and Mamta Gaur (August 2020), "women entrepreneurs in India: A study of opportunities and challenges." Journal of Xi'an University of architecture and technology. ISSN No. 1006-7930, Vol- XII, Issue VII,2020.
3. Goyal, Meenu and Prakash, Jai (2011). "women entrepreneurship in India".
4. Segal, G., Borgia D.and Schoenfeld, J (2005). "The motivation to become an entrepreneur". International Journal of Entrepreneurial Behaviour and Research.11(1):42-57.

Websites:

1. Bihar Govt.Udyami.bihar.Gov.in
2. https//.Udyami.bihar.gov.in
3. my scheme,https.//www.myscheme.gov.in
4. www.bhaskar.com
5. www.livehindustan.com
6. www.tv9hindi.com

UGC Journal No. (Old) 2138
Peer-Reviewed Research Journal
Impact Factor 6.375, ISSN 0975-4083
Vol.- 28, Hindi Edition, Year-14, March 2025

ग्रामीण क्षेत्रों में विकास की योजनाओं का अध्ययन (बड़वानी जिले के विशेष संदर्भ में)

• रमेश मुझाल्दा
•• सुधा पाण्डेय

सारांश- बड़वानी जिला भारत के मध्यप्रदेश राज्य का एक जिला है। जिला मुख्यालय बड़वानी में है। जिले का क्षेत्रफल 5,427 किमी तथा जनसंख्या 1,385,88 (2011 जनगणना) है। यह जिला मध्यप्रदेश के दक्षिण पश्चिम भाग में स्थित है, नर्मदा नदी इसकी उत्तरी सीमा बनाती है। ठीकरी इस का प्रवेश द्वार और एक तहसील भी है। सेंधवा इसका प्रसिद्ध नगर है। यह कपास के लिये प्रसिद्ध है। यह एक तहसील भी है। जिले का सर्वाधिक जनसंख्या वाला नगर है यहाँ के किले का ऐतिहासिक महत्व है। बड़वानी नगर से 8 किलोमीटर दूर सतपुड़ा की पहाड़ियों में भगवान ऋषभदेव की 84 फीट की एक पत्थर से निर्मित प्रतिमा पहाड़ें से निकली है। जो बावनगजा के नाम से प्रसिद्ध है। यहां शहीद भीमा नायक का गांव धाबा बावड़ी है। बड़वानी जिले की तहसीलों में 1. बड़वानी, 2. ठीकरी , 3. वरला , 4. सेंधवा , 5. राजपुर 6 , अंजड़ ,7. पानसेमल ,8 निवाली ,9 पाटी।

मुख्य शब्द- विकास, योजना

परिचय- बड़वानी जिले की स्थापना 25 मई 1998 को हुई। पूर्व में यह जिला खरगोन (पश्चिम निमाड़) जिले का एक भाग था। बड़वानी जिला मध्यप्रदेश के दक्षिण पश्चिम में स्थित है, नर्मदा नदी इसकी उत्तरी सीमा बनाती है। जिले के दक्षिण में सतपुड़ा एवं उत्तर में विंध्याचल पर्वतश्रेणियाँ है।

बड़वानी नाम की उत्पत्ति बड़ (बरगद) के वन से हुई है, जिनसे शहर पुराने समय में घिरा हुआ था। वानी शब्द बगीचे के लिये प्रयोग किया जाता है, इसलिये शहर को बड़वानी नाम से जाना जाता है।

ऐतिहासिक पृष्ठभूमि- शहर बड़वानी 1948 से पहले बड़वानी राज्य की राजधानी था। यह छोटा–सा राज्य अपनी चट्टानी इलाकों और कम उत्पादक भूमि के कारण अंग्रेज, मुगलों और मराठों के शासन से बचा रहा।

शहर बड़वानी पूर्व में बड़ नगर और सिद्ध नगर के नाम सें भी जाना जाता था। जिला बड़वानी जैन तीर्थ यात्रा केंद्र चुलगिरि और बावनगजा के लिए भी मशहूर है।

बड़वानी का एक ऐतिहासिक प्रतीक है जो तीरगोला के नाम सें जाना जाता है।

• शोधार्थी
•• शोध निर्देशक, आचार्य अर्थशास्त्र विभाग, माधव विश्वविद्यालय, पिण्डवाड़ा, सिरोही (राजस्थान)

यह खंडवा–बड़ौदा मार्ग पर सागर विलास पैलेस के सामने स्थित है, और राजा रणजीत सिंह के दिवंगत बेटे की याद में बनाया गया था।

आजादी से पहले बड़वानी शहर निमाड़ के पेरिस के रूप में जाना जाता था। वर्तमान समय में उच्च शिक्षा के लिये यहां पर शहीद भीमा नायक शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय संचालित है।

भौगोलिक- जिला बड़वानी $21^{0}37''-22^{0}22''$ उत्तरी अक्षांश से $74^{0}27''-75^{0}30''$ पूर्व देशांतर के बीच फैला है। इस जिले के दक्षिण में महाराष्ट्र राज्य, पश्चिम में गुजरात राज्य, पुर्व में खरगोन तथा उत्तर में धार है। जिला पश्चिम में उच्चतम बिंदु के साथ आकार में त्रिकोणीय है।

शहर बड़वानी नर्मदा नदी के दक्षिण में स्थित है। बडवानी जिले मे भिलट देव का मन्दिर है। यहाँ नाग पंचमी को हर वर्ष मेला लगता है प्रत्येक वर्ष यहा लोगों की भारी मात्रा में मेला लगता है।

प्रमुख प्रसिद्ध स्थल/पर्यटन स्थल

बावनगजा जैन तीर्थ स्थल,चूलगिरी,भिलटदेव मंदिर (नागलवाड़ी),बड़ी बिजासन माता मंदिर (बिजासन–सेंधवा),छोटी बिजासन माता मंदिर (सेंधवा),सेंधवा का किला, भंवरगढ का किला, हनुमान टेकडी (बड़वानी), शहिद भीमा नायक स्मारक (धाबाबावडी) स्थित है।

वायुमार्ग- निकटतम हवाई अड्डा जिले से लगभग 150 कि.मी. की दूरी पर इन्दौर शहर में स्थित हैं। जहां से भारत के प्रमुख शहरों जैसे नई दिल्ली, मुम्बई, चेन्नई, कोलकाता, बंगलोर, हैदराबाद आदि तथा अंतरराष्ट्रीय शहरों के लिए प्रमुख हवाई सेवाएं उपलब्ध है।

रेलमार्ग- बड़वानी में पश्चिम रेलवे (रतलाम मंडल) का आरक्षण काउंटर अम्बेडकर पार्क, राजघाट रोड पर स्थित है। निकटतम रेलवे स्टेशन लगभग 150 कि.मी. की दूरी पर इन्दौर शहर में स्थित हैं, जो पश्चिमी रेलवे के मुख्य वाणिज्यिक रेलवे स्टेशनों में से एक है।

प्राथमिक आंकड़े- प्राथमिक समंक वे मौलिक सुचनाऐं या तथ्य होते हैं जो कि एक शोधकर्ता वास्तविक अध्ययन क्षेत्र में जाकर विषय या समस्या से सम्बन्धित जीवित व्यक्तियों से साक्षात्कार करके अथवा अनुसूची और प्रश्नावली की सहायता से एकत्रित करता है अथवा प्रत्यक्ष निरीक्षण के द्वारा प्राप्त करता है। अध्ययन उपकरण साक्षात्कार अनुसूची, समुह चर्चा, अवलोकन आदि की सहायता एकत्रित एवं निरीक्षण किया जाता है।

साक्षात्कार अनुसूची- सामाजिक शोध के लिए सबसे बडी आवश्यकता अध्ययन विषय से संबंधित ऑकड़ों का संकलन है। ऑकड़ों के संकलन के लिए जिन–जिन प्रविधियों का उपयोग शोधकर्ता करता है, उनमें साक्षात्कार अनुसूची का स्थान अत्यंत महत्वपूर्ण है। यंग के शब्दों में "साक्षात्कार को ऐसी क्रमबद्ध प्रविधि के रूप जाना जाता है, जिसके द्वारा एक व्यक्ति दूसरे व्यक्ति के आंतरिक जीवन में थोड़ा बहुत कल्पनात्मक रूप में प्रवेश करता हैं, जो कि उसके लिए सामान्यता तुलनात्मक रूप से अपरिचित है।"

समूह चर्चा – समूह चर्चा सामाजिक शोध कार्य में समंक एकत्र करने में एक महत्वपूर्ण विधि है। सामान्यत: उत्तरदाता को अकेले उत्तर देने में झिझक महसूस करते हैं इसलिए

समुह चर्चा के द्वारा अध्ययनकर्ता को कई पहलुओं को समझने में मदद मिलती है अत: प्रस्तुत शोध कार्य में शोधार्थी द्वारा समुह चर्चा करके भी समंकों का संकलन किया गया।

अवलोकन - अवलोकन किसी भी वैज्ञानिक शोध की एक अत्यंत ही महत्वपूर्ण विधि है। यह भौतिक एवं सामाजिक दोनों प्रकार के विज्ञानों में प्रयुक्त एक प्राचीन एवं सर्वाधिक प्रचलित विधि है। अवलोकन शब्द अंग्रेजी में ऑब्जरवेशन कहते हैं, जिसका सामान्य अर्थ होता है- देखना, अवलोकन करना या निरक्षण करना। अवलोकन एक ऐसी पद्धति है जिसमें कानों एवं वाणी की अपेक्षा चक्षुओं का अधिक प्रयोग होता है। किन्तु शोध की एक व्यवस्थित पद्धति के रूप में अवलोकन का अपना एक अलग ही अर्थ है।

अवलोकन अनुसंधान की वह विधि है जिसका प्रयोग सामाजिक अनुसंधान में सामग्री या आंकड़े एकत्रित करने के लिए किया जाता है। इसका प्रयोग उस सामाजिक व्यवहार, घटनाओं एवं परिस्थितियों के अध्ययन के लिए किया जाता है। जिन्हें हम अपनी आंखों से देख सकते हैं। यह एक विश्वसनीय प्रविधि मानी जाती है क्योंकि इसमें प्रत्यक्ष रूप से देखकर ही विश्वास किया जाता है। अत: यह विधि विश्वसनीय आंकड़ों के संकलन में सहायक है। यह विधि सामाजिक एवं प्राकृतिक तथा भौतिक विज्ञानों में महत्वपूर्ण विधि मानी जाती है।

द्वितीयक आंकड़े- द्वितीयक समंक वे सूचनाएँ और आँकड़े हैं जो कि शोधकर्ता को प्रकाशित व अप्रकाशित प्रलेखों, रिपोर्ट, सांख्यिकी, पत्र-डायरी, टेप, वीडियों कैसेट या इन्टरनेट आदि से प्राप्त होते हैं। द्वितीयक ऑकड़ों की उल्लेखनीय विशेषता यह होती है कि ये तथ्य, सूचनाऐं या आँकड़े स्वयं, शोधकर्ता अपने कार्य में उपयोग करने के लिए एकत्रित कर लेता है।

शोध कार्य में आई कठिनाईयाँ- अध्ययन के दौरान अनेक प्रकार की कठिनाईयों का सामना करना पड़ा है। अध्ययन क्षेत्र में प्राथमिक समंकों के संकलन के समय ग्रामीण परिवारों से साक्षात्कार लेने के लिये उनके निवास स्थानों पर कच्चे मार्ग से जाना पड़ा। ग्रामीण परिवारों के घर पहुँचे तो कुछ अपने कार्यों में व्यस्त होने से पर्याप्त समय नहीं दे पाये तथा कुछ घरों में परिवार के मुख्या नहीं होने के कारण भी जानकारी लेने मे समस्याओं का सामना करना पड़ा। ग्रामीण में शिक्षा का स्तर निम्न होने एवं उनकी स्थानीय बोली में बात करने से भी जानकारी प्राप्त करने में समस्याएँ का सामना करना पड़ा लेकिन अध्ययनकर्ता द्वारा अध्ययन क्षेत्र में बार-बार जाकर उन्हीं की भाषा में बातचीत करके विश्वास में लेकर समंकों का संग्रहण किया गया। इसी प्रकार द्वितीयक समंक प्राप्त करने विभिन्न शासकीय एवं अशासकीय संस्थाओं में जायें तो वहाँ पर भी समय पर जानकारी नहीं मिल पाई। इस कारण से इन संस्थाओं में कई बार जाना पड़ा है। इस प्रकार इस महत्वपूर्ण अध्ययन को पूर्ण करने में अनेक प्रकार की कठिनाईयों एवं समस्याओ का सामना करना पड़ा।

कोई भी ऐसा कार्य नहीं है जो निर्विघ्न सम्पन्न होता है। सफलता प्राप्त करने के लिए कुछ कठिनाईयों का सामना करना पड़ता है। कार्य पथ में आने वाले अवरोधों के कारण ही हमारे प्रयास गतिशील होते हैं, प्रस्तुत शोध कार्य के दौरान भी कुछ कठिनाईयाँ आयी जिन्हें दूर करते हुए मैने यह शोध कार्य संपन्न किया गया हों।

1- उत्तरदाताओं में उदासीनता एवं निराशावादी के कारण उत्तर प्राप्त करने में समस्या का सामना करना पड़ा।
2- शासकीय संस्थाओं में समय पर जानकारी नहीं मिल पाना जिससे समय अधिक लगा।
3- उत्तरदाताओं की अज्ञानता शोध के दौरान मुख्य समस्या रही। पूछे गए प्रश्न उनके लिए महत्वपूर्ण नहीं जान पड़ रहे थे।
4- कई उत्तरदाताओं ने जानकारी देने से मना कर दिया क्योंकि इस तरह की सूचनाएँ देने से उन्हें कोई लाभ नहीं हो रहा था।
5- अध्ययन के दौरान कुछ ग्रामीण कृषक बहुत सकुंचित दृष्टिकोण वाले मिले। युवा महिलाएँ सही जानकारी देना तो दूर बात करने में संकोच करती रहीं।

ग्रामीण जनों से उनकी कार्य के बारे में जानकारी प्राप्त करने के बाद उनसे उनकी आर्थिक स्थिति में जानकारी प्राप्त करना अति आवश्यक है। इस कारण से मैनें साक्षात्कार के समय उनकी मासिक आय की जानकारी प्राप्त की गई हैं जो कि अग्र तालिका में बताया जा रहा है।

तालिका क्रं. 01
उत्तरदाताओं की मासिक आय

स.क्र.	मासिक आय	संख्या	प्रतिशत
1.	10,000 से अधिक	20	50.0
2.	20,000 से अधिक	10	25.0
3.	35,000 से अधिक	6	15.0
4.	50000 से अधिक	4	10.0
	कुल	40	100

स्रोत– प्राथमिक आंकड़ों के आधार पर

ग्रामीण क्षेत्रों में आय के स्त्रोत सीमित होते हैं, क्योंकि इनके पास रोजगार की कमी होती है, लेकिन समय पर इनको जो भी कार्य मिलता है, इनके द्वारा कार्य किया जाता है। इस तरह से बड़वानी जिले के ग्रामीण उत्तरदाताओं में से 10,000 से अधिक मासिक आय वाले उत्तरदाताओं की संख्या 20 है, जिनका प्रतिशत 50.0 है एवं 20,000 से अधिक मासिक आय प्राप्त करने वाले उत्तरदाताओं की संख्या 10 है जिनका प्रतिशत 25.0 है एवं 35,000 से अधिक मासिक आय प्राप्त करने वाले उत्तरदाताओं की संख्या 6 है, जिनका प्रतिशत 15.0 है एवं 50,000 से अधिक मासिक आय प्राप्त करने वाले उत्तरदातओं की संख्या 4 और उनका प्रतिशत 10.0 है।

अत: कहा जा सकता हैं कि जिन ग्रामीण जनों के पास कृषि भूमि अधिक होती हैं उन लोगों की मासिक एवं वार्षिक आय में बढ़ोत्तरी होती है वहीं जो ग्रामीण जन कृषि एवं नौकरी साथ में करते हैं उन लोगों की आय अन्य ग्रामीण जनों से अधिक होती है लेकिन जो व्यक्ति केवल कृषि एवं मजदूरी कार्य करते है उन लोगों की आय सीमित होती है। इस

कारण से ग्रामीण जनों की आय में भी विभिन्नता होती है।

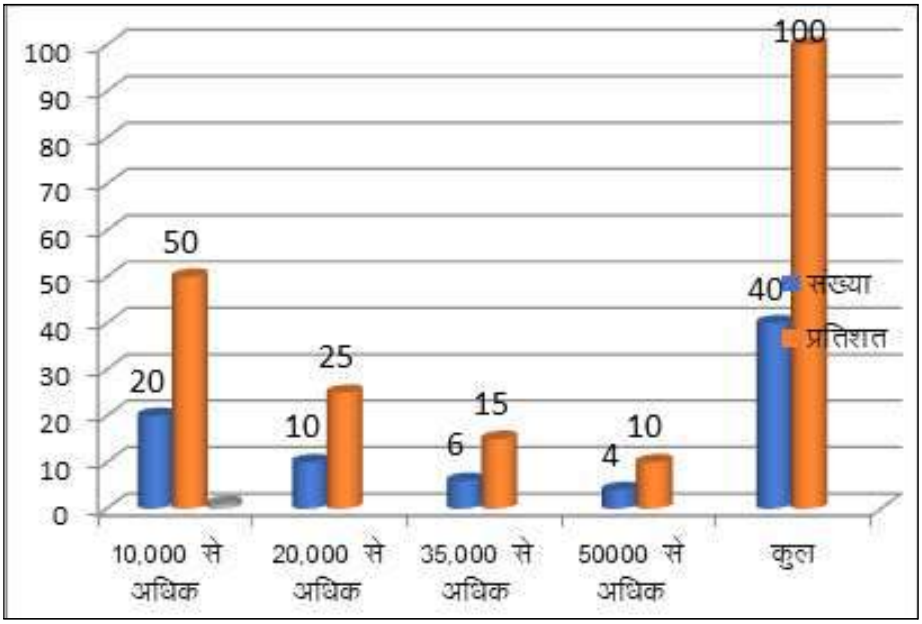

अत: ग्रामीण जनों के पास आय की सीमित मात्रा होने के कारण उनकी मासिक आय भी बहुत ही कम होती है, इसके अलावा जो व्यक्ति एक कार्य को छोड़कर अन्य दूसरे कार्य भी साथ में करते हैं उन लोगों की मासिक आय कुछ अधिक होती है। अत: लोगों की मासिक आय में कई प्रकार के परिवर्तन आसानी से देखे जा सकते है।

तालिका क्रमांक- 02

शासकीय योजनाओं की जानकारी

स. क्र.	शासकीय योजनाओं	संख्या	प्रतिशत
1.	हाँ	25	62.5
2.	नहीं	15	37.5
	कुल	40	100

स्रोत- प्राथमिक आंकड़ों के आधार पर

बड़वानी जिले के ग्रामीण क्षेत्रों में निवास करने वाले अधिकतर उत्तरदाताओं को शासकीय योजनाओं की जानकारी हैं, इस तथ्य को मानने वाले उत्तरदाताओं की संख्या 25 है जिनका प्रतिशत 62.5 हैं एवं जिन उत्तरदाताओं को शासकीय योजनाओं की जानकारी नहीं है उन उत्तरदाताओं की संख्या 15 है जिनका प्रतिशत 37.5 है। इस तथ्य से कह सकते हैं की अधिकतर उत्तरदाताओं को शासकीय योजनाओं की जानकारी हैं, जिनका लाभ ग्रामीण क्षेत्रों में निवास करने वाले लोगों के द्वारा प्रत्यक्ष एवं अप्रत्यक्ष रूप से लिया जा रहा है। वर्तमान समय में ग्रामीण क्षेत्रों में जो भी विकास दिखाई दे रहा हैं वो

शासकीय योजनाओं के माध्यम से ही दिखाई दे रहा है। ग्रामीण क्षेत्रों को विकसित करने के लिए भारत सरकार के द्वारा कई प्रकार की योजनाओं का संचालन किया जा रहा है जिसमें ग्रामीण क्षेत्रों के लिए ग्राम पंचायत के माध्यम से कई प्रकार की योजनाओं का संचालन किया जा रहा है जिसका उपयोग ग्रामीण क्षेत्रों में रहने वाले व्यक्तियों के द्वारा किया जा रहा है। कुक्षी एवं बड़वानी तहसील में रहने वाले ग्रामीण क्षेत्रों के द्वारा कई प्रकार की शासकीय योजनाओं का लाभ लिया जा रहा है। जिसमें से नरेगा, प्रधानमंत्री आवास योजना, कृषि संबंधित योजना एवं अन्य ग्रामीण क्षेत्रों से संबंधित योजनाओं का लाभ महिला एवं पुरूषों के द्वारा किया जा रहा है। आज ग्रामीण क्षेत्रों में भी निम्न स्तर के लोगों के द्वारा शासकीय योजनाओं का लाभ लिया जा रहा है। ऐसे कई उत्तरदाता साक्षात्कार के समय मिले है जिन्होनें स्वयं स्वीकार किया हैं कि उनके द्वारा कई प्रकार की शासकीय योजनाओं का लाभ कई बार लिया है। आज इन योजनाओं के माध्यम से इनके जीवन में कई प्रकार के नवीन परिवर्तन हुए है जिनका उपयोग ये अभी भी वर्तमान समय में करते आ रहे है।

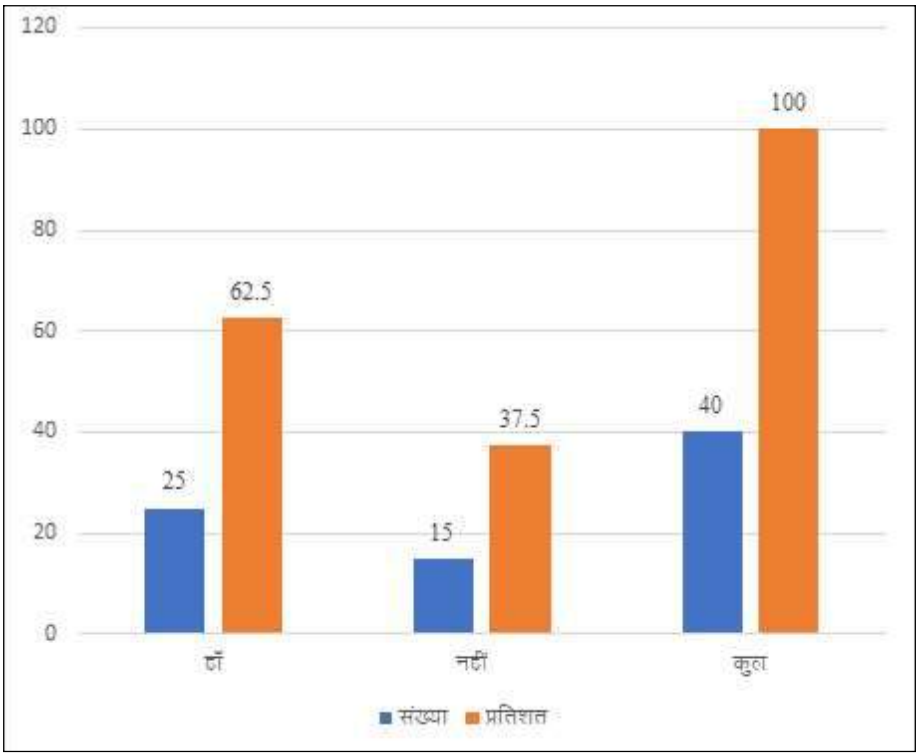

ग्रामीण क्षेत्रों में निवास करने वाले लोगों से शासकीय योजनाओं की जानकारी है या नहीं इस बात की पुष्टि करने के बाद इन लोगों से यह जानकारी ली गई हैं कि क्या इन योजनाओं के माध्यम से आपके जीवन में किस प्रकार से सुधार आया हैं चाहे वो आर्थिक सुधार हो, सामाजिक सुधार हो, राजनीतिक सुधार हो या फिर अन्य सुधार हो इनकी जानकारी ग्रामीण क्षेत्रों में निवास करने वाले लोगों से प्राप्त की गई है।

तालिका क्रमांक 03
मकानों का स्वरूप

स.क्र.	मकानों का स्वरूप	संख्या	प्रतिशत
1.	कच्चा	22	55.0
2.	पक्का	11	27.5
3.	अन्य	7	17.5
	कुल	40	100

स्रोत – प्राथमिक आंकड़ों के आधार पर

बड़वानी में निवास करने वाले ग्रामीण जनों के मकान में कई प्रकार की विभिन्नता देखी जा रही है जिसमें कच्चा मकान में रहने वाले उत्तरदाताओं की संख्या 22 है जिनका प्रतिशत 55.0 है एवं पक्का मकान में रहने वाले उत्तरदाताओं की संख्या 11 है जिनका प्रतिशत 27.5 है एवं अन्य मकान में रहने वाले उत्तरदातओं की संख्या 7 है जिनका प्रतिशत 17.5 है। इस प्रकार से कहा जा सकता हैं कि ग्रामीण क्षेत्रों में निवास करने वाले अधिकतर लोगों के मकान आज भी कच्चे बने हुए हैं, लेकिन जिन लोगों की आर्थिक स्थिति अच्छी हैं या जो व्यक्ति नौकरी या व्यवसाय कर रहे हैं उन लोगों के मकान पक्के देखे गये हैं लेकिन कुछ लोगों के मकान कच्चे एवं पक्के दोनों प्रवृत्ति के देखे गये है। इस तरह से बड़वानी जिले के ग्रामीण क्षेत्रों में मकानों की स्थिति दिन प्रतिदिन बदल रही है। शासकीय योजनाओं का लाभ लेकर अधिकतर लोगों ने पक्के मकान बनाने की प्रवृत्ति का लाभ ले रहे है।

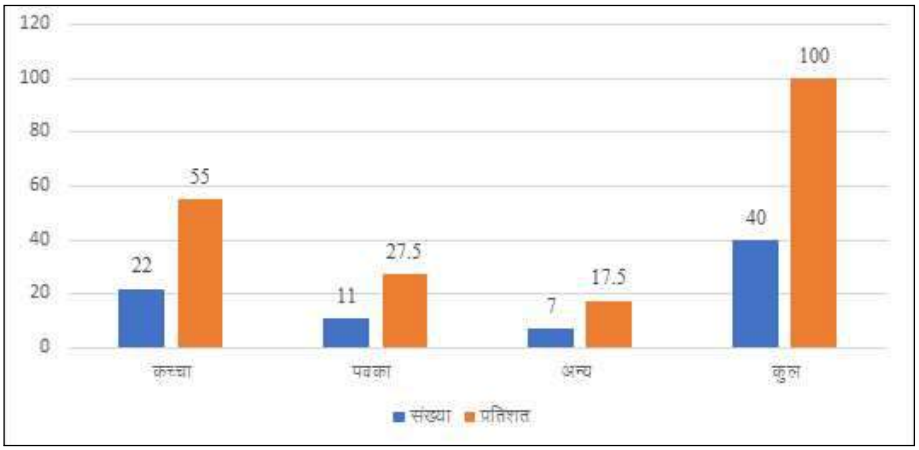

निष्कर्ष-

1- जातियों का ग्रामीण क्षेत्रों में बहुत महत्व है। जब साक्षात्कार किया गया तो उस समय अनेक उत्तरदाताओं ने बताया कि ये फलाना जाति से संबंध रखता है ये दिखरा जाति से संबंध रखता है। इस कारण से इस शोध अध्ययन के अंतर्गत अनुसूचित जनजाति, अनुसूचित जाति, पिछड़ा वर्ग एवं सामान्य वर्ग को

सम्मिलित किया गया हैं। जिसमें से अनुसूचित जनजाति के लोगों ने बढ़चढ़ कर भाग लिया, इसके बाद अनुसूचित जाति, पिछड़ा वर्ग एवं अंतिम में सामान्य वर्ग के द्वारा इस शोध अध्ययन में मुख्य रूप से भूमिका निभाई है।

2- बड़वानी जिले के ग्रामीण क्षेत्रों में ग्रामीणों के घर कच्चे एवं पक्के की स्थिति में देखे गये हैं जिसमें से अधिकतर उत्तरदाता के पास कच्चे मकान आज भी उपलब्ध है।

3- अधिकतर उत्तरदाताओं के पास कृषि योग्य कृषि भूमि उपलब्ध है। जिनके माध्यम से इनकी आर्थिक स्थिति दिन प्रतिदिन बदलती रही है।

4- ग्रामीण क्षेत्रों में वर्तमान समय में अधिकतर उत्तरदाताओं के द्वारा शासकीय योजनाओं का लाभ लिया जाता है। आज ऐसे कई परिवार देखने को मिले हैं जिन्होंने यह माना हैं कि उनके द्वारा शासकीय योजनाओं का लाभ दिन प्रतिदिन लिया जा रहा है।

5- जब कोई व्यक्ति शासकीय योजनाओं का लाभ लेते हैं तो उनके जीवन में अनेक प्रकार के सुधारात्मक कार्य देखने को मिलते है। इनके जीवन में आगे बढ़ने की लालसा दिन प्रतिदिन बढ़ती ही जाती है।

6- बड़वानी जिले के अधिकतर उत्तरदाताओं के द्वारा शासकीय योजनाओं का लाभ लिया जाता है जिससे उनकी आर्थिक स्थिति में दिन प्रतिदिन सुधारात्मक कार्य देखने को मिल रहा है।

7- शासकीय योजनाओं के माध्यम से ग्रामीण जनों में अनेक प्रकार से आर्थिक स्थिति में सुधारात्मक कार्य देखने को मिल रहे है।

संदर्भ ग्रन्थ सूची-

1- ग्रामीण विकास एवं रोजगार अध्याय 12 के अनुसार आर्थिक एवं सांख्यिकी संचालनालय, मध्यप्रदेश भोपाल

2- जिला सांख्यिकीय पुस्तिका : जिला कार्यालय, बड़वानी (म.प्र.), 2016

3- शर्मा, महेश, महात्मा गांधी नरेगा, महात्मा गांधी राष्ट्रीय ग्रामीण रोजगार गारंटी अधिनियम, 2008

4- फड़िया, डॉ. बी.एल., शोध पद्धतियां, साहित्य भवन पब्लिकेशन

5- जैन, डॉ. बी.एम., रिसर्च मैथाडोलॉजी, रिसर्च पब्लिकेशन जयपुर

6- यादव, रामजी, भारत में ग्रामीण विकास

UGC Journal No. (Old) 2138
Peer-Reviewed Research Journal
Impact Factor 6.375, ISSN 0975-4083
Vol.- 28, Hindi Edition, Year-14, March 2025

कृषि ऋण वितरण और आर्थिक सशक्तिकरण बैंकों की प्रभावशीलता का मूल्यांकन

• केशर सिंह डोडवे

•• सुधा पाण्डेय

सारांश- किसानों की आर्थिक सशक्तिकरण में बैंकों की प्रभावशीलता का आकलन करने के परिणाम स्पष्ट रूप से इंगित करते है कि कृषि ऋण वितरण प्रणाली में कई चुनौतियाँ और अवसर विद्यमान है। अध्ययन के दौरान प्राप्त आंकड़ों ने यह प्रकट किया कि बैंकों ने ऋण वितरण में कुछ हद तक प्रभावी कार्य किया है, लेकिन ग्रामीण और कृषि क्षेत्र के प्रति उनके दृष्टिकोण में सुधार की आवश्यकता है। बैंकों द्वारा प्रदान की गई सुविधाओं के बावजूद, कई किसान जानकारी के अभाव और प्रक्रियात्मक जटिलताओं के कारण लाभ उठाने में असमर्थ है। इसके अतिरिक्त, छवि के अनुसार, सरकारी योजनाएँ जैसे कि ई-किसान उपज निधि योजना महत्वपूर्ण प्रोत्साहन प्रदान कर रही है, जो कृषि प्रथाओं को मजबूत करने में सहायक हो सकती है। इस प्रकार, कृषि ऋण वितरण की प्रभाविता को बढ़ाने के लिए बैंकों को बेहतर समर्पण और सेवाओं की सुलभता सुनिश्चित करने की आवश्यकता है।

मुख्य शब्द- किसान, आर्थिक सशक्तिकरण, ऋण वितरण प्रणाली, उपज

परिचय- कृषि विकास को बढ़ावा देने हेतु बैंकों की प्रभावशीलता एक महत्वपूर्ण पहलू है, जो कृषकों के आर्थिक सशक्तिकरण में महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है। भारत जैसे कृषि प्रधान देश में, जहाँ ग्रामीण अर्थव्यवस्था का अधिकांश भाग कृषि पर निर्भर करता है, ऐसे में वित्तीय संस्थानों द्वारा कृषकों को उचित और सुसंगत ऋण वितरण आवश्यक हो जाता है। इस संदर्भ में, बैंकों की नीतियाँ और कार्यक्रम न केवल ऋण उपलब्धता को सुनिश्चित करते हैं, बल्कि कृषकों की उत्पादन क्षमता, आय में वृद्धि, और उनके जीवन स्तर में सुधार के लिए भी योगदान देते हैं। विशेषकर, कृषि ऋण वितरण की प्रक्रिया में पारदर्शिता और त्वरितता की आवश्यकता है, ताकि किसानों को समय पर वित्तीय सहायता प्राप्त हो सके। इस प्रकार, बैंकों की प्रभावशीलता को समझना और उसका मूल्यांकन करना आवश्यक है, ताकि कृषकों के विकास के लिए ठोस आधार तैयार किया जा सके।

भारत में कृषि वित्तपोषण का पृष्ठभूमि- कृषि क्षेत्र में वित्तपोषण का इतिहास भारत

• शोधार्थी, माधव विश्वविद्यालय, पिण्डवाड़ा (सिरोही) राजस्थान

•• शोध निर्देशिका, आचार्य, अर्थशास्त्र विभाग मानविकी एवं सामाजिक विज्ञान संकाय माधव विश्वविद्यालय, पिण्डवाड़ा (सिरोही) राजस्थान

के आर्थिक विकास की आधारशिला रहा है। कृषि को प्रोत्साहित करने के लिए, सरकारी योजनाएं और बैंकिंग संस्थानों की पहलें महत्वपूर्ण हैं, क्योंकि ये खेती की उन्नति और किसानों की आर्थिक स्वतंत्रता में महत्वपूर्ण योगदान करती हैं। भारतीय नेशनल बैंक फॉर एग्रीकल्चर एंड रूरल डेवलपमेंट (NABARD) की स्थापना से कृषि वित्तपोषण को एक संपूर्ण दिशा मिली है, जो कि विशेष रूप से छोटे और सीमांत किसानों के लिए कर्ज उपलब्ध कराने में सहायक रही है। चूंकि ग्रामीण क्षेत्रों में वित्तीय समावेशन की आवश्यकता बढ़ रही है, बैंकिंग प्रणाली को सुदृढ़ करना आवश्यक हो गया है। इस संदर्भ में, स्वयं सहायता समूहों (SHGS) का उभार भी महत्वपूर्ण है, जो कृषि विकास और वित्तीय समावेशन में अहम भूमिका निभाते हैं (Asalatha et al)। इस पृष्ठभूमि में, कृषि वित्तपोषण का प्रभाव अध्ययन करने से यह स्पष्ट होता है कि कैसे वित्तीय संसाधनों की उपलब्धता किसानों के सामाजिक और आर्थिक सशक्तिकरण में सहायक होती है।

किसानों के लिए आर्थिक सशक्तिकरण का महत्व- किसानों की आर्थिक स्थिति सीधे उनके उत्पादन और आजीविका के स्तर से जुड़ी हुई है, जिससे ग्रामीण आर्थिक विकास में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई जाती है। कृषि क्षेत्र में बैंकों की प्रभावशीलता का सर्वेक्षण किसानों के आर्थिक सशक्तिकरण के लिए आवश्यक है, क्योंकि यह वित्तीय संसाधनों के सही वितरण से संबंधित है। आर्थिक सशक्तिकरण न केवल किसानों को संसाधनों तक पहुँच प्रदान करता है, बल्कि उनकी उत्पादकता और आजीविका में सुधार लाने का भी कार्य करता है, जैसे कि (Emily Courey Pryor et al) में उल्लिखित विभिन्न हस्तक्षेपों का प्रयोग। इसके अतिरिक्त, यह जरूरी है कि बैंकों को लिंग संवेदनशीलता और सामाजिक समावेशिता को ध्यान में रखते हुए कृषि परियोजनाओं का अनुकूलन करना चाहिए, जैसा कि (Anna Knox et al) में सुझाया गया है। यह रणनीतियाँ किसानों को न केवल वित्तीय सहायता प्रदान करती हैं, बल्कि उनकी सामाजिक स्थिति और सामर्थ्य को भी बढ़ावा देती हैं, जिससे समग्र विकास को गति मिलती है।

बैंकों द्वारा कृषि ऋण वितरण का अवलोकन- किसान ऋण वितरण की कार्यप्रणाली में बैंकों की भूमिका का गहरा प्रभाव कृषि विकास और ग्रामीण अर्थव्यवस्था पर पड़ता है। विभिन्न अध्ययनों ने यह दर्शाया है कि कृषि ऋण की सुगम पहुंच न केवल कृषि उत्पादन में वृद्धि करती है, बल्कि किसानों की आर्थिक स्थिति को भी सुदृढ़ बनाती है, जैसे कि (Anna Knox et al) में वर्णित है। यह स्रोत बैंकिंग प्रणाली को प्रेरित करता है कि वे लिंग समावेशिता, औसत विपणन मूल्य, और ऋण वितरण की प्रक्रिया में समानता पर विचार करें। इसके अतिरिक्त, में प्रस्तुत E & Kisan Upaj Nidhi Yojana 2024 जैसे सरकारी कार्यक्रम किसानों को बिना किसी संपार्श्विक के ऋण मुहैया करके उनके आर्थिक सशक्तीकरण में महत्वपूर्ण योगदान कर रहे हैं। इस संदर्भ में, बैंकों द्वारा कृषि ऋण वितरण की प्रभावशीलता का मूल्यांकन किसानों की उत्पादन्यता और वित्तीय स्वतंत्रता को बढ़ाने के लिए आवश्यक है, जो स्थायी विकास के लिए एक महत्वपूर्ण कारक है।

कृषि ऋण वितरण का अवलोकन

वर्ष	कुल ऋण वितरण (करोड़ रुपये)	किसानों की संख्या	सहायता प्राप्त किसान (%)
2020-2021	150000	2500000	65
2021-2022	180000	3000000	70
2022-2023	210000	3500000	75

बैंकों द्वारा पेश किए गए कृषि ऋण के प्रकार- कृषि क्षेत्र में वित्तीय सहायता प्रदान करने के लिए बैंकों की भूमिका अत्यंत महत्वपूर्ण है, विशेषकर जब यह किसानों की आर्थिक सशक्तीकरण की दिशा में रहता है। विभिन्न प्रकार के कृषि ऋण जैसे कर्ज, फसल आधारित ऋण, आवधिक ऋण, और आपातकालीन ऋण किसानों को उनकी मौजूदा आवश्यकताओं के हिसाब से उपलब्ध कराए जाते हैं। बैंकों द्वारा दिए गए फसल आधारित ऋण विशेष रूप से फलदायक होते हैं, क्योंकि ये सीधे कृषि उत्पादन से जुड़े होते हैं, जिससे किसानों को अपनी फसल के लिए आवश्यक सब्सिडी और संसाधनों की सहज उपलब्धता होती है (Maricelis Acevedo et al., p. 1231-1241)। इसके अलावा, ऐसे ऋणों में जलवायु टिकाऊ फसलों की बढ़ती मांग को पूरा करने के लिए विशेष प्रावधान होते हैं, जिन्हें अपनाने के लिए किसानों में जागरूकता और शिक्षा का होना आवश्यक है। इस प्रकार, कृषि ऋण की विविधता और उसकी सही दिशा में वितरण न केवल बैंकों की प्रभावशीलता को दर्शाता है, बल्कि किसानों की जीविका और समृद्धि को भी सुनिश्चित करता है।

बैंकों द्वारा दिए गए कृषि ऋण के प्रकार

ऋण का प्रकार	ब्याज दर (%)	अधिकतम राशि (रुपये)	उद्देश्य
लघु अवधि का ऋण	6.5	2,00,000	फसल उत्पादन
दीर्घकालिक ऋण	7.0	10,00,000	भूमि खरीद एवं मशीनरी
सीडिलिंग ऋण	5.5	1,00,000	बीज एवं खाद की खरीद
एकीकृत कृषि ऋण	8.0	5,00,000	कृषि से संबंधित विभिन्न गतिविधियाँ
आपातकालीन ऋण	9.0	50,000	आपात स्थिति में वित्तीय सहायता

ऋण अनुमोदन और वितरण के लिए मानदंड- कृषि क्षेत्र में वित्तीय आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए ऋण अनुमोदन और वितरण की प्रक्रियाएं विशेष महत्व रखती हैं। इन प्रक्रियाओं में बैंक की नीतियों, किसानों की आर्थिक स्थिति, और उनकी कृषि गतिविधियों का गहन मूल्यांकन आवश्यक है। एक प्रभावी प्रणाली न केवल वित्तीय सहायता प्रदान करती है, बल्कि इससे कृषकों के आर्थिक सशक्तीकरण में भी योगदान होता है। एक अध्ययन में पाया गया कि सूक्ष्म वित्त व्यवस्था और कृषि ऋण का वितरण परिवारों के कल्याण में सकारात्मक प्रभाव डालता है, जिससे उनकी क्षमता में वृद्धि होती है (Bakare et al)। इसके अतिरिक्त, बांग्लादेश में जकात-आधारित फंडिंग मॉडल जैसी वैकल्पिक वित्तपोषण विधियाँ भी वित्तीय संकट से निपटने के लिए सहायक सिद्ध हुई हैं, जो कि गरीब किसानों को लक्षित करती हैं (Chowdhury et al)। इस प्रकार, उचित मानदंडों का निर्धारण और उनके अनुशासन से ऋण वितरण प्रणाली की प्रभावशीलता को बढ़ाया जा सकता है, जिससे कृषि क्षेत्र में समग्र विकास की संभावनाएँ बढ़ जाती हैं।

ऋण वितरण में बैंकों की प्रभावशीलता का मूल्यांकन- गर्भित दृष्टिकोण से, कृषि ऋण वितरण में बैंकों की प्रभावशीलता का निर्धारण कई तत्वों पर निर्भर करता है, जिनमें ऋण प्रक्रिया की पारदर्शिता और वित्तीय साक्षरता का स्तर प्रमुख हैं। बैंकों द्वारा किसानों को दी जाने वाली जानकारी और सहायता का प्रभाव सीधे उनकी आर्थिक परिस्थितियों को प्रभावित करता है। माइक्रोएंटरप्राइज विकास कार्यक्रम (MDP) के संदर्भ में, बैंकों को न solamente वित्तीय सहायता प्रदान करते हैं, बल्कि किसानों के स्वावलंबन को भी प्रोत्साहित करते हैं, जैसा कि (Jurik et al) में उल्लेखित है। इस संदर्भ में, यह स्पष्ट होता है कि यदि बैंकों का ऋण वितरण प्रणाली स्थायी और समृद्ध है, तो यह न केवल किसानों की आय में वृद्धि करेगा, बल्कि संपूर्ण कृषि क्षेत्र की आर्थिक स्थिति को भी मजबूत करेगा। अतः, यह अनुसंधान इस मूल्यांकन में सहायक है कि कैसे बैंकों की नीतियों और प्रक्रियाओं का प्रभाव कृषि ऋण वितरण में उनकी भूमिका को निर्धारित करता है।

किसानों के लिए ऋण की पहुंच का विश्लेषण- कृषि ऋण वितरण की प्रभावशीलता का मूल्यांकन करते समय, किसानों के लिए ऋण की पहुंच का गहन विश्लेषण अत्यंत आवश्यक है। यह प्रक्रिया न केवल वित्तीय संसाधनों की उपलब्धता को परिभाषित करती है, बल्कि छोटे और सीमांत किसानों की आर्थिक स्थिति को भी प्रभावित करती है। शोध से यह स्पष्ट हुआ है कि सीधे वित्तीय सेवाओं तक पहुंच किसानों की उत्पादकता, संपत्ति निर्माण, आय और खाद्य सुरक्षा पर महत्वपूर्ण प्रभाव डालती है। ((Seibel et al) इससे यह साबित होता है कि प्रभावी बैंकिंग नीतियाँ और प्राथमिकता क्षेत्र उधारी, वित्तीय संवृद्धि हेतु आवश्यक हैं। इन उपायों का विस्तृत विश्लेषण, जिसमें जैसी योजनाओं का संदर्भ भी शामिल है, यह दर्शाता है कि वित्तीय समर्थन का सही दिशा में उपयोग कृषि क्षेत्र में सकारात्मक बदलाव ला सकता है। इस प्रकार, एक समुचित नीति निर्माण किसानों के लिए ऋण की पहुंच को बढ़ाने में सहयोगी सिद्ध हो सकता है।

ऋण चुकता दरों और डिफॉल्ट जोखिमों का मूल्यांकन- कृषि ऋण वितरण की प्रभावशीलता का मूल्यांकन करते समय, ऋण चुकता दरों और डिफॉल्ट जोखिमों पर ध्यान देना अनिवार्य है। उच्च चुकता दरें वित्तीय संस्थाओं की स्थिरता को इंगित करती हैं, साथ ही किसानों की आर्थिक निर्णय लेने की क्षमता को मजबूत करती हैं। शोध से यह स्पष्ट होता है कि छोटे किसानों के लिए सूक्ष्म वित्त कार्यक्रमों की उपलब्धता, उन्हें संसाधनों की स्थिरता और भूख की चुनौतियों का सामना करने में मदद करती है। (Sharma et al) के अनुसार, ग्रामीण वित्तीय सेवा की मांग का मूल्यांकन विभिन्न देशों में आर्थिकी पर सकारात्मक प्रभाव डालता है। इसके अतिरिक्त, (Bakare et al) के अध्ययन में सूचित किया गया है कि सूक्ष्म वित्त का भौतिक उपादान किसानों के जीवन स्तर में सुधार लाता है। इस संदर्भ में, ऋण चुकता दरें और डिफॉल्ट जोखिम सीधे किसानों के आर्थिक सशक्तीकरण से जुड़ी हुई हैं, जो समग्र विकास में महत्वपूर्ण भूमिका निभाती हैं।

कृषि ऋणों का किसानों के आर्थिक सशक्तिकरण पर प्रभाव- कृषि ऋणों का वितरण न केवल किसानों की कृषि उत्पादन क्षमता को सशक्त बनाता है, बल्कि यह

उनके आर्थिक उत्थान में भी महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है। विशेष रूप से, बैंकों की प्रभावशीलता और ऋण वितरण की प्रक्रिया के माध्यम से, किसान नए तकनीकी उपकरणों और उन्नत बीजों का उपयोग कर सकते हैं, जिससे फसल की उत्पादकता में वृद्धि होती है। अनुसंधान के अनुसार, जब किसानों को विश्वसनीय ऋण सुविधाएं प्रदान की जाती हैं, तो उनके आय स्तर में सुधार होता है, जिससे वे अपने परिवार की समृद्धि को बढ़ा सकते हैं (Emily Courey Pryor et al)। इसके अलावा, कृषि ऋण कार्यक्रमों के माध्यम से किसान स्वरोजगार की दिशा में भी अग्रसर होते हैं, जो उन्हें स्थायी आर्थिक स्थिति की ओर ले जाता है (Jurik et al)। इस प्रकार, कृषि ऋणों का प्रभाव केवल आर्थिक लाभ तक सीमित नहीं है, बल्कि यह सामाजिक और सामुदायिक विकास की दिशा में भी महत्वपूर्ण योगदान देता है।

ऋण प्राप्ति के बाद आय स्तर में परिवर्तन- कृषि क्षेत्र में ऋण वितरण की प्रभावशीलता का मूल्यांकन करते समय, किसानों की आय स्तर में परिवर्तन एक महत्वपूर्ण आयाम के रूप में उभरता है। जब किसानों को प्रभावी ढंग से ऋण उपलब्ध कराया जाता है, तो यह उनकी आर्थिक स्थिति को सुधारने में सहायक होता है। (Wan Jiashun) के अनुसार, किसानों के सूक्ष्मक्रेडिट के सफलतापूर्वक प्रबंधन से उनकी वित्तीय सेवाओं का वातावरण बेहतर होता है, जिसके परिणामस्वरूप कृषि उत्पादन में वृद्धि और आय में सुधार होता है। हालांकि, कुछ अध्ययनों ने यह भी दिखाया है कि सब्सिडी वाले औपचारिक क्रेडिट का कृषि क्षेत्र में उपयोग अक्सर बेहतर परिणाम नहीं देता हैय उदाहरण के लिए, (Braverman et al) द्वारा प्रस्तुत आंकड़े बताते हैं कि ऐसी वित्तीय संस्थाओं की अक्षमता और जवाबदेही की कमी के कारण, कई किसानों को वास्तविक लाभ नहीं मिल पाते हैं। इस प्रकार, ऋण प्राप्ति के बाद आय स्तर में परिवर्तन का सर्वोत्तम आकलन तभी संभव है जब ऋण वितरण की प्रक्रिया में पारदर्शिता और जिम्मेदारी का ध्यान रखा जाए।

कृषि उत्पादकता और स्थिरता पर प्रभाव- किसानों को स्थायी और उचित वित्तीय सहायता प्रदान करने के लिए बैंकिंग संस्थानों की प्रभावशीलता की गहन जांच आवश्यक है, क्योंकि यह कृषि उत्पादकता और स्थिरता पर महत्वपूर्ण प्रभाव डालती है। विभिन्न अध्ययनों से यह स्पष्ट होता है कि वित्तीय संसाधनों तक पहुंच का सीधा संबंध किसानों की उत्पादन क्षमताओं और उनके आर्थिक सशक्तीकरण से है। उदाहरण के लिए, (Khadka et al) के अनुसार, थाईलैंड में कृषि विकास बैंक ने किसानों के लिए सहयोगी समूहों के माध्यम से ऋण वितरण की प्रक्रियाओं को महत्वपूर्ण रूप से सुधारने में सफल रहा, जिससे 88 प्रतिशत कृषि परिवारों को लाभ मिला। इसके विपरीत, (Joshi et al) में यह बताया गया है कि भारत में वैश्विककरण और वैज्ञानिक प्रगति ने नए जानकारियों के प्रयोग को प्रोत्साहित किया है, जिससे कृषि विकास के लिए नई संस्थाओं की आवश्यकता बढ़ी है। इस प्रकार, यह स्पष्ट है कि कृषि उत्पादकता और स्थिरता में बैंकों की भूमिका अत्यंत केंद्रीय है।

Image1. किसानों के लिए E & Kisan Upaj Nidhi Yojana 2024 बिना गारंटी लोन का अवसर

निष्कर्ष- वित्तीय समावेशन का मुख्य उद्देश्य समाज के वंचित वर्गों के लिए विकास के अवसरों को खोलना है, जो गरीबी और आय असमानता को कम करने में सहायक सिद्ध होता है । बैंकिंग प्रणाली के प्रभावशीलता का मूल्यांकन करते समय यह आवश्यक है कि हम कृषि ऋण वितरण की विधियों को समझें, जिनके माध्यम से किसान अपनी आर्थिक स्थिति को सशक्त कर सकते हैं। इस संदर्भ में, प्राथमिकता क्षेत्र की ऋण व्यवस्था ने ऐसे किसानों को सहायता प्रदान की है जो परंपरागत वित्तीय संस्थानों से परे रह जाते हैं। इसके प्रभाव को देखते हुए, यह स्पष्ट होता है कि किसानों को प्रदान की गई ऋण सुविधाएँ आर्थिक सशक्तीकरण की दिशा में महत्वपूर्ण भूमिका निभा रही हैं। हालांकि, निरंतर समर्थन और सही नीतियों की आवश्यकता है, ताकि वित्तीय संसाधनों का सही उपयोग सुनिश्चित किया जा सके और किसानों की स्थिति में स्थायी सुधार लाया जा सके । इस प्रकार, कृषि क्षेत्र में बैंकों की प्रभावशीलता का मूल्यांकन न केवल आंकड़ों पर निर्भर करता है, बल्कि किसान समुदाय पर इसके वास्तविक प्रभाव को भी ध्यान में रखना चाहिए।

संदर्भ ग्रन्थ सूची-

1. असलथा, (2020). स्वयं सहायता समूहों (SHGs) द्वारा कृषि वित्तपोषण और किसानों के सशक्तिकरण में भूमिका
2. इमीली कूरी प्रायर, (2018). "कृषि परियोजनाओं में वित्तीय सहायता के माध्यम से किसानों के आर्थिक सशक्तिकरण
3. एना नॉक्स, (2019), लिंग संवेदनशीलता और सामाजिक समावेशिता का कृषि क्षेत्र में महत्व
4. मरिकेलिस एसिवेडो, (2021), जलवायु टिकाऊ फसलों के लिए वित्तीय समर्थन का प्रभाव
5. शर्मा, (2022), ग्रामीण वित्तीय सेवाओं की मांग और उनके आर्थिक लाभ

6. लड़का, (2019), थाईलैंड में कृषि विकास बैंक द्वारा सहयोगी ऋण वितरण प्रणाली
7. ब्रेवरमैन, (2017), कृषि क्रेडिट वितरण और इसकी चुनौतियाँ
8. जोशी, (2020), वैश्वीकरण और कृषि क्षेत्र में नई संस्थाओं की आवश्यकता।

UGC Journal No. (Old) 2138
Peer-Reviewed Research Journal
Impact Factor 6.375, ISSN 0975-4083
Vol.- 28, Hindi Edition, Year-14, March 2025

जनसंख्या वृद्धि का आर्थिक विकास प्रभाव एक विश्लेषणात्मक अध्ययन (विकासशील अर्थव्यवस्था के संदर्भ में)

• आर. बी. एस चौहान

•• सरला पाण्डेय

सारांश- अर्द्धविकसित देशों मे जहॉ मानव संसाधन को आर्थिक विकास का प्रमुख कारक माना जाता है वही तेजी से बढ़ती हुई जनसंख्या और जनसंख्या में आश्रित जनसंख्या की अधिकता आर्थिक विकास के मार्ग में अवरोध उत्पन्न करती है। वैश्विक स्तर पर किये गये अध्ययनों से यह स्पष्ट होता है कि भारत की अर्थव्यवस्था समाज एवं पर्यावरण की दृष्टि से जनसंख्यीकीय परिवर्तन के अपने अलग उद्देश्य है। अतीत में ऐसी अर्थव्यवस्था में जनसंख्या वृद्धि को एक बोझ के रुप में देखा जाता था। किन्तु वर्तमान मे जनसंख्याकीय लाभान्स के कारण इसे सकारात्मक दृष्टि में देखा जाता है। भारत में जनसंख्या वृद्धि अतीत मे चिन्ता का विषय रही है यहा पर बेरोजगारी जैसी समस्याओं के लिए जनसंख्या वृद्धि को ही महत्वपूर्ण कारक माना गया वही जनसंख्या वृद्धि में नियंत्रण हेतु अनेक कार्यक्रमों का संचालन किया गया। 1990 में वैश्वीकरण के कारण भारत की एक अप्रयुक्त क्षमता वाले एक विस्तृत बाजार के रूप में स्वीकार किया गया। जिसके परिणाम स्वरूप जनसंख्या की धारणा का एक लाभ के रूप में परिवर्तन हो गया तथा भारत के जनसांख्यीकीय लाभान्स द्वारा मुल्यवान आर्थिक अवसर उपलब्ध कराये गयें। यदि स्वतंत्रता के समय की स्थिति का अवलोकन किया जाय तो वर्तमान में यहां की जनसंख्या में चार गुना वृद्धि देखने को मिलती है जबकि विश्व के कुल जनसंख्या का 17. 5 प्रतिशत भाग निवास कर रहा है। राष्ट्रीय परिवार स्वास्थ्य सर्वेक्षण के अनुसार देश मे पहली बार कुल प्रजनन दर 2.1 के प्रतिस्थापन स्तर से नीचे की है। संयुक्त राष्ट्र संघ द्वारा अनुमान लगाया गया है- कि वर्ष 2100 में जनसंख्या 1.53 विलियन पर स्थिर होने के पूर्व 2050 तक भारत की जनसंख्या 1.67 विलियन तक पहुँच जाएगी।

मुख्य शब्द- जनसंख्या वृद्धि, आर्थिक विकास, अर्थव्यवस्था

प्रस्तावना- किसी भी अर्थव्यवस्था की मानवीय शक्ति का अनुमान केवल वहॉ की जनसंख्या के आधार पर नही लगाया जा सकता। इस संदर्भ में हार्विसन एवं मार्यस ने स्पस्ट किया है कि ''मानवीय साधन का विकास ज्ञान कुशलता एवं समाज के व्यक्तियों की कार्य क्षमता में होने वाली हो वृद्धि कि प्रक्रिया अर्थात् मानवीय पूॅजी

• प्राध्यापक एवं विभागाध्यक्ष संजय गाँधी स्मृति शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय सीधी (म.प्र.)
•• शोधार्थी, अर्थशास्त्र

एक ऐसा संचय जिसकी अर्थव्यवस्था के विकास में प्रभावशाली निवेश के रुप में प्रयोग किया जा सकता है।

जनसंख्या एवं आर्थिक विकास के बीच सम्बन्धों की व्याख्या करते हुए रैगर नर्कसे ने स्पष्ट किया है कि "यदि अर्द्धविकसित अर्थव्यवस्था में कृषि क्षेत्र में संलन वेकार श्रमशक्ति को पूँजीगत परियोजनाओं की ओर स्थानान्तरित कर दिया जाए तो इससे कृषि भूमि पर जनसंख्या का दबाव कम हो जाएगा साथ ही अदृश्य बेरोजगारी समाप्त है। जाएगी दूसरी ओर कृषि उत्पाद में कोई कमी आये बिना उद्योगों एवं निर्माण कार्यो का विस्तार सी सम्भाव्य बचतों में वृद्धि होगी और पूजी निर्माण कार्यो को प्रोत्साहन मिलेगा।

किसी भी अर्थ व्यवस्था ने जनसंख्या उस अर्थव्यवस्था के आर्थिक विकास का साधन एवं साध्य दोनो मानी जाती है। समस्त उत्पादन का मूल साधन जनसंख्या ही हैं। वह अपनी शारीरिक एवं वौधिक शक्तियों का प्रयोग करके तथा भौतिक साधनों द्वारा एवं नई रीतियों एवं प्रक्रियाओं की खोज करके उत्पादन प्रक्रिया को जन्म देती है एवं आर्थिक विकास का मार्ग प्रसस्त करती है। जनसंख्या ही सभी साधनों को एकत्रित करके उन्हें समन्वित करती है और वस्तु एवं सेवा के रुप में परिवर्तित करके राष्ट्रीय आय या उत्पादन में सहायता करते हैं। जिन राष्ट्रो मे जनसंख्या कार्य कुशल नही होती ऐसे राष्ट्र आर्थिक विकास की दृष्टि से कमजोर होते है।

एक साधन के रुप में जनसंख्या उत्पादन क्रियाओ में अन्य साधनों के साथ संयुक्त होने के लिए उत्पादन के साधन के रुप में उपलब्ध होती है। उपभोक्ताओं के रुप में आर्थिक विकास का मुख्य उद्देश्य उनकी इच्छाओ की प्राप्ति है अत: जनसंख्या एवं आर्थिक विकास के संदर्भ में मानवीय तत्व (जनसंख्या) के उत्पादक एवं उपभोक्ता दोनों रुप में विचार किया जाना चाहिए। इस पक्ष में निम्नलिखित तथ्य महत्वपूर्ण हैं–

श्रमिकों की पूर्ति- अर्द्ध विकसित अर्थव्यवस्था में श्रम शक्तियाँ जनसंख्या एक दूसरे के पर्याय माने जाते है। यदि अर्थव्यवस्था में जनसंख्या का आकार छोटा है तो यह माना जाता है कि यह जनसंख्या देश के उत्पादक साधनो को पूर्ण शोषण के लिए पर्याप्त नहीं है। इसके फलस्वरुप ऐसी अर्थव्यवस्था मे उद्योग, कृषि, व्यापार एवं व्यवसाय आदि दोनों में संतुलित विकास संभव नहीं हो सकेगा। यही कारण है कि विकसित देशों में जनसंख्या आर्थिक विकास मे सहयोगी रही है। ऐसी अर्थव्यवस्था में बढ़ती हुई जनसंख्या के कारण वहा पर श्रम की पूर्ति सम्भव हो सकी है और पूँजी निर्माण की प्रकिृया को तीव्र किया गया है। साथ ही उपलब्ध पूरक साधनो को श्रम शक्ति की वृद्धि में सहयोग प्राप्त हुआ है।

कृषि का विकास -

1. अर्द्ध विकसित अर्थ व्यवस्था मे आर्थिक विकास के लिए कृषि का मतबूत आधार एवं ढॉचा आवश्यक होता है। चूकि ऐसी अर्थव्यवस्था मे कृषि की प्रधानता होती है लोगों की जीविका मुख्य आधार कृषि एवं कृषिगत व्यवसाय होता है। ऐसी स्थिति में कृषि क्षेत्र मे उन्नति के साथ–साथ कृषि के तरीकों में भी सुधार निम्नलिखित कारणो उसे आवश्यक है।
2. आर्थिक विकास के कारण निरंतर बढ़ती हुई शहरी जनसंख्या की खाद्य आवश्यकताओं की पूर्ति हो सके। अन्य क्षेत्रों के विकास के लिए पूँजी उपलब्ध

हो सके।

3. उद्योगों के लिए आवश्यक मात्रा में कच्चा माल पैदा करना तथा कृषि पदार्थ के निर्यात में वृद्धि कर देश के आर्थिक विकास के लिए विदेशी विनियम सुलभ हो सके।

श्रम प्रधान कार्य क्षेत्र में सुविधा– अर्द्धविकसित अर्थव्यवस्था में कुछ ऐसे भी कार्य होते है जिसमे अधिक जनसंख्या (श्रमशक्ति) की आवश्यकता होती है। जैसे, सड़क निर्माण, रेलवे, एवं पूलो का निर्माण आदि। यदि किसी अर्थव्यवस्था में जनसंख्या भी कमी पाई जाती है तो ऐसे लोगों का विकास या तो संभव नही हो सकेगा एवं यदि होता भी है तो गति बहोत धीमी होगी। आधार भुत सुविधाओं के अभाव मे अर्थव्यवस्था मे उत्पादन कम जो देश के आर्थिक विकास के लिए उचित नहीं है।

उद्योग एवं व्यापार का विकास- किसी भी अर्थव्यवस्था उद्योग व व्यापार आर्थिक विकास की रीढ़ की हड्डी होते है अर्थात् औद्योगीकरण आर्थिक विकास को गति प्रदान करता है। उद्योगा एवं व्यापार के विकास के द्वारा ही वहॉ कि जनसंख्या के वास्तविक आय में वृद्धि की जा सकती है एवं आर्थिक स्तर को ऊॅचा उठाया जा सकता है।

बाजार एवं विस्तार- एक स्वतंत्र अर्थव्यवस्था में वस्तुओं का उत्पादन किया जाता है एवं साधनों को रोजगार के अवसर प्रदान किये जाते हैं कोई भी फर्म वास्तव में वस्तु की कीतनी मात्रा का उत्पादन करे यह उत्पादित वस्तु की माग पर निर्भर करता है। यदि देश में जनसंख्या की मात्रा अधिक है वहा पर उत्पादको अधिक लाभ प्राप्त होगा क्योकि उत्पादकों के लिए अपने ही देश मे एक विस्तृत एवं विशाल बाजार प्राप्त होगा और ऐसे उत्पादक वस्तु की अधिक से अधिक मात्रा उत्पादित करने के लिए प्रेरित होंगे परिणाम स्वरुप अर्थव्यवस्था में रोजगार एवं राष्ट्रीय आय में लगातार वृद्धि होगी जिसका क्रम इस प्रकार होगा – जनसंख्या में वृद्धि, माग में वृद्धि, आशातीत बिक्री, आय में वृद्धि रोजगार में वृद्धि , उत्पादन में वृद्धि राष्ट्रीय ये आय मे वृद्धि।

जनसंख्या का आर्थिक विकास पर प्रभाव- सामान्य रुप से आर्थिक विकास की आय राष्ट्रीय आय के परिप्रेक्ष्य में कि जाती है। आर्थिक विकास एक सतत् प्रक्रिया है जिसमे प्रति व्यक्ति आय एवं राष्ट्रीय आप ने दीर्घ कालीन वृद्धि होती है। किन्तु यदि हम केवल राष्ट्रीय आय को दी आर्थिक विकास के स्तर का उचित संकेतक माने तो यह उचित नहीं है क्योकि इसमें जनसंख्या पर कोई समान केन्द्रित नही किया गया है। कभी–कभी राष्ट्रीय आय मे वृद्धि होने पर भी जनसमूह मे निर्धनता में वृद्धि देखी जाती है। इसलिए प्रति व्यक्ति आय को आर्थिक विकास का उचित मापदण्ड माना जाता है। यदि प्रति व्यक्ति आप में वृद्धि होती है तो इसका आशय यह है कि उस क्षेत्र या अर्थव्यवस्था का आर्थिक विकास हो रहा है। इस प्रकास जनसंख्या के प्रति व्यक्ति आय पर पढ़ने वाले प्रभाव के अध्ययन के द्वारा यह ज्ञात किया जा सकता है कि जनसंख्या आर्थिक विकास को किस प्रकार प्रभावित करती है। जनसंख्या के प्रति व्यक्ति आय पर पढ़ने वाले प्रभाव व्याख्या निम्नानुसार की जा सकती है –

जनसंख्या के आकार का प्रतिव्यक्ति आय पर प्रभाव- अर्थव्यवस्था चाहे विकसित हो या विकासशील सभी अर्थव्यवस्थाओं में वहॉ की कुल जनसंख्या का प्रति व्यक्ति आय

पर प्रत्यक्ष प्रभाव पढ़ता है।यदि क्षेत्र विशेष की जनसंख्या यथा स्थिर रहती है तो राष्ट्रीय आय मे वृद्धि के साथ–साथ प्रति व्यक्ति आय में भी वृद्धि होती जाएगी। यदि जनसंख्या के आकार वृद्धि होती है तो इसका परिणाम यह भी हो सकता है कि राष्ट्रीय आय में वृद्धि होने पर प्रति व्यक्ति आय समान रहे या कम हो जाए।

जनसंख्या में वृद्धि का प्रतिव्यक्ति आय पर प्रभाव- यदि अर्थव्यवस्था में जनसंख्या वृद्धि की दर अधिक है तो प्रति व्यक्ति के अस्तर को बनाए रखने के लिए अधिक पूँजी एवं विनियोग की आवश्यकता पड़ती है। प्रो. नर्क्स ने जनसंख्या वृद्धि के प्रति व्यक्ति आय पर पढ़ने वाले प्रभाव की व्याख्या करते हुए स्पष्ट किया है कि

प्रो. नर्क्स ने जनसंख्या में वृद्धि के प्रति व्यक्ति आप पर पढ़ने वाले प्रभाव को बड़े सुन्दर ढंग से इस प्रकार समझाया है। यदि किसी अर्थव्यवस्था में जनसंख्या में वृद्धि नही होती तो वह अपनी अतिरिक्त पूँजी (पूँजी निर्माण) को विद्यमान श्रमिकों को अच्छे उपकरण, मशीनें, शिक्षा तथा प्रशिक्षण प्रदान करने में प्रयुक्त करगी। इसे गहन विनियोग कहते हैं। इससे न केवल राष्ट्रीय आय बढ़ेगी , वल्कि प्रतिव्यक्ति आय मे वृद्धि होगी। पर यदि जनसंख्या बढ़ती जाती है, तो समस्त अतिरिक्त पूँजी अथवा इसका कुछ अंश अतिरिक्त श्रमिकों (जो जनसंख्या में वृद्धि के कारण फलित होंगे) को वर्तमान उपकरणों को उपलब्ध कराने में लगाना पड़ेगा। अधिक श्रमिकों को चालू प्रकार के उपकरण उपलब्ध कराना, विस्तीर्ण विनियोग कहलाता है। अत: यदि जनसंख्या में वृद्धि इतनी तेजी से है कि में समस्त अतिरिक्त पूँजी अतिरिक्त श्रमिकों को वर्तमान उपकरणों को उपलब्ध करने ही लग जाती है तो राष्ट्रीय आय बढ़ेगी, परन्तु प्रति व्यक्ति आय नहीं बढ़ेगी।

जनसंख्या वृद्धि एवं भूमि व्यक्ति अनुपात- जनसंख्या घनत्व आर्थिक पर प्रतिकुल प्रभाव डालता है क्योकि जनसंख्या के घनत्व मे होने वाली प्रत्येक वृद्धि भूमि व्यक्ति अनुपात में कमी करती जाती है। जिन क्षेत्रो मे जनसंख्या का घनत्व या स्थिर होता है अथवा कम होता है वहॉ पर भूमि व्यक्ति अनुपात में कोई कमी दृष्टिगत नही होती है।

आर्थिक विकास अर्थ व्यवस्था मे जनसंख्या की जीविका का मुख्य आधार कृषि क्षेत्र है। ऐसी स्थिति मे तेजी से बढ़ती हुई जनसंख्या के परिणाम स्वरूप कृषि योग्य भूमि की मात्रा मे कमी रहती है जिसका आर्थिक विकास पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ता है।

निष्कर्ष- जनसंख्या वृद्धि एवं आर्थिक विकास के मध्य अन्तर्सम्बंध की तुलनात्मक अध्ययन करने पर यह निकर्ष दृष्टिगत होता है कि जनसंख्या दृष्टि एवं आर्थिक विकास के बीच ऋणात्मक सम्बंध पाया जाता है। हाँ यदि किसी अर्थव्यवस्था में वहॉ की जनसंख्या जनाधिक्य की स्थिति मे नही है अथवा जनसंख्या की अधिकता है तो आर्थिक विकास पर सकारात्मक प्रभाव होगा किन्तु अर्द्धविकसित देशों में यह स्थिति देखने को नही मिलती। वहीं दूसरी ओर ऐसी विकास में अर्थव्यवस्था मे बढ़ते हुए आय के स्तर एवं आर्थिक विकास मे उत्तरोत्तर वृद्धि से जनसंख्या को एक सीमा तक नियोजित जा सकता है। अत: स्पष्ट है कि आर्थिक विकास एवं जनसंख्या वृद्धि के बीच धनात्मक सम्बंध पाया जाता है।

संदर्भ ग्रन्थ सूची-

1. डब्ल्यू एस. थॉमस, पापुलेशन प्राबलम्स, न्यूयार्क 1953
2. हीर, डेविड एम.''इकोनामिक डेवलपमेण्ट एण्ड फर्टिलिटी प्रोसीडिग्स ऑफ दिवर्ल्ड पापुलेशन कान्फ्रेन्स बेल ग्रेड 1965, वाल्यूम 2.
3. अग्रवाल एस. एन. (1972), ''भारत की जनसंख्या समस्या टाटा मैक्ग्रा हिल कंपनी मुम्बई,
4. सुनील कुमार श्रीवास्तव, निर्देशक, डॉ. प्रदीप कुमार पाण्डेय, जनांकिकीय संग्रमण एवं भारत का आर्थिक विकास एवं विश्लेषण 1998, पृ. सं. 1– 2. म. गा. का. विश्वविद्यालय वाराणसी, चौबे, पी. के. (2000) ''भारत में जनसंख्या नीति'', कनिष्ठ प्रकाशन, नई दिल्ली सिन्हा, बी. सी. एवं पुष्पा सिन्हा (2011). ''जनांकिकीय के सिद्धांत, मयूर पेपर वैक्स, नई दिल्ली।
5. मिश्रा प्रकाश (2012), ''जनांकिकीय साहित्य भवन पब्लिकेशन, दिल्ली।
6. एस. पी. सिंह, आर्थिक विकास एवं नियोजक एस. चन्द्र एण्ड कंपनी लिव रामनगर, नई दिल्ली
7. डॉ. वी. सी., सिन्हा व पुष्पा सिंह, जनांकिकीय के सिद्धान्त
8. डॉ. रंजना एस. जैन व शशि के. जैन, जनसंख्या अध्ययन पब्लिकेशन, जयपुर
9. बी. सी. सिन्हा व पुष्पा सिन्हा, जनांकिकीय के सिद्धान्त, मयूर पेपर वैक्स एस – 95 सेक्टर 5, नोएडा
10. दत्त, रूद्र एवं के. पी., एम. सुन्दरम (2010), ''भारतीय अर्थ व्यवस्था'' एस. चन्द एण्ड कम्पनी, नई दिल्ली।
11. शर्मा जैन पारिक, शोध प्रणाली एवं साख्यिकी तकनीके, रमेश बुक डिपो जयपुर 2008
12. ओझा बी.एल, भारतीय अर्थ व्यवस्था रमेश बुक डिपो जयपुर 2008
13. Ackerman E-A and Population and Natural Resources in Hauser, P.M. Duncan, O.D. (Eds): The study of Population, University of Chicago Press, 1959,
14. Zelinsky W. A prologue to population Geography Englewood Cliffs, Prentice Hall, N.J., 1966
15. Clark, J. I World Population and Food Resources Critique: Institute of British Geographers, Specials Publication 1969, No. 3 Sir Dudley Stamp Memorial
16. Malthus, R. "Essay on the principal of population as it effects the future improvement of society" See
17. in Ghose, B.N. Fundamentals Sterling of population Geography Publishers, New Delhi, 1995

UGC Journal No. (Old) 2138
Peer-Reviewed Research Journal
Impact Factor 6.375, ISSN 0975-4083
Vol.- 28, Hindi Edition, Year-14, March 2025

राजस्थान के अनुसूचित क्षेत्र में बहुआयामी गरीबी की स्थिति का तुलनात्मक विश्लेषण

• हितेष कुमार सुथार
••नेहा पालीवाल

सारांश- बहुआयामी गरीबी एक विस्तृत अवधारणा है, जिसमें आर्थिक गरीबी के साथ अन्य आयामों को भी देखा जाता है। स्वतंत्रता के बाद से आज तक देश में केन्द्र सरकार एवं राज्य की सरकारों द्वारा गरीबी उन्मूलन एवं समेकित विकास हेतु अनेक योजनाएँ बनाई गई, जिससे गरीबी के स्तर में कमी जरुर आई है लेकिन गरीबी की तीव्रता में कोई विशेष कमी नहीं देखी गई है। वैश्विक बहुआयामी गरीबी सूचकांक 2023 के अनुसार विश्व के 110 देशों की 6.1 अरब आबादी में से 1.1 अरब लोग बहुआयामी रुप से गरीब पाए गए हैं। यदि भारत में देखें तो लगभग 230 मिलियन लोग आज भी बहुआयामी रुप से गरीबी में जीवन-यापन कर रहे है। राजस्थान जो पिछड़ा हुआ राज्य है और इसमें भी जनजाति बाहुल्य वाला अनुसूचित क्षेत्र अधिक पिछड़ा हुआ है जहाँ जनजाति जनसंख्या आज भी हाशिये पर खडी है। इस क्षेत्र में गरीबी को बहुआयामी रुप से मापने का प्रयास अभी तक नहीं किया गया है, इसीलिए इस शोध पत्र में राजस्थान के अनुसूचित क्षेत्र में बहुआयामी गरीबी का मापन तथा तुलनात्मक (ग्रामीण-शहरी एवं अनुसूचित जनजाति-अन्य परिवार) विश्लेषण किया गया है। इस हेतु अध्ययन क्षेत्र से 240 परिवारों का चयन बहुचरणी यादृच्छिक प्रतिचयन विधि के माध्यम से किया गया है। बहुआयामी गरीबी के मापन हेतु अल्कायर-फोस्टर प्रविधि का प्रयोग किया गया है, जिसमें तीन आयाम यथा शिक्षा, स्वास्थ्य एवं जीवन स्तर और इन आयामों में दस सूचकों को शामिल किया गया है। परिकल्पना की जाँच हेतु गैर-प्राचलिक परीक्षण का प्रयोग किया गया है। क्षेत्रानुसार एवं सामाजिक श्रेणी अनुसार बहुआयामी गरीबी के स्तर में अंतर की जाँच हेतु ली गई शून्य परिकल्पनाएं अस्वीकृत हुई है और पाया कि ग्रामीण क्षेत्र में बहुआयामी गरीबी का स्तर शहरी क्षेत्र की अपेक्षा अधिक है। इसी प्रकार अनुसूचित जनजाति परिवारों में भी बहुआयामी गरीबी का स्तर अन्य परिवारों की तुलना में अधिक है। बहुआयामी गरीबी के स्वास्थ्य आयाम में वंचन सबसे अधिक एवं शिक्षा आयाम में वंचन कम पाया गया है।

मुख्य शब्द- बहुआयामी गरीबी, अल्कायर-फोस्टर प्रविधि, अनुसूचित क्षेत्र, राजस्थान।

• प्राध्यापक, राजकीय किशनलाल गर्ग उच्च माध्यमिक विद्यालय, डूँगरपुर
•• सहायक आचार्य, अर्थशास्त्र विभाग मोहनलाल सुखाड़ियाविश्वविद्यालय, उदयपुर

परिचय- गरीबी को सामान्यतया एक जटिल सामाजिक एवं आर्थिक चुनौती माना जाता है जिसका वर्तमान में भारत सहित विश्व के अनेक देश सामना कर रहे हैं। विश्व बैंक गरीबी को लोगों की एक न्यूनतम जीवन निर्वाह के स्तर को प्राप्त करने की असमर्थता के रूप में परिभाषित करता है। (विश्वबैंक, 2000-2001)।[1] परंपरागत रूप से गरीबी को प्राय: आय की कमी के रूप में परिभाषित किया गया। हालांकि समय के साथ यह महसूस किया गया कि गरीबी एक जटिल, व्यापक एवं बहुआयामी घटना है। मानव विकास रिपोर्ट 2010 में बहुआयामी गरीबी की संकल्पना को अपनाया गया (UNDP 2010)।[2]

बहुआयामी गरीबी से अभिप्राय केवल मौद्रिक गरीबी से नहीं है अपितु यह विभिन्न आयामों जैसे-शिक्षा, स्वास्थ्य व जीवन-स्तर आदि पहलुओं को सम्मिलित कर गरीबी का मापन करती है। गरीबी के बहुआयामी माप हेतु संयुक्त राष्ट्र विकास कार्यक्रम एवं ऑक्सफोर्ड गरीबी एवं मानव विकास पहल द्वारा 2010 में अल्कायर और सैंटास की पद्धति का अनुसरण करते हुए पहली बार बहुआयामी गरीबी सूचकांक जारी किया। यह सूचकांक तीन बुनियादी आयामों; शिक्षा, स्वास्थ्य एवं जीवन स्तर के दस सूचकों में एक परिवार के अभावों के आधार पर मूल्यांकन करता है।

वैश्विक बहुआयामी गरीबी सूचकांक-2023 के अनुसार विश्व के 110 देशों की 6.1 अरब आबादी में से 1.1 अरब (18 प्रतिशत) लोग बहुआयामी रूप से गरीब पाए गए हैं। बहुआयामी रूप से गरीब 1.1 अरब लोगों का लगभग 48 प्रतिशत (534 मिलियन) उप-सहारा अफ्रीका में और लगभग एक तिहाई (389 मिलियन) गरीब दक्षिण-एशिया में रह रहें हैं। बहुआयामी गरीबी रिपोर्ट-2023 में यदि भारत की स्थिति को दक्षिणी एशिया के सन्दर्भ में देखें तो भारत में गरीबों की संख्या दक्षिणी एशिया के अन्य देशों की तुलना में सर्वाधिक है। आज भी भारत विश्व के 110 देशों में बहुआयामी रूप से गरीबी के आधार पर 53वें स्थान पर आता है (UNDP &OPHI, 2023)[3]। वैश्विक बहुआयामी गरीबी रिपोर्ट (उपराष्ट्रीय परिणामभारत) 2023 के अनुसार राजस्थान में शीर्ष गणना अनुपात 16.57 प्रतिशत जबकि देश में यह 16.39 प्रतिशत है। इससे स्पष्ट होता है कि गरीबों का जनसंख्या में अनुपात राजस्थान में देश की तुलना में थोड़ा अधिक है। राजस्थान के अनुसूचित क्षेत्र, जिसके अंतर्गत राज्य के डूँगरपुर, बाँसवाड़ा एवं प्रतापगढजिले संपूर्ण रुप से तथा उदयपुर, राजसमंद, चित्तौडगढ, सिरोही एवं पाली जिले आंशिक रूप से सम्मिलित हैं, की कुल जनसंख्या 64.63 लाख है जिसमें से 70.43 प्रतिशत जनसंख्या जनजातीय है। यह क्षेत्र सामाजिक-आर्थिक रूप से पिछड़ा हुआ है। यहाँ बहुआयामी रूप से गरीबी का विश्लेषण अत्यंत आवश्यक है। अत: यह शोध पत्र राजस्थान के अनुसूचित क्षेत्र में बहुआयामी गरीबी का मापन कर इसकी समग्र स्थिति को प्रस्तुत करने के साथ इसका तुलनात्मक विश्लेषण प्रस्तुत करता है।

साहित्य का पुनरावलोकन- गरीबी विश्व में एक ज्वलंत समस्या के रूप में हमेशा से ही रही है। अत: गरीबी पर राष्ट्रीय ही नहीं बल्कि वैश्विक स्तर पर कई शोध किए गए हैं। वर्तमान में किए शोध इस ओर इंगित करते हैं कि गरीबी का मापन आय से परे जाकर बहुआयामी रूप से किया जाना चाहिए।निकोल रिप्पिन (2016)[4] ने अपने शोध आलेख

में जर्मनी में बहुआयामी गरीबी का पता लगाने का प्रयास किया। उन्होंने अपने अध्ययन में बहुआयामी गरीबी सूचकांक निर्माण हेतु शिक्षा, स्वास्थ्य, रोजगार, आवास, परिवहन एवं आय आदि आयामों का उपयोग किया। जेविएर ब्रोंफ्मन (2014)[5] ने अपने शोध में चिली में राष्ट्रीय एवं उप-राष्ट्रीय स्तरों की बहुआयामी गरीबी का अध्ययन व विश्लेषण करने की कोशिश की। इस हेतु कैरेक्टराइजेशन सोशिओ-इकनॉमिक नेशनलसर्वे (CASEN) 2011 के समंकों का उपयोग किया।बहुआयामी गरीबी के स्तर को जानने के लिए चार आयाम; शिक्षा,स्वास्थ्य, आय एवं जीवन-स्तर प्रयुक्त किए। उन्होंने अपने विश्लेषण में पाया कि बहुआयामी गरीबी सूचकांक में आय आयाम का योगदान 50 प्रतिशत से भी कम है जिससे यह स्पष्ट होता है कि गरीबी में आय के अलावा गैर-आय आयाम भी महत्वपूर्ण भूमिका अदा करते हैं। राष्ट्रीय एवं क्षेत्रीय दोनों स्तरों पर आय गरीबी से बहुआयामी गरीबी का उच्च स्तर और बहुआयामी गरीबी की व्यापकता व प्रकृति दोनों में विवधता पायी गयी। उन्होंने बताया कि 2011 में चिली में 20 प्रतिशत जनसंख्या की पहचान की गयी जो आय गरीबी व बहुआयामी गरीबी से ग्रस्त थी। फ्रन्कोइस बौर्गुइग्नोन एवं सत्य आर.चक्रवर्ती (2003)[6] ने अपने शोध पत्र में बहुआयामी गरीबी को मापने का प्रयास किया। उन्होंने बताया कि गरीबी सिर्फ आय पर निर्भर होने के बजाय एक बहुआयामी अवधारणा है। गरीबी के मापन के लिए विभिन्न आयामों का उपयोग किया जाता है। उन्होंने अपने अध्ययन में गरीबी के प्रत्येक आयाम के लिए एक गरीबी रेखा को निर्दिष्ट किया। विश्लेषण में बताया कि यदि कोई व्यक्ति इन विभिन्न गरीबी रेखाओं से नीचे है तो वह गरीब है। साथ ही यह भी बताया कि विभिन्न गरीबी रेखाओं और आयामी अंतर को बहुआयामी गरीबी माप से कैसे जोड़ा जायें।

इस प्रकार गरीबी के मापन के लिए एक से अधिक आयामों की सार्थकता को दर्शाने के साथ ही कई शोध इस बात को भी परिलक्षित करते हैं कि अनुसूचित जनजातियों के परिवारों में गरीबी का स्तर अन्य की तुलना में अधिक है।अनुपमा (2015)[7] ने भारत में गरीबी का मापन करने हेतु एक आयाम एवं बहुआयामी दृष्टिकोणों को समन्वित करने का प्रयास किया। इन्होंने अपने अध्ययन में फोस्टर-ग्रीयर-थोर्बेक (FGT) सूचकांक द्वारा गरीबी को मापा और पाया कि भारत में एक आयामी एवं बहुआयामी गरीबी 2004-05 और 2009-10 के बीच कम हुई। साथ ही पाया कि सामाजिक समूहों में अनुसूचित जाति एवं अनुसूचित जनजाति सबसे गरीब व वंचित है। इतिश्री प्रधान, बिनायक कान्डापन एवं जालंधर प्रधान (2022)[8] ने बताया कि गरीबी की प्रकृति बहुआयामी है। वैश्विक गरीबी प्रोफाइल से पता चलता है कि 41 प्रतिशत बहुआयामी रुप से गरीब लोग दक्षिण एशियाई देशों में निवास करते हैं। इस हेतु राष्ट्रीय परिवार स्वास्थ्य सर्वेक्षण 2015-16 के समंकों का एवं विश्लेषण हेतु अल्कायर-फोस्टर प्रविधि का प्रयोग किया गया। विश्लेषण में पाया कि अनुसूचित जनजाति भारत में सबसे अधिक वंचित उप समूह है, जिसमें गरीबी की घटना एवं तीव्रता दोनों अधिक है। साथ ही पाया कि भारत के मध्य और पूर्वी क्षेत्र में स्थित राज्यों में सभी सामाजिक समूहों में गरीबी की घटना एवं तीव्रता दोनों उच्च हैं। गरीबी को कम करने के लिए योजनाओं की प्रभावशीलता में सुधार और प्रभावी नीति निर्धारण हेतु विशिष्ट स्तरों पर गरीबी के गहन मूल्यांकन की

आवश्यकता है। वी. विजयलक्ष्मी एवं एम.मिल्काह पॉल (2019)[9] ने तेलंगाना एवं आंध्रप्रदेश के आदिवासी समुदायों की सामाजिक–आर्थिक स्थिति तथा कल्याणकारी सरकारी योजनाओं का अध्ययन किया। इस हेतु द्वितीयक समंकों का उपयोग किया और विश्लेषण में पाया कि नागरिकों हेतु सामाजिक–आर्थिक न्याय, अवसरों की समानता, व्यक्ति की गरिमा का आश्वासन संविधान द्वारा सुनिश्चित किया गया है और संविधान में अनुसूचित जातियों एवं जनजातियों को राष्ट्र की मुख्यधारा में लाने के लिए सामाजिक, आर्थिक, सांस्कृतिक एवं शैक्षिक अभिरुचि बढाने हेतु अनेक प्रावधान किए गए हैं। साथ ही दोनों राज्यों की सरकारें भी जनजाति जीवन की समृद्धि हेतु कार्य कर रही।गोविन्द पाल (2015)[10] ने केन्द्रीय एवं उत्तरी–पूर्वी भारत के ग्रामीण एवं शहरी क्षेत्र के अनुसूचित जनजाति और गैर–अनुसूचित परिवारों में गरीबी के स्तर को जानने को प्रयास किया। उन्होंने राष्ट्रीय प्रतिदर्श सर्वेक्षण के 50वें, 61वें एवं 68वें राउंड के द्वितीयक समंकों का उपयोग किया और विश्लेषण में पाया कि इन अवधियों में गरीबी क्रमशः 63.7 प्रतिशत, 60 प्रतिशत एवं 43 प्रतिशत पाई गई अर्थात् गरीबी में काफी गिरावट देखी गई। साथ ही पाया कि अनुसूचित जनजाति के लोग तुलनात्मक रुप से अधिक गरीब है और इन जनजाति क्षेत्रों में विकास कार्यक्रमों के बावजूद गरीबी में धीमी गिरावट देखी गई।

इन सभी अध्ययनों के पुनरावलोकन से यह स्पष्ट हुआ कि गरीबी को कम करने के लिए पहले उसका मापा जाना आवश्यक है ताकि उसकी तीव्रता का अनुमान लगाया जा सके। साथ ही गरीबी का बहुआयामी रूप से मापन करने और जातिअनुसार या अन्य आधार पर उसका तुलनात्मक विश्लेषण करने पर ही गरीबी के असली कारणों की पहचान की जा सकती है। राजस्थान का अनुसूचित क्षेत्र आर्थिक दृष्टि से बहुत ही पिछड़ा हुआ है और यहाँ गरीबी को बहुआयामी रूप से मापने और इसके जातिअनुसार एवं क्षेत्रानुसार कोई अध्ययन पूर्व में नहीं पाए गए। इसलिए प्रस्तुत शोध इस दिशा में एक प्रयास है।

अध्ययन के उद्देश्य

1. राजस्थान के अनुसूचित क्षेत्र में बहुआयामी गरीबी के स्तर का मापन करना।
2. राजस्थान के अनुसूचित क्षेत्र में क्षेत्रानुसार एवं सामाजिक श्रेणीवार बहुआयामी गरीबी का तुलनात्मक विश्लेषण करना।

शोध परिकल्पना

- H_o: राजस्थान के अनुसूचित क्षेत्र में बहुआयामी गरीबी का जाति तथा क्षेत्र के साथ कोई साहचर्य नहीं है अर्थात् राजस्थान के अनुसूचित क्षेत्र में बहुआयामी गरीबीके स्तर में जाति या क्षेत्र के अनुसार कोई अंतर नहीं है।
- H_a: राजस्थान के अनुसूचित क्षेत्र में बहुआयामी गरीबी का जाति तथा क्षेत्र के साथ साहचर्य है अर्थात् राजस्थान के अनुसूचित क्षेत्र में बहुआयामी गरीबीके स्तर में जाति या क्षेत्र के अनुसार अंतर है।

शोध पद्धति- यह शोध विश्लेषणात्मक प्रकृति का है एवं प्राथमिक समंकों पर आधारित है। शोध हेतु अध्ययन क्षेत्र से एक प्रतिदर्श का चयन बहुचरणी यादृच्छिक प्रतिचयन विधि द्वारा किया गया। प्रथम चरण पर अध्ययन हेतु अनुसूचित क्षेत्र में पूर्णरूप से सम्मिलित जिलों में से दो जिलों डूँगरपुर एवं बाँसवाड़ा का चयन यादृच्छिक रूप से किया गया। दो जिलों से शहरी क्षेत्र में कुल 2 नगरपरिषद/नगर पालिकाएँ, 8 वार्ड एवं 120 उत्तरदाता

सम्मिलित किये गये जबकि ग्रामीण क्षेत्र से 2 ब्लॉक (पंचायत समितियाँ), 2ग्राम-पंचायतें, 8वार्ड एवं 120 उत्तरदाता परिवार सम्मिलित किए गए हैं, उत्तरदाता परिवारों की कुल संख्या प्रतिदर्श में 240है (हितेष सुथार, 2024)।[15] गरीबी के बहुआयामी माप हेतु संयुक्त राष्ट्र विकास कार्यक्रम एवं ऑक्सफोर्ड गरीबी एवं मानव विकास पहल द्वारा प्रयुक्त अल्कायर-फोस्टर प्रविधि में प्रयुक्त समान भार वाले तीन आयामों; शिक्षा, स्वास्थ्य एवं जीवन स्तर तथा इनके विभिन्न सूचकों; स्कूली शिक्षा के वर्ष, विद्यालय में उपस्थिति, पोषण, बाल मृत्यु दर, खाना पकाने का ईंधन, स्वच्छता, पीने का पानी, बिजली, आवास एवं संपत्ति आदि का प्रयोग किया गया है (सबीना अल्कायर एवं जेम्स फोस्टर, 200711 व 201112; सबीना अल्कायर एवं मारिया एम्मा सेंटोस, 201013 व 201414)। सर्वप्रथम उत्तरदाता परिवार को तीनों आयामों के प्रत्येक सूचक में वंचन और अवंचन के लिए मूल्य (0 या 1) दिया गया। तत्पश्चात् तीनों आयामों के दस सूचकों के भारित माध्य की गणना एक उत्तरदाता परिवार के लिए की गई, यही उस उत्तरदाता परिवार का वंचन मूल्य होता है। यदि परिवार का वंचन मूल्य 0.33 या इससे अधिक पाया गया तो प्रयुक्त विधि के अनुसार वह परिवार बहुआयामी रुप से गरीब माना गया है।

तत्पश्चात् बहुआयामी गरीबी सूचकांक के निर्माण हेतु शीर्ष गणना अनुपात (H) निकाला गया। यह कुल जनसंख्या में बहुआयामी रुप से गरीब पाए गए लोगों का अनुपात होता है, इसे गरीबी की घटना (Incidence of Poverty) भी कहा जाता है। तदुपरांत गरीबी की तीव्रता (A) का परिकलन किया गया है, यह बहुआयामी रुप से गरीब पाए गए परिवारों के वंचन अंकों का औसत है। बहुआयामी गरीबी सूचकांक (^{MPI}) शीर्ष गणना अनुपात (H) एवं गरीबी की तीव्रता (A) का गुणक रुप (H x A) है।

राजस्थान के अनुसूचित क्षेत्र में बहुआयामी गरीबी की स्थिति- राजस्थान के अनुसूचित क्षेत्र में चयनित प्रतिदर्श के उत्तरदाताओं से एकत्रित किए गए प्राथमिक समकों का अल्कायर फोस्टर प्रविधि अनुसार विश्लेषण कर बहुआयामी गरीबी का मापन किया गया और प्राप्त परिणाम शोध पत्र के इस भाग में प्रस्तुत किए गए हैं।

आरेख 01
राजस्थान के अनुसूचित क्षेत्र
में बहुआयामी रूप से गरीब एवं गैर-गरीब परिवार

(n=240)

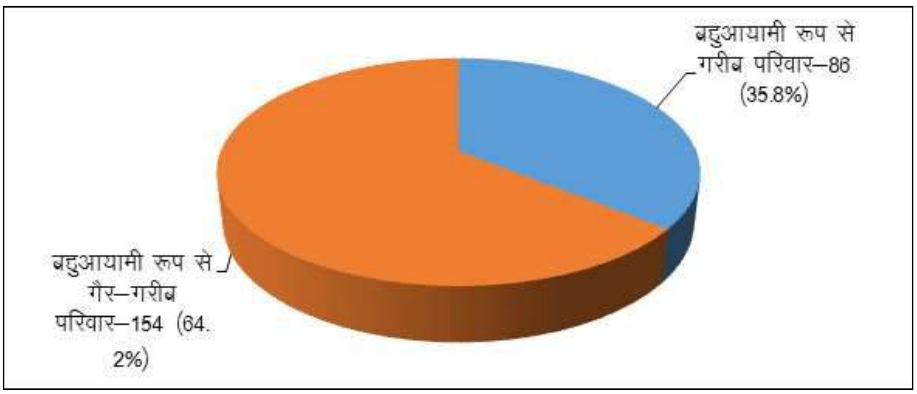

स्रोत : प्राथमिक सर्वेक्षण

आरेख 01 में अध्ययन क्षेत्र के 240 परिवारों में बहुआयामी गरीबी की स्थिति को दर्शाया गया है। समग्र रूप से 86(35.8 प्रतिशत) परिवार बहुआयामी रूप से गरीब पाए गए जबकि 154(64.2 प्रतिशत) परिवार बहुआयामी रूप से गैर-गरीब पाए गए हैं।

सारणी 01

राजस्थान के अनुसूचित क्षेत्र

में आयाम-अनुसार वंचित एवं अवंचित परिवार

आयाम	वंचित परिवार (%)	अवंचित परिवार (%)	कुल परिवार (%)
शिक्षा	18 (7.5)	222 (92.5)	240 (100)
स्वास्थ्य	146 (60.8)	94 (39.2)	240 (100)
जीवन-स्तर	137 (57.1)	103 (42.9)	240 (100)

स्रोत : प्राथमिक सर्वेक्षण

शिक्षा आयाम के अनुसार वंचित एवं अवंचित परिवारों को दर्शाया गया है। इस आयाम के अनुसार अध्ययन क्षेत्र के चयनित 240परिवारों में से 18 (7.5 प्रतिशत) परिवार वंचित तथा 222 (92.5 प्रतिशत) परिवारअवंचितपाए गए।इसआयाम के अनुसार वंचन बहुआयामी गरीबी के तीनों आयामों में सबसे कम है। अध्ययन क्षेत्र दक्षिणी राजस्थान का जनजाति बहुल क्षेत्र होते हुए भी यहाँ वंचन कम होना संतोषप्रद है। स्वास्थ्य आयाम में 146 (60.8 प्रतिशत) परिवार वंचित जबकि 94 (39.2 प्रतिशत) परिवार अवंचित पाए गए। जीवन-स्तर आयाम के अनुसार चयनित 240परिवारों में से 137 (57.1 प्रतिशत)परिवार जीवन-स्तर आयाम में वंचित तथा 103(42.9 प्रतिशत)परिवार अवंचित पाए गए।सारणी। से स्पष्ट है कि बहुआयामी गरीबी के स्वास्थ्य आयाम में वंचन सर्वाधिक जबकि शिक्षा आयाम में वंचन सबसे कम पाया गया है।

बहुआयामी गरीबी का क्षेत्रानुसार तुलनात्मक विश्लेषण- अध्ययन क्षेत्र में चयनित परिवारों से प्राप्त प्राथमिक समंकों की सहायता से बहुआयामी गरीबी का मापन किया गया है। बहुआयामी रुप से गरीब एवं गैर-गरीब पाए गए परिवारों का क्षेत्रानुसार विश्लेषण सारणी 2 में दर्शाया गया है।

सारणी 02

अध्ययन क्षेत्र में क्षेत्रानुसार बहुआयामी रुप से गरीब एवं गैर-गरीब परिवार

(n=240)

क्षेत्र	बहुआयामी रुप से गरीब परिवार (%)	बहुआयामी रुप से गैर-गरीब परिवार (%)	कुल परिवार (%)
ग्रामीण	74 (61.7)	46 (38.3)	120 (100)
शहरी	12 (10.0)	108 (90.0)	120 (100)
कुल	86 (35.8)	154 (64.2)	240 (100)
$\chi^2 = 69.659^a$ d.f. = 1 p = .000			

स्रोत : प्राथमिक सर्वेक्षण [a]शून्य (0.0%) कोष्ठों की आवृति 5 से कम है। न्यूनतम अपेक्षित आवृति का मान 43.00 है।

सारणी 2 में क्षेत्रानुसार बहुआयामी रुप से गरीब एवं गैर-गरीब परिवारों का विवरण दर्शाया गया है। चयनित परिवारों में से 86 (35.8 प्रतिशत) परिवार बहुआयामी रुप से गरीब पाए गए जबकि 154 (64.2 प्रतिशत) परिवार बहुआयामी रुप से गैर-गरीब पाए गए हैं। ग्रामीण क्षेत्र में 74 (61.7 प्रतिशत) परिवार बहुआयामी रुप से गरीब पाए गए जबकि 46 (38.3 प्रतिशत) परिवार बहुआयामी रुप से गैर-गरीब पाए गए। वहीं शहरी क्षेत्र में 12 (10.0 प्रतिशत) परिवार बहुआयामी रुप से गरीब पाए गए जबकि 108 (90.0 प्रतिशत) परिवार बहुआयामी रुप से गैर-गरीब पाए गए। सारणी 2 से कहा जा सकता है कि अध्ययन क्षेत्र में शहरी क्षेत्र की अपेक्षा बहुआयामी गरीब परिवारों की संख्या अधिक है।

ग्रामीण एवं शहरी क्षेत्र में बहुआयामी गरीबी के स्तर में कोई साहचर्य है या नहीं यह ज्ञात करने के लिए काई-वर्ग परीक्षण किया गया है जिसकी शून्य परिकल्पना यह ली गई कि क्षेत्र तथा बहुआयामी गरीबी के स्तर में कोई साहचर्य नहीं है अर्थात् दोनों क्षेत्रों के परिवारों की बहुआयामी गरीबी के स्तर में कोई सार्थक अंतर नहीं है।सारणी 2 में दर्शाए अनुसार 5 प्रतिशत सार्थकता स्तर पर सार्थकता मान ([p]-मान)0.00 है जो कि 0.05 से कम है। अत: 5 प्रतिशत सार्थकता स्तर पर शून्य परिकल्पना अस्वीकार की जाती है और निष्कर्ष रुप में कहा जा सकता है कि ग्रामीण एवं शहरी क्षेत्र की बहुआयामी गरीबी के स्तर में अंतर सार्थक है।

सारणी 03 में अध्ययन क्षेत्र में प्राथमिक समंकों के आधार पर चयनित परिवारों में क्षेत्रानुसार बहुआयामी गरीबी को गरीब परिवारों के लिए शीर्ष गणना अनुपात, गरीबी की तीव्रता तथा बहुआयामी गरीबी सूचकांक की सहायता से दर्शाया गया है।

सारणी 03

अध्ययन क्षेत्र में क्षेत्रानुसार बहुआयामी गरीबी का स्तर (n=86)

सूचक	ग्रामीण	शहरी	कुल
शीर्ष गणना अनुपात	0.617	0.100	0.358
गरीबी की तीव्रता	0.381	0.370	0.379
बहुआयामी गरीबी सूचकांक	0.235	0.037	0.136

स्रोत : प्राथमिक सर्वेक्षण

यहाँ n=86 है क्योंकि कुल 240 परिवारों में से 86 परिवार ही बहुआयामी रुप से गरीब हैं।

सारणी 3 के विश्लेषण से ज्ञात हुआ कि ग्रामीण क्षेत्र में बहुआयामी रुप से गरीब परिवारों की संख्या शहरी क्षेत्र के बहुआयामी रुप से गरीब परिवारों की संख्या के लगभग छ: गुने से अधिक है। यही कारण है कि अध्ययन क्षेत्र में समग्र प्रतिदर्श का बहुआयामी गरीबी का शीर्ष गणना अनुपात 0.358 (35.8 प्रतिशत) पाया गया जबकि ग्रामीण क्षेत्र में 0.617 (61.7 प्रतिशत) और शहरी क्षेत्र में यह 0.1 (10 प्रतिशत) पाया गया है (सारणी 3)।

सारणी 03 से यह भी स्पष्ट है कि अध्ययन क्षेत्र में बहुआयामी गरीबी की तीव्रता 0.379 है जो ग्रामीण क्षेत्र में तुलनात्मक रुप से अधिक है। शहरी क्षेत्र में बहुआयामी गरीबी की तीव्रता सम्पूर्ण अध्ययन क्षेत्र और ग्रामीण क्षेत्र की तुलना में भले ही कम है परन्तु अंतर बहुत अधिक नहीं है। यह समंक इस बात को इंगित करते हैं कि भले ही शहरी क्षेत्र में बहुआयामी रुप से गरीब परिवार कम है किन्तु जितने भी हैं उनकी गरीबी की तीव्रता अधिक है। चूंकि बहुआयामी गरीबी सूचकांक शीर्ष गणना अनुपात तथा गरीबी की तीव्रता का गुणन होता है इसलिए शहरी क्षेत्र में शीर्ष गणना अनुपात बहुत कम होने से यह मात्र 0. 037 ही प्राप्त हुआ है जबकि ग्रामीण क्षेत्र में यह सम्पूर्ण अध्ययन क्षेत्र के MPI (0.136) से भी काफी अधिक (0.235) प्राप्त हुआ है।

बहुआयामी गरीबी का सामाजिक श्रेणी अनुसार तुलनात्मक विश्लेषण- बहुआयामी रुप से गरीब एवं गैर-गरीब पाए गए परिवारों का सामाजिक श्रेणी अनुसार वितरण सारणी 4 में दर्शाया गया है।

सारणी 04
अध्ययन क्षेत्र में सामाजिक श्रेणी
अनुसार बहुआयामी रुप से गरीब एवं गैर-गरीब परिवार

(n=240)

सामाजिक श्रेणी	बहुआयामी रुप से गरीब परिवार(%)	बहुआयामी रुप से गैर-गरीब परिवार(%)	कुल परिवार (%)
अनुसूचित जनजाति परिवार	55 (58.5)	39 (41.5)	94 (100)
अन्य परिवार	31 (21.2)	115 (78.8)	146 (100)
कुल परिवार	86 (35.8)	154 (64.2)	240 (100)
χ^2 = 34.560[a] d.f. = 1	p = .000		

स्रोत : प्राथमिक सर्वेक्षण

[a]शून्य(0.0%)कोष्ठों की आवृति 5 से कम है। न्यूनतम अपेक्षित आवृति का मान 33. 68है।

सारणी 04 में सामाजिक श्रेणी अनुसार बहुआयामी रुप से गरीब और गैर-गरीब परिवारों का वितरण दर्शाया गया है। अनुसूचित जनजाति श्रेणी के 94 परिवारों में से 55 (58.5 प्रतिशत) परिवार बहुआयामी रुप से गरीब पाए गए जबकि 39 (41.5 प्रतिशत) परिवार गैर-गरीब की श्रेणी में पाए गए। इसी प्रकार अन्य श्रेणी के 31 (21.2 प्रतिशत) परिवार ही बहुआयामी रुप से गरीब पाए गए जबकि 115 (78.8 प्रतिशत) परिवार गैर-गरीब की श्रेणी में आए। उक्त वितरण से कहा जा सकता है कि अनुसूचित जनजाति श्रेणी के परिवारों में अन्य श्रेणी के परिवारों की अपेक्षा बहुआयामी रुप से गरीबों की संख्या अधिक है।

सामाजिक श्रेणी अनुसार बहुआयामी गरीबी के स्तर में साहचर्य है या नहीं यह ज्ञात करने के लिए काई-वर्ग परीक्षण किया गया है जिसकी शून्य परिकल्पना यह ली गई

कि श्रेणीवार बहुआयामी गरीबी के स्तर में कोई साहचर्य नहीं है अर्थात् अनुसूचित जनजाति एवं अन्य श्रेणी के परिवारों की बहुआयामी गरीबी के स्तर में कोई सार्थक अंतर नहीं है। सारणी 4 के अनुसार 5 प्रतिशत सार्थकता स्तर पर सार्थकता मान (p-मान) 0.00 है जो कि 0.05 से कम है। अत: 5 प्रतिशत सार्थकता स्तर पर शून्य परिकल्पना अस्वीकार की जाती है और निष्कर्ष रुप में कहा जा सकता है कि अनुसूचित जनजाति श्रेणी एवं अन्य श्रेणी के परिवारों में बहुआयामी गरीबी के स्तर में अंतर सार्थक है।

सारणी 05

अध्ययन क्षेत्र में बहुआयामी गरीबी का सामाजिक श्रेणी अनुसार वितरण

(n=86)

सूचक	सामाजिक श्रेणी		कुल
	अनुसूचित जनजाति	अन्य परिवार	
शीर्ष गणना अनुपात	0.585	0.212	0.358
गरीबी की तीव्रता	0.381	0.376	0.379
बहुआयामी गरीबी सूचकांक	0.223	0.080	0.136

स्रोत : प्राथमिक सर्वेक्षण

यहाँ n= 86 है क्योंकि कुल 240 परिवारों में से 86 परिवार ही बहुआयामी रुप से गरीब हैं।

सारणी 05 में बहुआयामी गरीबी का सामाजिक श्रेणी अनुसार वितरण दर्शाया गया है। चयनित 240 परिवारों में से 86 परिवार बहुआयामी रुप से गरीब पाए गए। 86 परिवारों में से 55 (63.95 प्रतिशत) परिवार अनुसूचित जनजाति के जबकि केवल 31 (36.05 प्रतिशत) परिवार अन्य श्रेणी के बहुआयामी गरीबी में जीवन यापन कर रहे हैं।

अध्ययन क्षेत्र में शीर्ष गणना अनुपात 0.358 (35.8 प्रतिशत) पाया गया। अनुसूचित जनजाति का शीर्ष गणना अनुपात 0.585 (58.5 प्रतिशत) जो अध्ययन क्षेत्र के कुल शीर्ष गणना अनुपात (0.358) से अधिक है जबकि अन्य श्रेणी में यह अनुपात 0. 212 (21.2 प्रतिशत) ही पाया गया है जो अनुसूचित जनजाति के शीर्ष गणना अनुपात के आधे से भी कम है। इसी प्रकार गरीबी की तीव्रता भी अनुसूचित जनजाति के परिवारों में 0.381 पाई गई जो अन्य श्रेणी के परिवारों (0.376) से अधिक है। अनुसूचित जनजाति के परिवारों में बहुआयामी गरीबी सूचकांक 0.223 पाया गया जबकि अन्य श्रेणी के परिवारों में यह मात्र 0.080 ही है। उक्त सभी सूचकों से यह प्रतीत होता है कि अध्ययन क्षेत्र में अनुसूचित जनजाति के परिवारों में अन्य श्रेणी के परिवारों की अपेक्षा बहुआयामी गरीबी अधिक है।

निष्कर्ष एवं सुझाव- निष्कर्षत: कहा जा सकता है कि राजस्थान के अनुसूचित क्षेत्र में एक तिहाई से अधिक परिवार बहुआयामी रुप से गरीब हैं। क्षेत्रानुसार बहुआयामी गरीबी के वितरण को देखने पर पाया कि ग्रामीण क्षेत्र में शहरी क्षेत्र की अपेक्षा गरीबी का स्तर छ: गुना अधिक है। साथ हीग्रामीण एवं शहरी क्षेत्र में बहुआयामी गरीबी के स्तर में सार्थक अंतर है। दोनों ही क्षेत्रों में गरीबी की तीव्रता लगभग समान पाई गई।यदि सामाजिक श्रेणी

अनुसार बहुआयामी गरीबी के स्तर को देखें तो अनुसूचित जनजाति श्रेणी के परिवार अन्य श्रेणी के परिवारों की अपेक्षा अधिक गरीब है। दोनों श्रेणियों में बहुआयामी गरीबी के स्तर में अंतर सार्थक पाया गया है। अनुसूचित जनजाति के परिवारों में शीर्ष गणना अनुपात अन्य श्रेणी के परिवारों तुलना में लगभग दोगुना जबकि गरीबी की तीव्रता दोनों श्रेणियों में लगभग समान पाई गई। अनुसूचित जनजाति परिवारों में बहुआयामी गरीबी सूचकांक अन्य परिवारों की तुलना में तीन गुना अधिक पाया गयाहै। आयाम अनुसार बहुआयामी गरीबी के विश्लेषण के आधार पर कहा जा सकता है किस्वास्थ्य आयाम में वंचन सर्वाधिक जबकि शिक्षा आयाम में वंचन सबसे कम है।

यदि राजस्थान के अनुसूचित क्षेत्र में बहुआयामी गरीबी को कम करना है तो मुख्यत: ग्रामीण क्षेत्र एवं अनुसूचित जनजाति के परिवारों में इसे कम करने के प्रयास किए जाने चाहिए। इस हेतु अनुसूचित जनजाति हेतु एवं ग्रामीण क्षेत्र में आय एवं रोजगार के अवसरों में वृद्धि करने, मजदूरी के स्तर में वृद्धि किए जाने, कृषि की उत्पादकता बढ़ाने, शिक्षा के अतिरिक्त कौशल विकास के कार्यक्रम आयोजित करवाने के साथ ही पोषण स्तर में सुधार हेतु पौष्टिक भोज्य पदार्थों पर उपभोग व्यय में वृद्धि के लिए प्रेरित करने, बच्चों के लिए पोषणयुक्त आहार की समुचित व्यवस्था सरकारी प्रयासों से सुनिश्चित किए जाने की आवश्यकता है।

सन्दर्भ सूची

1. The World Bank (2000). World Development Report 2000/2001: Attacking Poverty, pp. 15-21. (http://documents.worldbank.org/curated/en/230351468332946759/World-development-report-2000-2001-attacking-poverty).
2. UNDP (2010). Human Development Report 2010: The Real Wealth of Nations: Pathways to Human Development. United Nations Development Programme, New York, pp. 94-99.
3. UNDP and OPHI (2023). Global Multidimensional Poverty Index 2023: Unstacking global poverty–Data for high-impact action, United Nations Development Programme (UNDP) and Oxford Poverty and Human Development Initiative (OPHI), University of Oxford, pp.1-9.
4. Rippin N. (2016). Multidimensional Poverty in Germany: A Capibility Approach, Forum for Social Economics, Vol 45 (2-3), pp. 230-255.
5. Bronfman J. (2014). Beyond Income: A Study of Multidimensional Poverty in Chile, MPRA Paper no. 63256, pp. 1-53.
6. Bourguignon F., Chakravarty, S.R. (2003). The Measurement of Multidimensional Poverty, The Journal of Economic Inequality 1(1), pp. 25–49.
7. Anupama (2015). Multidimensional poverty in India: Has the growth been pro-poor on multiple dimensions? Indian Journal of Economics and Development, Vol 11 (2), pp. 457-470.
8. Pradhan I, Kandapan B, Pradhan J. (2022). Uneven burden of

multidimensional poverty in India: A caste-based analysis. PLoS ONE 17(7), e0271806. https://doi.org/10.1371/journal.pone.0271806.

9. Vijayalakshmi, V. & Milcah Paul, M. (2019). Socio-Economic Conditions of Tribal Communities in Telangana and Andhra Pradesh – A Review. Acta Scientific Agriculture. 3, pp. 104-109.
10. Pal, G. C. (2015). Poverty among Tribals in India: Variations and Vulnerabilities. Journal of Social Inclusion Studies, Vol *1*(2), pp. 91-107.
11. Alkire S. and Foster J. (2007). Multidimensional Poverty Measures, Oxford Poverty and human development initiative, Oxford University, Working Paper no. 07.
12. Alkire S. and Foster J. (2011). Counting and Multidimensional Poverty Measurement, Journal of Public Economics, Vol 95(7-8), pp. 476-487.
13. Alkire S. and Santos M.E. (2010). Multidimensional Poverty Index, Oxford Poverty and Human Development Initiative, Oxford University, pp. 1-8.
14. Alkire S. and Santos M.E. (2014). Measuring Acute Poverty in the Developing World: Robustness and scope of the Multidimensional Poverty Index, World development, Vol 59, pp 251-274.
15. हितेष सुथार, राजस्थान में बहुआयामी गरीबी का विश्लेषणात्मक अध्ययन (अनुसूचित क्षेत्र के विशेष संदर्भ में), अप्रकाशित शोध प्रबंध, अर्थशास्त्र विभाग मोहनलाल सुखाड़िया विश्वविद्यालय उदयपुर, 2024.

UGC Journal No. (Old) 2138
Peer-Reviewed Research Journal
Impact Factor 6.375, ISSN 0975-4083
Vol.- 28, Hindi Edition, Year-14, March 2025

भारत- नेपाल संबंध (1990 से आज तक) एक विश्लेषणात्मक अध्ययन

• प्रतिभा पाठक
•• अमरजीत कुमार सिंह

सारांश- भारत-नेपाल मजबूत मित्रता और सहयोगात्मक संबंध वालें पड़ोसी देश है। भारत और नेपाल एक खुली सीमा साझा करते हैं तथा दोनों देशों के बीच घनिष्ठ सांस्कृतिक और पारिवारिक संबंध हैं। भारत और नेपाल के संबंध ऐतिहासिक रूप से घनिष्ठ रहे हैं, लेकिन 1990 के बाद इन संबंधों में कई महत्वपूर्ण बदलाव आए। इस अवधि में राजनीतिक अस्थिरता, सीमा विवाद, आर्थिक सहयोग, रणनीतिक प्रतिस्पर्धा और कूटनीतिक उतार-चढ़ाव देखने को मिले। भारत और नेपाल के बीच भौगोलिक, सांस्कृतिक, आर्थिक और सुरक्षा संबंधों की गहराई के बावजूद, कई मुद्दों ने संबंधों को जटिल बनाया।1990 से लेकर वर्तमान तक भारत-नेपाल संबंधों ने कई उतार-चढ़ाव देखे हैं। दोनों देशों के बीच ऐतिहासिक, सांस्कृतिक, आर्थिक और सुरक्षा संबंधों की गहराई होने के बावजूद, विभिन्न राजनीतिक और कूटनीतिक मुद्दों ने संबंधों को प्रभावित किया है। भविष्य में भारत और नेपाल को आपसी विश्वास, कूटनीतिक संवाद और आर्थिक सहयोग के माध्यम से अपने संबंधों को और मजबूत करना होगा। नेपाल के लिए भारत और चीन के बीच संतुलन बनाना चुनौतीपूर्ण रहेगा, लेकिन यदि दोनों देश आपसी सम्मान और परस्पर लाभ के सिद्धांतों पर काम करें, तो यह संबंध एक नई ऊँचाई पर पहुँच सकते हैं।

मुख्य शब्द- मित्रता, संबंध, आपसी विश्वास, कूटनीतिक संवाद

भूमिका- भारत और नेपाल के संबंध ऐतिहासिक, सांस्कृतिक, धार्मिक और भौगोलिक दृष्टि से सदियों पुराने हैं। दोनों देशों के बीच खुली सीमा और घनिष्ठ सामाजिक-सांस्कृतिक रिश्ते इन्हें विशेष रूप से जोड़ते हैं। 1990 के बाद नेपाल में लोकतांत्रिक परिवर्तन के साथ इन संबंधों में कई उतार-चढ़ाव देखने को मिले हैं।

भारत-नेपाल संबंध: 1990 के दशक का परिप्रेक्ष्य- भारत और नेपाल के बीच संबंध ऐतिहासिक, सांस्कृतिक, आर्थिक और भू-राजनीतिक दृष्टि से घनिष्ठ रहे हैं। 1990 का दशक दोनों देशों के रिश्तों में एक महत्वपूर्ण दौर था, जब नेपाल में लोकतांत्रिक परिवर्तन हुए और भारत-नेपाल संबंधों में नई चुनौतियाँ और अवसर सामने आए।

• शोधार्थी, राजनीति विज्ञान, अवधेश प्रताप सिंह विश्वविद्यालय रीवा मध्य प्रदेश
•• प्राध्यापक एवं विभागाध्यक्ष, राजनीति विज्ञान विभाग, शासकीय कन्या स्नातकोत्तर महाविद्यालय रीवा मध्य प्रदेश

नेपाल में लोकतंत्र और भारत की भूमिका- 1990 का दशक नेपाल के लिए राजनीतिक उथल-पुथल का समय था। 1990 में नेपाल में पंचायती शासन का अंत हुआ और बहुदलीय लोकतंत्र की स्थापना हुई। भारत ने इस परिवर्तन में सकारात्मक भूमिका निभाई और नेपाल में लोकतांत्रिक प्रक्रिया का समर्थन किया। लोकतंत्र की स्थापना के बाद, नेपाल में भारत के साथ द्विपक्षीय संबंधों को नए सिरे से देखने का प्रयास किया गया।

भारत-नेपाल व्यापार और आर्थिक संबंध- 1990 के दशक में भारत और नेपाल के बीच व्यापारिक और आर्थिक संबंधों को मजबूती मिली। 1991 में भारत ने अपनी अर्थव्यवस्था को उदार बनाया, जिससे नेपाल को भारतीय बाजार में व्यापार करने के अधिक अवसर मिले। 1996 में भारत और नेपाल के बीच व्यापार संधि पर हस्ताक्षर हुए, जिसने नेपाल के व्यापार को बढ़ावा दिया और भारतीय निवेश को आकर्षित किया।

सुरक्षा और सीमा संबंधी मुद्दे- 1990 के दशक में भारत और नेपाल के बीच सीमा सुरक्षा और आतंकवाद से जुड़े कुछ विवाद भी उभरे। नेपाल में माओवादी आंदोलन (1996-2006) शुरू हुआ, जिससे सुरक्षा संबंधी चिंताएँ बढ़ीं। भारत ने नेपाल सरकार को इस आंदोलन से निपटने में सहायता दी। साथ ही, भारत-नेपाल सीमा से जुड़े कुछ विवाद भी सामने आए, लेकिन दोनों देशों ने इन्हें कूटनीतिक तरीकों से हल करने का प्रयास किया।

गंगा जल संधि (1996)- भारत और नेपाल के बीच 1996 में गंगा जल संधि हुई, जो 30 वर्षों तक लागू रहने वाली संधि थी। इस संधि के तहत नेपाल को गंगा नदी के पानी के उपयोग का अधिकार मिला, जिससे दोनों देशों के जल संसाधन प्रबंधन में सहयोग बढ़ा।

सांस्कृतिक और जनसंपर्क- भारत और नेपाल के बीच सांस्कृतिक और जनसंपर्क ऐतिहासिक रूप से गहरे रहे हैं। 1990 के दशक में भारत-नेपाल के नागरिकों के बीच आवागमन आसान बना रहा, क्योंकि दोनों देशों के नागरिक बिना वीजा के एक-दूसरे के यहाँ यात्रा कर सकते थे।

1990 का दशक भारत-नेपाल संबंधों के लिए बदलाव और सहयोग का समय था। नेपाल में लोकतांत्रिक परिवर्तन, व्यापारिक समझौतों, जल संसाधन प्रबंधन और सुरक्षा संबंधी मुद्दों ने दोनों देशों के रिश्तों को प्रभावित किया। हालाँकि कुछ विवाद भी सामने आए, लेकिन दोनों देशों ने बातचीत और कूटनीति के माध्यम से अपने संबंधों को संतुलित बनाए रखा। इस दशक में स्थापित हुई नीतियाँ और समझौते आगे चलकर भारत-नेपाल संबंधों की दिशा तय करने में महत्वपूर्ण साबित हुए।

2000-2010: उथल-पुथल और सहयोग- भारत और नेपाल के बीच संबंध ऐतिहासिक, सांस्कृतिक और भौगोलिक रूप से गहरे रहे हैं। लेकिन 2000 से 2010 का दशक भारत-नेपाल संबंधों के लिए उथल-पुथल और सहयोग दोनों का समय था। इस दौरान नेपाल ने बड़ी राजनीतिक अस्थिरता देखी, जिसमें माओवादी संघर्ष, राजशाही का अंत और लोकतंत्र की पुनर्स्थापना शामिल थी। भारत ने इस पूरे दौर में नेपाल को सहयोग प्रदान किया, लेकिन कुछ विवाद भी उभरे।

नेपाल में राजनीतिक अस्थिरता और भारत की भूमिका, माओवादी संघर्ष और शांति प्रक्रिया (1996-2006)- 1996 में शुरू हुआ नेपाल का माओवादी संघर्ष 2000 के

दशक की शुरुआत में और तेज़ हो गया। इस दौरान नेपाल में हिंसा बढ़ी, जिससे नेपाल की अर्थव्यवस्था और सुरक्षा को गंभीर नुकसान पहुँचा। भारत ने नेपाल सरकार को समर्थन दिया और माओवादियों के खिलाफ नेपाल को सैन्य सहायता भी प्रदान की। हालाँकि, भारत ने बाद में 2006 की शांति संधि को भी समर्थन दिया, जिससे माओवादी मुख्यधारा की राजनीति में शामिल हुए।

राजशाही का अंत और लोकतंत्र की पुनर्स्थापना (2006-2008)- 2001 में नेपाल के तत्कालीन राजा बीरेंद्र और उनके परिवार की हत्या ने नेपाल को गहरे राजनीतिक संकट में डाल दिया। उनके उत्तराधिकारी राजा ज्ञानेंद्र ने जब 2005 में सत्ता पर सीधा नियंत्रण कर लिया, तो नेपाल में लोकतंत्र समर्थक आंदोलन और तेज़ हो गया। भारत ने नेपाल में लोकतंत्र बहाली के पक्ष में अपनी नीति स्पष्ट रखी और 2006 में नेपाल में हुए लोकतांत्रिक आंदोलन (जनआंदोलन-2) का समर्थन किया। इसके परिणामस्वरूप 2008 में नेपाल एक संघीय लोकतांत्रिक गणराज्य बना और राजशाही समाप्त हो गई।

भारत-नेपाल सुरक्षा और सीमा संबंधी मुद्दे- नेपाल में सक्रिय माओवादियों और भारतीय माओवादियों (नक्सलियों) के बीच कथित संबंधों को लेकर भारत चिंतित रहा। भारत ने नेपाल सरकार को माओवादी उग्रवाद को नियंत्रित करने के लिए सहायता दी, लेकिन नेपाल के कुछ राजनीतिक दलों ने इसे भारत के आंतरिक हस्तक्षेप के रूप में देखा।

सीमा विवाद और व्यापार मार्ग- 2000-2010 के दशक में भारत-नेपाल के बीच कालापानी और सुस्ता जैसे सीमावर्ती क्षेत्रों को लेकर विवाद उभरे। नेपाली सरकार और जनता के एक वर्ग ने भारत पर सीमा विस्तार का आरोप लगाया, जबकि भारत ने इन क्षेत्रों को रणनीतिक रूप से महत्वपूर्ण मानते हुए अपने दावे बनाए रखे।

आर्थिक और व्यापारिक सहयोग- भारत नेपाल का सबसे बड़ा व्यापारिक भागीदार है। 2000-2010 के दौरान भारत और नेपाल के बीच व्यापार समझौतों को नया रूप दिया गया। 2009 में भारत-नेपाल व्यापार संधि पर हस्ताक्षर हुए, जिससे नेपाल को भारतीय बाजार में अधिक पहुँच मिली।

नेपाल में ऊर्जा संकट के चलते भारत ने जल विद्युत परियोजनाओं में निवेश किया। 2008 में नेपाल और भारत ने जलविद्युत और सिंचाई परियोजनाओं के लिए समझौते किए, जिससे नेपाल को बिजली आपूर्ति में सहायता मिली। इस दशक में नेपाल में राजनीतिक अस्थिरता, माओवादी आंदोलन और 2008 में राजशाही का अंत हुआ। नेपाल को गणराज्य घोषित किया गया और नए संविधान निर्माण की प्रक्रिया शुरू हुई। भारत ने नेपाल की लोकतांत्रिक प्रक्रिया का समर्थन किया, लेकिन कई बार उसकी भूमिका को संदेह की दृष्टि से भी देखा गया। 2005 में भारत ने माओवादी समूहों से बातचीत में मदद की और 2006 के शांति समझौते में योगदान दिया।

भारत-नेपाल संबंध (2010-2020): संवैधानिक विवाद और आर्थिक नाकेबंदी- भारत और नेपाल के संबंध ऐतिहासिक रूप से गहरे रहे हैं, लेकिन 2010 से 2020 का दशक कई विवादों, कूटनीतिक तनाव और आर्थिक सहयोग का मिश्रण रहा। इस अवधि में नेपाल में नए संविधान का मसौदा तैयार हुआ, जिसे लेकर भारत और

नेपाल के बीच मतभेद उभरे। साथ ही, 2015 की आर्थिक नाकेबंदी ने दोनों देशों के संबंधों में तनाव को और बढ़ा दिया।

नेपाल का नया संविधान और भारत- नेपाल विवाद- 2015 में नेपाल ने नया संविधान लागू किया, जो एक संघीय लोकतांत्रिक गणराज्य के रूप में नेपाल की शासन प्रणाली को औपचारिक रूप से स्थापित करता था। हालाँकि, इस संविधान में नेपाल के मधेशी और थारू समुदायों (जो नेपाल-भारत सीमा से सटे तराई क्षेत्र में रहते हैं और जिनकी जातीय और सांस्कृतिक जड़ें भारत से जुड़ी हैं) के राजनीतिक अधिकारों को लेकर विवाद पैदा हो गया। भारत ने संविधान में मधेशियों और जनजातीय समूहों को पर्याप्त प्रतिनिधित्व न मिलने पर चिंता जताई। भारत ने नेपाल से संविधान में समावेशी संशोधन करने की अपील की, लेकिन इसे नेपाल में आंतरिक हस्तक्षेप के रूप में देखा गया। इस मुद्दे पर नेपाल में भारत विरोधी भावना बढ़ी, जिससे दोनों देशों के संबंधों में खटास आई।

2015 की आर्थिक नाकेबंदी: भारत-नेपाल संबंधों में संकट- नेपाल ने 20 सितंबर 2015 को जब नया संविधान लागू किया, तो मधेशी आंदोलन और सीमा क्षेत्र में विरोध-प्रदर्शन शुरू हो गए। नेपाल ने भारत पर आर्थिक नाकेबंदी का आरोप लगाया, जिससे नेपाल में ईंधन, दवाइयों और आवश्यक वस्तुओं की भारी कमी हो गई। भारत से नेपाल को आवश्यक वस्तुओं की आपूर्ति रोक दी गई या सीमित कर दी गई। नेपाल में पेट्रोल, गैस, दवाइयों और खाद्य सामग्री की किल्लत हो गई, जिससे जनजीवन प्रभावित हुआ। नेपाल सरकार ने इसे भारत द्वारा राजनीतिक दबाव बनाने की रणनीति बताया, जबकि भारत ने कहा कि आपूर्ति में बाधा नेपाल में चल रहे आंदोलन के कारण आई। नाकेबंदी के कारण नेपाल ने भारत पर अपनी अत्यधिक निर्भरता को कम करने के लिए चीन के साथ नए व्यापार और आपूर्ति समझौते किए। 2016 में नेपाल ने चीन से ईंधन और अन्य आवश्यक वस्तुओं की आपूर्ति के लिए एक समझौता किया। चीन ने नेपाल को रेल और सड़क संपर्क के माध्यम से जोड़ने की योजनाओं को गति दी। इस कदम ने भारत-नेपाल संबंधों में और तनाव बढ़ा दिया, क्योंकि नेपाल अब अपनी विदेश नीति में भारत और चीन के बीच संतुलन बनाने की कोशिश करने लगा।

भारत-नेपाल संबंधों में सुधार के प्रयास (2016-2020)- हालाँकि 2015-16 के दौरान भारत-नेपाल संबंधों में काफी तनाव था, लेकिन 2017 के बाद दोनों देशों ने फिर से रिश्तों को सुधारने की कोशिश की। नेपाल के प्रधानमंत्री के.पी. शर्मा ओली ने भारत का दौरा किया, जिससे संबंधों को पटरी पर लाने की कोशिश हुई। भारतीय प्रधानमंत्री नरेंद्र मोदी और नेपाली प्रधानमंत्री ओली के बीच बुनियादी ढांचा, व्यापार और ऊर्जा सहयोग पर सहमति बनी। नेपाल ने भारत-नेपाल रेलवे लिंक और पेट्रोलियम पाइपलाइन परियोजनाओं में सहयोग को आगे बढ़ाया। भारत ने नेपाल को तेल आपूर्ति में मदद के लिए यह मोतिहारी-अमलेखगंज पेट्रोलियम पाइपलाइन बनाई, जिससे ईंधन आपूर्ति सुचारु हुई। नेपाल में सड़क और ऊर्जा परियोजनाओं में भारतीय निवेश बढ़ा। भारत और नेपाल ने डिजिटल भुगतान और व्यापार को बढ़ावा देने के लिए समझौते किए।

कालापानी, लिपुलेख और लिम्पियाधुरा विवाद- 2020 में नेपाल ने नया राजनीतिक नक्शा जारी किया, जिसमें कालापानी, लिपुलेख और लिम्पियाधुरा को नेपाली क्षेत्र के

रूप में दर्शाया गया। यह क्षेत्र भारत और नेपाल के बीच लंबे समय से विवादित रहा है, लेकिन भारत इसे उत्तराखंड के हिस्से के रूप में मानता है। भारत ने नेपाल के इस कदम का विरोध किया और इसे एकतरफा कार्रवाई बताया। इस सीमा विवाद ने फिर से दोनों देशों के संबंधों में तनाव बढ़ा दिया।

भारत और नेपाल ने रामायण सर्किट परियोजना के तहत अयोध्या और जनकपुर को जोड़ने वाले धार्मिक पर्यटन मार्ग को विकसित करने का प्रयास किया। 2018 में प्रधानमंत्री मोदी ने जनकपुर का दौरा किया, जिससे सांस्कृतिक संबंध मजबूत हुए। भारत ने नेपाल में अस्पताल, स्कूल और बुनियादी ढांचे के विकास में सहायता जारी रखी। नेपाल में भारतीय मूल के नागरिकों को कई सुविधाएँ मिलती रहीं, जिससे लोगों के बीच आपसी संबंध बने रहे।

2010 से 2020 का दशक भारत–नेपाल संबंधों के लिए उतार–चढ़ाव भरा रहा। नेपाल का संवैधानिक विवाद, 2015 की आर्थिक नाकेबंदी, सीमा विवाद और नेपाल में बढ़ता चीनी प्रभाव भारत–नेपाल संबंधों में तनाव के मुख्य कारण बने। हालाँकि, दोनों देशों ने व्यापार, बुनियादी ढांचे और सांस्कृतिक सहयोग के माध्यम से संबंधों को सुधारने की कोशिश की। लेकिन सीमा विवाद और नेपाल की भारत–चीन के बीच संतुलन बनाने की नीति भविष्य में भी भारत–नेपाल संबंधों के लिए एक चुनौती बनी रह सकती है। आगे चलकर, भारत और नेपाल को आपसी संवाद, कूटनीति और सहयोग के माध्यम से अपने रिश्तों को और मजबूत करने की आवश्यकता है। नेपाल ने 2015 में नया संविधान अपनाया, लेकिन भारत और नेपाल के बीच इस पर मतभेद उत्पन्न हुए, खासकर मधेशी समुदाय के अधिकारों को लेकर। इसी संदर्भ में भारत पर नेपाल में 'अघोषित आर्थिक नाकेबंदी' का आरोप लगा, जिससे दोनों देशों के संबंधों में तनाव आ गया। हालांकि, 2018 में केपी शर्मा ओली और नरेंद्र मोदी की सरकारों ने संबंध सुधारने का प्रयास किया। नेपाल में चीन के बढ़ते प्रभाव ने भी भारत–नेपाल संबंधों को प्रभावित किया।

भारत-नेपाल संबंध (2020 के बाद): चुनौतियाँ और संभावनाएँ- भारत और नेपाल के बीच ऐतिहासिक, सांस्कृतिक, भौगोलिक और आर्थिक संबंध रहे हैं। हालाँकि, 2020 के बाद के वर्षों में इन संबंधों में कई चुनौतियाँ और अवसर दोनों सामने आए। वैश्विक महामारी, सीमा विवाद, भू–राजनीतिक परिवर्तन, आर्थिक सहयोग और सांस्कृतिक आदान–प्रदान ने इन संबंधों को नई दिशा दी है।

भारत-नेपाल संबंधों की प्रमुख चुनौतियाँ

सीमा विवाद और भू-राजनीतिक तनाव- 2020 में नेपाल ने कालापानी, लिपुलेख और लिम्पियाधुरा को अपने क्षेत्र में शामिल करते हुए एक नया राजनीतिक नक्शा जारी किया। भारत ने इसे अस्वीकार किया और नेपाल के इस कदम को एकतरफा करार दिया। नेपाल का दावा है कि महाकाली नदी के पूर्वी क्षेत्र उसके अधिकार में आते हैं। भारत ने लिपुलेख में सड़क निर्माण किया, जिसे नेपाल ने आपत्ति के रूप में देखा। इस मुद्दे पर दोनों देशों के बीच कूटनीतिक वार्ता जारी है, लेकिन अब तक कोई ठोस समाधान नहीं निकला है।

चीन की बढ़ती भूमिका और भारत की चिंता- नेपाल की विदेश नीति में हाल के वर्षों

में चीन की बढ़ती भागीदारी देखी गई है। चीन ने नेपाल में बुनियादी ढांचे, सड़क, रेलवे और जलविद्युत परियोजनाओं में निवेश बढ़ाया है। नेपाल बेल्ट एंड रोड इनिशिएटिव का हिस्सा है, जिससे भारत को नेपाल में चीनी प्रभाव बढ़ने की चिंता है। भारत को डर है कि नेपाल में चीन का हस्तक्षेप भारत–नेपाल संबंधों को कमजोर कर सकता है और सुरक्षा के लिहाज से संवेदनशील हो सकता है।

नेपाल के तराई क्षेत्र (मधेश) में रहने वाले भारतीय मूल के लोगों को राजनीतिक अधिकार देने के मुद्दे पर अभी भी विवाद है। मधेशी समूह नेपाल के संविधान में संशोधन की माँग कर रहे हैं, जिसे भारत समर्थन देता है। नेपाल के कुछ राजनीतिक दल इसे आंतरिक मामलों में भारत का हस्तक्षेप मानते हैं। यह मुद्दा भारत–नेपाल संबंधों में तनाव की एक बड़ी वजह बना हुआ है। नेपाल में 2020 के बाद लगातार राजनीतिक अस्थिरता बनी हुई है। सरकारें बार–बार बदल रही हैं और भारत के साथ संबंधों पर इनका अलग–अलग दृष्टिकोण रहता है। नेपाल कम्युनिस्ट पार्टी के विघटन के बाद भारत समर्थक और चीन समर्थक नेताओं में खींचतान बढ़ गई। नेपाल की अनिश्चित राजनीतिक स्थिति भारत–नेपाल संबंधों को प्रभावित कर रही है।

भारत-नेपाल संबंधों में संभावनाएँ और सहयोग के नए अवसर- भारत, नेपाल का सबसे बड़ा व्यापारिक भागीदार है। दोनों देशों ने कई महत्वपूर्ण व्यापारिक समझौतों पर काम किया है–

- भारत–नेपाल व्यापार समझौते का नवीनीकरण (2023)
- नेपाल को भारत के बंदरगाहों का उपयोग करने की सुविधा
- मोतिहारी–अमलेखगंज पाइपलाइन का विस्तार, जिससे नेपाल को तेल आपूर्ति में आसानी होगी।
- भारत और नेपाल ने कई महत्वपूर्ण बुनियादी ढांचा परियोजनाओं पर काम किया है
- नेपाल–भारत रेल संपर्क परियोजना (जयनगर–बर्दीबास रेल लाइन का विस्तार)
- रक्सौल–काठमांडू रेलवे योजना, जिससे भारत और नेपाल के बीच यात्रा आसान होगी।
- नेपाल में जलविद्युत परियोजनाओं में भारतीय निवेश, जिससे नेपाल को बिजली निर्यात का लाभ मिलेगा।
- नेपाल और भारत के बीच रक्षा सहयोग मजबूत हुआ है।
- भारतीय सेना और नेपाली सेना के बीच संयुक्त सैन्य अभ्यास (सूर्य किरण)
- नेपाल के सैनिकों की भारतीय सेना में भर्ती जारी, जिससे दोनों देशों के रक्षा संबंध मजबूत हैं।
- सीमा पार अपराध और आतंकवाद को रोकने के लिए सुरक्षा एजेंसियों का सहयोग बढ़ा।
- भारत और नेपाल के धार्मिक और सांस्कृतिक संबंधों को मजबूत करने के लिए कई पहल की गई हैं।

- रामायण सर्किट परियोजना के तहत अयोध्या और जनकपुर को जोड़ा गया।
- पशुपतिनाथ और काशी के बीच धार्मिक पर्यटन को बढ़ावा दिया गया।
- भारत–नेपाल के बीच डिजिटल भुगतान प्रणाली को आसान बनाने की योजना बनाई गई।
- सीमा विवाद और अन्य राजनीतिक मतभेदों को सुलझाने के लिए उच्च स्तरीय वार्ता की आवश्यकता है।
- भारत और नेपाल को संयुक्त सीमा आयोग के तहत विवाद सुलझाने चाहिए।
- नेपाल को भारत और चीन के बीच संतुलित विदेश नीति अपनानी होगी।
- भारत और नेपाल के बीच रेल, सड़क और हवाई संपर्क को और मजबूत करना होगा।
- नेपाल में डिजिटल और स्टार्टअप संस्कृति को बढ़ावा देने के लिए भारत–नेपाल सहयोग की जरूरत है।
- सीमा पार अपराधों और अवैध गतिविधियों को रोकने के लिए सहयोग बढ़ाना होगा।
- नेपाल में स्थिरता बनाए रखने के लिए राजनीतिक संवाद को बढ़ावा देना होगा।

निष्कर्ष- 2020 के बाद भारत–नेपाल संबंधों में चुनौतियाँ और संभावनाएँ दोनों देखी गई हैं। सीमा विवाद, चीन का प्रभाव, मधेशी मुद्दा और नेपाल की राजनीतिक अस्थिरता भारत–नेपाल संबंधों के लिए प्रमुख चुनौतियाँ है। व्यापार, बुनियादी ढाँचा, ऊर्जा सहयोग, धार्मिक पर्यटन और रक्षा साझेदारी जैसे क्षेत्रों में सहयोग के बड़े अवसर है। यदि दोनों देश कूटनीति, व्यापारिक सहयोग और सांस्कृतिक संबंधों को प्राथमिकता देते है, तो भारत–नेपाल संबंध और मजबूत हो सकते है। भविष्य में दोनों देशों को परस्पर विश्वास और आपसी सम्मान के आधार पर अपने द्विपक्षीय संबंधों को नई ऊँचाइयों पर ले जाने की जरूरत है। भारत–नेपाल संबंध 2020 में तब और जटिल हो गए जब नेपाल ने एक नया नक्शा जारी किया, जिसमें कुछ विवादित क्षेत्रों को अपने भूभाग में शामिल किया। इससे दोनों देशों के बीच राजनयिक तनाव बढ़ गया। हालांकि, हाल के वर्षो में दोनों देशों ने अपने संबंधों को फिर से सुधारने का प्रयास किया है। विभिन्न उच्च–स्तरीय यात्राओं और द्विपक्षीय परियोजनाओं, जैसे रेल संपर्क और ऊर्जा सहयोग, ने संबंधों को मजबूत करने में मदद की है। 1990 से अब तक भारत–नेपाल संबंध कई महत्वपूर्ण दौर से गुजरे हैं– लोकतांत्रिक बदलाव, संवैधानिक विवाद, आर्थिक सहयोग और क्षेत्रीय भू–राजनीति। वर्तमान में, भारत और नेपाल को पारस्परिक विश्वास को मजबूत करने, आर्थिक सहयोग बढ़ाने और आपसी मतभेदों को संवाद के माध्यम से हल करने की आवश्यकता है। भारत–नेपाल संबंधों का भविष्य इस बात पर निर्भर करेगा कि दोनों देश किस प्रकार अपने ऐतिहासिक और रणनीतिक संबंधों को संतुलित रखते है। भारत–नेपाल के बीच सांस्कृतिक संबंधों का एक विस्तृत इतिहास है। नेपाल भारत के आर्थिक और सामरिक हितों के लिए महत्वपूर्ण है। एक मैत्रीपूर्ण सहयोगी नेपाल, भारत और आक्रामक चीन के बीच एक बफर के रूप में कार्य कर सकता है। भारत सरकार को नेपाल में नए नेतृत्व के साथ रचनात्मक रूप से जुड़ना चाहिए और विभिन्न क्षेत्रों में सहयोग बढ़ाने की दिशा में कार्य करना चाहिए। इससे भारत के दीर्घकालिक हितों को लाभ होगा।

संदर्भ ग्रन्थ सूची-

- भारत–नेपाल शान्ति तथा मैत्री सन्धि 31 जुलाई 1950
- प्रो. नवीन मिश्रा, नेपाल–भारत सम्बन्ध, कुछ बात है कि हस्ती मिटती नहीं
- M.S.N. Menon (April 5, 2002). "Little goodwill for Nepal in India". The Tribune, India. Retrieved October 17, 2015.
- Dick Hodder, Sarah J. Lloyd, Keith Stanley McLachlan. Land-locked States of Africa and Asia. page 177. Routledge, 1998. ISBN 0-7146-4829-9

UGC Journal No. (Old) 2138
Peer-Reviewed Research Journal
Impact Factor 6.375, ISSN 0975-4083
Vol.- 28, Hindi Edition, Year-14, March 2025

महात्मा गाँधी की राजनीतिक दृष्टि

• संतोष यादव
•• रश्मि सोमवंशी

सारांश- तत्कालीन राजनीतिक वातावरण में गाँधीजी की राजनीतिक दृष्टि का महत्वपूर्ण स्रोत तत्कालीन राजनीतिक वातावरण था। दूसरी ओर समाज में वैधानिक क्रांति व तकनीकी परिवर्तन ने देश में चारों ओर व्यक्तिगत एवं सामाजिक स्तर पर बढ़ती हिंसा व प्रतिस्पर्धा ने नैतिक एवं मानवीय मूल्यों को विस्मृत कर जीवन को अस्थिर एवं असुरक्षित बना दिया था, आज के युवा वर्ग में उतरजीविता का चारों ओर संकट एक विश्वव्यापी चिंता का विषय बन चुका है। आज विश्व के समक्ष कई समस्याएँ सिर उठाये खड़ी है। राजनीतिक दृष्टि से गाँधीजी के सामाजिक एवं राजनीतिक दृष्टि से वर्तमान समस्याओं में सझाव किया जा सकता है। दर्शन को प्रभावित करने में उनसे पूर्व के भी राष्ट्रीय आन्दोलन के नेताओं का प्रभाव था।

मुख्य शब्द- समाज, राजनीतिक वातावरण, देश प्रेमी, विश्व पर संकट, समाज का दर्पण

जिस भूमि पर महात्मा गाँधी का जन्म हुआ था वह भारत है। महात्मा गाँधी एक सच्चे देशभक्त थे। गाँधी जी केवल भारत के लिए ही नहीं अपितु एक मानवता के लिए प्रेम व राष्ट्र रूपी एवं देशभक्ति के लिए हमेशा तत्पर हुये थे। गाँधी जी ने अनेक अत्याचार, शोषण, शक्ति, क्या कुछ नहीं सहा, वो लोगों को हमेशा सत्य व अहिंसा का आश्रय देते रहे। गाँधी जी भारत के लिए हमेशा कुछ न कुछ कार्य करने में लगे ही रहते रहे थे। उन्होंने भारत को एक नयी पहचान दिलायी।

महात्मा गाँधी ने कहा था कि स्वराज्य से मेरा अभिप्राय यह है कि लोक समाज के अनुसार भारत में होने वाला भारतवर्ष का शासन भारत का मान सम्मान तभी हो जब भारत के छोटे से छोटे, बड़े से बड़े लोगों तक का साथ हो, फिर वे चाहे स्त्रियाँ हो या पुरूष इस देश के हों या फिर इस देश में आकर बसे हो। गाँधीजी ने कहा था कि वे लोग ऐसे होने चाहिए, जिन्होंने अपनी मेहनत व श्रम के द्वारा राज्य की कछ सेवा प्रदान की हो और जिन्होंने मतदाताओं की सूची में अपना नाम लिखवाया हो।[1] सच्चा देश थोड़े से लोगों के द्वारा ही सत्ता प्राप्त कर लेने से ही नहीं अपितु जब शासन व शक्ति का दुरूपयोग होता हुआ दिखाई दे तो सब लोगों को मिलकर उसके प्रतिकार करने की क्षमता प्राप्त करके हासिल किया जा सकता है।[2]

• शोधार्थी, राजनीति विज्ञान विभाग, लॉर्ड्स विश्वविद्यालय, अलवर
•• शोध निर्देशक, राजनीति विज्ञान संकाय, लॉर्ड्स विश्वविद्यालय, अलवर

धर्मशास्त्र का और धर्म का समाज में महत्व बहुत ज्यादा है, पर इतना ही साथ मनुष्य को बचाने के लिए ही काफी नहीं होता है। संकट के समय जो चीज मनुष्य को बचाती है। उसका उस समय न तो, उसका भाव होता है और न साथ लेकिन जब मनुष्य कोई गलती करता है, तो तभी ही मनुष्य को उच्च ज्ञान की प्राप्ति होती है। जब संकट के समय धर्म का साथ होता है, तब परिणाम मिलने के बाद बोलते हैं ईश्वर ने ही बचाया है। परिणाम के बाद वह यह अनुमान कर लेता है कि धर्मों के अभ्यास से ईश्वर उसके ह्रदय में ही प्रकट हो जाता है।[3]

गाँधीजी ने कहा था कि जब मैं विलायत गया था, उस समय मुझे जो दुख हुआ वो जो विचार मन में आये, लेकिन जब दक्षिण अफ्रीका गया तब मुझे कोई शंका नहीं हुई, पर मुझे कोई और यात्रा का अच्छा अनुभव हो गया था। राजकोट और बम्बई के बीच जो आना-जाना ही लगा रहता था, लेकिन जब मैं कभी भी बाहर जाता तो परिवार वाले दुखी हो जाते थे। इस बार दुख केवल पत्नी का ही था। गाँधीजी ने कहा था कि जब मैं विलायत से आया तो मुझे एक और बच्चे की प्राप्ति हुई थी, लेकिन मेरे विलायत से लौटने के बाद हम दोनों का साथ कम ही रह पाया था और शिक्षक की तरह मेरी योग्यता जो भी रही हो, परन्तु अपनी पत्नी का शिक्षक बना और उन्होंने अपनी पत्नी में जो भी सुधार करवाया पर अफ्रीका मुझे अपनी तरफ खींच रहा था।[4]

भारत के स्वाधीनता दिवस पर जो आज देश की कैसी दुर्दशा है? किस तरह से महात्मा गाँधी जी के संकल्प, उनका प्रतिफल, उनकी देश रूपी शासन आदि का किस तरह से भावना चूर-चूर हो रही है, लेकिन कोई भी संवेदनशीलता इसे प्रत्यक्ष रूप से अनुभव नहीं कर पा रही है। इसमें तो प्रमाण की आवश्यकता है, लेकिन महात्मा गाँधी जी ने इस देश के लिए क्या कुछ नहीं करवाया था। लोगों को देश प्रेम के बारे में बताया था, हर व्यक्ति को स्वतंत्रता का अधिकार दिलाया, हिंसा व धर्म के बीच मतभेद चल रहे, विवादों का समाधान करवाया।

अंग्रेजों का साम्राज्य हिलाने वाले महात्मा गाँधी जी "करो या मरो" के प्रदाता, राजनीति, प्रशासन, लोक-व्यवहार तथा हमें समग्र जीवन में उच्च नैतिक मूल्यों व ऊँचा दर्जा दिलाने वाले इस देश के महान पुरूष गाँधीजी को हमारे बीच से हटा दिया हैं, किन्तु आज भी अधिकतम लोगों की उम्मीदें व उनका प्रेम त्याग, उनकी वीरता आज भी हमारे बीच में हैं।[5]

जिन आदर्शों को लेकर हमने अंग्रेजों के विरूद्ध संघर्ष किया, उनमें मोहनदास कर्मचन्द गाँधी का योगदान महत्वपूर्ण है। उन्होंने सत्य, अहिंसा, अपरिग्रह, स्वराज्य, सत्याग्रह, सविनय अवज्ञा आन्दोलन अनेक सिद्धान्तों को अत्यधिक महत्वपूर्ण स्थान दिया। गाँधी के चिन्तन का महत्वपूर्ण कारण यह भी रहा है कि भारतीय स्वतंत्रता आन्दोलन को भारत की रूपरेखा में प्रतिष्ठित किया है। महात्मा गाँधी जी ने मानव कि समस्याओं से इतना लगाव लगा लिया था कि भारतीयों व इस देश रूपी महानता की एक हमेशा आगे का पंथ व मंजिल की राह दिखाते, महात्मा गाँधीजी के विचार कई इस तरह के भी उल्लेख मिले है, जैसे कि सामाजिक, आर्थिक, राजनीतिक आदि विचारों का वर्तमान में समावेश देखने को मिलता है।[6]

जिस समय भारत अपने राजनीतिक अधिकारों का संघर्ष करते हुये अपनी नीति की रूपरेखा व उसका मार्गदर्शन ढूँढ रहा था, तब महात्मा गाँधी ने दक्षिण अफ्रीका जाकर एक रणनीति का समाधान करवाया और उसके कार्य में सफलता प्राप्त करवायी। उन्होंने भारत के हर पहलू था राजनीति को एक नयी पहचान दिलायी। उन सब भारतवासी लोगों को सत्य, अहिंसा का भी पाठ पठाया। गाँधीजी ने दक्षिण अफ्रीका जाते समय वहाँ के लोगों की घृणा जो भारतीय महात्मा गाँधी जब दक्षिण अफ्रीका गये थे, तब उन्होंने देखा कि वहाँ के प्रवासी लोग कैसे काले व भूरे लोगों में मतभेद करते हैं। उन सब का महात्मा गाँधी ने घोर विरोध किया। गाँधीजी ने निष्क्रिय प्रतिरोध किया। इसे उन्होंने "सत्याग्रह" का नाम दिया था। महात्मा गाँधी जी ने बताया कि जो हमारे शरीर की एक आत्मशक्ति है।[7]

सर्वोदय सिद्धान्त गाँधी दर्शन की एक स्वाभाविक परनीति है। अहिंसा और सत्याग्रह का सर्वव्यापी स्मरण निश्चय ही एक नये समाज को जन्म देगा और वह समाज आज के वर्तमान युवा से सर्वश्रेष्ठ होगा, लेकिन उस समाज में वे सब बाते नहीं होगी जो मानव को कमजोर बना दे। गाँधीजी चाहते थे कि समाज में सब निश्चयपूर्वक समाधान हो जाये। वे हमेशा सोचते थे कि कुछ ऐसा हो जाये। जो एक बार में ही सम्पूर्ण भारत के लोगों पर एक छवि व एक नये उमंग की किरण छा जाये। महात्मा गाँधीजी को सन् 1940 में उनको एक पुस्तक हाथ लगी थी, जिसका नाम है, रस्किन की लिखी हुई।Unto This Last .[8]

इस समय तक भारत के राजनीतिक मंच पर महात्मा गाँधी का आगमन हो चुका था। महात्मा गाँधी जी चम्पारण के नीले व गोरे लोगों के विरूद्ध चलाये गये अभियान का समर्थन किया, उसके पश्चात् गुजरात के खेड़ा के सत्याग्रह में भी उनका पूरे तरीके से समर्थन किया। गाँधी जी ने जब वाइसराय को पत्र लिखा कि, सरकार ने मेरे लिए सत्याग्रह के अलावा और कोई रास्ता ही नहीं छोड़ा है, जिसमें पूरे भारत देश में आम हड़ताल करने, उपवास और प्रार्थना करना पूरे देश पर सभाओं का आयोजन करने के लिए, 30 मार्च सन् 1919 का दिन निश्चित कर दिया गया। महात्मा गाँधी ने अप्रैल को दिल्ली तथा अमृतसर के लिए रवाना हुये किन्तु तभी रास्ते में पलवल में ही गिरफ्तार कर लिये गये थे।9 गाँधीजी के जन्म के 150 वर्ष पूर्ण होने पर गाँधी को लेकर कई समारोह हुए। गाँधीजी को ऐसे समय में याद करना, जब सब जगह जो भारतीय समाज में धार्मिक, सामाजिक और आर्थिक विभाजन की शक्तियाँ प्राप्त है। तब महात्मा गाँधी समाज के विभिन्न समूहों और वर्गों को एक नया वातावरण और देश रूपी महानता इस सब की बातें अवश्य ही करते थे। गाँधीजी के पिता नंद चतुर्वेदी, जो एक कवि और सामाजिक प्रश्नों पर लगातार बातें किया करते थे। गाँधीजी के पिता ने गाँधीजी से पूछा कि गाँधी कितना पढ़ा है ? गाँधीजी बोलते हैं कि थोड़े से अधिक गाँधीजी के पिता और गाँधी के दोनों के बीच एक वार्तालाप हुई। गाँधी उसी के माध्यम से समझाना चाहते है कि जैसे समाज में व्यक्ति, धर्म, राज्य और अहिंसा की ताकत के बारे में कहते थे, गाँधीजी का तात्पर्य यह था कि विचार, जीवन व जीने पद्धति से लेकर व समाज संस्कृति और आर्थिक, से जुड़े होने के साथ-साथ उसका नैतिक व्यवहार मजबूत होना चाहिए।[10]

बिहार के चम्पारण जिले में अप्रैल, 1917 में महात्मा गाँधी ने अफ्रीका से लौटने के बाद पहला सत्याग्रह किया था। यह सत्याग्रह अंग्रेजों के बगान मालिकों के द्वारा

किसानों अत्याचार व शोषण के विरूद्ध किया गया था, और इसे नील आन्दोलन भी कहा जाता है। अंग्रेजों ने किसानों को नील की खेती करने की इजाजत दी, लेकिन जब नील के बाजारों में गिरावट आने लगी तो किसानों ने उत्पादन पर रोक लगा दी तथा किसानों को मजबूर होकर उनकी कीमतों में और ज्यादा मुनाफा कम कर दिया गया।[11]

गाँधी महात्मा की कॉग्रेस ने सारे देश को एक नया जीवन दिया। भारत के इतिहास में एक नए युग का उद्भव हुआ। महात्मा गाँधी ने समाज में निर्बल, क्रोधपूर्ण और देश प्रेमी प्रार्थना पत्र, सत्य, हिंसा व स्वावलम्बन की नई भावना जगायी। सर्वप्रथम बहिष्कार को समाप्त किया जाये। उसके अन्तर्गत स्कूल, कॉलेजों, न्यायालयों आदि को अंग्रेजों के द्वारा निलंबित किया गया। समाज के अधिकांश लोग महात्मा गाँधी को बिना बताये ही असहयोग आन्दोलन में भाग लेने लगे।[12]

मोहनदास कर्मचन्द गाँधी का जन्म 2 अक्टुबर 1869 को गुजरात के पोरबंदर नामक स्थान पर हुआ। उस समय पर भारत पर अंग्रेजों का शासन था, लेकिन यह माना जाता था कि अंग्रेजों का सूर्य भारत से पहले अस्त नहीं होगा, किन्तु महात्मा गाँधी का जब आन्दोलन चला तो सबकुछ अंग्रेजों का शासन समाप्त कर दिया। महात्मा गाँधी अपनी जाति के वफादार, सच्चे ईमानदार, साहसी और उच्च गुणवता वाले विद्वान थे। सन् 1876 में गाँधी अपने माता-पिता के साथ राजकोट चले गए।[13]

संदर्भ ग्रन्थ सूची-

1. डॉ. चतुर्वेदी सत्येन्द्र, "लोक-समाज एवं राजनीति", पं. जवाहरलाल नेहरू, बाल साहित्य अकादमी, राजस्थान, जयपुर, पृष्ठ-78.
2. गाँधी, महात्मा "मेरे सपनों का भारत", मोहनदास करमचन्द गाँधी, पृष्ठ 12.
3. गाँधी, महात्मा "सत्य के प्रयोग मेरी आत्मकथा", अरिहन्त पब्लिशर्स एवं डिस्ट्रीब्यूटर्स, टोंक फाटक, जयपुर, राजस्थान, पृष्ठ 21.
4. गाँधी, मोहनदास कर्मचन्द "सत्य के प्रयोग अथवा आत्मकथा", मलिक एण्ड कम्पनी, जयपुर, पृष्ठ-71.
5. डॉ. चतुर्वेदी सत्येन्द्र, "लोक-समाज एवं राजनीति", पं. जवाहरलाल नेहरू, बाल साहित्य अकादमी, राजस्थान, जयपुर, पृष्ठ-21.
6. "गाँधी चिन्तन", कमल, के.एल. जयपुर पब्लिशिंग हाउस, जयपुर, पृष्ठ-7.
7. "गाँधी : पुनर्यात्रा", पूनिया, डॉ. प्रमिला पं. जवाहरलाल नेहरू, लाल साहित्य अकादमी, राजस्थान, जयपुर पृष्ठ-13.
8. "गाँधीजी का दर्शन", नेमा, डॉ.जी.पी. प्रतापसिंह, रिसर्च पब्लिकेशन्स, जयपुर, पृष्ठ-104.
9. मिगलानी लता "कॉंग्रेस और गाँधीजी" पं. जवाहरलाल नेहरू, लाल साहित्य अकादमी, राजस्थान, जयपुर, पृष्ठ-19.
10. "गाँधी दृष्टि", जोशी, डॉ. प्रमोद राजस्थान हिन्दी ग्रन्थ अकादमी, जयपुर, पृष्ठ 75.
11. "महात्मा गाँधी सर्वोदय दर्शन एवं समग्र", राजेन्द्र मोहन शर्मा, पिंकसिटी, पब्लिशर्स, जयपुर, पृष्ठ 97.
12. प्रतापसिंह, "गाँधीजी का दर्शन", रिसर्च पब्लिकेशन्स, नई दिल्ली, पृष्ठ 23.
13. धर्मवीर, डॉ. चन्देल, "गाँधी चिन्तन के पक्ष", हिन्दी ग्रन्थ अकादमी, जयपुर, पृष्ठ-1.16.

UGC Journal No. (Old) 2138
Peer-Reviewed Research Journal
Impact Factor 6.375, ISSN 0975-4083
Vol.- 28, Hindi Edition, Year-14, March 2025

धर्मनिरपेक्षता का प्राचीन भारत में ऐतिहासिक अध्ययन

• अमोल कुमार

सारांश- प्राचीन भारत में धर्मनिरपेक्षता के स्वरूप को प्रकट करने के लिए धर्म शब्द के वास्तविक अर्थ को समझना आवश्यक है। प्राचीन काल में भारत के ऋषियों-मुनियों और सन्त महात्माओं ने मानव जीवन के सूक्ष्मतम पहलुओं का अध्ययन किया और उसके बारे में एक आदर्श दृष्टिकोण का निर्माण किया। इस दृष्टिकोण को उन्होंने धर्म की संज्ञा दी। धर्म शब्द अंग्रेजी में प्रयोग होनेवाले 'रिलिजन' या 'फारसी' के 'मजहब' शब्द का पर्याय नहीं है। धर्म शब्द एक ऐसा भाव है जिसका सम्बन्ध किसी व्यक्ति, जाति या समाज विशेष से नहीं, बल्कि मानव मात्र की जीवन व्यवस्था से है। धर्म 'धृ' धातु से बना है, जिसका अर्थ धारण करना, बनाये रखना, पुष्ट करना। जो धारण करता है वही धर्म है। इसमें इन गुणों अथवा लक्षणों को बोध होता है, जो किसी वस्तु के स्वरूप को धारण करता है। इस तथ्य का ज्ञान ही धर्म का सर्वस्वीकृति मूल सिद्धांत है। शांतिपर्व में धर्म व्याख्या करते हुए बताया गया है कि जो अपने मन, वचन और कर्म से निरन्तर दूसरों के कल्याण में लगा रहता है और जो सदा दूसरों का मित्र रहता है वह धर्म को सही ढंग से समझता है। महाभारत के उद्योग पर्व में उस कर्म-नियम और आचार को धर्म माना गया है, जिससे लोक का समन्वय बना रहे और व्यक्ति तथा समजा एक दूसरे के पूरक बनकर उन्नति की ओर बढ़ते रहे। आध्यात्म विद्या के अर्थ में धर्म का अभिप्राय किसी वस्तु की मूल प्रकृति से है। धर्मनिरपेक्षता का अर्थ यह नहीं है कि वह धार्मिक मामलों में हस्तक्षेप नही कर सकता बल्कि इसका आर्थिक अर्थ यह है कि राज्य सभी धर्मो के प्रति समान व्यवहार करेगा तथा किसी धर्म के आन्तरिक मामलों में हस्तक्षेप नही करेगा लेकिन आवश्यकतानुसार, सामाजिक समरसता स्थापित करने के लिऐ समुचित हस्तक्षेप कर सकता है।

मुख्य शब्द- धर्मनिरपेक्षता, धर्म, जीवन, दृष्टिकोण, कल्याण

भारत की प्राचीन संस्कृति एवं उसका इतिहास इस बात का साक्षी है कि भारत द्वारा विभिन्न भाषाओं एवं धर्मों को मानने वालों को पूर्ण श्रद्धा, प्रेम और सौहार्द के साथ गले लगाया गया तथा उन्हें अपने रीति-रिवाज, आचार-विचार एवं धर्म के अनुपालन में पूरी स्वतंत्रता प्राप्त रही है। धर्मनिरपेक्षता के बिना प्रजातंत्र जीवित नहीं रह सकता। भारतीय संस्कृति का पांच हजार से भी अधिक वर्षों का इतिहास रहा है। आर्य जो कि

• सहायक प्राध्यापक (अतिथि), प्राचीन भारतीय एवं एशियन अध्ययन विभाग, रामेश्वरदास पन्नालाल महिला, महाविद्यालय, पटना सिटी-09, पाटलिपुत्र विश्वविद्यालय, पटना -20

विदेशी थे और भारत के मूल निवासी द्रविणों के बीच एक लम्बा संघर्ष आरंभ हुआ। दोनों के दृष्टिकोणों एंव संस्कृतियों और सभ्यताओं में संघर्ष रहा तथा कुछ समय पश्चात् आर्यों ने पूरे देश पर विजय प्राप्त कर ली।[1] आर्यों ने पराजित प्रतिद्वन्द्वियों के धर्मों को घृणा की दृष्टि से नहीं देखा। प्राकृतिक शक्तियों तथा परिवर्तनशील प्राकृतिक दृश्यों के रूप में प्रचलित अनेक देवी-देवताओं तथा भूतप्रेतों को आर्यों ने अपनाकर अपने देवी-देवताओं के साथ बैठाया। धीरे-धीरे निगम आगम धर्मों के समन्वित रूप में हिन्दू धर्म ने प्रगति की। भारत में सांस्कृति विविधता सदियों से विद्यमान रही है जिसके कारण भारत को विश्व में एक विशिष्ट पहचान मिली है।

अतएव इन परिप्रेक्ष्यों को देखते हुए हम यह पाते हैं कि धर्मनिरपेक्षता के ऐतिहासिक अध्ययन को आधारशिला बनाया गया है। इसलिए कि विषय की प्राचीनता को देखते हुए यह अध्ययन अत्यन्त समीचीन प्रीतत होता है। भारतीय समाज में धर्मनिरपेक्षता के क्रियाकलाप में कुछ ऐसे दोष हे जिनसे यहां साम्प्रदायिकता तनाव को प्रोत्साहन आम भिन्न है। वर्तमान स्थिति यह है कि भारत में हिन्दुओं, मुसलमानों तााि ईसाईयों के लिए सामाजिक कानून पृथक-पृथक है।[2] इसके फलस्वरूप विभिनन धार्मिक समूहों में ना केवल सामाजिक दूरी बनी रहती है बल्कि सभी धार्मिक समूहों का यह पर्यत्न रहता है कि वे धर्म के आधार पर अधिक से अधिक संगठित होकर अपने लिए एक पृथक सामाजिक व्यवस्था की मांग कर सके। इसके फलस्वरूप हमारा राष्ट्र मूल रूप से ही अनेक आत्मकेन्द्रित टुकड़ों में विभाजित हो जाता है।

प्राचीन भारत में धर्मनिरपेक्षता के स्वरूप को प्रकट करने के लिए धर्म शब्द के वास्तविक अर्थ को समझना आवश्यक है। प्राचीन काल में भारत के ऋषियों-मुनियों और सन्त महात्माओं ने मानव जीवन के सूक्ष्मतम पहलुओं का अध्ययन किया और उसके बारे में एक आदर्श दृष्टिकोण का निर्माण किया। इस दृष्टिकोण को उन्होंने धर्म की संज्ञा दी । धर्म शब्द अंग्रेजी में प्रयोग होनेवाले 'रिलिजन' या 'फारसी' के 'मजहब' शब्द का पर्याय नहीं है। धर्म शब्द एक ऐसा भाव है जिसका सम्बन्ध किसी व्यक्ति, जाति या समाज विशेष से नहीं, बल्कि मानव मात्र की जीवन व्यवस्था से है। धर्म 'धृ' धातु से बना है, जिसका अर्थ धारण करना, बनाये रखना, पुष्ट करना। जो धारण करता है वही धर्म है। इसमें इन गुणों अथवा लक्षणों को बोध होता है, जो किसी वस्तु के स्वरूप को धारण करता है। शांतिपर्व में धर्म व्याख्या करते हुए बताया गया है कि "जो अपने मन, वचन और कर्म से निरन्तर दूसरों के कल्याण में लगा रहता है और जो सदा दूसरों का मित्र रहता है वह धर्म को सही ढंग से समझता है। महाभारत के उद्योग पर्व में उस कर्म-नियम और आचार को धर्म माना गया है, जिससे लोक का समन्वय बना रहे और व्यक्ति तथा समजा एक दूसरे के पूरक बनकर उन्नति की ओर बढ़ते रहे। आध्यात्म विद्या के अर्थ में धर्म का अभिप्राय किसी वस्तु की मूल प्रकृति से है।

भारत को अपनी सनातन परम्परा की विरासत में धर्म और राजधर्म दोनों ही एक साथ मिले थे। धर्म का प्रचार-प्रसार राजधर्म का कर्तव्य माना जाता रहा और राजधर्म का पालन प्रजा धर्म की सुरक्षा था। डॉ. फाड़िया का कथन है कि "प्राचीन भारत में राज्य पर धर्म का प्रभाव अवश्य परिलक्षित होता है। साधारणतया राजा पर धर्म का अंकुश रहता

था।"[3] धर्म और राजधर्म प्राचीन राजव्यवस्था को चलाने का एक महत्वपूर्ण शास्त्र था। राजा मुख्यत: युद्ध का नेता माना जाता था। प्रजा के दिलों में राजा के लिए बड़ा आदर होता था। राजा प्रजा को अपनी संतान मानता था। वह उतना ही धर्म के अधीन होता था जितना कि प्रजा होती थी। वह धर्म को प्रोत्साहन देने ओर प्रवर्तित करने के लिए बाध्य होता था। आक्रमणों से प्रजा की सुरक्षा करने के साथ-साथ ग्रन्थों के अनुरूप सामाजिक व्यवस्था, समस्त वर्गों तथा अवस्थाओं की उचित जीवन प्रणाली को लगू करना राजा का कर्तव्य होता था।[4] भारत में हमेशा से ही राजतंत्र नहीं रहा है। यहां वर्षों तक ऐसे क्षेत्र थे जहां जनता के प्रत्येक सदस्य को शासन के मामले में अपनी सम्मति देने का अधिकार था। पौराणिक साहित्य भी इस बात के साक्षी है कि उस समय सभा और समिति नाम की संस्थाएं होती थी। सभा का सदस्य ही सभ्य कहलाता था, जिससे सभ्यता की कल्पना प्रारंभ हुई। वे लोग असभ्य कहलाते थे, जो किसी सभा के शासन में नहीं होते थे, जिनका कोई सभापति नहीं होता था।[5]

भारतीय समाज एक बहुधर्मी समाज है जहां पर विभिन्न धर्मो का एक साथ समान रूप से महत्व पाया जाता है। लेकिन धर्म व्यक्ति के लिए आस्था का ऐसा विषय बन जाता है कि लोग उसकों स्वयं में एक सम्प्रदाय के दृष्टिकोण से देखने लगते है। उसको देखने का जो नजरिया होता है कि वह बहुत संकीर्ण होता जा रहा है। भारत आज से ही नही बल्कि प्राचीन काल से ही एक धर्मनिरपेक्ष देश रहा है। लेकिन विगत कुछ दशकों से धर्मनिपेक्षता से सम्बन्धित एक ऐसी बहस चली है कि जनमानस को फिर से सोचने पर मजबूर कर दिया है।[6] इसी सन्दर्भ में धर्मनिरपेक्षता को परिभाषित करने से पूर्व यह स्पष्ट करना अधिक महत्वपूर्ण होगा कि धर्म क्या है, क्योकि विभिन्न सामाजिक वैज्ञानिकों के मतो में धर्म को लेकर विभिन्नताएं देखने को मिलती है। धर्म को एक अनुभव सम्बन्धित कार्य मानते है जो हमें समझने के तरीके से अवगत कराता है तथा एक सामाजिक तथ्य है वही पाश्चात्य समाज में धर्म एवं राजनीति का जो पृथक्करण प्रचलित हुआ वह भारत में संभव प्रतीत नहीं होता क्योंकि आधुनिक भारतीय सभ्यता तत्कालीन पाश्चात्य सभ्यता से भिन्न है जब वहाँ धर्मनिरपेक्षता का सिद्धान्त प्रतिपादित हुआ था। अत: भारत में धर्मनिरपेक्षता राज्य के आधार के रूप में पृथक्करण के पश्चिमी सिद्धान्त का पुर्नमूल्यांकन आवश्यक है क्योंकि यहाँ की विभिन्न स्थितियाँ अपनी विशिष्ट कठिनाइयों के साथ रचनात्मक दृष्टिकोण की माँग करती है। भारत में धर्मनिरपेक्षता की माँग है कि राजनीति व धर्म के मध्य घनिष्ठ सम्बन्ध ना हो, क्योंकि ऐसा सामान्यत: सांप्रदायिक राजनीति के दिखता है। यही कारण है कि धर्मनिरपेक्षता के प्रति भारतीय दृष्टिकोण सर्वधर्म समभाव का रहा है।[7]

अगर व्यवहारिक रूप से देखा जाए तो धर्मनिरपेक्ष के प्रश्न पर बहुसंख्यक एवं अल्पसंख्यक के विचार परस्पर विरोधी परिलक्षित होते है, जहाँ बहुसंख्यक इसे अल्पसंख्यकों के प्रति तुष्टीकरण की नीति मानते है, वही अल्पसंख्यक इसे छलवापूर्ण धर्मनिरपेक्षता के रूप स्वीकार करते है, उनका मानना है कि यह उनके अधिकारों का संरक्षण करता है। वस्तुत: धर्मनिरपेक्षता के सिद्धान्त की सकारात्मक व्याख्या तथा क्रियान्वयन नही होने के कारण इसकी निहित स्वार्थ के आधार पर आलोचना की जाती

रही है। ऐसा होने से एक तरफ तो सम्प्रदायवाद को बढ़ावा मिलता है वहीं दूसरी तरफ भारतीय धर्मनिरपेक्षता पर भी निरंतर खतरे में बादल मंडराते नजर आते है।[8]

धर्मनिरपेक्षता आधुनिक लोकतांत्रिक राज्यों की एक महत्वपूर्ण पहचान है जिसके द्वारा वह राज्य के प्रचलित सभी धर्मो के सभी नागरिकों को समान धार्मिक अधिकार प्रदान करते है जिससे प्रत्येक धार्मिक समुदाय के लोग अपनी–अपनी धार्मिक मान्यताओं के अनुरूप अपना धार्मिक आचरण स्वतंत्र रूप से कर सके तथा बिना किसी आन्तरिक या बाह्य हस्तक्षेप के अपनी धार्मिक स्वतंत्रता का उपयोग कर सके, लेकिन इसके साथ ही साथ उन्हे यह अधिकार भी प्राप्त नही है कि वह अपनी धार्मिक मान्यताओं को पूरा करने के लिये किसी दूसरे धर्म की मान्यताओं का अनादर करे, यदि वह ऐसा करते है तो राज्य को इस परस्थिति में हस्तक्षेप करते सामजंस्य स्थापित करने का अधिकार प्राप्त है। धर्मनिरपेक्षता का अर्थ यह नहीं है कि वह धार्मिक मामलों में हस्तक्षेप नही कर सकता बल्कि इसका आर्थिक अर्थ यह है कि राज्य सभी धर्मो के प्रति समान व्यवहार करेगा तथा किसी धर्म के आन्तरिक मामलों में हस्तक्षेप नही करेगा लेकिन आवश्यकतानुसार, सामाजिक समरसता स्थापित करने के लिऐ समुचित हस्तक्षेप कर सकता है।[9]

धर्मनिरपेक्षता अपने सकारात्मक रूप में वह सिद्धांत है जो यह स्वीकार करता है कि धर्म देशकाल की समीाओं से परे है किन्तु जब धर्म पर मजहबी धूल चढ़ने लगी, तब धर्म अपने विकृता अवस्था को प्राप्त हो मनुष्य का उत्कर्ष करने के बजाय उसके अपकर्ष में लग गया। इस प्रकार मनुष्य मजहबी दलदल में फंसता गया और क्रोध, द्वेष, ईर्ष्या को धारण करता गया, जिसके फलस्वरूप वह नैतिक बुलन्दियों से गिरकर अपने निकृष्टतम धरातल को प्राप्त हुआ। मजहबी झगड़ों ने अपने शिखर को छू लिया है, नफरत के अंकुर फूटने लगे हैं, चारों तरफ भय एवं अशांति का वातावरण छा गया है।[10] इन सब से कुंठित हो मनुष्य ने अपने सच्चे रूप को खोजना प्रारंभ किया है। कर्मकाण्डी धर्म के स्थान पर मूल्यपरक धर्म, मानववाद को महत्व प्राप्त होने लगा है। महात्मा गांधी, रवीन्द्र नाथ टैगोर, डॉ. सर्वपल्ली राधाकृष्णन, विनोवा भावे, स्वामी विवेकानन्द आदि ने इन परिस्थितियों को देखते हुए सभी पार्थिक धर्मों को एक मंच पर लाने का प्रयास किया, ताकि मजहब एवं मजहब की दूरी को, व्यक्ति और व्यक्ति के दिलों की दूरी को कम किया जा सके। लेकिन धर्मनिरपेक्षता के बावजूद भी साम्प्रदायिकता, संकीर्ण राष्ट्रवाद की अवधारणा, आतंकवाद, असमानता, विषममता जैसी समस्याएं भारत में सर उठाने लगी है।[11] इन सभी में साम्प्रदायिकता एक विकट समस्या है। साम्प्रदायिकता दो धार्मिक गुओं के मध्य संकीर्ण धार्मिक मान्यताओं से उत्पन्न ऐसी परिस्थिति है, जिसमें ये गुट अपने धार्मिक हितों को प्रधानता देने के लिए तथा अपने धर्म का वर्चस्व कायम रखने के लिए जान की परवाह नहीं करते है।

वैश्वीकरण के युग में भी धर्मनिरपेक्षता तथा सामाजिक न्याय जैसी मान्यताएं बीते युग की बात प्रतीत नहीं हो रही है। इन संकल्पनाओं का चिरकाल तक नवीन बने रहना इस बात को परिलक्षित करता है कि ये मान्यताएं सामाजिकता के विकास और मानव की सुसंगति प्रगति के लिए न केवल आवश्यक है बल्कि महत्वपूर्ण भी है। इसमें

कोई संदेह नही कि यदि राज्य और समाज के मूलाधार की पथभ्रष्टता को दुरूस्त करना है और व्यवस्था की बन्द हो चुकी धमनियो में फिर रक्त संचालन करना है,[12] तो बहुत से विजातीय तत्वों की सफाई करके स्वस्थ समाज की स्थापना आवश्यक है। हिन्दुत्व के साथ बुनियादी सिद्धांत मुक्ति, उर्वरता, समता और न्याय के संवैधानिक लक्ष्यों के बिल्कुल अनुरूप है। वास्तव में ये इन लक्ष्यों के लिए आध्यात्मिक आधार प्रदान करते हैं। जहां तक समानता के लक्ष्य का सवाल है अगर एक व्यक्ति में दिव्य भाव है और दूसरे में भी वैसा ही दिव्य भाव विद्यमान है तो वे दोनों समान ही होंगे। अगर भारत के जनमानस को फिर से चेतन करना है और सामाजिक तथा राजनीतिक व्यवस्था को पटरी पर लाना है तो धार्मिक तंत्र में सुधार आवश्यक है।[13]

अब यह सवाल उठता है कि यह परिवर्तन कौन लायेगा जिसमें धर्मनिरपेक्षता का क्रियान्वयन द्रुत गति से हो सके और वास्तविकता के धरातल पर इनमें सही समायोजन स्थापित किया जा सकें। जहां एक तरफ पंथनिरपेक्षता न केवल इस देश की राजनीति की बुनियाद, बल्कि आर्थिक और सामाजिक विकास की पहली शर्त भी है। वही दूसरी तरफ सामाजिक न्याय एक बहुआयामी संकल्पना है जो कल्याणकारी राज्य के लक्ष्य को स्थापित करके समाज को निष्पक्ष रूप से व्यवस्थित करता है। भारत का संविधान अपने प्रत्येक नागरिक को सामाजिक, राजनीतिक और धार्मिक समानता की दृष्टि प्रदान करता है।14

इस प्रकार सविधान द्वारा भारत को एक धर्मनिरपेक्ष राज्य घोषित किया गया है। अनेक संस्कृतियों को स्वयं में आत्मसात् करने वाला देश भारत सिद्धांत एवं व्यवहार दोनों में प्रजावत्सल रहा है। धर्म के आचरण तत्वों तथा मानव जीवन के मानवीय मूल्यों से ओतप्रोत भारतीय सभ्यता और संस्कृति विश्व में अपनी अद्वितीय पहचान बनाकर समाज, संस्कृति, आर्थिक व्यवस्था, धार्मिक व्यवस्था एवं राजनीति सभी क्षेत्रों में विकास के नये प्रमिानों को स्थापित किया है। भारत में संसार को धर्म दिया इसलिए वह महान कहलाता है। धर्म ही भारत की आत्मा है, सम्बल है।[15] भारत में सर्वधर्म सम्भाव का वातावरण है और एक धर्म दूसरे धर्म को यथोचित मान प्रतिष्ठा देता है।

भारत में दबाव की राजनीति और तुष्टिकरण की नीति ने प्रत्यक्षत: देश को धर्मनिरपेक्ष रखने में असफल बनाया और अन्तत: जब बहुसंख्यक हिन्दु नीति ने धर्मनिरपेक्षता के स्वरूप पर कठोर आघात करके इसे छद्म धर्मनिरपेक्षता का रूप बताया तो संसद में धर्म को राजनीति से अलग रखने का विधेयक पारित करने का प्रयास हुआ, जिसे बहुमत न मिलने के कारण असफलता मिली। प्रजातंत्र में राजनीतिक दलों में नैतिक मूल्यों का क्षरण तेजी से हो रहा है। जिसके कारण असंख्य राजनीतिक दल अपने दलगत हितों की साधना को लक्ष्य बनाकर राजनीति के लिए धर्म और पंथ का सहयोग लेते है। वास्तव में राजनीतिक दल किसी न किसी रूप में उन्माद पैदा करते है। धार्मिक उन्माद की लहर कभी-कभी इतनी तेज हो जाती है कि राष्ट्रध्वज पर भी प्रश्न चिन्ह् उपस्थित होने लगता है। ऐसा माना जाता है कि राष्ट्रध्वज किसी सत्ता का प्रतीक नहीं, राष्ट्र की सामुदायिक भावना का एक शीर्ष निशान है। उसका सम्मान अपने राष्ट्रीय समुदाय का ही सम्मान है।[16]

क्योंकि संविधान द्वारा धर्मनिरपेक्ष राज्य तो घोषित कर दिया है, लेकिन अभी तक धर्म निरपेक्ष समाज की स्थापना नहीं की जा सकी है। इसके लिये साम्प्रदायिकता और जातिवाद धर्म निरपेक्षता के मार्ग की सबसे बड़ी बाधायें है, क्योंकि धर्म का प्रयोग राजनीति में जहाँ एक और तनाव उत्पन्न करने के लिये किया जाता है, वही दूसरी और शक्ति प्राप्त करने का माध्यम भी धर्म को मान लिया जाता है। जनता से की जाने वाली अपीलें उन्हें दिये जाने वाले आश्वासनों, निर्वाचन में प्रत्याशियों के चयन तथा मतदान व्यवहार को प्रभावित करने में धर्म का राजनैतिक स्वरूप देखने को मिल रहा है और ये भारतीय राजनीति के स्वरूप को किसी न किसी रूप में प्रभावित भी कर रहा है, यथा मुस्लिम लीग, शिरोमणि अकाली दल, हिन्दू महासभा रामराज्य परिषद् आदि। राजनैतिक दलों के निर्माण में धार्मिक व सम्प्रदायिक तत्वों की महत्त्वपूर्ण भूमिका रही हैं। राजनैतिक दल जिस निर्वाचन क्षेत्र में जिस जाति के लोगों की संख्या ज्यादा है वे उस जाति के प्रत्याशी को ही चुनाव मैदान मे उतारते हैं। इस आधर पर प्रत्याशियों का मनोनयन किया जाता है। हिन्दुओं में ब्राहम्ण व राजपूत अपनी जातियों के उम्मीदवारों को चुनाव मैदान में उतारते हैं, इसमें कोई भी राजनैतिक दल पीछे नहीं रहना चाहता है।[17]

भारतीय धर्मनिरपेक्षता की परम्परा सकारात्मक रूप में सर्वधर्मसम्पन्नता का पोषण करती है। इस रूप में भारतीय धर्मनिरपेक्षता आयातित अवधारणा न होकर मूल अवधारणा है। सिन्धु घाटी सभ्यता काल में जिस वैज्ञानिक दृष्टिकोण, सद्भाव व सामंजस्य पर जोर दिया जाता था, वही भारत की धर्मनिरपेक्षता आज भी विद्यमान है। भारत की धर्मनिरपेक्षता की परम्परा प्राचीन, मध्यकालीन व आधुनिक काल की संस्कृतियों की विभिन्न विचारधाओं और विशिष्टताओं मसलन-सहिष्णुता, शान्ति, अहिंसा, सामंजस्य व समन्वय, निरन्तरता एवं विकास का सम्मिलित रूप हैं। हम जानते है कि साम्प्रदायिकता स्वयं में एक अभिशाप है किन्तु जब वह सत्ता का राजनीति के शस्त्र के रूप में प्रयुक्त की जाती है तो वह या तो विघटित हो जाती है या एक फासिस्ट राज्य को जन्म देती है। इसीलिये राजनेताओं को वोट बैंक का मोह छोडना होगा। धार्मिक नेताओं को अपने अनुयायियों की नैतिक और आध्यात्मिक उन्नति पर ही ध्यान केन्द्रित करना होगा।[18] सामप्रदायिक हिंसा और लूटमार को कठोरता से कुचलना होगा।

लेकिन सवाल यह है कि भारत में धर्मनिरपेक्षता सिर्फ पश्चिम से आयातित कोई वस्तु है या फिर इसकी जड़े भारत में भी रहीं है। धर्म के मामले में भारत की सभ्यता सबसे प्राचीन मानी जाती है। विश्व की सबसे पुरानी सभ्यताओं में मेसोपोटामिया की सभ्यता, चीन की सभ्यता और हड़प्पा मोहनजोदड़ों की सभ्यताओं को माना गया है। इन तीनों सभ्यताओं के धार्मिक क्रियाकलापों का अध्ययन करें तो हमें पता चलता है कि भारत धर्म के मामले में अपने समवर्ती सभी सभ्यताओं से आगे था।[19] धर्म की जितनी विशद और गहराई के साथ व्याख्या यहाँ के धर्मग्रन्थों में मिलता है, उतना हमें कहीं और नहीं देखने को मिलता है। यहाँ यूँ कहें तो भारतीय परम्परा में धर्म हमारे जीवन के संस्कार रहे हैं, धर्म के बिना यहाँ मानव जीवन की कल्पना ही नहीं की गयी है।

ऐसी परिस्थिति में स्वाभाविक था कि धर्म के प्रति आम लोगों की आस्था स्खलित हो और धर्म का भी विरोध हो। इसका परिणाम यह हुआ कि परम्परागत धार्मिक

विश्वासों की जड़े हिलने लगी और चर्च की सर्वाधिकारिता से मुक्ति पाने के लिए प्रयत्न होने लगे। विज्ञान, तर्क, दर्शन, साहित्य आदि क्षेत्रों में नई प्रतिमाएं प्रतिष्ठापित होने लगी। यह विचार प्रबल होने लगा कि मनुष्य मात्र की सत्ता ही महत्वपूर्ण है और उसके जीवन का सर्वांगीण विकास ही श्रेयस्कर है। ऐसी स्थिति में ऐसे मूल्यों की स्थापना होने लगी जो व्यक्ति या समाज के जीवन को दिशा प्रदान कर सके और उन्हें समुन्नत करने में सहायक सिद्ध हो सके। इस मूल्यपरक अभियान को ही धर्मनिरपेक्षतावाद की संज्ञा दी गयी और इसे मानवतावाद भी कहकर पुकारा गया,[20] अतः पाश्चात्य देशों की सर्वांगीण भौतिक उन्नति के साथ ही साथ उन्हें अपने जीवन को उदात्त बनाने का भी अवसर प्राप्त हुआ।

निष्कर्ष- हम इस निष्कर्ष पर पहुँचे है कि भारत में धर्मनिरपेक्षता का प्राचीन इतिहास में अहम भूमिका रहा है। जैसे कोई भी संस्था चाहे व चर्च हो गया राज्य पूर्ण रूप से दोष रहित होकर कार्य नहीं कर सकते। दोनों में कुछ न कुछ कमियां रही, इसीलिए एक दूसरे पर नियंत्रण का प्रयास हुआ। इस सिद्धान्त के प्रवर्तक तथा समर्थक यह बताने में असमर्थ रहे हैं कि चर्च के क्षेत्र में कौन से विषय आते हैं और राज्य के क्षेत्र में किन विषयों का समावेश होता है। चर्च और राज्य दोनों की ही इकाई मनुष्य है। धर्मनिरपेक्षता के भरतीय अर्थ पर पुनर्विचार की आवश्यकता अधिक प्रासंगिक और अनिवार्य हो गई है। क्योंकि भारतीय परंपरा और जन-मानस का गहन रूप से धार्मिक होना औपनिवेशिक शिक्षा पद्धति और औपनिवेशिक शासन की विभेदपूर्ण विरासत है जिनके कारण भारतीय समाज में धर्मनिरपेक्षता अपनी जड़े नही जमा सकी। इसलिए एक धर्म के अनुयायी और नागरिक के रूप में मनुष्य के आचरण के बीच पूर्ण पृथक्करण करना सम्भव नहीं है। अतः इन सारी समस्याओं से निजात पाने के लिए धर्मनिरपेक्षता की अवधारणा को आवश्यक माना गया तथा धर्म व राज्य के बीच उत्पन्न संघर्ष के समाधान का हल खोजने का प्रयास किया गया।

संदर्भ ग्रन्थ सूची-

1. न्यू लाईट आन दि मोस्ट ऐनशेंट ईस्ट, 1934, पृ. 220
2. डॉ. एम.पी.दुबे, धर्मनिरपेक्षता और भारतीय प्रजातंत्र, नेशनल पब्लिसिंग हाउस, नई दिल्ली, पृ. 27
3. गोपी नाथ कालभोर, धर्मनिरपेक्षता और राष्ट्रीय एकता, ज्योति प्रकाशन, जयपुर, पृ. 15
4. भार्गव आर. एवं आचार्य ए.(2011) राजनीतिक सिद्धान्त एक परिचय, पीयरसन पब्लिकेशन, दिल्ली, पृ. 285
5. वही, पृ. 286
6. भार्गव आर. (1997) सेकुलरिज्म एंड इट्स क्रिटीक, ऑक्सफोर्ड यूनिवसिर्टी प्रेस दिल्ली।
7. दुर्खीम ई. (1912) द एलीमेन्ट्री फार्म आफ रिलीजियस लाईफ, लन्दन : जार्ज ऐलेन एवं अनविन लिमिटेड।
8. गांधी एम. के. (2009) सत्य के साथ मेरे प्रयोग, पाम लीफ प्रेस। आक्सफोर्ड एडवांस्ट लर्निंग डिक्शनरी ऑफ करेन्ट इंग्लिंग, ऑक्सफोर्ड यूनीवर्सिटी पब्लिकेशन, 1997.
9. सईद एम.एम.(2011), भारतीय राजनीतिक व्यवस्था, भारत बुक सेन्टर पब्लिकेशन, लखनऊ, पृ. 404

10. वही, पृ. 411
11. सिन्हा मनोज (2012) समकालीन भारत एक परिचय, ओरिपट ब्लैकस्वॉन पब्लिकेशन, पृ. 297
12. वही
13. श्रीनिवास एम.एन (1965) सोशल चेंज इन मार्डन इण्डिया, यूनिवर्सिटी कैलीफोर्निया प्रेस।
14. डॉ. एम.पी. दुबे, धर्मनिरपेक्षता और भारतीय प्रजातंत्र, नेशनल पब्लिसिंग हाउस, नई दिल्ली, पृ. 21
15. वही
16. वही
17. वही, पृ. 23
18. डॉ. राधाकृष्णन, धर्म और समाज, 1963, पृ. 160
19. भारतीय दर्शन, भाग 1, पृ. 21
20. हिन्दू न्यूज ऑफ लाइफ, 1949, पृ. 4

UGC Journal No. (Old) 2138
Peer-Reviewed Research Journal
Impact Factor 6.375, ISSN 0975-4083
Vol.- 28, Hindi Edition, Year-14, March 2025

प्राचीन भारतीय महानगरी चम्पा एवं दक्षिण पूर्व एशिया (सुवर्णभूमि) स्थित चम्पा : एक ऐतिहासिक विश्लेषण

• पवन शेखर

सारांश- सुदूर पूर्व दक्षिण एशियाई देशों (सुवर्णभूमि) की संस्कृति भारतीय विचारधारा, कला, स्थापत्य, साहित्य, दर्शन, धर्म इत्यादि सभी का संधात रहा है। पूर्व के देशों में, जहाँ भारतीय संस्कृति ने अपना व्यापक प्रभाव अध्योरोपित कर सभ्याता का परिष्कार किया उसमें केवल चीन ही स्वंय की सभ्यता एवं संस्कृति से परिपुष्ट था, परन्तु वावजूद इसके कि वह अपने प्राचीन इतिहास और चिरकालिक संस्कृति से युक्त होने पर भी उसने भारतीय धर्म, दर्शन और कला को ग्रहण किया। मुलतः इसका कारण सम्पर्क की नई सम्पदा के आकर्षण के साथ-साथ भारतीय दर्शन की अद्वितीय विशेषताएँ थी। इसी प्रक्रियामें दक्षिण पूर्व एशिया एवं सुवर्णभूमि के देशों के निवासियों के जीवन एवं संस्कृति को एक नये कलेवर के रूप में परिष्कृत करने में भारतीयों का अमूल्य एवं महानतम योगदान दिया है। अन्य क्षेत्रों की भाँति व्यापार के कारण इस भूखण्ड से भी भू एवं जलमार्ग द्वारा आवागमन की प्रक्रिया आरम्भ हुई और शीघ्र ही नियमित उपनिवेशीकरण के रूप में विकसित हो गई तथा भारतीयों ने दक्षिण पूर्व एशिया के देशों (सुवर्णभूमि) के विभिन्न क्षेत्रों में अपनी राजनीतिक सत्ता स्थापित कर वहाँ की संस्कृति का भारतीयकरण करने में सफलता प्राप्त की।

मुख्य शब्द- संस्कृति, विचारधारा, कला, स्थापत्य, साहित्य, दर्शन, धर्म

प्राचीन काल से ही भारतीयों ने जलमार्ग एवं जलमार्ग दोनों से ही इन क्षेत्रों की यात्रा सम्पन्न की थी। इसी क्रम में चिरकाल से ही पूर्वी भारत एवं चम्पा (वर्तमान अनाम) के बीच एक नियमित व्यापारिक मार्ग उपलब्ध था। वर्तमान अनाम का प्राचीन समय में भारतीय नाम चम्पा था। इसके साथ ही पूर्वी भारत के एक महानगर के रूप में अंग की राजधानी चम्पा भी इसी व्यापारिक मार्ग पर अवस्थित था। अंग का प्राचीन क्षेत्र वर्तमान बिहार राज्य के भागलपुर मुंगेर खगड़िया-बांका जिले तथा उसके आसपास का रहा है। इसकी राजधानी चम्पा प्राचीन महामार्ग उत्तरापथ एवं दक्षिणपथ दोनों महापथों से जुड़ा हुआ था। उत्तरापथ में स्थित वैशाली में श्रावस्तीवाला उत्तरी रास्ता और वाराणसी वाला दक्षिणी रास्ता आपस में मिल जाने थे, जहॉ से प्रधान रास्ता अंग की राजधारी चम्पा की ओर चला जाता था।[1] और चम्पा से कजंगल (कंकजोल, राजमहल, झारखण्ड), उत्तरी बंगाल में पुण्ड्रवर्धन होते हुए ताम्रलिप्रि पहुँचता था।[2] वलहस्स जातक में अंग क्षेत्र का

• सहायक प्राध्यापक विश्वविद्यालय प्राचीन भारतीय इतिहास, संस्कृति एवं पुरातत्त्व विभाग तिलकामांझी भागलपुर विश्वविद्यालय, भागलपुर

दक्षिण पूर्व एशिया के देशों के साथ व्यापार का उल्लेख है।[3] बनारस[4] "चम्पा"[5] और भृगुकच्छ[6] का सुवर्णभूमि के साथ धनिष्ठ व्यापारिक सम्बन्धों का उल्लेख भी विभिन्न जातकों में प्राप्त होते हैं। इस मार्ग से होने वाले व्यापार के कारण ने केवल उपरी वर्मा बल्कि इरावदी साल्विन मेकांग और लोहित नदी के उपरी घाटों वाले पर्वतीय भू-खण्डों में यूनान की सीमा तक भारतीय उपनिवेश स्थापित हुए। इसके अतिरिक्त भारतवासी चिंदवीन, इरावदी, सालवीन और मेकांग की घाटियों कें किनारे-किनारे दक्षिण की और बढ़े और उन्होने इण्डोचीन की पृष्ठभागों में विभिन्न हिन्दु राज्यों की स्थापना की। ईसा के आरम्भ में अथवा उसके थोड़े समय के पश्चात् जो प्रारम्भिक हिन्दु राज्य स्थापित हुए वे मलाया प्रायद्धीप, कम्बोडिया और अनाम (चम्पा) के प्रधान भू-भागों तक व्यापारिक रूप में विरस्तारित हुआ। इसी कारण से अशोक की मृत्यु के बाद वंग की राजधानी ताम्रलिप्ति हो गई शायद इसका कारण यह था कि वहीं पर महापथ समाप्त होगा था और उसका बन्दरगाह अन्तर्देशीय एवं अन्तर्राष्ट्रीय व्यापार के लिए प्रसिद्ध था।[7] इसके साथ ही जैन साहित्य में वर्णित मौर्य साम्राज्य की 25)भक्तियों[8] में अंग भक्ति और उसकी राजधानी चम्पा का दक्षिण पूर्व के साथ व्यापार और यात्रा मार्ग का उल्लेख है। कुरूक्षेत्र से होकर उत्तर पूर्व की ओर जाने वाले व्यापारिक मार्ग के उल्लेख के क्रम में हस्तिनापुर अहिच्छत्र, कुणाला, सेतव्या, श्रावस्ती, मिथिला, चम्पा और ताम्तलिप्ति का उल्लेख उत्तरापथ के प्रमुख अन्तर्राष्ट्रीय व्यापारिक केन्द्रों के रूप में किया गया है।

विगत कुछ वर्षों में अनेक पुरातात्विक साक्ष्य प्रकाश में आए हैं, जिससे दक्षिण तथा पूर्व एशियाई देशों में भारतीय संस्कृति के व्यापक प्रभाव के चिन्ह प्राप्त होते हैं। चम्पा के सन्दर्भ में कहा जा सकता है कि दक्षिण पूर्व एशिया में चम्पा भारतीय संस्कृति का एक दूरतम स्थान (Out Post) था, जहाँ भारतीय संस्कृति व्यापारिक मार्गों के साथ पहुँची और विकसित एवं पल्लवित हुई। अमरावती (कु-नाम), विजय (बिन्ह-दिन्ह), कौथरा (न्हा-तरंग), पांडुरंग (हान-रंग) जैसे स्थानों से प्राप्त विभिन्न कला एवं स्थापत्यगत अवशेष इसकी पुष्टि करते हैं। ब्राह्ण तथा बौद्ध धर्म से सम्बन्धित अनेक मन्दिर तथा प्रतिमाओं की प्राप्ति ने इस तथ्य को सिद्ध किया है कि चम्पा में भारतीय संस्कृति की जड़े काफी गहरी थी। पाँचवी शताब्दी के प्रथम चतुर्मास में भद्रेश्वर जेसे मन्दिरों के विकास से वहाँ भारतीय संस्कृति के विकास के महत्व को समझा जा सकता है। कलान्तर में शव और वैष्णव धर्म के विस्तार ने भारत और चम्पा के बीच संस्कृति एकसूत्रता को स्थापित करने का कार्य किया। इसकी पुष्टि अनेक पुरातात्विक स्थलों से प्राप्त विभिन्न अवशषों से हुई है जो उत्खननों एवं सवेंक्षणों के फलस्वरूप अद्यतन प्रकाश में आए हैं।

चम्पा (वर्तमान अनम या दक्षिणी विएत-नाम) के हिन्दू अथवा भारतीय राज्य और चमपा (भारतीय अंग क्षेत्र) को सम्बन्ध भी अति-प्राचीन है कुआंगनाम के दक्षिण में चम्पा की राजधानी चम्पानगरी अथवा चम्पापुर के भग्नावशेष आज भी अवस्थित हैं। चम्पा के भारतीयकरण के पूर्व ही व्यापार के सन्दर्भ में अंग के चमपावासियों को वहाँ की जानकारी हो चुकी थी। अथशास्त्र (2.2.28) के अनुसार सुर्वणकुड्या से तैलपर्णिक का सफेद या लाल चन्दन आता था। चम्पा और अनाम से सवसे अच्छा अगर आता था जिसे मगध एवं पूर्वी क्षेत्र (अंग एवं बंग) के व्यापारी वहाँ जाकर लाते थे।[9] चम्पा (अंग) के

व्यापारियों के सम्बन्ध में सानुदास की कथा अत्यन्त ही महत्वपूर्ण है।[10] सानुदास चम्पा के व्यापारी मित्रवर्मा का पुत्र था। बचपन में उसने अच्छी शिक्षा पायी थी, पर युवावस्था में कुसंगति के कारण वह वेश्यालय जाने का आदि हो गया। पिता की मृत्यु के बाद उसे श्रेष्ठि (व्यापारी संगठन का प्रमुख) नियुक्त किया गया, परन्तु अपनी गलत आदतों के कारण वह शीघ्र ही कंगाल हो गया। इस स्थिति से दु:खी होकर उसने यह प्रण किया कि वह धनवान होने तक वापस अंग नहीं लौटेगा, अत: वह महापथ होकर चम्पा से ताम्रलिप्ति गया।[11] इस क्रम उसने सुवर्णद्वीप जोने वाले आचेर नामक व्यक्ति के जहाज से यात्रा प्रारम्भ की तथा सुवर्णद्वीप पहुँचकर सानुदास ने खाने का सामान थैलियों में भरकर अपनी पीठों बाँध लिया तथा गले पे कुले लटकाकर वे वेत्रलता के सहारे पहाड़ पर चढ़ गए। सिल्वा लेवी ने वेत्रलता की पहचान लाठी से किया है।[12] शैलोदा नदीं पार करने के बाद सानूदास और आचेर ने गीली और सुखी लकड़ियाँ इकट्ठा करके उसे जलाया जिससे कुआँ फैला गया। धुँए को देखकर वहाँ रहने वाले किरात लोग चारो और इकट्ठे हो गए जिसके पास बकरों और चीतों के चमड़े के बने जिरह-बख्तर थे।[13] इन किरातों की पहचान चम्पा (सुवर्णभूमि) में रहने वाले चम जाति के लोगों से की जा सकती है जो चम्पा के मूल निवासी थे। सानूदास ने किरातों के पास उपलब्ध बकरों एवं जिरह-बख्तरों का विनिमय केसरिया, लाल और नीले कपड़े शक्कर, चावल, सिन्दुर नमक और खाद्य तेल से किया जो वह चम्पा से अपने साथ लाया था। इस तरह स्पष्ट है कि ईसा की पहली सदियों में अंग के व्यापारियों ने समुद्री व्यापारिक यात्राएँ की और दक्षिण पूर्व एशिया के देशों से खूब धन-दौलत कमाया जिसमें चम्पा का प्रमुख स्थान था। चम्पा (सुवर्णभूमि) में चम्पा (अंग) के व्यापारियों ने धन अर्जन के साथ ही साथ भारतीय संस्कृति की नींव भी डाल दी जिसमें बौद्ध एवं ब्राह्मण दोनों धर्मों का योगदान था। चुकि यह व्यापार समुद्रीमार्ग द्वारा होता था। अत: बन्दरगाहों तक सामान को पहुँचाने के लिए आन्तरिक जलमार्ग का भी प्रयोग होता था। चम्पा से गम्भीर (ताम्रलिप्ति) होते हुए सुवर्णद्वीप और कालियद्धीप (जंजीबार) के बीच सुलभ रूप से नाव एवं बड़े जहाजों की उपलब्धता थी।[14] ज्ञातधर्म में उल्लेख है कि चम्पा में समुद्री व्यापारी (नाव वणियगा) रहते थे। ये व्यापारी नाव द्वारा गणिम (गिनती) धरिम (तौल), परिच्छेद्य तथा मेय (नाप) की वस्तुओं का सुर्वणभूमि (दक्षिण पूर्व एशिया) के साथ व्यापार करते थे। चम्पा से यह सब सामान बैलगाड़ियों पर लाद दिया जाता था। यात्रा के समय मित्रों ओर रिस्तेदारों का भोज होता था। व्यापारी सबसे मिलकर शुभ मुहुर्त में गम्भीर (ताम्रलिप्ति) नामक बन्दर (पोयपत्तण) की यात्रा पर निकले पड़ते थे।[15]

गुप्तयुग तक चम्पा (अंग) का सम्बन्ध सुवर्णभूमि के साथ और भी सुदृढ़ हो गया। क्योंकि चीन और भारत का सम्बन्ध भी अधिक प्रगाढ़ हो रहा था। चीन से भारत का सम्बन्ध 61 ईस्वी में आरम्भ हुआ था जब हान राजा मिंग ने भारत से बौद्ध भिक्षु बुलाने दूत भेजे थे। धर्मरक्षित और कश्यप-मातंग भारत से अनेक ग्रन्थों के साथ चीन आए और चीन में प्रथम बौद्ध-बिहार बना था।[16] बौद्ध धर्म के विस्तार के साथ चौथी-पाँचवी शताव्दी तक चीन के साथ ही सुवर्णभूमि के साथ बढ़ते हुए सम्बन्ध के कारण चम्पा (अंग) के लोगों का चम्पा (सुवर्णभूमि) का अन्तर्सम्बन्ध अपनी पराकाष्ठा पर पहुँच गया। ईसा के प्रथम

शताब्दी के आस-पास जो चम्पा (अंग) के व्यापारियों का वहाँ बसने की प्रक्रिया आरम्भ हुई और उसी समय भारतीयों ने सुवर्णभूमि में भारतीय उपनिवेश की स्थापना की वह फूनान, चम्पा और श्रीविजय जैसे राज्यों के रूप में सामने आया था, वह गुप्तकाल तक अपने चकमोरकर्ष तक पहुँच गया। चम्पा (अंग) के लोगों का सुवर्णभूमि के चम्पा के साथ सम्बन्धों का भी यह शिखर काल था और चम्पा (अंग) में वहाँ के व्यापार के लिए द्वीपान्तर शस्व प्रचलित हो चुका था। ईशानगुरूदेवपद्धति से हमें पता चलता है कि भारतीय बन्दरगाहों में द्वीपान्तर के जहाज प्राय: लगा करते थे जिसमें चम्पा (अंग) के व्यापारियों की संख्या काफी होती थी।[17] इस स्थिति में सुवर्णभूमि के चम्पा का पूर्णरूप से भारतीयकरण हो गया और वहाँ भारतीय संस्कृति की जड़ें काफी गहरी हो गई। संस्कृत वहाँ की राजभाषा हो गई और ब्राह्मणधर्म वहाँ का राजकीय धर्म हो गया। कॉसमॉस इण्डिकोपलाएस्टस अपने ग्रन्थ क्रिश्चियन टोपोग्रैफी (छठी सदी) में बताते हैं कि सुवर्णभूमि व्यापार का एक बड़ा केन्द्र था और वहाँ पूर्वी भारत (पाटलिपुत्र, चम्पा) से बड़े व्यापारिक जहाज आते थे और वहाँ से रेशमी कपड़े, तेल, शक्कर, चावल, ताँबा, तीसी, कस्तुरी, एरण्डी, और जटामसी व्यापारी लेकर सुवर्णभूमि आते थे।[18] चाओं-जु-कुआ के उल्लेख के अनुसार चम्पा में भारतीय जहाज पहुँचने पर राज्य कर्मचारी एक चमड़े की बही के साथ उस पर चढ़ जाते थे और इस बही में सफेद रंग से माल का व्यौरा भर देते थे। इसके बाद माल उतारने की आज्ञा दी जाती थी। इसमें राजस्व माल का 1/10 होता था। चम्पा में अंग के व्यापारी कपूर, कस्तुरी चन्दन, लखेरे, बर्तन, चीनी मिट्टी के बरतन, सीसा, राँगा, सम्शु खाद्य तेल और शक्कर का व्यापार करते थे।

चम्पा का भारतीयकरण मुख्य रूप से द्वितीय शताब्दी ई. से लेकर पन्द्रहवीं शताव्दी ई. के मध्य रहा किस काल में यहाँ हिन्दु राजाओं का प्रभुत्व तो रहा ही साथ ही साथ चम्पा भारतीय संस्कृति के केन्द्र के रूप में परिणत हो गई। इसके पूर्व तक यहाँ 'जंगली' (मलेच्छ) एव ंचम दोनो जातियों के लोग असभ्य थे और उन्हे मलेच्छ एवं किरात कहा जाता था।[19] इनमें जातीय दृष्टि या नस्ल से कोई भिन्नता नहीं थी पर एक वर्ग सभ्यता में बहुत पिछड़ा था और जंगली अवस्था में था जबकि दूसरे ने सभ्यता की दृष्टिकोण से उन्नति कर ली थी। यह सभ्य वर्ग "चम" कहलाता था, जिसका यह नाम चम्पा के भारतीय उपनिवेशीकरण के ही कारण पड़ा।[20] भारतीय संस्कृति के केन्द्र के रूप में विकसित होने के सार्थ ही साथ चम्पा का सम्पर्क भारतीय भू-भागों के बढ़ता ही गया। चम्पा (अंग) भी इसका अपवाद नहीं रहा और इसने इस प्रक्रिया में महती भूमिका निभाई जिसमें अन्तर्देशीय समुद्रपार वाणिज्य व्यापार की प्रगति ने इसमें उत्प्रेरक का कार्य किया। चम्पा (अंग) और चम्पा (सुवर्णभूमि) के बीच व्यापार की प्रगति ने संस्कृतियों के समन्वय में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई। यह वह समय था जब एक महाजनपद और राज्य के रूप में अंग का अस्तित्व समाप्त हो चुका था और मगध की साम्राज्यवादी नीतियों का शिकार होकर अंगमगध साम्राज्य का हिस्सा था। परन्तु चम्पा अब भी अंग की राजधानी थी और जैसे प्रसेनजित का भाई मगध के अधीन रहकर भी 'काशीनरेश' कहलाता था उसी प्रकार मगध द्वारा अंग पर अधिकार कर लिए जाने के बाद भी चम्पा के शासक 'अंगराज' के नाम से जाने जाते थे।[21] अंग और उसकी राजधानी चम्पा[22] अपनी विशिष्ट सांस्कृतिक

पहचान के कारण एक महत्वपूर्ण स्थान रखता था। उत्तरी कृष्णमार्जित मृदमांड (एन.बी. पी. डब्ल्यू.) संस्कृति वाले निम्न मध्य गंगा घाटी का यह मैदानी क्षेत्र अपनी उरर्वरता के कारण अधिशेष उत्पादक क्षेत्र के रूप में छठी शताब्दी ईसा पूर्व से ही वाणिज्य व्यापार प्राधान्य क्षेत्र के रूप में स्थापित हो चुका था। फलत: राजधारी नगर चम्पा एक महानगरीय स्वरूप में था और आन्तरिक एवं बाह्य व्यापार का एक महत्वूर्ण केन्द्र के रूप में स्थापित था। चुंकि, अंग परिक्षेत्र और उसकी राजधानी चम्पा महत्वपूर्ण व्यापारिक मार्ग पर अवस्थित थी और ताम्रलिप्ति एक प्रमुख व्यापारिक बंदरगाह था, जहाँ से अन्तर्देशीय व्यापार समुद्री मार्ग द्वारा होता था। अत: चम्पा (अंग) से गुजरने वाला महापथ सीधे व्यापारिक मार्ग से जुड़ा हुआ था। और सुवर्णभूमि के चम्पा से जुड़ाव का मूलकारण भी यही थी। इस जुड़ाव ने चम्पा (सुवर्णभूमि) में चंपा (अंग) की संस्कृति को गहराई से अध्यारोपित किया जिसके प्रमाण दक्षिणी वियनताम (अनाम) में मिलने वाले लगभग सौ संस्कृत अभिलेखों में वर्णित विभिन्न उदहारणों में मिलते हैं। उसके अनुशीलन से चंपा (सुवर्णभूमि) पर चंपा (अंग) के राजनीतिक, धार्मिक तथा सांस्कृतिक प्रभावों का विवरण हमारे सम्मुख उपस्थित होता है।

इस क्रम में अगर हम चम्पा (सुवर्ण भूमि) की सैन्य व्यवस्था का उवलोकन करें तो हम पाते है कि चम्पा (अंग) की ही सैन्य व्यवस्था की भाँति जिसमें चतुरंगबल अर्थात पदाति, अश्वारोही, हस्तिसेना और रथ होते थे, के भाँति ही वहाँ भी 'स्थलसेना में पदाति, अश्वारोही और हस्तिसेना होती थी और इसके साथ जलसेना होती थी। मौर्ययुग में अंग का क्षेत्र हस्तिसेना के लिए विख्यात था, यह प्रभाव हमें चम्पा, (सुवर्ण भूमि) में भी दिखाई देता हैं। ओदोरिक द पर्दनोन नाम यात्री ने अपने वृतांत में लिखा है कि चम्पा के राजा के पास चौदह हजार पालतू हाथी थे। अंग की ही परम्परा के अनुसार वहाँ भी राजकीय करों में मुख्य रूप से भूमिकर लिए जाते थे जो उपज का छठा, भाग होता था, विशेष अवसरों पर इसे घटाकर दसवां भाग कर दिया जाता था। इसी तरह चों-दिंक अभिलेख में राजा भद्रेश्वर द्वारा मद्रेंश्वर महादेव के मन्दिर के लिए एक भूमिखण्ड के कर को अक्षयनीवी के रूप में दिए जाने का उल्लेख है। यह एक छोटा सा प्रमाण है, जिसका विवरण देने का मूल उद्येश्य यह प्रमाणित करना है कि चम्पा (सुवर्णभूमि) के संस्कृति के सभी पक्षों पर चम्पा (अंग) की संस्कृति का प्रभाव परिलक्षित होता है चाहे वो राजनीतिक हो अथवा सामाजार्थिक, धार्मिक एवं भाशा एवं साहित्यका क्षेत्र हो। इस प्रक्रिया में ब्राह्मण ओर बौद्ध दोनो धर्मों का भी काफी विशिष्ट योगदान था। चम्पा के अभिलेखों में बुद्ध के लिए जिन, लोकेश्वर, सुगत, अभयद, शाक्यमुनि आदि विभिन्न नामों का प्रयोग किया गया है।

चम्पा (अंग) के व्यापारियों द्वारा वाणिज्यिक लेन-देन के लिए सुवर्णभूमि आने जाने की घटना का विवरण मिलिन्दपन्हो और महानिदेश में मिलता है। इसी क्रम में कालक्रमानुसार अनेक चंपा (अंग) के व्यापारी 'चम्पा' (सुवर्णभूमि) में बस गए और चम एवं किरात लोगों की असभ्यता से लाभ उठाकर वहाँ अपना विशिष्ट स्थान बनाया। वसुदेव हिण्डी में चारूदत्त की कहानी में चम्पा के लोगों द्वारा चम्पा (सुवर्णभूमि) की राजधानी चम्पानगरी से व्यापार के अनेक सन्दर्भ प्राप्त होते हैं। चम्पा के धनी बनिए का बेटा चारूदत्त धन कमाने हेतु यात्रा करने का निश्चय किया। चम्पा से निकलकर वहे

दिसासंवाह नामक कस्बे में पहुँचा और कपास एवं सूत की गाड़ियाँ लादकर वह पुण्ड्रवर्धन होते हुए ताम्प्रलिप्ति पहुँचा। वहाँ से सुरेन्द्रदत्त नामक नाविक के जहाज से समुद्री यात्रा क रवह चम्पापुर (सुवर्णभूमि) पहुँचा और काफी धन कमाया।[23] चंपा की राजधानी चम्पानगरी या चम्पापुर था जिसके अवशेष कु-नाम के दक्षिण में ट्रा-केन में अवस्थित हैं। वहाँ का प्रथम ऐतिहासिक हिन्दु राजा श्रीमार था जिसने द्वितीय शताब्दी में वहाँ भारतीय साम्राज्य की स्थापना की । 220 ई. में चीन में हान वंश के पतन के बाद चम्पा के भारतीय राजाओं को अपने साम्राज्य का विस्तार और एकीकरण का अवसर प्राप्त हुआ।[24] कु-आन वर्तमान में एक अति महत्वपूर्ण पुरातात्विक स्थल है। इसके साथ ही माइसोन, पो-नगर ट्रो-केन, दोंग-दुओंग से प्राप्त कलाकृतियों में शिव के साथ गणश, उमा-महेश्वर अनन्त शायी विष्णु को जो प्रतिमाएँ हैं उस पर चम्पा (अंग) के क्षेत्र से प्राप्त कलाकृतियों का स्पष्ट प्रभाव दृष्टिगोचर होता है। इसी तरह दोंग-दुओंग से प्राप्त कलाकतियों पर चम्पा (अंग) क्षेत्र से सम्बन्धित बौद्ध स्थापत्य का स्पष्ट प्रभाव दृष्टिगत है। यहाँ से बौद्ध बोधिसत्वों की प्रतिमाएँ प्राप्त हुई है जिसमें एक मूर्ति में बुद्ध नीचे के तरफ पैर लटका कर बैठे हैं और उनके दोनों हाथ घुटनों पर हैं। अंगक्षेत्र (चम्पा) में आज भी बुद्ध की इस मुद्रा में अनेकों प्रतिमाएँ प्राप्त हैं। चीनी यानी फाहियान जो पॉचवी शताव्दी में भारत आया था ने चंपा क विवरण 'चेन-पो' के नाम से किया है जो गंगा के क्षेत्र में था। उनके अनुसार चेन-पो शहर गंगा के दक्षिणी किनारे पर स्थित था जहाँ मेमोरियल टावर बने हुए थे।[25] अत: गंगा के पास वाली चम्पा और इण्डोचीन के भूमि की चम्पाक्या वास्तव में समान उद्येश्य से वर्णित है ? क्या इसके बीच की कोई कड़ी थी?

इस प्रश्न का उत्तर कही न कही हमें चम्पा (अंग) के सांस्कृतिक परिपप्रेक्ष्य में ढूँढ़ने का प्रयास करना चाहिए। चम्पा (अंग) में प्रचलित विषहरी (सर्प देवी) की पूजा परम्परा में जो गीत गाए जाते हैं उसमें यह प्रसंग आता है कि "ओह चांदो कहलाने वाले व्यापारी वह व्यापार, करने के लिए चला गया और जाने से पहले तुलसी का पौधा लगाया। ओह वह पूर्व की ओर जाने के लिए जहाज की ओर गया और सोनादय तालाब के पास शिव और पार्वती के सामने शीश झुकाया"[26] ये प्रसंग स्पष्ट रूप से चंपा (अंग के लोगों का पूर्व की ओर के सामुद्रिक व्यापारिक गतिविधियों को इंगित करता है।

इस प्रकार चंपा से चंपा तक की व्यापारिक यात्रा ने एक सुदृढ़ सांस्कृति आदन-प्रदान के एक शसक्त माध्यम की भूमिका निभाई। अगर कालखण्ड की चर्चा की जाए तो यह सर्वज्ञात है कि ईसा की प्रथम शताब्दियों में भारतीयों ने चम्पा में अपने उपनिवेष स्थापित किए। कृषाण-युग में ही भारतीय व्यापारी चम्पा जाकर बसने लगे और पाँचवी शताब्दी गृप्त-युग तक यह प्रक्रिया चरमोकर्ष तक जा पहुँची। इसके बाद लगभग पन्द्रहवीं शताव्दी तक भारतीय राज्य के रूप में चम्पा भारतीय संस्कृति के प्रभाव में रहा। इस दरम्यान चम्पा का व्यापक रूप में भारतीयकरण हुआ और अनाम एवं चम्पा ब्राह्मण धर्म का एक प्रमुख केन्द्र बन गया, साथ ही संस्कृत वहाँ की राजभाषा के रूप में प्रतिष्ठापित हुई। इस ऐतिहासिक घटनाक्रम का संकेत 200 ई. से 300 ई. के बीच चंपा (अंग) के सौदागर (व्यापारी की कथा में भी प्राप्त होता है। चंपा (अंग) में प्रचलित गीतों एवं गाथाओं में अभी भी चांदो या चाँद सौदागर द्वारा समुद्री मार्ग द्वारा सुदूर पूर्व की ओर

किए जाने वाले व्यापारिक यात्राअ का वर्णन किया जाता है। इन लोकगीतों एवं लोकगाथाओं के चरित्र पात्र चाँदों सौदागर की ऐतिहासिकता सिद्ध हो चुकी है और सुदुर पूर्व में उनके व्यापार वृतान्तसे निश्चय ही चंपा (अंग) से चंपा (सुवर्णभूमि) के सांस्कृतिक प्रसार की ऐतिहासिकता सिद्ध होती है। चम्पा (सुवर्णभूमि) स्थित विभिन्न पुरातात्विक अवशेष आज भी इसके प्रत्यक्ष प्रमाण के रूप में हमारे सामने उपस्थित हैं।

इस तरह चम्पा (अंग) से चम्पा (सुवर्णभूमि) के बीच अन्तर्सम्बन्ध के परिणामस्वरूप सांस्कृतिक समन्वय ने चम्पा (सुवर्णभूमि) के भारतीयकरण में अपनी अहम भूमिका निभाई। वास्तव में चम्पा (सुवर्णभूमि) के नामकरण की पृष्ठभूमि में, अंग की राजधानी चम्पा में वहाँ की राजधानी चमपानगरी या चम्पापुर का निहितार्थ ढूँढ़ना गलत प्रतीत नहीं होता है और यही चम्पा और चम्पा के बीच अन्तर्सम्बन्ध की चर्चा को विस्तार प्रदान करता है।

संदर्भ ग्रन्थ सूची-

1. डिक्सनरी ऑफ पाली प्रापर नेन्स, 2, 1084
2. वाटर्स, ऑन यूवान-च्वांग, 1, 377
3. जातक, 2, 127
4. जातक, 4, 15-17
5. जातक, 6, 34
6. जातक, 3, 188
7. जैन, लाइफ इन ऐंश्येण्ट इण्डिया एज डिपिक्टेड इन जेन कैनन्स, बम्बई, 1947, पृ. सं.-252
8. वृहतकल्पसूत्रभाष्य, 3263
9. लेवी, सिल्वा, कनिष्क एण्ड सातवाहन, जूर्नाल आशियातीक, 1936 जनवरी- मार्च, पृ. सं. -22
10. वृहत्कथाश्लोकसंग्रह, अध्याय-18, श्लोक सं.-1
11. वही, श्लोक सं.-171
12. लेवी, सिल्वा, उपरोक्त, पृ. सं.-39-40
13. वृहत्कथाश्लोकसंग्रह, उपरोक्त श्लोक सं.-450-461
14. वृहतकल्पसूत्रभाष्य, श्लोक सं.-3495-96
15. ज्ञाताधर्मकथा, अध्याय-8 श्लोक सं.-75
16. बगची, इण्डिया एण्ड चाइना , बम्बई, 1950, पृ. सं.-6-7
17. मेमोरियल सिल्वा लेवी पृ. सं.-392-397
18. मैकक्रिण्डल, नोट्स फ्रॉम ऐंश्योण्ट इण्डिया, पृ. सं.-160
19. मजूमदार, आर.सी., चम्पा, साउथ एशिया बुक्स, 1927, पृ. सं.-11
20. वही, पृ. सं.-12
21. सांकृत्यायन, राहुल, बुद्धचर्या, पृ. सं.-307
22. वर्तमान बिहार प्रान्त के अन्तर्गत भागलपुर जिले का भागलपुर शहर का क्षेत्र, मुख्य रूप से नाथनगर और चम्पानगर मोहल्ला।
23. रोस्तोवोत्जेफ, द एकोनामिक हिस्ट्री ऑफ द रोमन एम्पायर प्ले. 17 का विवरण, ऑक्सफेर्ड 1926
24. मजूमदार, आर.सी., द ऐज ऑफ इम्पीरियल युनिट, बम्बई 1951, पृ. सं. -658
25. रामसत, एम.एम. एवं अन्य पिलग्रेमेज ऑफ फाहियान, पृ0 सं0-330, सहाय, एस.एन., द पॉटरीज ऑफ चम्पा, जनरल ऑफ द बिहार पुराविद् परिषद, वाल्यूम-1, पटना 1978, पृ. सं.

-158

26. चम्पा में वर्तमान तक प्रचलित सर्पपूजा (बिशहरी पूजा के अवसर पर गाया जाने वाला लोक भक्ति गीत।

UGC Journal No. (Old) 2138
Peer-Reviewed Research Journal
Impact Factor 6.375, ISSN 0975-4083
Vol.- 28, Hindi Edition, Year-14, March 2025

पलामू डाक जब्ती अभियान (1929-30) : भारत के स्वतंत्रता आंदोलन की क्रांतिकारी कथा

• शत्रुघ्न कुमार पाण्डेय

सारांश- प्रस्तुत शोध आलेख में भारतीय स्वतंत्रता संग्राम के दौरान क्रांतिकारियों द्वारा पलामू जिले में डाक-जब्ती (ब्रिटिश दस्तावेज में डाक-लूट) की घटनाओं पर प्रकाश डाला गया है। क्रांतिकारी ऐक्शन के लिए धन की जरूरत को पूरा करने के लिए 1929-30 के दौरान पलामू में डाक-पराक्रम की कई घटनाएं घटी थीं, जिनका संबंध हिन्दुस्तान सोशलिस्ट रिपब्लिकन एसोसिएशन के क्रांतिकारियों से था। काकोरी ट्रेन डाक-पराक्रम (लूट-कांड) के अभियोग में जब अखिल भारतीय स्तर के क्रांतिकारियों की पीढ़ी ब्रिटिश क्रूरता की शिकार हुई, तब इस संघ के दूसरी पीढ़ी के क्रांतिकारियों ने क्षेत्रीय स्तर पर संगठन बना कर और कार्य जारी रखा। पलामू के डाक लूट कांड भारत को ब्रिटिश दासता से मुक्त कराने के अखिल भारतीय क्रांतिकारी योजना का ही एक पड़ाव था। इस आलेख में डाक लूट को लेकर प्रशासनिक रिपोर्ट एवं पुलिस कार्रवाई पर भी प्रकाश डाला गया है। पलामू डाक लूट कांड का पता पुलिस को गया के क्रांतिकारियों की गिरफ्तारी के बाद चला।

मुख्य शब्द- गया नौजवान संघ, क्रांतिकारी, डाक-पराक्रम, गवर्नर, रिवाल्वर, षड्यंत्र

पलामू : भौगोलिक स्थिति- पलामू प्रमंडल झारखंड के उत्तर-पश्चिम में स्थित $23^{0}20'$ से $24^{0}39'$ उत्तरी अक्षांश तथा $83^{0}22'$ से $85^{0}00'$ पूर्वी देशांतर के बीच 4916 वर्ग मील में फैला हुआ है।[1] उत्तर से दक्षिण इसकी लम्बाई 119 मील है और पश्चिम से पूरब इसकी चौड़ाई 101 मील है।[2] इस क्षेत्रफल में सम्प्रति मेदिनीनगर, गढ़वा और लातेहार जिले आते हैं। पलामू प्रमंडल का सबसे बड़ा शहर डाल्टनगंज है, जो उत्तरी कोयल नदी के पूर्वी किनारे पर स्थित है और इसे 1861 में छोटानागपुर के तत्कालीन आयुक्त डाल्टन ने बसाया था।[3] डाल्टनगंज से पूर्व पलामू का प्रशासनिक मुख्यालय लेस्लीगंज (घोरासी) था, जहां ब्रिटिश छावनी (1771-1863) थी। 1892 से पूर्व पलामू लोहरदगा जिला का भाग था। एक जनवरी 1892 को पलामू पृथक जिला बना और इसे छोटानागपुर कमिश्नरी के अंतर्गत रखा गया। यहां के प्रथम उपायुक्त डब्ल्यू. आर. ब्राइट थे।[4] पलामू मिश्रित संस्कृति की धरती रहा है और यहां की अधिकांश आबादी भोजपुरी और मगही बोलती है।[5] पुराणों में इस क्षेत्र को वाराणसी-खंड एवं मगध-खंड का हिस्सा माना गया है। इसकी

• सहायक प्रोफेसर, इतिहास विभाग, संत कोलम्बा कॉलेज, हजारीबाग

पश्चिमी सीमा संयुक्त प्रांत (उत्तर प्रदेश) और मध्य-प्रांत (मध्य पदेश, अब छत्तीसगढ़ से) से तथा उत्तरी सीमा बिहार सेलगती है।[6]

गुप्त शिविर और हथियार संचालन का प्रशिक्षण- 20वीं सदी के तीसरे दशक तक पलामू में हिन्दुस्तान सोशलिस्ट रिपब्लिकन एसोसिएशन और अनुशीलन समिति के क्रांतिकारी अपना जड़ जमा चुके थे। यहां के प्रमुख क्रांतिकारी नेता प्रमोथोनाथ मुखर्जी, गणेश प्रसाद वर्मा, गणेश कमलापुरी, शिवशंकर प्रसाद आदि थे।[7] पलामू बंगाल और संयुक्त प्रांत के क्रांतिकारियों के छुपने एवं योजना बनाने के लिए मुफीद स्थान था। जब भी बंगाल एवं संयुक्त प्रांत में पुलिस की कार्रवाई या छापेमारी होती थी, क्रांतिकारी आश्रय के लिए पलामू आ जाते थे।[8] अध्ययन के लिए पलामू के युवा पटना, वाराणसी एवं कलकत्ता (अब कोलकाता) जाते थे और वहां क्रांतिकारी संगठनों से जुड़ जाते थे। प्रशासनिक दृष्टि से पलामू बंगाल और बिहार का अंग रहा है और कई बंगाली एवं बिहारी यहां नौकरी या वकालतया रोजगार-व्यवसाय के लिए आया-जाया करते थे। इसी क्रम में पलामू के युवा क्रांतिकारी संगठनों से जुड़े और अपनी सक्रियता दिखायी। पलामू पर बंगाल के अनुशीलन समिति और संयुक्त प्रांत के हिन्दुस्तान रिपब्लिकन सोशलिस्ट एसोसिएशन दोनों का प्रभाव रहा। अत्यंत सहजता से यहां के नौजवान दोनों संगठनों से जुड़े और कई क्रांतिकारी योजनाओं को मूर्त रूप दिया।[9] इस योजना में गया नौजवान सभा के क्रांतिकारियों बसावन सिंह, श्याम बर्थवार, शत्रुध्न शरण सिंह, केशव प्रसाद, विश्वनाथ प्रसाद आदि की भी सक्रियता रही। क्रांतिकारी पुलिस की आंखों से बच करछात्रों से मिलते थे और उन्हें ब्रिटिश सरकार को उखाड़ फेंकने के लिए प्रेरित करते थे। पलामू जिले के आदिवासी क्षेत्रों-गारू, भंडरिया, रंका, पोखराहा, चांदी, मनिका, रामगढ़, बरवाडीह, लातेहार आदि के गांव उनके कार्यकलाप के मुख्य केन्द्र थे।[10] गारू, भंडरिया, रंका, चैनपुर, मनिका और बरवाडीह में कई गुप्त शिविर का आयोजन किया जाता था और युवाओं को पारंपरिक हथियार और रिवाल्वर चलाने, हथगोला बनाने तथा सरकारी खजाना एवं शस्त्रागार लूटने के प्रशिक्षण दिये जाते थे।[11] 1929-30 में पलामू क्रांतिकारी ऐक्शन का 'हॉट बेड' था।

क्रांतिकारी अशफाक उल्ला खां और उसके बाद- काकोरी ट्रेन लूटकांड के बाद अशफाकउल्ला खां (1892-1927) छद्म नाम से डाल्टनगंज में करीब 10 माह तक रहे थे। बनारस से अशफाकउल्ला खां (संभवत: 1926 के प्रारंभ में) डाल्टनगंज पहुंचे थे।[12] वह कुण्ड मोहल्ला में रहते थे।[13] क्रांतिकारी संगठन हिन्दुस्तान सोशलिस्ट रिपब्लिकन एसोसिएशन के सदस्य अशफाकक्की डाल्टनगंज में उपस्थिति पलामू के क्रांतिकारी इतिहास का स्वर्णिम अध्याय है। अशफाक क्रांतिकारियों के उत्प्रेरक थे। इनकी प्रेरणा से पलामू की नसों में क्रांतिकारी लहू तेजी से दौड़ी और उनके जाने के बाद (अगस्त 1926) पलामू में कई क्रांतिकारी ऐक्शन हुए। डाल्टनगंज सदर, गढ़वा और सलतुआ डाकघर लूटे गये और प्राप्त धन का उपयोग पिस्तौल एवं आवश्यक वस्तुओं की खरीद में हुई, ताकि क्रांतिकारी कार्य को सुगमता से चलाया जा सके।[14]

पलामू डाक-जब्ती (लूट) कांड : 1929-30- 1929-30 में पलामू जिले में डाक-जब्ती(डाक लूट) की कई घटनाओं को क्रांतिकारियों ने अंजाम दिया। 27 मई

1929 कोहुई डाल्टनगंज सदर डाक लूट की योजना काशी में बनी थी। इस योजना के मुख्य शिल्पी गणेश प्रसाद वर्मा, स्वामी सत्यानंद और पुरुशोत्तम दूबे पलामू जिले के ही रहने वाले थे। गया के श्याम बर्थवार, जो बनारस में पढ़ते थे,की भी इसमें सहभागिता थी। लूट की राशि में से 500 रुपयेएक रिवाल्वर एवं कुछ गोलियां कलकत्ता से काशी लाने वाले को दिया जाना था। बनारस से सभी डाल्टनगंज के लिए रवाना हुए। डाल्टनगंज शहर का नक्शा गणेश प्रसाद वर्मा ने उपलब्ध कराया। योजना की रूपरेखा और कार्यों का विभाजन डाल्टनगंज के वकील नागेश्वर प्रसाद के यहां बनायी गयी थी।[15]

जिस दिन लूट की योजना बनायी गयी थी, डाल्टनगंज में अनाथ के बच्चों के चैरिटी कार्यक्रम की वजह से पुलिस व्यस्त थी तथा पोस्ट ऑफिस और उपायुक्त के बंगले के बीच का रास्ता सुनसान था। पोस्ट ऑफिस और उपायुक्त के बंगले के आस-पास कोई आबादी नहीं थी। सड़क के बगल में परसवन (पलाश के वृक्षों का सघन वन) था, जो छुपने की दृष्टि से काफी मुफीद था। परसवन को छुपने के लिए क्रांतिकारियों ने चुना था। उनकी योजना यह थी कि डाकघर की थैली का पीछा पुरुषोत्तम दूबे करेंगे, परसवन के निकट स्वामी सत्यानंद रहेंगे तथा उपायुक्त बंगले के फाटक की चौकसी श्याम बर्थवार करेंगे।[16]

27 मई 1929 की शाम के 7:30 बजे, डाक परिचारी लालचंद पोस्ट ऑफिस की ओर से थैले भरा ठेला लेकर आ रहा था। जैसे ही ठेला डिप्टी कमिश्नर के बंगला से गुजरा, स्वामी सत्यानंद ने डाक परिचारी के सिर पर प्रहार कर दिया और वह लुढ़क कर गिर गया। इसके बाद श्याम बर्थवार ने डाक सेवक शिवनंदन राम पर रिवाल्वर तान दी और वह भय से बेहोश होकर गिर पड़ा। डाक की राशि लूट कर स्वामी सत्यानंद एवं पुरुशोत्तम दूबे परसवन की ओर ओझल हो गये। वहां से सभी शाहपुर जंगल में एकत्र हुए और सभी थैलियों को खोला गया। लूट में करीब 2,000 रुपये क्रांतिकारियों के हाथ लगे।[17] इसे लेकर श्याम बर्थवार स्टेशन की ओर लपके और नागेश्वर बाबू के घर पहुंचे। इसके बाद डाल्टनगंज स्टेशन से ट्रेन पकड़ कर काशी निकल गये।[18]

डाल्टनगंज शहर में डाक लूट की यह पहली घटना उपायुक्त के बंगले के निकट घटी थी और अत्यंत संवेदनशील थी।उपायुक्त के बंगले पर सशस्त्र पुलिस का पहरा था, परन्तु किसी का ध्यान घटना पर नहीं गया। घटना की सूचना डाल्टनगंज के उपायुक्त एस. एस. व्हास ने बिहार-उड़ीसा के चीफ सेक्रेटरी को 27 मई 1929 को टेलीग्राम से दी :'Mail Bags Robbed last night at about 8.00 pm at Daltonganj town near on way to Railway Station. Mail partly recovered. Does not appear political. Report will follow.'[19] अलगे दिन उपायुक्त ने छोटानागपुर के कमीश्नर जे. ए. हबैक और बिहार-उड़ीसा के मुख्य सचिव को घटना का विस्तृत विवरण भेजते[20] हुए लिखा कि आईपीसी की धारा 395 के तहत केस दर्ज कर मामले की जांच शुरू कर दी गयी है। डाल्टनगंज और शाहपुर के आपराधिक प्रवृत्ति के डोम और अन्य बदमाशों एवं जुआरियों की संलिप्तता इस घटना में प्रतीत होती है।[21]

उपायुक्त एस. एस. ह्वास ने आयुक्त जे. ए. हबैक को लिखा कि 27 मई 1929 की शाम को 8:30 बजे डाक सेवक शिवनंदन राम और डाक परिचारी लालचंद सदर सब

इंस्पेक्टर के कार्यालय गये और उन्होंने रिपोर्ट लिखवाया कि वे शाम 7:30 बजे डाक–थैले लदे ठेला को लेकर डाल्टनगंज पोस्ट ऑफिस से रेलवे स्टेशन की ओर जा रहे थे। डिप्टी कमीश्नर के बंगले के निकट स्थित सर्किट हाउस के समीप बगल के परसवन से करीब 20 लोग निकले और उन्होंने हमला कर दिया और ठेले पर रखे आठ थैलियों को लूट कर पारस जंगल की ओर भाग गये। घना अंधेरा होने के कारण उनके चेहरे को नहीं देख पाया। हमलावर बनियान और कुर्ता पहने हुए थे और अपनी धोतियों से उन्होंने मुंह ढंका हुआ था।[22]

उपायुक्त ने लिखा कि घटना की सूचना मिलने के बाद वह और पुलिस अधीक्षक घटना स्थल पर पहुंचे और जानकारी प्राप्त की। इसके बाद पारस जंगल और पूरे शहर में सर्च अभियान चलाया गया। परन्तु हमलावर का अभी तक कोई सुराग नहीं मिल सका है। डाक परिचारी शिवनंदन को पीठ और अंगुलियों में चोट लगी है जो गंभीर नहीं है, लेकिन लालचंद के सिर पर गहरी चोट है और उसके सिर से लगातार खून बह रहा है।[23] 28 मई की सुबह शाहपुर जंगल, जो घटना स्थल से एक मील दूर है, में डाक के लूटे गये थैले फेंके हुए मिले। उन थैलों में पत्र, रजिस्टर्ड लिफाफे और पार्सल थे। तीन खाली थैलों को छोड़ कर बाकी थैले काट दिये गये थे और उनमें रखे तमाम पत्र, रजिस्टर्ड लिफाफे और पार्सल जमीन में यत्र–तत्र बिखरे पड़े थे। सभी रजिस्टर्ड और बीमाकृत लिफाफों के अंदर से तमाम सामग्रियां और कैश निकाल लिये गये थे। डाक विभाग के अधिकारियों के आकलन के अनुसार डकैतों ने इस घटना में 2000 रुपयों की लूट की है और आवश्यक नोट्स भी ले गये हैं।[24] घटना के समय शहर में मदन मोहन मालवीय द्वारा स्थापित दिल्ली के अनाथालय के अनाथ बच्चों द्वारा चैरिटी कार्यक्रम चल रहा था। इसकी वजह से घटनास्थल पर सन्नाटा था, जिसका लाभ उठा कर लुटेरों ने इस घटना को अंजाम दिया। अभी तक की जांच में अभियुक्तों के संबंध में कोई ठोस जानकारी नहीं मिल सकी है। इस तरह के कोई साक्ष्य भी अब तक नहीं मिले हैं, जिससे माना जाए कि इस लूट की प्रकृति राजनीतिक है। ऐसा संदेह है कि डाल्टनगंज और शाहपुर में रहने वाले आपराधिक प्रवृत्ति के डोम और अन्य बदमाशों एवं जुआरियों की संलिप्तता इस घटना में है। अपराधियों की पहचान के लिए शहर और आसपास के इलाकों में सघन छापामारी अभियान चलाया जा रहा है।[25]

पलामू क्रांतिकारियों के 'ऐक्शन' के लिए सबसे सुरक्षित स्थान था। इस कारण 1930 में पलामू, गया और बनारस के क्रांतिकारियों ने पलामू में कई डाक लूटे। 10 मई 1930 को पांच क्रांतिकारियों ने डाल्टनगंज डाकघर के मेल डाकिये से राशि लूट ली। इसके शिल्पकार श्याम बर्थुआर एवं प्रमोथोनाथ मुखर्जी थे।[26]

दूसरी लूट 31 जुलाई 1930 को हुई, जब डाल्टनगंज डाकघर से 200 रुपये लूट लिया गया।[27] बिहार–उड़ीसा के गवर्नर लैंसडाउन स्टीवेंसन की हत्या के लिए शस्त्र खरीदने के लिए इस लूट को अंजाम दिया गया था। लैंसडाउन स्टीवेंसन 13 अक्टूबर से 24 अक्टूबर 1930 को नेतरहाट में ठहरने वाले थे। 1930 में भंडरिया और सतलुआ और गढ़वा के डाक क्रांतिकारियों ने लूटे।[28] एक अगस्त 1930 को भी डाल्टनगंज में डाक लूट की घटना घटी थी।[29] बिहार–उड़ीसा के मुख्य सचिव को बिहार के गोपनीय शाखा के पुलिस उप महानिरीक्षक, पटना ने बिहार–उड़ीसा के मुख्य सचिव को लिखा कि बनारस

से गिरफ्तार शिवचरण राय द्वारा पहने हुए काले कपड़े का उपयोग डाल्टनगंज डाक लूट के लिए किया गया था और यह कपड़ा उसे गया निवासी श्याम बर्थुआर ने बनारस में दिया था। गया शड्यंत्र के सरकारी दस्तावेज से इस बात का पता चलता है।इससे यह साबित होता है कि पलामू के क्रांतिकारियों का संबंध बनारस के क्रांतिकारियों से है। एक-दूसरे के सहयोग से रणनीति बना कर उन्होंने डाक लूटको अंजाम दिया था।[30]

दरअसल सभी लूटकांड हिन्दुस्तान सोशलिस्ट रिपब्लिक एसोसिएशन की विचारधारा से प्रभावित थे, जिसमें चन्द्रशेखर आजाद ने कहा था कि "इस संगठन में 'समाजवादी' शब्द जोड़ने का आशय ही है कि अंग्रेज जो हमें आतंकवादी प्रचारित कर रहे हैं, जनता उनकी झांसे में न आये और हमें क्रांतिकारी समझे। गुप्त क्रांतिकारी संगठन के लिए धन एकत्र करना अत्यंत कठिन कार्य है। यह कार्य विदेशों से चंदा प्राप्त कर न किया जाये, क्योंकि इससे देश की गरीबी एवं दुर्बलता प्रदर्शित होगी। यह कार्य अंग्रेजी हुकूमत को लूट कर किया जाये, जिसने भारतीयों के धन को निर्ममतापूर्वक लूटा है। अत: इसके लिए देश के भीतर डकैतियों का सहारा लिया जा सकता है। इसके लिए विस्फोटक पदार्थ एवं आवश्यक शस्त्र संग्रहित किया जाये।"[31] .... देश में नये धमाकों की गूंज होनी चाहिए और ब्रिटिश शासकों का शासन डोलना चाहिए।[32]...।

पलामू में डाकघरों की डाक लूट की घटना ब्रिटिश सत्ता को सीधी चुनौती थी। यह बताता है कि बनारस और गया की क्रांतिकारी गतिविधियों के तार पलामू से जुड़े हुए थे। सर्च अभियान चला कर भी पुलिस यह पता नहीं कर पायी कि इस घटना के पीछे किसका हाथ है या इसे किसने अंजाम दिया है? पुलिस का शक शाहपुर के डोम, जुआरियों एवं अपराधियों पर था, जबकि इस घटना को हिन्दुस्तान रिपब्लिक सोशलिस्ट एसोसिएशन के क्रांतिकारियों ने दिया था।

निष्कर्ष- भारत के स्वतंत्रता आंदोलन के दौरान पलामू क्रांतिकारी योजना का कार्य-स्थल रहा है। संयुक्त प्रांत, बिहार और बंगाल के क्रांतिकारी पुलिस कार्रवाई से बचने के लिए पलामू को आश्रय स्थल बनाते थे। अशफाक उल्ला खां, प्रमोथोनाथ बनर्जी जैसे क्रांतिकारी न केवल यहां गुप्त रूप से रहे, बल्कि पलामू के युवाओं को क्रांतिकारी कार्यों का प्रशिक्षण भी उन्होंने दिया। अशफाक के पलामू छोड़ने के बाद डाक लूट की कई घटनाएं यहां घटीं। इस कार्य में बनारस, गया और पलामू क्रांतिकारियों की भूमिका थी। पलामू में 1929-30 के दौरान डाक लूट कांड जो घटनाएं घटीं वह भारत को ब्रिटिश दासता से मुक्त कराने के अखिल भारतीय क्रांतिकारी योजना का ही हिस्सा थी। पलामू को क्रांतिकारियों ने इसलिए चुना, क्योंकि यहां उनके पकड़े जाने की संभावना कम थी। प्रशासन डाक लूट की घटना को गैर-राजनीतिक मानती रही। पुलिस को गया षड्यंत्र केस के दौरान 1933 में पलामू डाक लूट कांड का पता चला।

संदर्भ-स्रोत

1. ओ' मैली, एल. एस. एस., बिहार डिस्ट्रिक्ट गजेटियर पलामू, सुपरिन्टेंडेंट गवर्नमेंट प्रिंटिंग प्रेस, पटना, 1926, पृ. 1
2. पाण्डेय, रामदीन, पलामू का इतिहास, बेनी माधव प्रेस, रांची 1977, पृ. 21
3. ओश्मैली, पूर्वोक्त, पृ. 1
4. वही, पृ. 40
5. पाण्डेय, रामदीन, पूर्वोक्त, पृ. 35
6. ओश्मैली, पूर्वोक्त, पृ. 2
7. वर्मा, महावीर, कोयल के किनारे-किनारे, पंकज प्रकाशन, डाल्टनगंज, 1979, पृ. 126-27। महावीर वर्मा पलामू के स्वतंत्रता
8. सेनानी थे और 1942 की अगस्त क्रांति के दौरान जेल गये थे।
9. पाण्डेय, शत्रुघ्न कुमार, झारखंड का इतिहास, सस्ता साहित्य मंडल प्रकाशन, नयी दिल्ली, 2018, पृ. 160-61
10. पाण्डेय, शत्रुघ्न कुमार, स्वतंत्रता सेनानी गणेश प्रसाद वर्मा : क्रांतिपथ से गांधीपथ तक, सस्ता साहित्य मंडल प्रकाशन, नयी दिल्ली, 2023, पृ. 20-22
11. हलधर, हवलधारी राम गुप्त, पलामू का ऐतिहासिक अध्ययन, हलधर प्रेस, डाल्टनगंज, 1972, पृ. 79, शत्रुघ्न कुमार पाण्डेय, वही, 2018, पृ. 26
12. चंचल, रमेश, गढ़वा का इतिहास, अशु प्रकाशन, डाल्टनगंज, 1996, पृ. 93। शत्रुघ्न कुमार पाण्डेय, पूर्वोक्त, 2018, पृ. 160-61।
13. गुप्त, मन्मथनाथ, भारत के क्रांतिकारी, हिन्द पॉकेट बुक्स, हरियाणा, 2019, पृ. 122-23 चतुर्वेदी, बनारसी प्रसाद (संपा.), अमर शहीद अशफाक उल्ला खां, राजकमल प्रकाशन, प्रा. लि., नयी दिल्ली, 2018, पृ., 134-35, 150-51। बक्शी, शचीन्द्र नाथ, क्रांति पथ पर चलते चलते....., अमातारा पब्लिकेशन, दिल्ली, 2023, पृ. 45-48। सरल, श्रीकृष्ण, 'शचीन्द्रनाथ बक्शी' क्रांतिकारी कोश, चतुर्थ खंड चार, प्रभात प्रकाशन प्रा. लि., नयी दिल्ली, 2001, पृ. 315
14. कुंड मुहल्ला में सैयद साद काजी का भी निवास था। साद प्रसिद्ध स्वतंत्रता सेनानी थे। 1942 में उन्हें गिरफ्तार किया गया था। सैयद साद से अशफाकउल्ला खां का निकट का संबंध रहा है।
15. हलधर, हवलधारी राम गुप्त, पूर्वोक्त, पृ. 26
16. सिन्हा, प्रो. कन्हैया प्रसाद, महान् क्रांतिकारी श्याम बर्थवार, नोशन प्रेस, चेन्नई, 2018, पृ. 51-52
17. वही, पृ. 52
18. वही, पृ. 52-54
19. वही, पृ. 54 *ast*
20. गृह (राजनीति), बिहार और उड़ीसा के मुख्य सचिव को पलामू के उपायुक्त का टेलीग्राम, मेमो नं. 2903, 27 मई 1929, बिहार राज्य अभिलेखागार निदेशालय, पटना।
21. गृह (राजनीति), बिहार और उड़ीसा के मुख्य सचिव को छोटानागपुर के आयुक्त का पत्र, मेमो नं0 2903, 28 मई 1929, बिहार राज्य अभिलेखागार निदेशालय, पटना। पलामू के उपायुक्त द्वारा छोटनागपुर के आयुक्त को लिखे गया पत्र का मूल इस प्रकार है। यह पत्र बिहार-उड़ीसा के मुख्य सचिव को भी प्रेशित किया गया था :*In continuation of my telegram of Yesterdaym I am writing to give you further details of the mail robbery in Daltonganj. On 27th May 1929 at about 8:30*

PM the postal runner Sheonandan Ram Kahar accompanied by the postal peon Lalchand appeared at the Sub Inspector of the police Sadar and reported that the same evening at about 7:30 pm he and his campanion, were as usual, carrying the mail bags on push-cart to the railway station from Daltonganj Post Office. When they arrived near the Circuit House at the corner of Deputy commissioner's compound, about 20 persons armed with lathis came from the khas mahal paras jungle close to Dak Bunglow, attacked the complainant and his companoin with lathis and carried away all eight mail bags that were on the mail cart. After robbing the mail bags the assailants again disappeared into the paras jungle. The complianant could not identify the assailants as it was dark night but stated that they has vests and kurta and wore their dhoties tied up like kachchha.

A case under 395, IPC was drawn up and the investigation was taken up immediately. On receiving the information, myself and Superintendent of Police arrived on the spot immediately and had a careful search made I the Paras Jungle and in the town but not trace of the assailants could be found. The peon Sheonandan had only slight injury on the back and the fingers but his companion Lalchand was bleeding profusely with a fairly deep injury on his head. On 28th morning the mail bags, which contained letters, insured covers and parcels were found lying in Shahpur jungle at a distance of a mile from the place of occurrence across the Koel river. All the bags, expect three which were practically empty, were found cut open and the letters, parcels etc lying scattered on the ground. The contents of the insured and registered covers as well as cash in the bags were all found missing. It is estimated by the postal authorities that the dacoits have taken away cash and notes to the value of about Rs. 2000.

Owing to he fact that on the evening 27th instant a charity performance was being given by the orphanage (founded by Madan Mohan Malviya) which attracted a large portion of the population of the town, the locality were the ocurrence took plac was deserted, which helped the decoits in carrying out the daring robbery. No clue has been yet obtained for tracing out the culprits. There is so far no material to suspects that the dacoity was of a political nature. The criminal Domes of Daltonganj and Shahpur and other badmashes and gamblers of the town are suspected to have commited the offence. Vigprous investigation is going on with a view to trace the criminals.

[22]. वही।

[23]. वही।

[24]. वही।

[25]. वही।

[26]. वही।

[27]. श्रीवास्तव, डॉ. नागेन्द्र मोहन प्रसाद और जयश्री दत्त, आजादी की जंग : बिहार के मशहूर क्रांतिकारी, पूर्वोक्त, पृ. 146 गया शड्यंत्र केस के ट्रायल के दौरान श्याम बर्थवार का बयान के अंश से उद्धृत।

[28]. वही।

[29]. वर्मा, महावीर, पूर्वोक्त, पृ. 126

[30]. कुमार ललित, पूर्वोक्त, पृ. 22
गृह (गोपनीय, विशेश शाखा), पुलिस उपमहानिरीक्षक, पटना का बिहार–उड़ीसा के मुख्य सचिव को पत्र,संचिका संख्या 22/11, 1 नवम्बर 1930, बिहार राज्य अभिलेखागार निदेशालय, पटना। *Secret Dept. 22/11, dated 01.11.1930 : But contrary to this, letter made available from the secret department of government of Bihar dated 01.11.1930 written from the office of Deputy Inspector General of Police CID, Patna, addressed to the Secretary says – One Shib Chanan Ray who is closely connected with Shyam Charan Barthuar, and who was arrested about the same time in connection with the Benaras Bomb case, had made a statement to the United Province Police, wherein one para reads as follows : 'Towards the end of the August for 1930 Shib Charan Ray told me that I could have the black short and black shirt which he had used in the commission of a mail robbery close to Daltonganj.'From this it appear that the Palamau revolutionaries with the assistance of the Benaras revolutionaries were responsible for this 'Actions' in Palamau district. Several mail robberies have been reported from the Palamau district during this year, one of which occurred on the 31st July 1930 and I am forwarding the information to the Superintendent of Police for the purpose of further enquiry, the result of which will be communicated to you in due course.*

[31]. जैन, रूपवती और जैन, विमल प्रसाद, क्रांतिकारी जीवन की कुछ झलकियां, कन्सेप्ट पब्लिशिंग हाउस, नयी दिल्ली, 2003, पृ. 14। विमल प्रसाद जैन हिन्दुस्तान सोशलिस्ट रिपब्लिक एसोसिएशान के सक्रिय सदस्यों में से एक थे।

[32]. उपरोक्त, पृ. 36

UGC Journal No. (Old) 2138
Peer-Reviewed Research Journal
Impact Factor 6.375, ISSN 0975-4083
Vol.- 28, Hindi Edition, Year-14, March 2025

भारतीय धर्म का विकास

• माया सिंह

सारांश- भारत के निवासियों के धार्मिक विश्वासों और अनुष्ठानों के बारे में बताने वाले सबसे प्राचीन पुरातात्विक अवशेष दूसरी-तीसरी सहस्राब्दी ई.पू. की सिन्धु सभ्यता में देखने को मिलते है। यह एक उन्नत सभ्यता थी, जिसने कास्य धातुकर्म तथा अन्य शिल्पों व धन्धो का प्रचुर विकास तथा पकी हई ईटों की इमारतों वाले नगरों का निर्माण किया था। उसमें लेखनकला का भी आविर्भाव हो चुका था, पर अभी तक उस लिपि को नहीं पढ़ा जा सका है। ऐसा माना जाता है कि यह सभ्यता सभवत द्रविण जाति के लोगों की थी।

मुख्य शब्द- धर्म, धार्मिक विश्वास, कास्य धातुकर्म, सभ्यता

सिन्धु सभ्यता के निर्माताओं के धर्म के बारे में केवल अनुमान ही लगाया जा सकता है। इस सभ्यता की विभिन्न स्थलियों से बहुत बड़ी मात्रा में मुद्राओं पर पशुओं, यथा वृषभ, हाथी, बाघ तथा गेंडे के चित्र खुदे हुये मिले है। यह शायद पशु पूजा के प्रचलन की ओर संकेत करता है। वृक्ष पूजा के भी साक्ष्य मिले है। स्त्रियों तथा पुरुषों की लघु मूर्तियाँ भी पायी गई है, जो संभवत: देवमूर्तियाँ थी। कुछ मुद्राओ लेड पर श्रृंगधारी त्रिमुख पुरूष की आकृति भी देखने को मिली है, जिसका सम्बन्ध कतिपय विद्वानों ने उत्तर वैदिक कालीन हिन्दू देवता शिव से जोड़ने का प्रयास अर्थव किया है। मंदिरों के अवशेष नहीं मिले हैं, मगर पक्की ईंटों से बने अनेक छोटे-बड़े मिनी मकान तथा स्नानागार अवश्य देखने को मिले हैं। इससे उनके अनुष्ठानिक स्नान करने का अनुमान किया जा सकता है, जैसा कि भारत में आज भी किया जाता है।

भारतीय लोगों के धर्म के बारे में विस्तृत जानकारी हमें उस युग से मिलनी शुरू होती है जब उत्तर-पश्चिम से आर्य जनजातियों ने (लगभग दूसरी सहस्राबदी ई. पू. के मध्य) भारत में प्रवेश किया था। तब से लेकर आज तक के भारतीय धर्मों के इतिहास को तीन कालों में बाँटा जा सकता है- वैदिक काल, ब्राह्मण काल और हिन्दू काल। पहले काल को भारत के प्राचीनतम धार्मिक ग्रन्थ वेदों के नाम से वैदिक काल कहा जाता है। वेदों में सबसे प्राचीन ऋग्वेद को माना जाता है। जो स्तुति मंत्रों का संकलन है। उसमें ही सम्बद्ध प्रार्थना मंत्रों एवं श्लोकों का संकलन सामवेद और यज्ञादि में प्रयुक्त मंत्रों का संकलन यजुर्वेद है। सबसे बाद में रची गई संहिता अथर्ववेद है, जिसमे जादू-टोना तथा कर्मकाण्ड से सम्बन्धित मंत्र संकलित किये गये हैं।

• अतिथि विद्वान, इतिहास विभाग, शासकीय महाविद्यालय रामपुर नैकिन जिला-सीधी (म.प्र.)

वेद बहुत बड़ी रचना है। अकेले ऋग्वेद में ही 1028 ऋचायें (श्लोक) है। बहुत लम्बे समय तक उन्हें एक व्यक्ति से दूसरे व्यक्ति और एक पीढ़ी से दूसरी पीढ़ी को मौखिक रूप से ही हस्तांतरित किया जाता रहा। काफी लम्बे अरसे के बाद लेखन कला का ज्ञान हो जाने पर ही उन्हें लिखा व सम्पादित किया गया। उनसे हमे भारतीय आर्यों के धर्म की आरंभिक अवस्था का थोडा बहुत स्पष्ट चित्र अवश्य मिल जाता है।

ईरान के पठार से भारत में प्रवेश करने वाले आर्य सांस्कृतिक दृष्टि से सिंधु सभ्यता का निर्माण करने वाली देश की मूल आबादी से कोई भी सम्बन्ध नहीं रखते थे और उनसे बहुत पिछड़े हुये थे। वे पशुचारी यायावरी तथा सैनिक जनतंत्र की अवस्था से गुजर रहे थे। उन्होंने भारत के मूल निवासियों से लड़ाईयों में आर्यजन जातियों का नेतृत्व किया। उन्होंने पहले उत्तर पश्चिमी भारत को जीता फिर सिंधुघाटी को जीता तदुरांत गंगाघाटी को भी जीत लिया। इसकी जानकारी हमे ऋग्वेद तथ अन्य वेदों को देखने से मिलती है।

उस समय भारतीय आर्यों के धर्म में बहुदेववाद का प्राधान्य था। माना जाता है कि देवताओं की संख्या 33 थी। इनमें इन्द्र उनका आरंभिक देवता माना जाता है। वह उनका सबसे अधिक लोकप्रिय देवता है और 250 से अधिक ऋचायें अकेले उसे ही समर्पित है। यह एक ओर जहाँ युद्ध का देवता है वहीं दूसरी ओर वृष्टि तथा तड़ित का। कुछ अन्य रचनाओं में उसे वज्रपाणि, महान आकाशीय देवता और यहाँ तक कि सूर्य एवं प्रकाश का स्वामी भी बताया गया है। काले मेघों का प्रतीक वृज नामक राक्षस को मारने के कारण ही इन्द्र को वृजघ्न भी कहा जाता है। इस दैत्य से सभी देवता डरते थे और अकेले इन्द्र ने ही उससे लड़ने का साहस दिखाया और उसे मार डाला।

दूसरा देवता वरुण आकाशीय व भौमिक जल का देवता था। वेदों की कुछ ऋचाओं में वरुण को सर्वोच्च देवता बताया गया है। कुछ विद्वान उसे आर्यों का एक मात्र सबसे प्राचीन देवता मान लिया है। आकाश के एक अन्य देव को दयौ के रूप में भी कल्पित किया गया है। यह दिन के आकाश का मूर्तिमान रूप है। उसे पितर (पिता) भी कहा गया है। जो युनानी देवता जीयस पाटेर और रोमन देवता जुपीटर का समरूप है। पर्जन्य जैसा कि इन्द्र और वरुण का मिला-जुला रूप है, वह तड़ित तथा भूमि को सगर्भा बनाने वाली वृष्टि (वर्षा) का मूर्तरूप देवता है।

सूर्य की प्रकल्पना भी बहुत सारे देवताओं के रूप में की गई है। यथा सूर्य, सविता, (पुनरुद्धारक), पूषण (सूर्य को ताप का देवता, मनुष्यों का मित्र पशुधन का रक्षक तथा संरक्षक)। इन्हीं से मिलता-जुलता एक देवता मित्र है, जिसका उल्लेख वेदों में सामान्यत: वरूण के साथ मिलता है और उसे मनुष्यों का रक्षक (मित्र) माना जाता है। देवताओं के इसी समूह में विष्णु को भी सम्मिलित किया जाना चाहिये। वैदिक देव-मण्डल में उसका बहुत ही सामान्य स्थान है। किन्तु आगे चलकर वह हिन्दू धर्म का एक सबसे बड़ा देवता बन गया। तडित तथा मेघ गर्जन के देवता इन्द्र और इन्द्र के सहचर मरूत देवता है जो वायु के प्रतीक है और निरंतर आकाश में विचरते रहते है। उनका पिता शक्तिशाली और प्रचण्ड रूद्र है, जिसे आँधी और मेघ का देवता कहा गया है।

प्रभात का मूर्तरूप देवी ऊषा है जो वैदिक देवमण्डल की इनी-गिनी स्त्री

देवताओं में से एक है। अश्विनी नामक देवता नये दिन के आरंभ की पूर्व सूचना देते हैं। अदिति की संकल्पना काफी अस्पष्ट है। उसे असीम विस्तार का मूर्तरूप माना गया है। आगे चलकर उसे पृथ्वी का पर्याय बना दिया गया। कुछ देवता कर्मकाण्ड से सम्बन्ध रखते हैं और देवताओं तथा मनुष्यों के बीच मध्यस्थ का काम करते हैं। इनमें प्रमुख अग्नि है। वेदों की करीब 205 ऋचायें अग्नि का स्तुति गान करती हैं। उसे वास्तविक अग्नि जैसे ही सम्बोधित किया जाता है, पर यह साधारण नहीं, अपितु यज्ञ की अग्नि होती है। कर्मकाण्ड से ही सम्बन्धित एक अन्य देवता सोम भी है। वह वास्तव में एक विशेष वनस्पति से तैयार किया गया मादक पेय है, जिसे यज्ञ आदि अनुष्ठानों के दौरान पिया जाता था और देवताओं को भी चढ़ाया जाता था। ऐसा माना जाता था कि वह उन्हे बहुत प्रिय है, मगर सोम को एक पृथक देव का दर्जा भी प्राप्त था।

ऋग्वेद की कुछ ऋचायें सामूहिकत: सभी देवताओं को समर्पित हैं। इनमें उन्हें विश्वदेव के नाम से संबोधित किया गया है। वैदिक देवताओं को दो विरोधी और कुछ हद तक परस्पर शत्रुतापूर्ण समूहों में बाँटा जा सकता है, असुर और देव। असुरों की श्रेणी में दयौ, वरूण, मित्र, सविता और अदिति आदि आते हैं और देवों की श्रेणी में शेष अधिकांश देवता आते है। संभव है कि असुर अधिक प्राचीन देवता थे। आगे चलकर भारतीयों के लिये असुर दुष्ट शक्तियों और देव शुभ तथा नेक शक्तियों के प्रतीक बन गये। राक्षसों को भी दुष्ट शक्तियों की श्रेणी में माना जाता था। इन्द्र और अन्य देवता सदैव उनसे लड़ते रहते थे। आर्यों ने राक्षसों के रूप में अपने स्थानीय शत्रु द्रविड़ जनजातियों से निरन्तर संघर्ष करते रहते थे।

आर्य लोग देवताओ के अतिरिक्त पितरो की पूजा भी करते थे। वेदों में पितरों का बहुत अधिक उल्लेख मिलता है। मगर उनका स्थान गौण ही था। वैदिक कार्यकाण्ड में यज्ञ सबसे बड़ी भूमिका निभाते थे। वे देवताओं से सम्पर्क करने का मुख्य साधन थे। देवताओं को अधिकांशत: सोमरस, गाय का दूध, घी, शहद और अन्न आदि अर्पित किये जाते थे। यज्ञ कराने वाले पुरोहितों का उनकी श्रेणी और कार्य के अनुसार वेदों में अलग-अलग नाम बताया गया है। कुछ यज्ञ के लिये अग्नि जलाते थे तो कुछ आहुति आदि देते थे, पर पेशेवर पुरोहित वर्ग अभी तक पैदा नहीं हुआ था। यज्ञ के दौरान आहूतियों और बलियों को देवताओ को भोजन कराने जैसा समझा जाता था और आस्तिकों का इस कार्य के प्रति रवैया अत्यन्त व्यवहारिक था। यह एक तरह का सौदा था कि मैं तुम्हें देता हूँ तुम मुझे आहुति देते हो।

यज्ञों से सम्बन्धित मंत्रों की शक्ति वाहकारी समझी जाती थी। यदि यज्ञ विधिवत किया गया है और मंत्र सही ढंग से उच्चारित किये गये है. तो देवता मनुष्य की प्रार्थना को ठुकरा नहीं सकते थे। ऋग्वेद के दसवे मण्डल में जिसे सबसे बाद में रचा हुआ माना जाता है, विराट पुरुष के शरीर से विश्व की उत्पत्ति का मिथक मिलता है, देवताओं ने उसे मारकर उसके शरीर के खण्ड-खण्ड कर दिये और उनसे सारे दृश्य जगत का निर्माण किया। वेदो में ही यम को प्रथम मानव बताने वाला मिथक भी मिलता है। सबसे पहले यम की ही मृत्यु हुई थी, इसलिये मृत्युलोक का राजा भी वही बना। वैदिक धर्म की परलोक सम्बन्धी कल्पनायें भी बहुत अस्पष्ट है। उसमें मरणोपरान्त प्रतिफल की कोई

चर्चा नहीं की गई है। शरीर से पृथक आत्मा का विचार भी संभवत: अभी उत्पन्न नहीं हुआ था। वैदिक धर्म पूर्णत: इहलोकोन्मुख धर्म है, न कि परलोकोन्मुख।

सारांशत: वैदिक काल का धर्म अपेक्षाकृत सरल और सहज है। उनमें सबसे अधिक जोर यज्ञ अर्थात् देवताओं को प्रसन्न करने के लिये उन्हें भेंटे और बलियों देने पर किया गया है। पुरुष देवताओं की पूर्ण अभिभाविता और स्त्री देवताओं का लगभग अभाव समाज में पितृसतात्मक व्यवस्था की व्याप्ति के सूचक प्रतीत होते है। वेदों में पवित्र स्थलों या मंदिरों का उल्लेख नही मिलता। यज्ञ घर में ही या किसी खुली जगह पर विशेष वेदिका बनाकर कर लिये जाते थे। लगता है कि उस समय देवताओं की प्रतिमायें भी नहीं थी। यह धर्म अपेक्षाकृत सरल, सहज और सुग्राह्य सामाजिक व्यवस्था को प्रतिबिम्बित करता था।

ईसा से लगभग एक हजार वर्ष पूर्व के आरंभ में भारत में रहने वाली जातियों के सामाजिक जीवन में गंभीर परिवर्तन आये। आर्यों ने सिन्धु और गंगा की घाटियों पर अपना आधिपत्य जमा लिया और स्थायी कृषि शुरू करके यहाँ कई निरंकुश आरंभिक दास प्रथात्मक राज्य स्थापित कर लिये। इस संक्रमण के दौरान आर्यो की संस्कृति एवं रहन-सहन पर स्थानीय अनार्य (द्रविड तथा मुण्डा) आवादी का प्रवल प्रभाव पड़ा। इन जन जातियों की संस्कृति ने भारत के सांस्कृतिक विकास में बहुत बड़ा योग दिया है, और यह धर्म के क्षेत्र में भी प्रतिविम्बित हुआ है।

विजेताओं और विजित आवादी के बीच और साथ ही स्वयं विजेताओं के बीच भी सामाजिक अन्तर्विरोध तीव्रतर होते जा रहे थे। अलग-अलग राज्यों के बीच संघर्ष चल रहा था। एक हजार ई.पू. के मध्य में इस संघर्ष में सबसे शक्तिशाली मगध सिद्ध हुआ, जो गंगा घाटी के निचले भाग में स्थित था और जो अब लगभग सारे ही उत्तरी भारत को एकीकृत करने वाला केन्द्र बन गया था। इसी दौर में भारत में वर्ण व्यवस्था (जाति प्रथा) का भी विकास हुआ, जो आज तक इस देश के सामाजिक जीवन का विशिष्ट लक्षण बना हुआ है। प्राचीन काल में चार वर्ण थे- ब्राह्ण, क्षत्रिय, वैश्य और शूद्र। आज की जातियों से इन प्राचीन जातियों का भेद दिखाने के लिये प्राय: अभी भी उन्हें वर्ण कहा जाता है।

एक वर्ण के तौर पर अपने को शेष समाज से अलग-थलग रखने वाले वशानुगत पुरोहितों के तबके वेदो के ज्ञाता ब्राह्णों ने उत्तरी भारत के राज्यों में प्रभुत्वपूर्ण स्थिति प्राप्त कर लिया था। वैदिक काल में ऐसा कोई अलग-थलग सामाजिक तबका नहीं था। उसका निर्माण व्यापक वर्गोय विभेदीकरण के फलस्वरूप हुआ। ब्राह्णों ने धर्म एवं धार्मिक अनुष्ठानों से सम्बन्धित सारे क्षेत्र पर एकाधिकार स्थापित कर लिया और पवित्र ज्ञान के वदौलत समाज में अत्यधिक प्रभावशाली वन बैठे। ब्राम्हणों के अलावा क्षत्रिय भी समाज में बड़ा महत्व तथा प्रभाव रखते थे। प्राय: सभी राजा, सामन्त और योद्धा इसी वर्ण के थे। तीसरा वर्ण वैश्यों का था, जो कृषक, पशुपालक और व्यापारी थे और स्वतंत्र आवादी में गिने जाते थे। ये तीनों वर्ण उच्च और आर्य माने जाते थे। चौथा वर्ण अधिकार हीन दासों और शूद्रों का था, जिनमें आर्यों द्वारा जीते हुए भारत के मूलवासियों के वंशज शामिल थे। प्राचीन भारत के कानूनों एवं धार्मिक नियमों का यह संकलन मनुस्मृति जो अनुमानत: 5वीं शताब्दी ई. पू. में रचा गया था, पर जिसे लिखित रूप काफी वाद में जाकर प्राप्त हुआ,

सभी आगामी शताब्दियों के लिये भारत की सामाजिक व्यवस्था की विधि संहिता वन गया। उसमें न केवल भारतीय समाज की वर्ण संरचना की स्पष्ट रूप रेखा निर्धारित है, बल्कि उसे धार्मिक स्वीकृति तथा पवित्रता भी प्रदान की गई है। मनुस्मृति के अनुसार समाज में सर्वोच्च ब्राम्हण हैं उनके विशेषाधिकारों और सामाजिक स्थिति के वारे में मनुस्मृति कहती है- ब्राम्हण जन्म से ही पृथ्वी पर सर्वोच्च और सभी प्राणियों का स्वामी होता है। उसका जन्म धर्म की निधि की रक्षा के लिये होता है। विश्व में जो कुछ भी है, सब ब्राम्हण की संमत्ति है। अपने उच्च जन्म के कारण इस सब पर ब्राम्हण का ही अधिकार हो सकता है। ब्राम्हण केवल अपना भोजन खाता है, केवल अपना वस्त्र पहनता है, और केवल अपनी वस्तुयें दान में देता है। अन्य सभी लोग ब्राह्मण की दया से जीते हैं।

ब्राह्णों का मुख्य और सम्मान पूर्ण कार्य वेदों का अध्ययन करना और उन्हें दूसरों को सिखाना है। मनुस्मृति के अनुसार ब्राह्णों के जीवन को चार भागों यथा ब्रह्चर्य, गृहस्थ, वानप्रस्थ और सन्यास में वाँटा गया है। मनुस्मृति की सबसे बड़ी विशेषता है ब्राह्णों में देवत्व का आरोपण। वर्ण व्यवस्था को वह स्वयं ईश्वर द्वारा स्थापित सिद्ध करती है। आर्य वर्णों के तीन लोगों को उपनयन (दीक्षा) के संस्कार से अनिवार्यत: गुजरना पड़ता था। ब्राम्हण को जीवन के सातवें वर्ष में क्षत्रियों को दसवें वर्ष में और वैश्यों की ग्वारहवें वर्ष में उपनयन के समय यज्ञापवीत धारण करवाया जाता था, जिसे बाद में कभी उतारा नहीं जाता था। उपनयन सस्कार को एक दूसरा जन्म जैसा माना जाता था। इसी से इन तीनों वर्षों के लोग द्विज कहलाते थे। शूद्रों का उपनयन संस्कार नहीं होता था और उन्हें अनार्य समझा जाता था।

मनुस्मृति में राजा और उसकी सत्ता के बारे में काफी कुछ कहा गया है। उसके अनुसार राजा को उसकी सत्ता स्वयं ईश्वर ने प्रदान की थी। राजा के अभाव में भय के कारण अपनी सुरक्षा हेतु जब लोग चारो दिशाओं में भाग रहे थे, तब ईश्वर ने इस सारी सृष्टि के रक्षार्थ राजा का निर्माण किया। राजा इन्द्र, अनिल, यम, सूर्य, अग्नि, वरूण, चन्द्रमा और कुबेर के शाश्वत अंशों से बना है, इसलिये उसमें अन्य सभी प्राणियों से अधिक शक्ति सद्बुद्धि और आभा होती है। उसका मुख्य धर्म वर्ण व्यवस्था और ब्राह्णों के विशेषाधिकारों की रक्षा करना है। प्रात: उठने के बाद वह (राजा) शासन विधि के ज्ञाता ब्राह्णों की पूजा करे और उनकी मंत्रणा के अनुसार कार्य करे, तथा वृद्ध ब्राह्णों की, जो वेदों के ज्ञाता और पावन है, प्रतिदिन पूजा करे, उसके लिये युद्ध में पराक्रम, पूजा की रक्षा और ब्राह्णों की पूजा ही परम सुख की प्राप्ति का सर्वोत्तम साधन है।

इस युग में देवमण्डल में सर्वोत्तम स्थान एक नये देवता ब्रह्म को दिया जाने लगा था और उसे ही वर्ण व्यवस्था का जनक बताया गया। इस युग के एक मिथक के अनुसार वर्णों की उत्पत्ति ब्रह्म के शरीर के विभिन्न भागों यथा-मुख से ब्राह्णों की, भुजाओं से क्षत्रियों की, कटि प्रदेश से वैश्यों की और पैरों से शूद्रों की हुई है। स्वयं ब्रह्म ने ही प्रत्येक वर्ण के कार्य भी नियत किये। ब्राह्णों को उसने वेदों के अध्ययन तथा अध्यापन, अपने तथा अन्यों के लिये यज्ञ करने और दान लेने तथा देने का कार्य सौंपा। क्षत्रियों को उसने लोगों की रक्षा करने, दान देने यज्ञ करने, वेदाध्ययन करने और विषयासक्ति से बचने का आदेश दिया और वैश्यों का कर्तव्य पशु पालना, यज्ञ करना, वेदाध्ययन करना, व्यापार,

महाजनी तथा कृषि कार्य करना बनाया। ईश्वर ने शूद्रों के लिये एक ही कार्य निर्दिष्ट किया और वह है विनम्र भाव से इन तीन वर्षों की सेवा करना।

भारतीय धर्म के इतिहास के इस सारे युग को ब्राह्मणों का प्राधान्य होने के कारण सामान्यत: ब्राह्मण काल कहा जाता है। कालांतर में ब्राह्मणों की सामाजिक भूमिका बढ़ने के साथ-साथ कर्मकाण्ड भी जटिलतर बनते चले गये। देवमंडल में भी गंभीर परिवर्तन हुये। प्राकृतिक शक्तियों के प्रतीक देवता, जिनका वेदमंत्रों में उल्लेख मिलता है, पृष्ठभूमि में चले गये और उनकी जगह पर अब नये देवता आ गये। सर्वोच्च देवता अब ब्रह्म को माना जाने लगा। इस देवता की उत्पत्ति का अत्यंत

रोचक वर्णन वेदों में मिलता है। ब्राह्मणस्पति नामक देवता जो प्रार्थनाओं का साकार रूप था, ब्राह्मणकाल में वह सृष्टि का सर्वोच्च देवता बन जाता है। यज्ञ से सम्बंधि ति मंत्रोच्चार तथा ब्राह्मणों के अनुष्ठानिक कार्यों में इतनी अधिक शक्ति बतायी जाती है कि सारा विश्व उनके सामने झुक जाता है। ब्रह्म जो अपने में सब कुछ समेटे हुये है, इस शक्ति का ही मूर्तरूप है।

इस युग में भारत में यह उक्ति पैदा हुई कि विश्व देवताओं के वश में है, देवता मंत्रों के वश में हैं, और मंत्र ब्राह्मणों के वश में हैं। अत: ब्राह्मण ही हमारे देवता हैं। दूसरे देवताओं में से सबसे अधिक महत्व विष्णु और शिव को दिया जाने लगा। शिव को वैदिक देवता रूद्र के साथ जोड़ा जाता है, मगर विष्णु अपने स्वरूप एवं कार्यों की दृष्टि से यह एक नया देवता माना जाता है। इन तीन मुख्य देवताओं के अतिरिक्त बहुत से अन्य देवताओं की भी कल्पना की गई। उनमें महत्वपूर्ण स्थान स्त्री देवताओं को प्राप्त हुआ जिनका वैदिक देवमंडल में लगभग अभाव था। अब हर पुरुष देवता के साथ एक स्त्री देवता भी होती थी, जो उसकी पत्नी मानी जाती थी। उदाहरण के लिये विष्णु के साथ लक्ष्मी को और शिव के साथ पार्वती को जोड़ दिया गया। नये देवी-देवताओं ने वैदिक देवताओं को पृष्ठभूमि में ढकेल दिया और समय के साथ अनेक सामुदायिक देवी-देवताओं को ब्राह्मण देव मंडल में सम्मिलित कर लिया गया। प्राचीन वैदिक (आर्य) धर्म में से केवल पितर पूजा ही बची रह गयी। मनुस्मृति में उसे देव पूजा से भी अधिक महत्व दिया गया है। द्विजों के लिये पितरों के सम्मान में किये जाने वाले अनुष्ठान देवताओं की पूजा से भी अधिक महत्वपूर्ण है।

ब्राह्मण काल में कर्मकाण्ड पूर्णत: अभिजात मूलक हो गया। अब यज्ञ और बलि जैसे मुख्य अनुष्ठानों का संचालन और मंत्रोच्चार केवल ब्राह्मण ही कर सकते थे। इसके लिये उन्हें आमंत्रित किया जाता था। यज्ञ और बलि पर बहुत खर्च होता था, अत: वे केवल संपन्न और अभिजात लोगों द्वारा ही किये जा सकते थे। आम लोग उनमें भाग नहीं ले सकते थे। सार्वजनिक मंदिर भी अभी तक नहीं बनाये जाते थे। देवताओं को अब वर्णों से सम्बद्ध कर दिया गया। उदाहरणार्थ ब्रह्म को ब्राह्मणो का देवता माना गया और उसकी पूजा प्रार्थना वे ही कर सकते थे। इन्द्र जो वैदिक देवमंडल में से अपना महत्व बनाये रखने वाला एक मात्र देवता था, क्षत्रियों का देवता बन गया। रूद्र, जिसे आगे चलकर शिव का एक रूप बताया गया, वह वैश्यों और कृषकों का एक प्रमुख देवता बन गया। शूद्रों को अधिकृत धर्म और अनुष्ठानों से पूरी तरह अलग ही रखा जाता था।

पुर्नजन्म का सिद्धांत भी इसी युग में प्रतिपादित किया गया। जो आगे चलकर

हिन्दू धर्म का एक आधारभूत सिद्धांत बन गया। पुनर्जन्म का यह विचार ब्राह्मण धर्म में प्राचीन स्थानीय विश्वासों से आया था। वैदिक धर्म में मरणोपरांत आत्मा की नियति के बारे में बहुत अस्पष्ट बाते ही कही गई थी और पुनर्जन्म लेने के विश्वास के सम्बंध में तो वे पूरी तरह से अनभिज्ञ थे। जबकि स्थानीय जनजातिया (द्रविण और मुण्डा) के विश्वासों में पुनर्जन्म विषयक अवधारणाओं को महत्वपूर्ण स्थान प्राप्त था। ब्राह्मण धर्म में आगे वर्ण व्यवस्था की भावना के अनुरूप, उनका ही विकास हुआ। मनुस्मृति में पुनर्जन्म के सिद्धांत की चर्चा केवल अंतिम 12 वें अध्याय में की गई है। जबकि अन्य अध्यायों में उसकी जगह पर पापियों के नरक में यंत्रणाये भोगने का ही जिक्र किया गया है। जबकि दूसरी ओर उपनिषदों में आत्मा के पुनर्जन्म का विचार अवश्व छाया हुआ है।

पुनर्जन्म के सिद्धात के अनुसार मनुष्य की मृत्यु के बाद उसकी आत्मा नष्ट नहीं हो जाती, अपितु एक अन्य भौतिक पिण्ड में प्रवेश कर जाती है। वह कौन से पिण्ड का रूप लेगी, यह वर्तमान जीवन में मनुष्य के कर्मों पर और मुख्य रूप से उसके द्वारा अपने जाति धर्म के पालन पर निर्भर करता है। मनुष्य का मुख्य धर्म है अपनी जाति के लिये विहित आचार नियमों का पालन करना। यदि शूद्र अपने जाति धर्म का पालन करते हुये विनम्र भाव से अन्य जातियों की भी सेवा करता है, तो वह मरणोपरांत किसी उच्चतर जाति में पैदा हो सकता है। इसके विपरीत यदि मनुष्य आचरण करता है, तो अगले जीवन में उसे किसी पशु योनि में जन्म लेना पड़ेगा। ब्राह्मणों ने पापों और उनके लिये मिलने वाले दंडों की श्रेणियाँ भी निर्धारित की मनसा पाप करने पर मनुष्य को अगले जीवन में निम्नतर जाति में, बाचा पाप करने पर पशु योनि में और कर्मणा पाप करने पर जड़ योनि में जन्म लेना पड़ेगा।

तत्कालीन भारतीय धार्मिक दर्शन ने पुनर्जन्म के सम्बंध में एक सैद्धांतिक आध गार कर्म के सिद्धांत को खोज निकाला। कर्म की संकल्पना को भारतीय दर्शन के विभिन्न सम्प्रदायों ने अलग अलग ढंग से परिभाषित करने का प्रयास किया है। व्यक्ति जीवन में अच्छे-बुरे जो भी कर्म जानबूझकर करता है, उनके उसके लिये तदनुरूप परिणाम भी निकलते हैं। अच्छे कर्म का मनुष्य को पुरस्कार मिलता है और बुरे कर्म का दंड। मगर यह दंड या पुरस्कार समान्यत: इसी जन्म में नहीं अपितु अगले जन्म में पाता है। स्वयं वर्तमान जीवन में मनुष्य के भाग्य का प्रश्न उसके पूर्व जन्म में किये गये कर्मों से निर्धारित होता है। मनुष्य अपने आचरण से स्वयं ही अगले जन्म में अपने भाग्य का निर्माण करता है। इस तरह पुनर्जन्म के सिद्धांत के मूल में कर्म की दार्शनिक संकल्पना विद्यमान थी।

ब्राह्मण काल में उपनिषदों का महत्व इतना बढ़ा कि कभी-कभी इस काल को उपनिषद काल भी कहा जाता है। उपनिषदें बहुत सारी धार्मिक दार्शनिक पद्धतियो का प्रतिनिधित्व करती हैं। उनसे ही सम्बद्ध भारतीय दर्शन की छह शास्त्रीय रूढ़िवादी पद्धतियाँ भी प्रचलित हैं। वेदान्त, मीमांसा, सांख्य, योग, न्याय तथा वैशेषिक। उस युग में भौतिकवादी और निरीश्वरवादी दर्शन चारवाक मत के अतिरिक्त एक अन्य दार्शनिक पद्धति-योग दर्शन का भारतीय धर्म के आगे विकास में विशेष महत्व रहा है। यह एक तपस्या मूलक शिक्षा है. जो आत्मोत्कर्ष के लिये धार्मिक एवं दार्शनिक सिद्धांतों के

व्यवहारिक उपयोग पर जोर देती है। योगियों की शिक्षा तथा व्यवहार में प्राणायाम तथा अन्य विशेष आचार नियमों की प्रणाली को जिसका उद्देश्य शारीरिक शुद्धता तथा आत्मिक उत्कर्ष है, सर्वोच्च स्थान दिया जाता था।

संक्षेप में ब्राह्मण कालीन धर्म को वैदिक धर्म का शायद आगे विकास मात्र ही कहा जा सकता है। वेदों की पवित्रता में विश्वास कुछ देवताओं के नाम और यज्ञानुष्ठान को छोडकर वैदिक धर्म की कुछ ही बातें ब्राह्मण धर्म में बची रहीं । ब्राह्मण धर्म वैदिक धर्म से अत्यंत भिन्न है। ब्राह्मण धर्म के बहुत से विश्वास आर्य पूर्व धार्मिक मान्यताओं के अधिक निकट हैं। परस्पर संघर्षरत धार्मिक मतों के विकास में से कई को जन सामान्य के बीच में समर्थन भी मिला क्योंकि वे उच्च वर्णों के दमन व विरोध को प्रतिबिंबित करते थे।

ऐसे मतों में से दो जैन धर्म और बौद्ध धर्म थे, जिनका प्रादुर्भाव लगभग एक ही समय पर पाँचवी, छठवीं शताब्दी ई. पू. में हुआ। वे दोनों धर्म आपस में काफी मिलते-जुलते थे और उनका परस्पर प्रभाव निर्विवाद है। दोनों वर्ण व्यववस्था को नही मानते थे और व्यक्ति स्वयं अपने ही प्रयत्नों से दुख से निजात पाने का प्रयास कर सकता है। दोनों ही कर्म तथा पुनर्जन्म में विश्वास करते थे और दोनों में जीवन के सम्यक मार्ग की नैतिक शिक्षा को प्रथम स्थान दिया गया था।

जैन धर्म का प्रवर्तक क्षत्रिय कुल में उत्पन्न बर्धमान महावीर को माना जाता है। उनका मानना है कि सारा भौतिक विश्व एक बुराई है और मनुष्य को उससे मुक्ति पाने का प्रयत्न करना चाहिए। यह धर्म कठोर तपस्या, ब्रह्चर्य और अहिंसा पर जोर देता है। हत्या कीटों की भी न हो, इसलिये वे पानी छानकर पीते हैं तथा मुँह पर कपड़ा भी बाँधे रहते हैं। इस धर्म का प्रसार मुख्य रूप से व्यापारी वर्ग में और शहरी आबादी में हुआ। यद्यपि यह धर्म भारत में आज तक प्रचलित है, पर इसका बौद्ध धर्म की भांति भारत के बाहर प्रसार न हो सका। बौद्ध धर्म के विचार इससे भिन्न रहे। यद्यपि उसका भी जन्म लगभग उसी समय हुआ था। ईसा पूर्व अंतिम और ईसवी की आरंभिक शताब्दियों में उसका भारत में जैन धर्म की अपेक्षा व्यापक प्रचार-प्रसार हुआ। इसका कारण यह था कि उसने अपनी अपेक्षायें बहुत कड़ी नहीं रखी थी। मौयों और कुषाणों के शासन काल में यह धर्म राजधर्म तक बन गया था। इससे पुरोहितों का वर्ग बाह्मण अत्यंत चिंतित हो उठा क्यों वह अपनी पुरानी एकाधिकारी प्रभुत्वपूर्ण स्थिति को खो बैठा था। अब बौद्ध धर्म के विरुद्ध ब्राह्मणों का संघर्ष वर्ण व्यवस्था और आबादी पर अपना प्रभाव बनाये रखने के लिये किया जाने वाला संघर्ष था। इस संघर्ष में ब्राह्मणों के लिये यह आवश्यक था कि वह अपने को तथा अपने हथियारों को बदले क्योंकि जन सामान्य पर ब्राह्मण धर्म का प्रभाव कम होता जा रहा था। अत: उसे अपनी पुरानी शिक्षा और कर्मकाण्ड को लोगों की जरूरत के अनुरूप ढालना पड़ा, जिससे वह बौद्ध धर्म से सफल मोर्चा ले सके। धर्म के क्षेत्र में इन नये परिवर्तनों के साथ एक नया युग आरंभहुआ, जिसे हिन्दू काल अथवा हिन्दू धर्म का काल कहा जाता है।

इस युग की लाक्षणिक विशेषता यह थी कि कर्मकाण्ड अब अधिक जनपरक बन गया। व्यापक जन सामान्य पर प्रभाव डालने के नये तरीके निकाले गये। जनता को कर्मकाण्ड में भाग लेने और सार्वजनिक सामाजिक समारोह, अनुष्ठान, पूजा स्थल, मंदिर, तीर्थस्थान आदि भी आवश्यक थे। फलत: भारत में पहली बार इस युग में मदिरों का

निर्माण आरंभ हुआ। भारत में सबसे पुराने मदिर बौद्धों के हैं जो समाधि स्तूप या गुफानुमा चौत्य के नाम से जाने जाते हैं। इन्हीं की देखा-देखी में (जन सामान्य की कल्पना को अभिभूत करने तथा श्रद्धा युक्त भय का संचार करने हेतु अपने विराट-आकार और भव्य तथा विलक्षण वास्तु से) हिन्दू मंदिर बने। इन मंदिरों में अनुष्ठान तथा समारोह आयोजित किये जाते थे। मंदिरों के भीतर और बाहर देवी देवताओं की विशाल मूर्तियाँ लगायी जाती थी, उनकी पूजा की जाती थी और सड़कों पर उनकी शोभा यात्रायें निकाली जाती थी जबकि वैदिक धर्म में मूर्ति पूजा का प्रचलन नहीं था।

अब देवताओं से सम्बन्धित धारणाओं का स्वरूप भी अधिक जनवादी बन गया था। देवताओं के स्वरूप को जन सामान्य के निकट लाया गया। लोक देवता और लोक रक्षक देवता की कल्पना की गयी। इसी तरह अवतारों की संकल्पना उत्पन्न हुई। हर देवता का अपना पार्थिव अवतार होने लगा। कुछ अवतार जनसामान्य के प्रिय देवता बन गये। उनमें से एक जो सबसे अधिक लोकप्रिय था, विष्णु का अवतार, कृष्ण था। कृष्ण के जन्म से सम्बन्धित अनेक मिथकों की रचना की गई। उनके पराक्रमों, उनके द्वारा जनहित के लिये किये गये कार्यों और उनकी मृत्यु के बारे में अनेक कहानियाँ कही जाने लगी। ऐसा ही अवतार रामायण महाकाव्य का नायक और लंका विजय में आर्यों का पौराणिक नेता राम का भी था।

अवतार पूजा ने अनेक सम्प्रदायों को जन्म दिया। इन सम्प्रदायों के मुखिया साधु-संत होते हैं, जिन्हें गुरू कहा जाता है। हिन्दू धर्म में धार्मिक नेता यानी गुरू की भूमिका काफी बड़ी होती है। प्राचीन काल में पुरोहित केवल यज्ञ अनुष्ठान करवाते थे, मंत्र पाठ करते थे और एक दूसरे को वेद ज्ञान देते थे। जन सामान्य से उनका कोई सम्बन्ध नहीं था। किन्तु इस नवीन युग में पुरोहित जन सामान्य का शिक्षक, उनके धार्मिक जीवन के मार्गदर्शक तथा संचालक बन गये। इस तरह गुरु पूजा की नींव पड़ी। गुरू न केवल मनुष्य और देवताओं के बीच मध्यस्थ था अपितु वह स्वयं ईश्वर के अवतार सकृश्य भी था। गुरू का प्रत्येक शब्द उसके शिष्यो और भक्तों के लिये पवित्र कानून होता था। समय के साथ जातियों, व्यवसायों और स्थानों के संरक्षक देवताओं की पूजा का भी विकास हुआ। अब हर जाति के अपने अलग संरक्षक देवता थे। उनमें से कुछ को पुराने देवमण्ड़ल से लिया गया था और कुछ विल्कुल नये थे। हर ग्राम समुदाय अपने स्थानीय देवी-देवताओं की पूजा करता था।

ब्राह्मण काल में ही आर्य पूर्व आबादी के विश्वासों से सम्बंधित स्थानीय प्राचीन विश्वासों व अनुष्ठानों की भूमिका बढ़ गई थी। हिन्दू धर्म ने पशु पूजा, सर्पपूजा, बानर पूजा आदि को विधिवत मान्यता प्रदान की। अनेक हिन्दू देवताओं को जीव की आकृति के रूपों में भी दिखाया जाता है। जैसे, हनुमान को बानर के रूप में, नाग को आधा मानव तथा आधा सर्प के रूप में और गणेश को हाथी के सिर के साथ। गाय जैसे कुछ पशुओं की पूजा का प्रचलन तो आर्यों में भी था। भारत में जल पूजा ओर उसकी शुद्धता की शक्ति में विश्वास का भी काफी विकास हुआ। गंगा को पवित्र नदी माना जाने लगा और यह विश्वास पैदा होने लगा कि उसका जल मनुष्य के पापों को भी घो सकता है। आज का भी आस्तिक हिन्दू गंगा के तट पर प्राणोत्सर्ग को एक बहुत बड़ा वरदान मानता है।

कुछ सम्प्रदाय रहस्यवादी किस्म का पुट लिये हुये थे। ये मुख्यत: शक्ति पूजक सम्प्रदाय थे तथा प्रेम और मृत्यु की भयावह देवियों (शिव पत्नी दुर्गा अथवा काली) से सम्बंध रखते थे। इन सम्प्रदायों में कामेन्द्रियाँ (लिंग और योनि) महत्वपूर्ण भूमिका निभाती थी। कतिपय मुंडाजन जातियों में अतीत में किशोर बालकों को भू-देवी के समक्ष बलि करने की प्रथा थी। 18 वीं और 19 वीं शताब्दियों के साहित्य और यात्रा वृतांतों में भी पूर्वो भारत में ठगों द्वारा राहगीरों को पकड़ कर काली के सामने बलि देने के अनेक किस्से पढ़ने को मिलते हैं।

कभी-कभी प्रश्न उठता है कि कौन किस देवता को सर्वोच्च मानता है, इसके समाधान के लिये हिन्दू धर्म के अधिकांश सम्प्रदायों को दो मुख्य समूहों में बाँटा जा सकता है- विष्णु और शिव। इसके अनुरूप ही सम्प्रदायों को वैष्णव और शैव इन दो समूहों में विभाजित किया जाता है। इन सम्प्रदायों के बीच कोई संघर्ष नहीं है। जहाँ तक ब्रह्म का सवाल है, तो उसे सैद्धांतिकत: सर्वोच्च देवता माना जाता है, परंतु उसकी कोई पृथक पूजा नहीं की जाती और न ही उसका कोई अलग मंदिर ही मिलता है। हिन्दू धर्म में योग दर्शन की हठयोग से सम्बंधित शाखा का विशेष विकास हुआ है। इसके अंतर्गत योगी या फकीर अत्यंत कड़े, लोमहर्षक व्रत लेते हैं। जैसे, गले में लोहे की जाली पहने रहना, सिर भूमि में गाड़कर लेटे रहना, एक हाथ को सदा उठाये रखना, बिच्छुओं का भक्षण करना तथा जलते कोयले पर चलना इत्यादि। पुनर्जन्म में विश्वास आज भी वैसा ही बना हुआ है, जैसा कि पहले कभी था।

अगले जीवन में मनुष्य का भाग्य कैसा होगा, यह उसके इस जीवन के रहन-सहन के ढंग, जाति धर्म के निर्वाह और उसकी अंत्येष्टि पर भी निर्भर करता है। हिन्दू अपने मृतक का दाह संस्कार करते हैं। यह संस्कार किसी पवित्र नदी के तट पर किया जाता है और उसकी अस्थियाँ जल में प्रवाहित कर दी जाती है। उत्तरी भारत की कतिपय जातियो में 19वी शताब्दी तक विधवा स्त्री को पति की चिता पर जलाने की बर्बर प्रथा जारी थी। आज भी उसके उदाहरण कभी कभार, यत्र-तत्र देखने सुनने को मिल जाते हैं। भारत में धार्मिक एकता का अभाव, सम्प्रदायों की बहुलता, जाति संरचना की विषमता, वर्गोय सम्बन्धों की अत्यधिक पेचीदगी और आवादी. सामाजिक तथा राष्ट्रीय एकता के अभाव का प्रतिबिंब है।

हिन्दू धर्म को एक धर्म कहने के बजाय यदि उसे कई धर्मो की समष्टि कहा जाय तो अधिक तर्क संगत होगा। सभी हिन्दुओं के लिये साझा धर्म सिद्धांत की तीन बातें ही मान्य हैं-वेदों की प्रमाणिकता और पवित्रता में विश्वास, कर्म फल और पुनर्जन्म में विश्वास और जातियों के ईश्वर निर्मित होने में विश्वास। किन्तु धार्मिक संगठनों की विविधता तथा विखराव ने ही देश के लोगों को विदेशी आक्रमणकारियों के विरूद्ध एक होने से रोकती रहीं। इसी बजह से पहले इस देश पर मुस्लिम विजेता फिर अंग्रेज अपना शासन थोप सके ।

भारतीय राष्ट्रीय आन्दोलन के बहुत से नेताओं ने इस बात का अनुभव कर समय-समय पर धार्मिक राष्ट्रीय सुधार आन्दोलन को चलाने का प्रयास किया। इसी तरह का प्रयास मध्य युग में भी किया गया था और वह कुछ हद तक इस्लाम से प्रभावित

था। बाद में ऐसा ही प्रयास ईसाई धर्म के प्रभाव से भी किया गया। 15 वीं शताब्दी में कबीर ने जात–पात का विरोध किया और अन्धविश्वासों, देवी–देवताओं की पूजा और जटिल अनुष्ठानों के विरूद्ध लड़ाई छेड़ी तथा भारतीयों को विदेशी शासन के विरूद्ध एक करने का प्रयास किया। परिणाम यह हुआ कि एक और नीवन सम्प्रदाय (कबीर पंथ) पैदा हो गया, जो आज तक मौजूद है।

15वीं शताब्दी के अंत में मुस्लिम शासकों के विरूद्ध एक और सम्प्रदाय पैदा हुआ। यह सिख सम्प्रदाय था। इसके संस्थापक नानक पंजाव में एक खत्री व्यापारी के घर में पैदा हुये थे। वे कबीर के उपदेशों तथा पुराने वेदान्त दर्शन से बहुत प्रभावित हुये थे। उन्होंने अपने उपदेशों के द्वारा धार्मिक विवाद को समाप्त करके सभी हिन्दुओं तथा मुसलमानों को एक ही धर्म सूत्र में पिरोने का प्रयास किया। सिख (शिष्य) कहलाने वाले नानक के इन अनुयायियों ने दो शताब्दियों तक पहले मुसलमानों और फिर अंग्रेजों के विरूद्ध संघर्ष किया। सभी धर्मों को एकत्रित करने वाला नानक का यह सम्प्रदाय कालान्तर में एक सैनिक सम्प्रदाय में परिवर्तित हो गया। फिर भी ये अपने गुरूओ नानक और उनके उत्राधिकारियों में श्रद्धा रखते हैं और उनके उपदेशों के संकलन 'आदिग्रन्थ' को अपना धार्मिक ग्रन्थ मानते हैं। सिख समुदायों में गहरी एकता है और सभी सिख अपने दीन–हीन सहधर्मियों की सहायता के लिये अपनी आय का एक निश्चित भाग समुदाय के कोष में दान भी देते हैं। ये अपने अतिम दसवें गुरु के आदेशों का पालन करते हुये आज भी केश नहीं कटते है, हाथ में कड़ा पहनते हैं और कृपाण धारण करते हैं।

16वीं शताब्दी में बंगाल में चौतन्य देव नामक एक विद्वान उपदेशक ने एक नये वैष्णव सम्प्रदाय का प्रवर्तन किया था। उन्होंने कर्मकाण्ड को ठुकराकर सजीव विश्वास तथा भक्ति पर जोर दिया। इसी परंपरा को आगे जारी रखते हुये 19वीं शताब्दी के पूर्वाद्ध में राजाराम मोहन राय ने हिन्दू धर्म का एकेश्वर बाद की भावना में आधुनिकीकरण करने का प्रयत्न किया। वे ईसाई विचारों से प्रभावित थे। उन्होने जातीय कलह को समाप्त करने के लिये ब्रहसमाज आन्दोलन शुरू किया। 19वीं शताब्दी के उत्तर्राद्ध में भारत के उत्तर तथा उत्तर–पश्चिमी भागों में आर्य समाज आन्दोलन उभरा, जिसने वेदों की ओर लौटने का नारा दिया। इसके संस्थापक स्वामी दयानन्द सरस्वती थे। वे वैदिक कालीन सरलता तथा सादगी को बहाल करना चाहते थे और उसके भोड़े रूप के खिलाफ विरोध भी करते थे।

इसी तरह कुछ अन्य धर्म सुधारको मे परमहस ने भी सभी धर्मों के समान होने तथा एक ही लक्ष्य तक पहुँचने का पाठ पढ़ाया। उन्होंने बतलाया कि भक्ति तथा ज्ञान के मार्ग से ईश्वर को पहचाना जा सकता है। इसके लिये उन्होने धर्म के व्यावहारिक पक्ष पर अधिक बल दिया। मई 1897 में उनके अनुयायियों ने उनके नाम से एक धार्मिक व शैक्षिक मिशन 'रामकृष्ण मिशन' की स्थापना की, जिसकी शाखायें समस्त उत्तरी भारत में फैली हुई है। इस प्रकार विभिन्न धर्मों एवं सम्प्रदायों के एकीकरण के बार–बार प्रयत्नों के बावजूद भारत का वर्तमान धार्मिक परिकृश्य बहुत ही रंग विरंगा है, जो देश में बहुसंख्यक वर्गों और जातियों की मौजूदगी को प्रतिबिंवित करता है।

इसके साथ ही उन सभी वर्गों और जातियों की धार्मिक सहिष्णुता भी सदा से हिन्दू धर्म की विशेषता रही है। हिन्दू धर्म में अन्य जनों और राष्ट्रों के विश्वासो तथा अनुष्ठानों

को अपने में समाहित कर लेने और अपना अंग बना लेने की विशद क्षमता भी देखी जाती है। द्रविणों के अतिरिक्त यवन, हूण और शक जैसे विदेशी जातियों ने भी हिन्दू धर्म को स्वीकार कर लिया। जाति व्यवस्था बाधक होने की वजह से हिन्दू धर्म भारत की सीमा को पार करके विश्वव्यापी धर्म न बन सका। जबकि दूसरी ओर जाति व्यवस्था को न मानने वाला, भारत की ही धरती पर पैदा हुआ बौद्ध धर्म बिश्वव्यापी धर्म बन गया।

फिर भी हिन्दू धर्म उदार और विशाल होने से अन्य जनों के आत्मिक जीवन पर गहरा प्रभाव डाला और अब भी डाल रहा है। इस सम्बन्ध में काउन्ट जौन्सजेर्ना का कथन अधिक सार्थक होगा कि भारत वर्ष केवल हिन्दू धर्म का ही घर नहीं अपितु वह विश्व सभ्यता का आदि भंडार है। प्रो. रेनों का भी मानना है कि भारत को उस उन्नतम् आध्यात्मिक परंपरा का कोष होने का सौभाग्य प्राप्त है, जो अकेले ही शताब्दियों तक जीवित रही, और आज भी जीवित है।

19 वीं सदी में अपनी अपूर्व भारत भक्ति से सारे यूरोप को चमका देने वाले मैक्समूलर ने एक जगह लिखा है कि अगर मैं अपने आप से यह पूछू कि केवल यूनानी, रोमन और यहूदी भावनाओं एवं विचारों पर चलने वाले हम यूरोपीय लोगों के आतरिक जीवन को अधिक समृद्ध अधिक पूर्ण और अधिक विश्वजनीय सक्षेप में अधि एक मानवीय बनाने का नुस्खा हमें किस जाति के साहित्य में मिलेगा, तो बिना किसी हिचचिाहट के मेरी उंगली हिन्दूस्तान की ओर उठ जायेगी। इसी प्रकार 20 वी शताब्दी के अग्रदूत चिंतक और विश्वमानवता के अपूर्व उपासक स्वर्गोय रोम्यारोला ने लिखा है कि अगर इस धरती पर कोई एक ऐसी जगह है, जहाँ सभ्यता के आरंभिक दिनों से ही मनुष्यों के सारे सपने आश्रय और पनाह पाते रहे हैं, तो वह जगह हिन्दुस्तान है। संक्षेप में यह विश्वजनीनता, विभिन्न जातियों को एक महाजाति के सांचे में ढालने का यह अद्भुत प्रयास और अनेक वादों, विचारों और धर्मों के बीच एकता लाने का यह निराला ढंग सभी युगों में भारतीय समाज की विशेषता रही है।

संदर्भ ग्रन्थ सूची-

- रामचंद्र गुप्ता, भारतीय धर्म का इतिहास
- हजारी प्रसाद द्विवेदी, भारतीय संस्कृति और धर्म
- राजेंद्र प्रसाद, धर्म का विकास
- Surendranath Dasgupta, A History of Indian Philosophy
- A.L. Basham, "The Wonder That Was India"

UGC Journal No. (Old) 2138
Peer-Reviewed Research Journal
Impact Factor 6.375, ISSN 0975-4083
Vol.- 28, Hindi Edition, Year-14, March 2025

आधुनिक कृषि भूमि से उत्पादकता एवं ऋणग्रस्तता में बदलाव (धार जिले के बाग विकासखण्ड के विशेष संदर्भ में)

• मडिया डावर
•• देवेन्द्र मुझाल्दा

सारांश- आधुनिक कृषि प्रणाली ने मध्यप्रदेश के धार जिले के बाग विकासखण्ड के समूचे अनाज के उत्पादन में भारी योगदान दिया है। आधुनिक कृषि प्रणाली के प्रयोग से मध्यप्रदेश में अनाज के उत्पादन में वृद्धि हुई है। आधुनिक कृषि प्रणाली में व्यापारिक फसलों के उत्पादन में मध्यप्रदेश के धार जिले में उत्पादन में भारी वृद्धि हुई है। साथ ही पूरे मध्यप्रदेश में आधुनिक कृषि प्रणाली में व्यापारिक फसलों के उत्पादन से कृषकों के आर्थिक विकास में वृद्धि हुई है। साथ ही मानव जीवन स्तर ऊँचा उठा है। इस विकासखण्डों में कृषि कार्य में उपयोगी आधुनिक पद्धतियां है। बेहतर बीजों का प्रयोग, उचित सिंचाई सुविधाएँ तथा रासायनिक खादों के प्रयोग से पौधों को पर्याप्त मात्रा में पोषक तत्त्वों की आपूर्ति व कीटनाशकों के प्रयोग से पौधों में लगने वाली बिमारियों व कीटाणुओं का नियंत्रण करना होता है।

मुख्य शब्द- उत्पादकता, ऋणग्रस्तता, कृषि प्रणाली, जीवन स्तर

आधुनिक कृषि भूमि में जुताई के लिए ट्रेक्टर, ट्रबाईन हारवेस्टर व सिंचाई के लिए ट्यूबवेल द्वारा आधुनिक जूताई से खेती कर सके, जहाँ वैज्ञानिक विधियों का प्रयोग किया जाता है। वह पर उच्च उत्पादकता वाले बीजों के माध्यम से खाद उत्पादन में भारी वृद्धि के कारण हरितक्रांति का उपयोग हो रहा है। आधुनिक कृषि भूमि में व्यापारिक फसलों के उत्पादन का मुख्य उद्देश्य अच्छी फसल के साथ-साथ वायु, जल, भूमि व मानवीय, श्रम, मानवीय स्वास्थ्य का संरक्षण भी अति आवश्यक है। कृषि ग्रामीण भारत का केन्द्र मंच है, आज भी भारतीय अर्थव्यवस्था को सुचारू रूप से चलाने के लिए कृषि उत्पादन का महत्व बहुत अधिक है तथा कृषि अर्थव्यवस्था के मापन में कृषि उत्पादन का विशेष योगदान रहता है। कुछ फसलों जैसे कपास भारत में तथा सबसे महत्त्वपूर्ण व्यापारिक एवं व्यावसायिक फसलों में से एक है। एक अनुमान से एक किलोग्राम अनाज उगाने के लिए लगभग एक घनमीटर पानी की आवश्यकता होती है। अत: हमें बढ़ती हुई आबादी के अनुसार फसलों के उत्पादन एवं सिंचाई के साधनों के स्वरूपों में बदलाव की आवश्यकता है। क्योंकि सिंचित इलाकों में फसलों की पैदावार असिंचित क्षेत्र की अपेक्षा 50 से 80 गुना तक अधिक होती है।

• शोधार्थी
•• शोध निर्देशक, आचार्य, भूगोल विभाग, माधव विश्वविद्यालय, पिण्डवाड़ा, सिरोही (राजस्थान)

उपलब्ध साहित्य का अध्ययन -

शर्मा मधु (1946) ने अपने अध्ययन कार्य में कृषि की भौगोलिक स्थिति के अध्ययन में विशेष रूचि लेने का कार्य किया जिसमें उन्होनें स्पष्ट शब्दों में कहा कि कृषि क्षेत्रों में फसलों का वितरण तथा उनका पारिस्थितिकीय अनुकुनलन होना अनिवार्य कार्य है साथ ही सिंचाई की सुविधाओं पर विशेष ध्यान देना चाहिये ताकि समय-समय पर फसलों में सिंचाई का कार्य किया जा सके।

जायसवाल पी. सी. (1965) ने अपने शोध पत्र से स्पष्ट किया है कि "एग्रो इन्डस्ट्रीयल डेवलपमेंन्ट" से यह स्पष्ट है कि ग्रामीण क्षेत्रों में बड़े पैमाने में रोजगार सृजन और आर्थिक समृद्धियों की प्राप्ति हेतु बड़ी संख्या में नियोजित कृषि आधारित उद्योगों का प्रारंभ किया जाना आवश्यक है।

मजूमदार एन. ए. (1966) ने अपने शोध पत्र में यह रेखांकित किया हैं कि कृषि आधारित उद्योग का व्यूह रचनात्मक महत्व इस तथ्य से प्रारंभ होता हैं कि कृषिगत संवृद्धि में पश्चवर्ती श्रृंखला का प्रभाव महत्त्वपूर्ण होता है।

भटनागर आर. पी. (1966) ने लाभ देने वाली फसलों के विकल्प के रूप में प्रतिपादित किया गया है। भूमि उपयोग नगर के लिए था। फिर भी इससे वाणिज्यिक एवं व्यापारिक फसल का महत्व मिलता है।

भटनागर, आर. पी. (1966) ने भूमि उपयोग में होने वाले सिद्धांतों का उपयोग किया, जिसमें उत्पादन क्षमता को कैसे बढ़ाएँ, उसकी उपयोगिता व वाणिज्यिक और व्यापारिक फसलों का वर्णन किया गया है।

अध्ययन क्षेत्र- प्रस्तुत अध्ययन क्षेत्र में धार जिले की अनुसूचित जनजाति क्षेत्रों में निवास करने वाले कृषि भूमि में अनुसूचित जनजातियों की सामाजिक-आर्थिक विकास का अध्ययन कार्य किया जा गया है, जिसमें कृषि के माध्यम से किस प्रकार का सामाजिक एवं आर्थिक विकास संभव हो रहा है, इस स्थिति का अध्ययन करने के लिए इस अध्ययन कार्य का चयन किया गया है। वर्तमान समय में इन लोगों की आर्थिक एवं सामाजिक स्थिति में सुधार हो रहा है तो उसका मुख्य कारण कृषि कार्य ही होगा, क्योंकि आस-पास के क्षेत्रों में निवास करने वाले अधिकतर अनुसूचित जनजाति के लोगों का मुख्य कार्य कृषि एवं कृषि मजदूरी ही है। समाज के जीवन का मुख्य स्रोत कृषि है। पानी की कमी एवं उचित प्रबंधन नहीं होने के कारण, कृषि पद्धति से आधुनिक कृषि यंत्रों, रासायनिक खादों, उन्नत बीजों जैसे उपायों की कमी के कारण कृषि उत्पादन सिमित मात्रा में होता है।

आंकड़ों का संकलन -

प्राथमिक आंकड़ों का संकलन- साक्षात्कार अनुसूची के माध्यम से किया गया है, जिसका निर्माण शोध कार्य की आवश्यक सामग्री को ध्यान में रखते हुए आधुनिक कृषि भूमि से लाभान्वित हुए कृषकों द्वारा सूचना प्राप्त की गयी है।

तालिका नंबर 1.1
कृषि कार्य से आय

क्र. सं.	विवरण	ग्राम बावड़िया		ग्राम अखाड़ा		योग	
		2015 की स्थिति	2020 की स्थिति	2015 की स्थिति	2020 की स्थिति	2015 की स्थिति	2020 की स्थिति
		संख्या/ प्रतिशत	संख्या/ प्रतिशत	संख्या/ प्रतिशत	संख्या/ प्रतिशत	संख्या/ प्रतिशत	संख्या/ प्रतिशत
1	2	3	4	5	6	7	8
1	0 से 1000 रू.	5/12.5	7/17.5	6/15	4/17.3	8/20	10/25
2	1001 से 3000 रू	8/20	8/20	5/12.5	9/20	9/22.5	7/17.5
3	3001 से 5000 रू.	15/37.5	9/22.5	11/27.5	8/24.7	10/25	8/20
4	5001 से 10000 रू.	10/25	10/25	8/20	12/11.4	7/17.5	9/22.5
5	10000 से अधिक	2/5	6/15	10/25	7/26.6	6/15	6/15
	योग	40/100	40/100	40/100	40/100	40/100	40/100

स्रोत – प्राथमिक आंकडों के आधार पर

बाग विकासखण्ड में निवास करने वाले अनुसूचित जनजाति समुदाय के लोगों को कृषि कार्य से आय हो रही हैं, जो कि वर्ष 2015 की स्थिति में कृषि कार्य से आय प्राप्त करने वाले 0 से 1000 रू प्रति व्यक्ति आय वाले उत्तरदाताओं की संख्या 8 है, जिनका प्रतिशत 20 हैं, 1001 से 3000 रू प्रति व्यक्ति आय वाले उत्तरदाताओं की संख्या 9 है जिनका प्रतिशत 22.5 हैं, एवं 3001 से 5000 रू प्रति व्यक्ति आय वाले उत्तरदाताओं की संख्या 10 है, जिनका प्रतिशत 25 हैं, 5001 से 10000 रू प्रति व्यक्ति आय वाले उत्तरदाताओं की संख्या 7 है, जिनका प्रतिशत 17.5 हैं एवं 10000 से अधिक रू प्रति व्यक्ति आय वाले उत्तरदाताओं की संख्या 6 है, जिनका प्रतिशत 15 हैं।

वर्ष 2020 की स्थिति में कृषि कार्य से आय प्राप्त करने वाले 0 से 1000 रू प्रति व्यक्ति आय वाले उत्तरदाताओं की संख्या 10 है जिनका प्रतिशत 25 हैं, 1001 से 3000 रू प्रति व्यक्ति आय वाले उत्तरदाताओं की संख्या 7 है जिनका प्रतिशत 17.5 हैं, 3001 से 5000 रू प्रति व्यक्ति आय वाले उत्तरदाताओं की संख्या 8 है, जिनका प्रतिशत 20 हैं, एवं 5001 से 10000 से रू प्रति व्यक्ति आय वाले उत्तरदाताओं की संख्या 9 जिनका प्रतिशत 22.5 हैं एवं 10000 से अधिक रू प्रति व्यक्ति आय वाले उत्तरदाताओं की संख्या 6 है, जिनका प्रतिशत 15 हैं।

अत: निष्कर्ष के रूप में कहा जा सकता हैं कि कृषि कार्य से कृषकों को आय प्राप्त होती है, जिसमें वर्ष 2015 की तुलना में वर्ष 2020 में कृषि आय में वृद्धि हुई है। जिसका प्रत्यक्ष प्रमाण साक्षात्कार के समय धार जिले की बाग विकासखण्ड में निवास करने वाले अनुसूचित जनजाति के लोगों से प्राप्त हुआ है। वर्ष 2015 की तुलना में वर्ष 2020 में कृषि कार्य से आय प्राप्त का ग्राफ दिन प्रतिदिन बढ़ता ही गया, इस कारण से इन लोगों में कृषि कार्य को करने में रूचि दिन प्रतिदिन बढ़ती ही जा रही है, कृषि कार्य संसाधन में बढ़ोत्तरी होने के कारण आय में भी बढ़ोतरी होती जा रही है।

तालिका क्रमांक 1.2
अन्य कार्यों से प्राप्त आय

क्र. सं.	विवरण	ग्राम बावड़िया		ग्राम अखाड़ा		योग	
		2015 की स्थिति	2020 की स्थिति	2015 की स्थिति	2020 की स्थिति	2015 की स्थिति	2020 की स्थिति
		संख्या/ प्रतिशत	संख्या/ प्रतिशत	संख्या/ प्रतिशत	संख्या/ प्रतिशत	संख्या/ प्रतिशत	संख्या/ प्रतिशत
1	2	3	4	5	6	7	8
1	हाँ	24 / 60	28 / 70	25 / 62.5	30 / 75	26 / 65	29 / 72.5
2	नहीं	16 / 40	12 / 30	15 / 37.4	10 / 25	14 / 35	11 / 27.5
	योग	40 / 100	40 / 100	40 / 100	40 / 100	40 / 100	40 / 100

स्रोत- प्राथमिक आंकडों के आधार पर

अध्ययन क्षेत्र धार जिले के विकासखण्डों में बाग विकासखण्ड में निवास करने वाले अनुसूचित जनजातियों के कृषकों के पास कृषि के अलावा अन्य कार्य से आय उपलब्ध होती है जिसके अंतर्गत कई प्रकार के ऐसे स्थाई एवं अस्थाई कार्य उपलब्ध है जैसे की दुकान पर कार्य करना, अपनी स्वयं की दुकान खोलना, मजदूरी करना, लोगों के खेतों में दिन के अनुसार कार्य करना, तकनीकी क्षेत्र में कार्य करना आदि कार्य उपलब्ध है।

यदि 2015 और 2020 की स्थिति के योग को देखा जाये तो अनुसुचित जनजातियों के कृषकों के द्वारा वर्ष 2015 की स्थिति में कृषि कार्य के अलावा अन्य आय के स्त्रोतों से आय प्राप्त करने वाले उत्तरदाताओं की संख्या 26 है, जिनका प्रति''ात 65 है एवं कृषि कार्य के अलावा अन्य आय के स्त्रोतों से आय प्राप्त नहीं करने वाले उत्तरदाताओं की संख्या 14 है, जिनका प्रतिशत 35 है एवं वर्ष 2020 की स्थिति में कृषि कार्य के अलावा अन्य आय के स्त्रोतों से आय प्राप्त करने वाले उत्तरदाताओं की संख्या 29 है, जिनका प्रतिशत 72.5 है एवं कृषि कार्य के अलावा अन्य आय के स्त्रोतों से आय प्राप्त नहीं करने वाले उत्तरदाताओं की संख्या 11 है, जिनका प्रतिशत 27.5 है।

अत: निष्कर्ष के रूप में कहा जा सकता हैं कि धार जिले के ग्राम बावड़िया और अखाड़ा में निवास करने वाले अनुसूचित जनजाति के लोगों के द्वारा कृषि कार्य के अलावा अन्य स्त्रोतों से भी आय प्राप्त की जा सकती है, इस तथ्य से स्पष्ट होता हैं कि बाग विकासखण्ड में निवास करने वाले अधिकतर कृषक कृषि के अलावा भी कई प्रकार के स्त्रोतों से आय प्राप्त करते हैं।

अत: कहा जा सकता हैं कि 2015 की तुलना में 2020 में आय अधिक बढ़ी है, जो कि एक विकास का प्रतीक है।

तालिका क्रमांक 1.3
व्यावसायिक कृषि हेतु समस्याएँ

क्र. सं.	विवरण	ग्राम बावड़िया		ग्राम अखाड़ा		योग	
		2015 की स्थिति	2020 की स्थिति	2015 की स्थिति	2020 की स्थिति	2015 की स्थिति	2020 की स्थिति
		संख्या/ प्रतिशत	संख्या/ प्रतिशत	संख्या/ प्रतिशत	संख्या/ प्रतिशत	संख्या/ प्रतिशत	संख्या/ प्रतिशत
1	2	3	4	5	6	7	8
1	हाँ	27 / 67.5	29 / 72.5	32 / 80	35 / 87.5	26 / 65	30 / 75
2	नहीं	13 / 32.5	11 / 27.5	8 / 20	15 / 37.5	11 / 27.5	10 / 25
	योग	40 / 100	40 / 100	40 / 100	40 / 100	40 / 100	40 / 100

स्रोत– प्राथमिक आंकडों के आधार पर

यदि 2015 और 2020 की स्थिति के योग को देखा जाये तो बावड़िया और अखाड़ा में निवास करने वाले अधिकतर अनुसूचित जनजाति कृषकों को व्यवसायिक फसलों में आने वाली समस्याओं के बारे जानकारी है, वर्ष 2015 की स्थिति में व्यावसायिक फसलों में आने वाली समस्याओं की जानकारी रखने वाले उत्तरदाताओं की संख्या 26 है, जिनका प्रतिशत 65 है एवं व्यावसायिक फसलों में आने वाली समस्याओं की जानकारी नहीं रखने वाले उत्तरदाताओं की संख्या 11 है, जिनका प्रतिशत 27.5 है, वर्ष 2020 की स्थिति में व्यावसायिक फसलों में आने वाली समस्याओं की जानकारी रखने वाले उत्तरदाताओं की संख्या 30 है, जिनका प्रतिशत 75 है एवं व्यावसायिक फसलों में आने वाली समस्याओं की जानकारी नहीं रखने वाले उत्तरदाताओं की संख्या 10 है, जिनका प्रतिशत 25 है।

अत: निष्कर्ष के रूप में कहा जा सकता हैं कि ग्राम बावड़िया और अखाड़ा में निवास करने वाले अधिकतर उत्तरदाताओं को व्यावसायिक फसलों में आने वाली समस्याओं के बारे में जानकारी है। जो कि वर्ष 2020 के पश्चात ज्यादा है।

निष्कर्ष- अनाज के निर्यात की सही जानकारी नहीं हो पाने के कारण अनाज का उचित मूल्य नहीं मिल पाता है।

आधुनिक युग में आधुनिक पद्धतियों का उपयोग करने से कई सारे उत्तरदाताओं के जीवन को प्रभावित कर रहा है। जैसे की आय में वृद्धि, फसल की नवीन पद्धतियाँ, व्यवसाय करना, उद्योग स्थापित करना आदि कार्यों में सहायता मिली रही है। अधिकतर उत्तरदाताओं को कृषि क्षेत्र में रासायनिक खाद तकनीकी के उपयोग के बारे में जानकारी है। अनुसूचित जनजाति के समुदाय में अधिकतर लोग मजदुरी एवं कृषि में लगे है। अधिकतर अनुसूचित जनजाति समुदायों के व्यक्तियों के पास स्वयं की कृषि भूमि उपलब्ध है।

संदर्भ ग्रन्थ सूची-

1. पाण्डेय, रमेश कुमार, ग्रामीण सहभागीता मूल्यांकन एवं नियोजन, योजना सूचना और प्रसारण मंत्रालय, भारत सरकार, नई दिल्ली, 2000
2. अग्रवाल, एम.एल., भारतीय कृषि का अर्थतंत्र, राजस्थान हिन्दी ग्रंथ अकादमी, जयपुर, राजस्थान, 1977
3. ओम प्रकाश, सिंचाई एवं जल प्रबंधन, रामा पब्लिकेशन्स हाउस, मेरठ, 2006
4. शर्मा ब्रह्मदेव, आदिवासी स्वशासन प्रकाशन संस्थान 2008 नई दिल्ली
5. श्रीवास्तव आर.एन., सामाजिक अनुसंधान तथा शोध प्रविधि म.प्र. हिन्दी ग्रंथ अकादमी, भोपाल, 2002 पृ. स. 261, 263
6. चौबे रमेश : सामाजिक अनुसंधान तथा शोध प्रविधि हिन्दी ग्रंथ अकादमी भोपाल 2001 पृ. स. 232

UGC Journal No. (Old) 2138
Peer-Reviewed Research Journal
Impact Factor 6.375, ISSN 0975-4083
Vol.- 28, Hindi Edition, Year-14, March 2025

धार जिले में कृषि विपणन व्यवस्था का अध्ययन

•विक्रम मुझाल्दा
•• मुकेश कुमार महावर

सारांश- कृषि विपणन में वे सभी कार्य तथा उनको सम्पन्न करने वाले अभिकरण आते हैं, जिनके द्वारा उनका संचालन होता है। इसके अतिरिक्त किसानों, बिचौलियों एवं मध्यस्थों तथा उपभोक्ताओं पर इन क्रियाओं के प्रभाव भी विपणन क्रियाओं के अन्तर्गत ही आते हैं। खेतों से लेकर अंतिम उपभोक्ता तक उत्पादित वस्तु के पहुँचने की क्रिया विपणन कही जाती है। धार जिले में कृषक अपनी उपज का एक बड़ा भाग गॉव में ही महाजनों एवं व्यापारियों को बेच देते हैं। प्राय: कृषक गॉव के महाजनों एवं व्यापारियों से ऋण लेते हैं। इस स्थिति का यह वर्ग लाभ उठाता हैं और कृषकों से कम मूल्य पर अनाज खरीद लेते हैं। ऋणग्रस्तता से कृषक भी उन्हें उपज बेचने के लिए बाध्य होता हैं। फलत: कृषकों को अपनी उपज का उचित मूल्य नहीं मिल पाता है। महाजन एवं व्यापारी उनकी उपज को कम मूल्य में खरीदकर उनका शोषण करते हैं।

मुख्य शब्द- कृषि विपणन, अभिकरण, उपभोक्ता

प्रस्तावना- विपणन (Marketing) शब्द से तात्पर्य उन सभी विपणन कार्यों एवं सेवाओं के करने से हैं, जिनके द्वारा वस्तुएँ उत्पादक से अंतिम उपभोक्ता तक पहुँचती हैं। इसके अन्तर्गत विपणन की सभी सहयोगी प्रक्रियाएँ जैसे–एकत्रीकरण, पैकेजिंग, परिवहन, संग्रहण, श्रेणी–चयन एवं मानकीकरण, वित्त जोखिम प्रबंध, विज्ञापन आदि सम्मिलित होती हैं। उत्पादन को उपभोग से जोड़ने वाली श्रंखला की समस्त कड़ियाँ विपणन में सम्मिलित होती हैं। ने कृषि विपणन के संबंध में कहा हैं।

कृषि विपणन में वे सभी कार्य तथा उनको सम्पन्न करने वाले अभिकरण आते हैं, जिनके द्वारा उनका संचालन होता है। इसके अतिरिक्त किसानों, बिचौलियों एवं मध्यस्थों तथा उपभोक्ताओं पर इन क्रियाओं के प्रभाव भी विपणन क्रियाओं के अन्तर्गत ही आते हैं। खेतों से लेकर अंतिम उपभोक्ता तक उत्पादित वस्तु के पहुँचने की क्रिया विपणन कही जाती है।

धार जिले में कृषक अपनी उपज का एक बड़ा भाग गॉव में ही महाजनों एवं व्यापारियों को बेच देते हैं। प्राय: कृषक गॉव के महाजनों एवं व्यापारियों से ऋण लेते हैं।

• शोधार्थी
•• शोध-निर्देशक वाणिज्य एवं प्रबंधन संकाय माधव विश्वविद्यालय पिण्डवाड़ा (सिरोही) राजस्थान

इस स्थिति का यह वर्ग लाभ उठाता हैं और कृषकों से कम मूल्य पर अनाज खरीद लेते हैं। ऋणग्रस्तता से कृषक भी उन्हें उपज बेचने के लिए बाध्य होता हैं। फलतः कृषकों को अपनी उपज का उचित मूल्य नहीं मिल पाता है। महाजन एवं व्यापारी उनकी उपज को कम मूल्य में खरीदकर उनका शोषण करते हैं।

प्रायः 10 से 15 कि.मी. के मध्य किसी बड़े गाँव में सप्ताह में एक बार हाट लगता हैं । इस हाट में कृषक अपनी उपज को सीधे उपभोक्तओं को बेचते हैं। खेतिहर मजदूर एवं ग्रामवासी अपनी आवश्यकतानुसार खाद्यान्न इन हाटों में खरीदते हैं। इन साप्ताहिक हाटों में थोक व्यापारी या उनके एजेन्ट भी कृषकों से उनकी उपज को खरीदते हैं। कृषक अपनी उपज के एक छोटे भाग को ही इन हाटों में बेच पाता हैं।

वर्तमान में कृषि फसलों के लिए सरकार ने नियमित कृषि उपज मण्डियों की स्थापना की हैं। इन मण्डियों का संचालन एक समिति द्वारा किया जाता हैं। इन समिति में कृषकों एवं व्यापारियों के चुने हुए सदस्य होते हैं। इन मण्डियों में थोक व्यापारी एवं आढ़तिया होते हैं जो दलालों के माध्यमों से खुली बोली लगाकर किसानों से कृषि उत्पाद क्रय करते हैं। धान, कपास, तिलहन एवं गन्ना जैसी फसलों को विधायन क्रिया के लिए मित्रों को भी बेचा जाता हैं। इन नियमित मण्डियों में सरकार एवं संचालन समिति का हस्तक्षेप रहता है, जिससे कृषकों को उनकी उपज का उचित मूल्य प्राप्त हो जाता हैं। मण्डियाँ दो तरह की होती हैं- अनियमित मण्डियाँ एवं नियमित मण्डियाँ। अनियमित मण्डियों में बिक्री के लिए कोई निर्धारित नियम नही होते है तथा बिक्री आढ़तियों के माध्यम से होती हैं, जबकि नियमित मण्डियों की स्थापना राज्य सरकारों के नियमानुसार होती है, जहाँ पर कृषक निर्धारित नियमों के आधार पर अपनी उपज को बेचते है।

कृषकों को मध्यस्थों के कपटपूर्ण व्यवहार से छूटकारा दिलाने एवं उनकी उपज का उचित मूल्य प्रदान करने के उद्देश्य से सम्पूर्ण देश में सहकारी विपणन व्यवस्था भी हैं। सहकारी समितियाँ अपने सदस्यों के थोड़े-थोड़े विपण्य योग्य आधिक्य को एकत्रित करके नियमित कृषि उपज मण्डियों में थोक व्यापारियों को प्रतियोगी मूल्य पर बेचती हैं। इससे कृषकों को अपनी उपज को उचित मूल्य प्राप्त हो जाता हैं। सहकारी समितियाँ उपज के विपणन के साथ-साथ कृषकों को अन्य सेवाएँ जैसे बीज, उर्वरक, कीटनाशक एवं ऋण आदि भी प्रदान करती हैं।

भारतीय खाद्य निगम भी सरकार द्वारा घोषित समर्थन मूल्य पर कृषकों से सीधे खरीदी करती हैं। इससे मण्डियों के भाव निर्धारित समर्थन मूल्य से नीचे नहीं गिर पाते है और कृषकों को उचित मूल्य भी प्राप्त हो जाता हैं। भारतीय खाद्य निगम सामान्यतः उन राज्यों में जहाँ विपण्य आधिक्य होता हैं। बड़ी मात्रा में गेहूँ, चावल आदि क्रय करता है।

भारत मेलों के लिए सुप्रसिद्ध हैं। यहाँ लगभग 1,700 मेले कृषि पदार्थों एवं जानवरों के लगते है, जिनमें से लगभग 40 प्रतिशत मेले कृषि वस्तुओं के होते हैं, जो मुख्यतः बिहार एवं उड़ीसा में लगते हैं। मेला स्थानों के आस-पास के कृषक इन्हीं मेलों में अपनी उपज बेच देते हैं।

किसी भी देश के आर्थिक विकास में कृषि विपणन का महत्वपूर्ण स्थान हैं और जब बात भारतीय अर्थव्यवस्था की हो तो, इसका महत्व और बढ़ जाता है। भारतीय कृषि

विपणन व्यवस्था के संदर्भ में भारत में भण्डारागार सुविधाओं को विकसित करने की आवश्यकता एवं महत्व को बहुत समय पहले ही अनुभव किया गया था। कृषि रायल कमीशन ने वर्ष 1928 में, केन्द्रीय बैंकिंग जाँच समिति ने वर्ष 1930 में तथा रिजर्व बैंक ने वर्ष 1944 में भण्डारगृहों की आश्यकता को अनुभव करते हुए देश में इनके निर्माण हेतु सुझाव प्रस्तुत किया परन्तु इन सुझावों को कार्यान्वित नहीं किया जा सका। कृषि वित्त उपसमिति ने 1945 में और ग्रामीण बैंक जाँच समिति ने 1950 में भारत में ग्रामीण वित्त प्रबंधन के लिए भण्डारागार को प्रोनन्त की आवश्यकता पर बल दिया। भण्डारागार के क्षेत्र में सबसे महत्वपूर्ण और विस्तृत रूप में अखिल भारतीय ग्रामीण साख सर्वेक्षण समिति ने 1954 में सिफारिशों की थी। इस समिति ने देश भर में भण्डारगृहों के विकास के लिए एक कार्यक्रम भी प्रस्तुत किया। इस समिति की सिफारिशों को स्वीकार करते हुए सरकार ने देश में भण्डारगृहों की स्थापना एवं संचालन के लिए जून 1956 में कृषि उपज (विकास एवं भण्डार व्यवस्था) निगम अधिनियम, राष्ट्रीय सहकारी विकास एवं भण्डारगृह निगम स्थापित करने के लिए कानून पारित किया। इन कानूनों के तहत 1956 में राष्ट्रीय सहकारी विकास एवं भण्डारागार बोर्ड और 1957 में केन्द्रीय भण्डारागार निगम की स्थापना की गई। इसके उपरान्त सभी राज्यों में राज्य भण्डारागार निगम स्थापित किए गए। इस प्रकार से धार जिले के फसलों का उत्पादन होता हैं जिसमें इस क्षेत्र की मिट्टी का योगदान बहुत ही अतुल्य है।

उपलब्ध साहित्य का अध्ययन- प्रस्तुत शोध अध्ययन धार जिले क्षेत्र के आसपास की कृषि विपणन के लाभ का अध्ययन में विभिन्न समय में किये गये शोध साहित्य का अध्ययन किया जावेगा।

मित्रा (1990) ने उत्पादन की अस्थिरता पर महाराष्ट्र में सिंचाई के प्रभाव का अध्ययन किया। उन्होंने पाया कि राज्य स्तर पर, गेहूं, बाजरा, गन्ना, कपास और मूंगफली के तहत औसत सिंचित क्षेत्र में चार साल में 100-80 प्रतिशत (गेहूं 285 प्रतिशत) की वृद्धि हुई थी, जो 1979-80 के नौ वर्षों की अवधि 1964-65 को समाप्त हुई।

प्रकाश व अन्य (1995) ने नई आर्थिक नीतियों का कृषि उत्पादों के निर्यात पर प्रभाव के अध्ययन में भारत के विदेश व्यापार की प्रवृत्ति, भारत के सकल निर्यात में कृषि उत्पादों के निर्यात हिस्सा, वैश्विक उत्पादन एवं व्यापार में भारत का प्रतिशत प्रमुख निर्यात उत्पादों की संरचना में परिवर्तन, महत्वपूर्ण प्राप्त निष्कर्षों से ज्ञात होता हैं कि कृषि उत्पादों के निर्यात संबंधी नीतियाँ आदि विभिन्न कारकों का द्वितीयक स्त्रोतों के आधार पर विश्लेषण यिा है।

शोध समस्या का चयन- धार जिले में कृषि विपणन व्यवस्था से विभिन्न प्रकार की फसलों का उत्पादन किया जाता है, जिनको उत्पादित करने में कई प्रकार की समस्याओं का सामाना करना पड़ता है, जिसमें मुख्य रूप से मौसम का साथ न देना, सही समय पर पर्याप्त संसाधन उपलब्ध न होना, सही समय पर फसलों की देखरेख न करना आदि कई समस्याओं का सामना करना पड़ता है।

अध्ययन का उद्देश्य- इस शोध अध्ययन के निम्नलिखित उद्देश्य हैं-

1. जनजाति क्षेत्र के कृषकों की पारिवारिक एवं शैक्षणिक स्थिति का अध्ययन

करना।

2. जनजाति क्षेत्र के कृषकों की आर्थिक–सामाजिक स्थिति का अध्ययन करना।
3. चयनित कृषकों की व्यावसायिक संरचना का विश्लेषण करना।
4. जनजाति क्षेत्र के कृषकों की आय–व्यय की स्थिति का अध्ययन करना।
5. जनजाति क्षेत्र के कृषकों की बचत प्रवृत्ति का अध्ययन करना।

शोध परिकल्पनाऐं- इस शोध अध्ययन के निम्नलिखित परिकल्पनाऐं हैं–

1. जनजाति क्षेत्र के कृषकों की ऋणग्रस्तता की स्थिति का अध्ययन करना।
2. मध्य प्रदेश सरकार की वर्तमान कृषि विपणन व्यवस्था के विभिन्न पहलूओं का विश्लेषण करना।
3. जनजाति क्षेत्र के कृषकों की वर्तमान कृषि विपणन व्यवस्था का अध्ययन करना।
4. कृषि विपणन व्यवस्था के विभिन्न प्रभावों का अध्ययन करना।
5. कृषकों की कृषि विपणन व्यवस्था से उत्पन्न समस्याओं को प्रस्तुत करना।

अध्ययन विधि

अध्ययन का क्षेत्र- धार जिले में कृषि विपणन का अध्ययन किया जायेगा।

अध्ययन का समग्र- धार जिले के क्षेत्र के अंतर्गत कृषि विपणन उत्पादित होने वाली फसलों का अध्ययन किया जावेगा।

अध्ययन की इकाई- धार जिले में स्थित कृषि विपणन क्षेत्र के अंतर्गत आने वाले समस्त कृषकों को रखा गया है।

निर्देशन विधि- धार जिले के अंतर्गत उत्पादित होने वाली फसलों का अध्ययन ग्रामीण क्षेत्रों में स्थित 60 कृषक उत्तरदाताओं के माध्यम से किया जाएगा।

अध्ययन का स्तर- शोध पत्र के अध्ययन के लिए धार जिले के ग्रामीण क्षेत्रों में कृषि विपणन हेतु होने वाली विभिन्न समस्याओं को इस लघु शोध पत्र में लिए शामिल किया गया है।

आंकड़ो का संकलन और विधि- धार जिले के विभिन्न विकासखण्डों में कृषि विपणन के माध्यम से होने वाली फसलों से संबंधित अध्ययन को आधार मानकर अध्ययन के लिए आँकड़ो को दो माध्यम से संकलित किया गया है। व्यक्तिगत सर्वेक्षण के माध्यम से अवलोकन किया गया है। द्वितियक स्त्रोत के अंतर्गत प्रकाशित स्त्रोत का अध्ययन किया गया है तथा भारत सरकार एवं मध्य प्रदेश सरकार एवं धार जिले के द्वारा समय–समय पर प्रकाशित कृषि एवं फसलों से संबंधित पत्र–पत्रिकाओं एवं इंटरनेट आदि के माध्यम से आँकड़ों को प्राप्त किया गया है और इनको वर्णनात्मक विधि के आधार पर प्रस्तुत किया गया है।

तालिका क्रं. 01
क्या आपके गॉव में विभिन्न प्रकार
की फसलों का उत्पादन किया जाता है ?

स.क्र.	विवरण	प्रतिशत
1	हाँ	40
2	नहीं	20
	कुल योग	60

स्रोत- प्राथमिक समंक के आधार पर प्राप्त तथ्यों के आधार पर नवम्बर 2023

उपरोक्त तालिका क्रं. 01 से स्पष्ट होता है कि धार जिले के विभिन्न ग्रामों में स्थित कृषकों का मानना है कि उनके गॉव में विभिन्न प्रकार की फसलों का उत्पादन किया जाता है, इस तथ्य को मानने वाले उत्तरदाताओं की संख्या 40 है, वहीं 20 प्रतिशत उत्तरदाताओं का मानना है कि उनके गॉव में विभिन्न प्रकार की फसलों का उत्पादन नहीं किया जाता है।

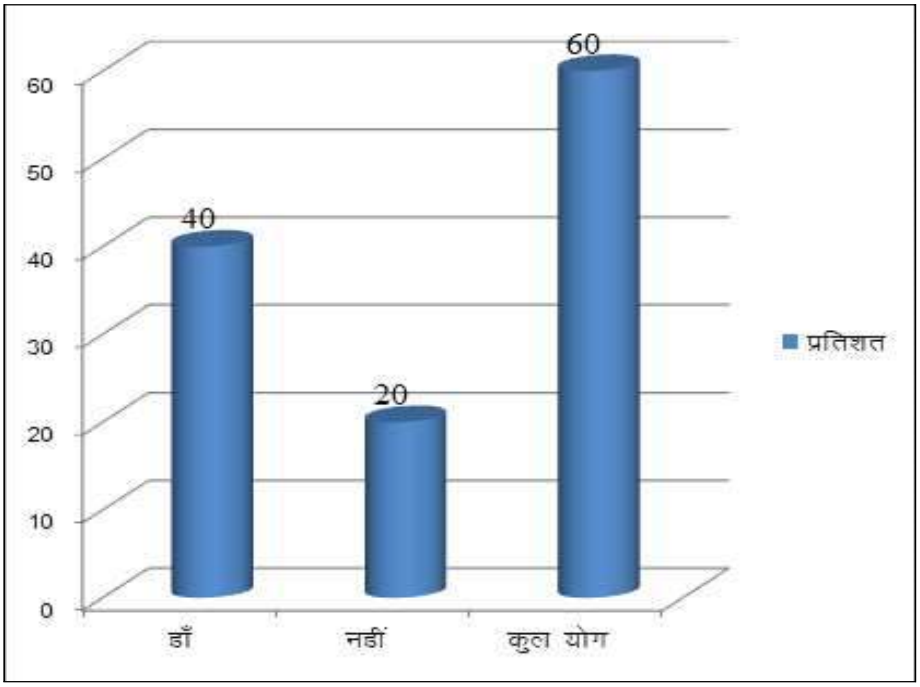

तालिका क्रं. 02
क्या आपको मौसम के द्वारा समय-समय पर साथ दिया जाता है ?

स.क्र.	विवरण	प्रतिशत
1	हाँ	35
2	नहीं	15
3	कुल योग	60

स्रोत- प्राथमिक समंक के आधार पर प्राप्त तथ्यों के आधार पर नवम्बर 2023

उपरोक्त तालिका क्रं. 02 से स्पष्ट होता है कि धार जिले के विभिन्न गॉवों में स्थित कृषकों का मानना हैं कि उनको मौसम के द्वारा समय–समय पर साथ दिया जता हैं, इस तथ्य को मानने वाले उत्तरदाताओं की संख्या 35 है, वहीं 15 प्रतिशत उत्तरदाताओं का मानना हैं कि उनको मौसम के द्वारा समय–समय पर साथ नहीं दिया जाता है।

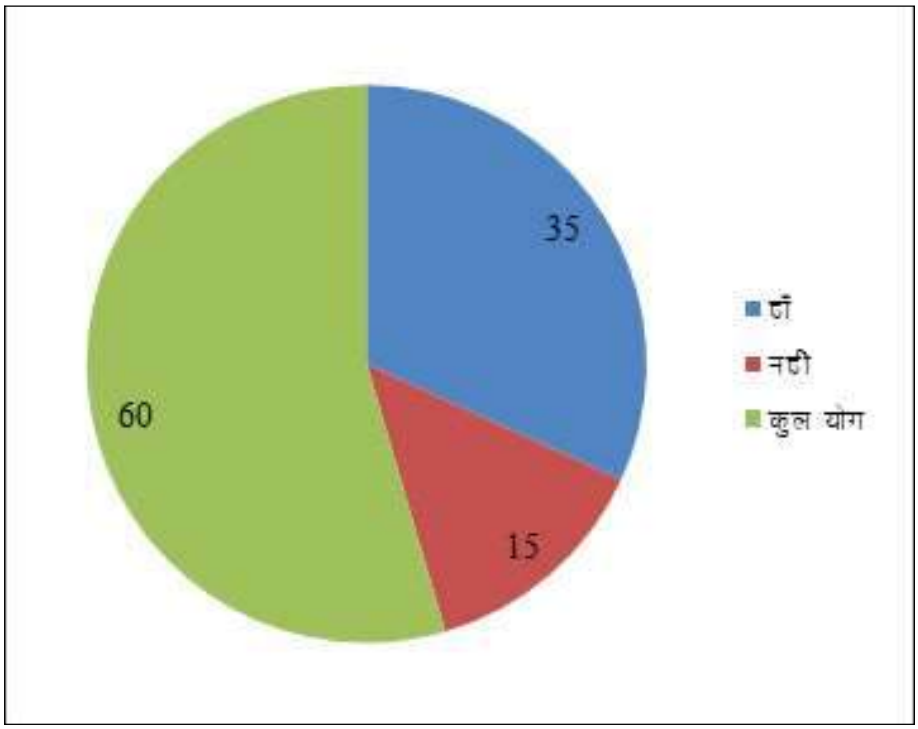

तालिका क्रं. 03
क्या आपको सही समय पर पर्याप्त संसाधन उपलब्ध हो जाते हैं ?

स.क्र.	विवरण	प्रतिशत
1	हाँ	30
2	नहीं	20
	कुल योग	100

स्रोत– प्राथमिक समंक के आधार पर प्राप्त तथ्यों के आधार पर नवम्बर 2022

उपरोक्त तथ्यों से ज्ञात होता हैं कि धार जिले के विभिन्न ग्रामों में स्थित कृषकों का मानना हैं कि उनको फसलों के उत्पादन के समय पर्याप्त संसाधन उपलब्ध हो जाते हैं, इस तथ्य को मानने वाले उत्तरदाताओं की संख्या 30 है, वहीं 20 प्रतिशत उत्तरदाताओं का मानना हैं कि उन्हें फसलों के उत्पादन के समय पर्याप्त संसाधन उपलब्ध नहीं हो पाते है।

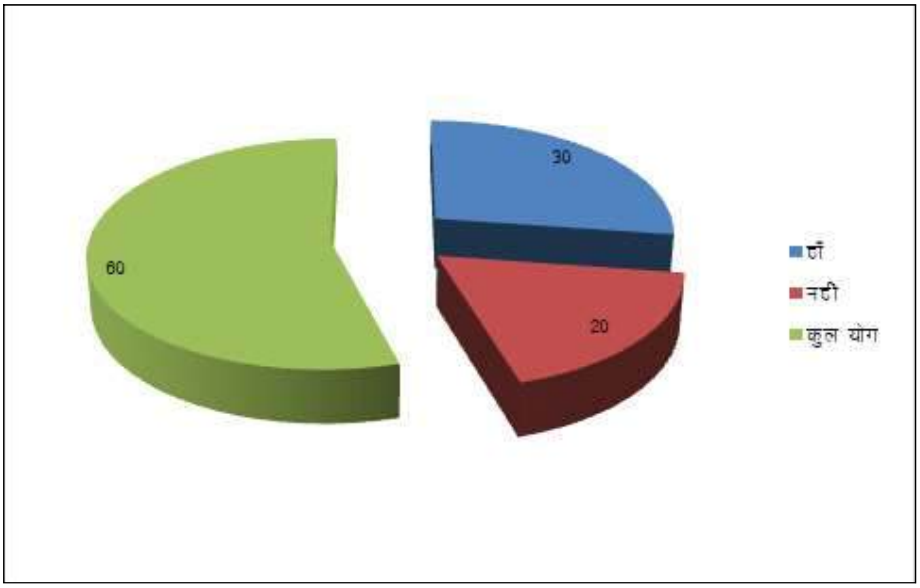

अत: कहा जा सकता हैं कि धार जिले के विकासखण्डों में स्थित कृषकों को कृषि विपणन के माध्यम से फसल उत्पादन के समय कई प्रकार की समस्याओं का सामाना करना पड़ता हैं।

निष्कर्ष - इस शोध पत्र के माध्यम से मेरे द्वारा कुछ निष्कर्ष निकाले गये हैं जो कि अग्रलिखित हैं–

1- धार जिले में कृषकों को कृषि विपणन के कार्य में कई प्रकार की नवीन समस्याओं का सामना करना पड़ता है।
2- प्रत्येक विकासखण्ड में ग्रामीण क्षेत्रों में कृषकों को पर्याप्त कृषि विपणन से संबंधित संसाधन उपलब्ध न होने के कारण सही समय पर फसलों का उत्पादन होने में समस्या उत्पन्न होती है।
3- कृषकों को कृषि विपणन से संबंधित सही ज्ञान फसलों से संबंधित नहीं होने के कारण उनको कई प्रकार की आर्थिक समस्याओं का सामना करना पड़ता है।
4- मौसम का प्रत्येक फसल पर असर दिखाई देता है, लेकिन सही समय पर मौसम का साथ न देने के कारण फसलें कम उत्पादित होती है या फिर समाप्त हो जाती है।
5- गॉवों में पर्याप्त संसाधन उपलब्ध न होने के कारण फसल उत्पादन में अधिक समय लगता है।

सुझाव -

1. किसान के पास पर्याप्त कृषि से संबंधित संसाधन उपलब्ध हो।
2. किसान को वैज्ञानिक कृषि से संबंधित ज्ञान हो।
3. मौसम के अनुकूल फसल उत्पादन करना चाहिये है।
4. किसान को अपनी कृषि भूमि की मिट्टी परीक्षण करना चाहिए।
5. नवीन–नवीन वैज्ञानिक संसाधनों का उपयोग करना चाहिए।

संदर्भ ग्रन्थ सूची-

1- बामनोट दिलीप (2006), किसानों को वास्तविक लाभ पानी के उपयोगकर्ताओं में छिपा है, त्रैमासिक पत्रिका ऑफ महाराष्ट्र सिनकन विक्स, वॉल्यूम. 19, पेज नं. 63-70।

2- बहेकर बी.डब्ल्यू. और बी.डी. भोले (1997), अकोला जिले में सिंचाई का गोवर्थ उत्थान महाराष्ट्र जर्नल एग्रीकल्चर इकोनॉमिक्सवोल 9 (12) 10।

3- गलगले एच.एम. (2000), रिमोट सेंसिंग और जीआईएस तकनीक का उपयोग कर पिंपलगाँव उज्जैनी वाटरशेड में एकी कृति भूमि और जल संसाधन विकास, सिंचाई और जल निकासी इंजीनियरिंग उ.च.अअ. राहुरी पृष्ठ सं. 60-64।

4- हुसैन तारिक (2003), यील्ड पर विभिन्न सिंचाई स्तरों का प्रभाव और कपास के उपज घटकों को दिखाने के दो तरीकों के तहत: लेख, जैविक विज्ञान की ऑनलाइन पत्रिका, ISSN1608–4217.p-3 (7): 655–659।

5- इरशाद एम (2007), सूखे क्षेत्रों में षि के विकास के लिए पानी के प्रबंधन विकल्प अनुच्छेद, एप्लाइड साइंसेज के जर्नल, ISSN 1812–5654।

UGC Journal No. (Old) 2138
Peer-Reviewed Research Journal
Impact Factor 6.375, ISSN 0975-4083
Vol.- 28, Hindi Edition, Year-14, March 2025

कोसी बेसिन में सामाजिक-आर्थिक परिदृश्य में हुए बदलाव: एक प्रादेशिक अध्ययन

• मितु कुमारी

सारांश- शोध अध्ययन कोसी नदी वर्तमान के प्रादेशिक और सामयिक व्यवहार के कारण सामाजिक-आर्थिक प्रभावों का संक्षेपनात्मक समीक्षा है। अध्ययन क्षेत्र भूमि के कटाव, अवसाद, बाढ़, गरीबी, पलायन जैसी महत्वपूर्ण समस्याओं से संबंधित है, जिसके अंतर्गत सुपौल, सहरसा, मधेपुरा, पूर्णिया, अररिया, भागलपुर, खगरिया, कटिहार, दरभंगा जिला आते है। कोसी नदी की गत्यात्मक भू भौतिक परिवर्तनों से संबंधित विशेषताओं को वर्णित किया गया है। कोसी नदी अपनी मार्ग प्रवृती के कारण लगातार पश्चिम दिशा की और स्थानांतरित हो रही है। अपने स्थानतारण के क्रम में पिछले 200 सौ वर्षो में 120 KM तक मार्ग परिवर्तन किया है, जिसके कारण कई नकारात्मक समस्याएं कोसी नदी के निचले बेसिन में दृष्टिगत होती है। यह शोध पत्र क्षेत्र सर्वेक्षण आधारित आंकड़ों, कई हाई रिजूल्यूशन सेटैलाइट इमेज और GIS के भू आकंडों के मण्डल के समीक्षा के माध्यम से लिखा गया है। प्रत्येक वर्ष इस क्षेत्र में त्तीव्र बाढ़, अत्यधिक अवसाद, जलीय जमाव, कृषि भूमि के कटाव से ग्रसित है। जिससे प्रदेश के भूमि उपयोग प्रारूप में बदलाव हुए है। आर्थिक व्यवस्था पूरी तरह बदल जाने से यह निवासित लोगों की सामाजिक-आर्थिक जीवन पूरी तरह दयनीय हो गई है। प्राथमिक आंकड़ों, उपग्रहीय मानचित्रों कर विष्लेषण के अनुसार पता चलता है की नदी मार्ग परिवर्तन की छाप क्षेत्र के विकास पर दिखता है। वर्तमान अध्ययन का मुख्य उदेश्य नदी मार्ग स्थानतारण से निचलि कोसी बेसिन में सामाजिक-आर्थिक परिदृश्य के बदलते रुझानों, चुनौतियों का व्यवहारिक प्रादेशिक अध्ययन करना है।

मुख्य शब्द- कोसी नदी, मार्ग परिवर्तन, पिछड़ापन,सामाजिक-आर्थिक प्रभाव, विकास

परिचय- कोसी बेसिन बिहार (भारत) और नेपाल के एक बड़े भौगोलिक क्षेत्र को अपने में समाहित करती है। बिहार के समस्त क्षेत्रफल का लगभग 8 प्रतिशत भौगोलिक क्षेत्र का अध्ययन इस शोध पत्र में किया गया है। इस बेसिन की संपूर्ण आर्थिक–सामाजिक आयामों पर कोसी नदी अपनी अस्थिर प्रवृत्ति, गतिकी जैसे–नदी मार्ग परिर्वतन और बाढ़ के कारण पूरे प्रदेश पर गहरे तौर से प्रभाव डालती है। प्रत्येक वर्ष इस क्षेत्र में तीव्र बाढ़, अत्यधिक

• स्नातकोत्तर भूगोल विभाग, पटलीपुत्र यूनिवर्सिटी, पटना-800020

अवसाद की मात्रा, जलीय जमाव, कृषि भूमि का कटाव, अपरदन, ने यहां के भूमि उपयोग प्रारूप को बिलकुल बदल दिया है। जिससे यहां रहने वाले जनसंख्या के सामाजिक–आर्थिक परिदृश्य में बदलाव से उनका जीवन दयनीय हो गया है। वर्तमान प्रस्तुत अध्ययन का मुख्य उद्देश्य निचली कोसी बेसिन में नदी मार्ग परिर्वतन के फलस्वरूप हुए बदलाव के प्रवृत्ति, रुझानों का व्यवहारिक, सतत पोषणीय अध्ययन करना है।

अध्ययन का उद्देश्य- कोसी नदी अपने मार्ग परिवर्तन के कारण विश्व की प्रमुख विनाशकारी नदियों में से एक मानी जाती है। इस क्षेत्र में हुए बाढ़, कटाव, अपरदन, अत्यधिक अवसाद ने यहां सामाजिक–आर्थिक विषमता को जन्म दिया है इसलिए यह शोध पत्र सीधे तौर पर कोसी नदी बेसिन (मुख्य रूप से बिहार) में हुए परिर्वतनों पर अध्ययन करता है। इसके मुख्य उद्देश्य निम्नलिखित है–

1. कोसी बेसिन में समय के साथ हुए सामाजिक–आर्थिक परिर्वतनों का विश्लेषण करना।
2. बेसिन के क्षेत्र में उत्पन्न मुख्य चूनैतियों और अवसरों पर गहराई से विचार करना।
3. कारणों की पहचान (विशेषकर मार्ग परिर्वतन, बाढ़) विकास नीतियों और अन्य सामाजिक–आर्थिक कारणों की पहचान करना।

अध्ययन क्षेत्र- कोसी नदी गंगा की महत्वपूर्ण सहायक नदियों में से एक है इसका कुल जल ग्रहण क्षेत्र 93,355 वर्ग किलोमीटर है। (History of Kosi Project, WRD, Govt- of Bihar), जो पूरे सिमांचल प्रदेश में प्रवाहित होती है। कोसी नदी अपने उद्गम स्थल हिमालय (7000 M) से तिब्बत, नेपाल, भारत होते कुर्सेला (60 M) मिलती है।बिहार में प्रवेश करने से लेकर कुर्सेला तक कुल जलग्रहण क्षेत्र 11,265 वर्ग किलोमीटर है।(तालिका,01)

तालिका 01
निचली कोसी बेसिन का देश जिलावार क्षेत्रफल

जिला	जलग्रहण क्षेत्र (वर्ग किलोमीटर)
दरभंगा	66
मधुबनी	1175
सुपौल	2366
खगरिया	691
सहरसा	1646
अररिया	835
पूर्णिया	1172
मधेपुरा	1796
कटिहार	446
भागलपुर	512

स्रोत – केंद्रीय जल आयोग, 1993(भारत सरकार)

इस क्षेत्र में कुल 10 जिले आते है विस्तृत विवरण तालिका 01 में दिया गया है। इस क्षेत्र मे कुल बिहार की लगभग 10 प्रतिशतजनसंख्या निवास करती है। इस नदी का उद्गम स्थान नेपाल हिमालम में ($26^0$54,47" उत्तरी अक्षांश से होता है। नेपाल के हनुमान नगर ($6^0$11' उत्तरी अक्षांश और $86^0$54') पूर्वी देशांतर जहां कोसी बैराज है से भारत (बिहार) की सीमा में प्रवेश करती है, और सूपौल, सहरसा, खगड़िया, मधेपुरा, उत्तरी भागलपुर सिमा बनाती हुई कटिहार के कुर्सेला ($25^0$43'43" उत्तरी अक्षांश) में गंगा नदी में मिल जाती है। (चित्र,01) यह नदी ऊपरी भागों में सात धाराओं इन्द्रावती, दूध कोसी, लिखू कोसी, भोट कोस, तांबा कोसी, अरुण के मिलने से बनती हैं। निचले बेसिन में इसकी सहायक नदियों में बागमती, कमला, बलान आदी है। इसी बेसिन में अस्थिर प्राकृतिक प्रवृत्ति के कारण सामाजिक–आर्थिक परिदृश्य में प्रभाव डालती है।

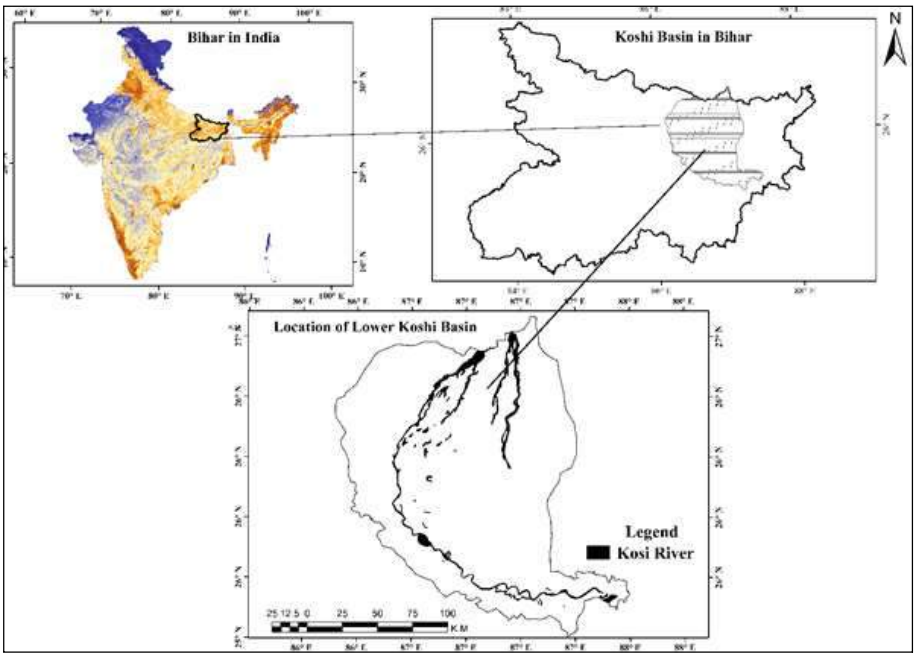

चित्र 01 निचली कोसी बेसिन की अवस्थिति

शोध प्रविधि- इस शोध के अध्ययन प्रविधियों में दो तरह के आँकड़ों को शामिल किया गया है। जो द्वैतियक और प्राथमिक आँकड़ों के रूप में है। द्वैतियक आँकड़ों में जहां विभिन्न शोध पत्र, पुस्तकें, रिपोर्ट आदि का साहरा लिया गया है, वही प्राथमिक आँकड़ों में क्षेत्र सर्वेक्षण के लिए विषय वस्तु से संबंधित अनुसूचि तैयार कर साक्षात्कार और अवलोकन के द्वारा गुणात्मक और मात्रात्मक आँकड़े एकत्रित किये गए है। साथ ही मानचित्रों एवं रेखा चित्र उपयुक्त कार्टोग्राफिक विधियों एवं उच्च स्तरीय रिजुल्युशन के उपग्रहिय मानचित्र का प्रयोग किया गया है। जो शोध शीर्षक के अंतर्गत आने वाले सामाजिक–आर्थिक समस्याओं का आधार बनते है। प्राथमिक आँकड़ों के संग्रहण के लिए प्रतिचयन विधि का प्रयोग किया गया है। इसके लिए उद्देश्यपूर्ण स्तरीकृत यादृच्छिक

(Purposive Stratified Random Sampling) का प्रयोग किया गया है।

आँकड़ों का चयन का आधार- इस कार्य के लिए पूरे निचले बेसिन को प्रभाव के आधार पर तीन भागों में विभाजित किया गया है–

1. अत्यधिक प्रभावित क्षेत्र (सहरसा, सुपौल)
2. मध्यम प्रभावित क्षेत्र (खगड़िया, मधेपुरा)
3. निम्न प्रभावित क्षेत्र (कटिहार, पूर्णिया, अररिया, मधुबनी, दरभंगा, भागलपुर)

आँकड़ों का संग्रहण- सर्वप्रथम पूरे क्षेत्र के 10 जिलों का उद्देश्यपूर्ण स्तरीकृत यादृच्छिक प्रतिचयन के लॉटरी विधि द्वारा ब्लॉक पुनरू गाँव का चयन किया गया है। अत्यधिक प्रभावित से चार गाँव, मध्यम प्रभावित से 2 गाँव और निम्न प्रभावित से 6 गाँव लिये गए है। निम्न प्रभावित से 6 गाँव लेने का कारण इसमें 6 जिलें शामिल है, इसलिए प्रत्येक जिले से एक एक गाँव लिये गए है। इस प्रकार पूरा शोध पत्र के लिये 10 जिले के 12 प्रखंड के 12 गाँव द्वारा लिये गए प्रतिदर्श के आधार पर लिखा गया है। और प्रत्येक गाँव से 30 परिवार के प्रधान को शामिल किया गया है। इस तरह इसमें 12 x 30 = 360 चित्र 02 अत्यधिक, मध्यम, निम्न प्रभावित भौगोलिक क्षेत्र (जोन) तदर्श शामिल है। चित्र 02

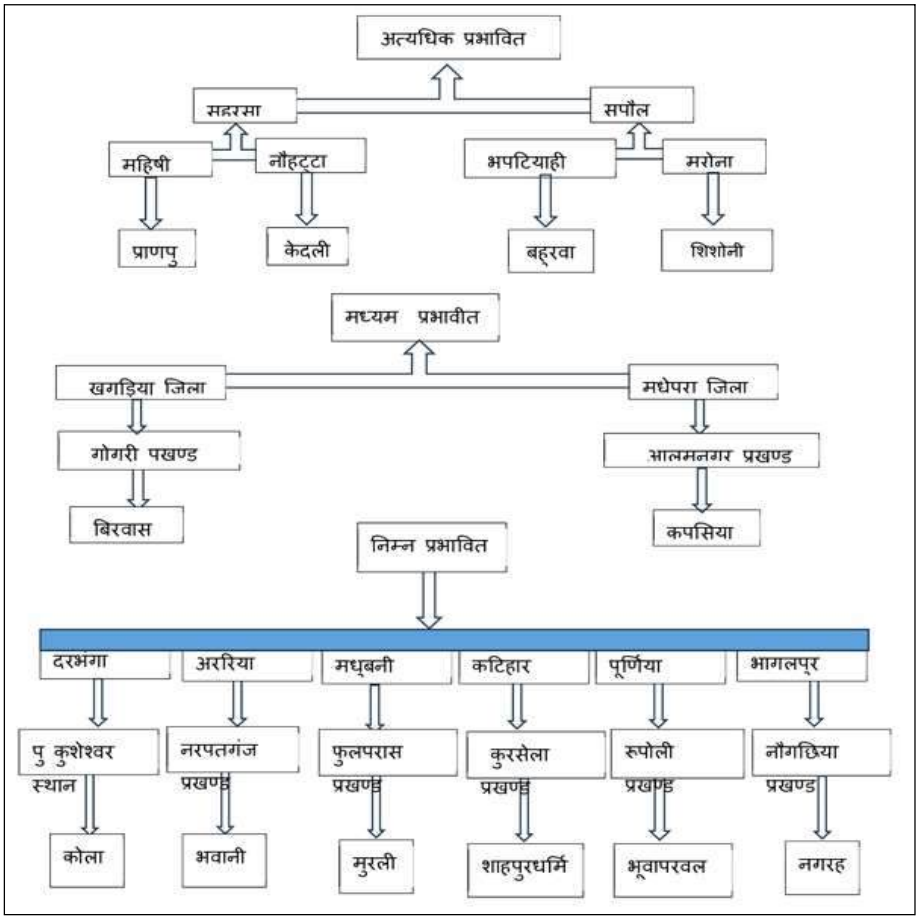

अत्यधिक, मध्यम, निम्न प्रभावित भौगोलिक क्षेत्र (जोन)

कोसी नदी की मार्ग परिर्वतन की प्रवृत्ति- कोसी नदी की अस्थिरता का सर्वप्रथम अध्ययन शिलिंगफोर्ड (1833) में किया गया। कई भूगोलवेत्ता मैदानी भागों में नदी की गतिशिलता के बारे में कहा है उनका मानना है कि कोसी नदी के निरंतर पूरब से पश्चिम की ओर विस्थापन किया है। लियोपोल्ड एवं मण्डोक ने (1954) ने कोसी नदी के मार्ग परिर्वतन की प्रवृत्ति का कारण नदी की पाश्विक सतह में जालीनुमा तंत्र (Braided System) को बताया हैं साथ ही अवसाद की डर को भी प्रधान कारक माना। गोले अवाम चितले (1966) ने अपने शोधपत्र में कहा की कोसी नदी पिछले 200 वर्षों में 150 किलोमीटर पश्चिम की ओर विस्थापित हुई। नदियाँ कई कारणों से मार्ग बदल सकती हैं। बाढ़, क्रस्टल मूवमेंट, चौनललाइजेशन और अन्य कारणों से नदी चौनल जियोमॉर्फिक शिफ्टिंग में योगदान कर सकते हैं। हालाँकि, नदी के आकार में महत्वपूर्ण परिवर्तन बड़े बाढ़ के तुरंत बाद स्पष्ट हो सकते हैं, खासकर दुनिया के उष्णकटिबंधीय क्षेत्रों में (लतेला, 2024) नदियों का स्थानांतरण विनाशकारी मौसम की स्थिति, उच्च मौसमी वर्षा से आने वाली बाढ़ या मानसून अस्थिरता के कारण प्रकट हो सकता है, जिनमें से सभी के कोसी क्षेत्रों के प्रवण क्षेत्रों में स्पष्ट परिणाम हैं (पूर्णिमा, 2024) जलवायु परिवर्तन के कारण वर्षा की पर्वती में भी बदलाव हो रहे है, जिससे बाढ़ और सूखे की समस्या भी बाढ़ रही है इससे कृषि उपयोग और भूमि उपयोग में भी परिवर्तन हो रहा है (बरेंडरेचट, 2024)।

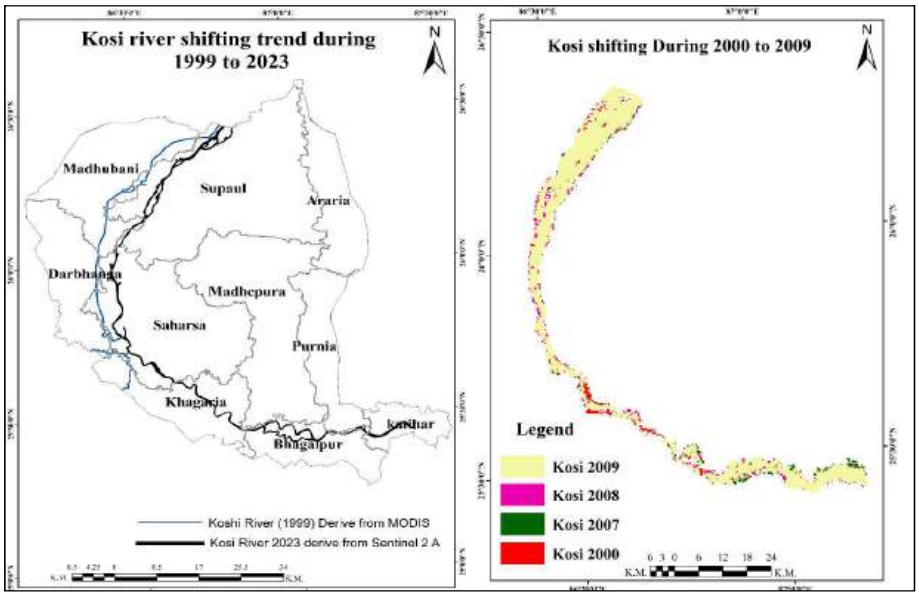

चित्र 03 कोसी नदी परिर्वतन (2000 से 2009) चित्र 04 कोसी नदी परिर्वतन (2000 से 2009)

(चित्र,03) में 1999 और 2023 में नदी मार्ग परिर्वतन को दिखाया गया है। इससे पता चलता है की 1999 की तुलना में 2023 में नदी कही-कही पूरब की और बहाव में बदलाव किया है जिसके भूकंप, भूस्खलन, मानवीय गतिविधिया आदि हो सकती है। वही

दाहिने के मानचित्र में 2000, 2997, 2008, 2009 कोसी नदी के मार्ग परिवर्तन को दिखाया गया है, नदी लगातार अपने मार्ग में बदलाव कर रही है। (चित्र 04) निष्कर्षत: कहा जा सकता है कि यह नदी लगातार अपना मार्ग परिर्वतन कर रही है। (चित्र 04)

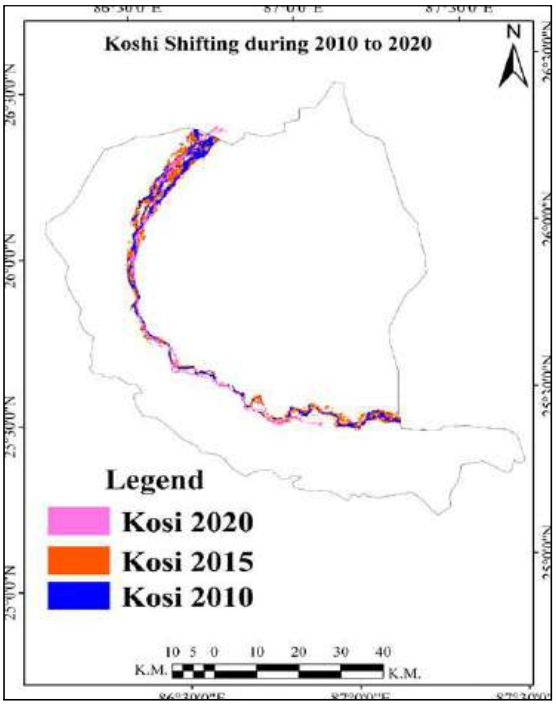

चित्र- 05 कोसी नदी मार्ग स्थानांतरण (2010 से 2020)

परिणाम और परिचर्चा- इस क्षेत्र के चयनित गांव के आंकड़ों के विस्तृत अध्ययन से ज्ञात हुआ है कि निचली कोसी बेसिन के 95 प्रतिशत गांवों में नदी मार्ग परिवर्तन कभी ना कभी हुआ है। इस मार्ग परिवर्तन से बेसिन क्षेत्र मे सबसे ज्यादा प्रवास क्रमश: सहरसा, सुपौल, खगरिया, मधेपुरा मैं हुआ है। नदी मार्ग परिवर्तन के कारण इन गावों में परिवहन, संचार, बाजार, स्वास्थ्य ,खाघ आपूर्ति, की क्षति हुई है। इस क्षेत्र के 90 प्रतिशत लोगों का मानना है कि नदी स्थान्तरण के कारण भूमि का अपरदन हुआ है, जिससे कृषि भूमि की उर्वरता निम्न हुई है। सबसे अधिक नदी मार्ग परिवर्तन के कारण सामाजिक- आर्थिक बदलाव सुपौल, सहरसा, मधेपुरा और खगड़िया में हुआ है। कम प्रभावित क्षेत्रों में मधुबनी, दरभंगा, अररिया, कटिहार, पूर्णियां और उत्तरी भागलपुर वाले क्षेत्र आते है जो सीधे सीधे कोसी नदी से प्रभावित तो नहीं है बल्कि कोसी नदी की सहायक नदी से प्राभवित है। अध्ययन क्षेत्र को तीन फसल आधारित वर्गों में विभाजित किया गया है इसमें अधिक क्षेत्र ऐसे हैं जिनमें कृषि भूमि का नुकसान हुआ है। बेसिन के दक्षिणी क्षेत्र में मिट्टी का अपरदन होने एवं मध्य भाग में अपरदन अधिक होने से कृषि का भी नुकसान हुआ है।

इसी प्रकार अध्ययन क्षेत्र के दक्षिणी भाग में का फसल आधारित आर्थिक सूचकांक निम्न आर्थिक क्षेत्र के अंतर्गत आता है, जिसमें मुख्य रूप से खगरिया, सहरसा

का हिस्सा। मधेपुरा का दक्षिणी भाग और कटिहार और पूर्णिया के कुछ हिस्सा शामिल हैं।(चित्र,06) बहुत कम अपरदन श्रेणी वाले क्षेत्र मुख्यत: नीचे और पूर्वी वाले भाग है, उदाहरण स्वरूप अररिया, मधेपुरा और पूर्णिया का कुछ हिस्सा मिट्टी अपरदन एक जटिल समस्या है जो सामाजिक- आर्थिक परिदृश्य नैन हुए बदलाव का प्रतिनिधत्व करती है। प्राथमिक और द्वितियक आँकड़ों के अध्ययन से पता चलता है कि कोसी बेसिन (बिहार) अपनी भौगोलिक विशेषताओं के कारण प्राकृतिक आपदाओं ने इस क्षेत्र को काफी संवेदनशील बना दिया है।

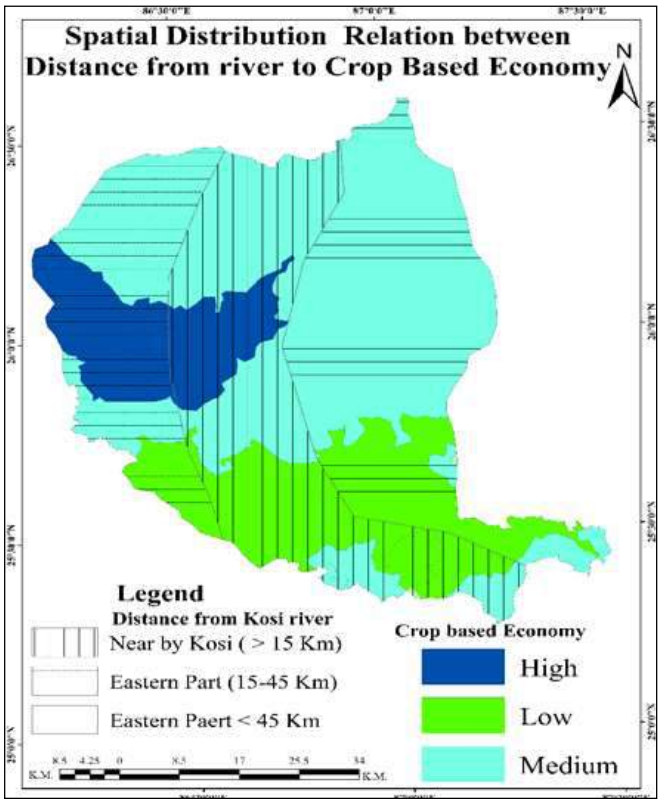

चित्र 06 प्रादेशिक वितरण (नदी से दूरी और फसल आधारित अर्थव्यवस्था में संबंध)

आर्थिक परिदृश्य में हुए बदलाव- इस क्षेत्र की संपूर्ण अर्थव्यवस्था कृषि से जुड़ी है। नदी मार्ग परिर्वतन और बाढ़ ने आर्थिक व्यवस्था को नाकारात्मक रूप से प्रभावित किया है।

कृषि और बाढ़ का प्रभाव- कृषि यहां की आजिविका का मुख्य आधार है। बार बार आने वाली बाढ़ और भूमि कटाव से पिछड़ेपण का शिकार हो गई।यहा बाढ़ के कारण मृदा अपरदन की समस्या भी देखी जा रही है। (हेन, 2007) बाढ़ के कारण फसल का नष्ट हो जाना, अवसाद की मात्रा, जल-जमाव, अपरदन इस पूरे क्षेत्र में घाटे का सौदा है। लेकिन पुन: फसल चक्रण, बागवानी, मछली पालन आदी के कारण जीविका में बदलाव हुए हैं।

रोजगार और औद्योगिक विकास- कृषि बर्वाद होने से और रोजगार का कोई अन्य

विकल्प नहीं होने एवं कौशल विकास के अभाव के कारण बेरोजगारी एक प्रमुख कारण बनी हुई है। मनरेगा जैसी योजनाएं कुछेक को लाभ पहुंचा पाती है लेकिन बेरोजगारी को कम नहीं कर पायी है। जैसे जैसे जनसंख्या का विस्तार हो रहा है बेरोजगारी बढ़ती जा रही है। इसको कम करने के लिए ग्रामीण स्तर पर रोजगार के अन्य साधन उपलब्ध कराने होंगे। तथा कौशल विकास को प्राथमिक ता देनी होगी।

औद्योगिक विकास- पूरे बेसिन क्षेत्र में उद्योग का अभाव 20 वर्ष पहले यहां उद्योग नाम मात्र के थे कमोवेश वही स्थिति पुन: बनी हुई है। एक दो स्थानों पर बड़े उद्योग लगाए गए है लेकिन यहां पर मुख्य रूप से मध्यम और लघु उद्योगों का विकास हुआ है। इस क्षेत्र में लघु कुटीर उोगों जैसे मखाना प्रसंस्करण उद्योग, दुग्ध उत्पाद, चमरा उद्योग, हस्तशिल्प, बांस वेत उत्पादन को बढ़ाता देने की आवश्यकता है।

बुनियादी ढांचे में बदलाव- बाढ़ ने सड़कों, बिजली, पूलों का विनाश किया है। जिससे आर्थिक गतिविधियों बाधित होती है। पहले से ही यहा बुनियादी संरचना उच्च स्तर के नहीं रहे है, ऊपर से बाढ़ ने इसे और तबाह कर दिया गया। पिछले 74 सालों में कोसी के तटबंध में 9 बार टूट का सामना करना पड़ा जिसमें संरचना के तहस-नहस के साथ मानव विस्थापन की भी गंभीर स्थिति देखी गई। अभी हाल फिलहाल में ही किशनपुर प्रखंड में कोसी के तरबंध टूट ने से कई सड़क, स्कूल, आवास, पूल, बिजली का नुकसान हुआ जिससे सरकार और स्थानीय निकाओं आमजन को इनके निर्माण में भारी खर्च करना पड़ता है लेकिन हाल के वर्षों में इसमें सुधार हुआ है। मोबाइल इंटरनेट नेटवर्क की लोगों तक पहुंच ने शहरी और ग्रामीण क्षेत्र की दूरी को पाटने का काम किया है।

आपदा प्रबंधन पर आर्थिक दवाब- बार-बार बाढ़ आने के कारण बुनियादी ढाँचे, औद्योगिक विनाश, परिवहन का नुकसान होने से राहत और पुर्नवास में सरकार की भारी धनराशियों का नुकसान उठाना पड़ता है।

सामाजिक परिदृश्य में हुए बदलाव- प्रत्यक्षत और अप्रत्यक्षत: देखे तो बेसिन में हुए सामाजिक बदलाव आर्थिक बदलाव से ही जूड़े है। इस क्षेत्र में हुए मुख्य बदलाव निम्न है-

जनसंख्या का विस्थापन- प्रत्येक वर्ष कोसी नदी क्षेत्र में हुए जल भराव से हजारों लोगों को विस्थापन का सामना करना पड़ा है। विस्थापित परिवारों को अस्थायी कैम्पों शिविरों, सड़कों , रेलवे पटरियों बांधों पर रहने पर मजबूर होना पड़ता है। पूर्णवास राहत योजनाओं में कमी उत्पन्न अनियमितता भ्रष्ट्राचार के कारण विस्थापन यहा स्थायी समस्या जैसी जान पड़ती है।

स्वास्थ्य और शिक्षा- नदी मार्ग परिर्वतन, बाढ़ के कारण होने वाली अनेक बिमारियां (डायरिया, हैजा, मलेरिया आदि) फैलती है। यहां चिकित्सा सुविधा कमी होने के कारण खासकर गर्भवती महिलाओं, बुर्जुग, बच्चे अधिक कठिनाइयों का सामना करना पड़ता है। यहां संतुलित आहार उपलब्ध नहीं होने से कुपोषण की समस्या भी बनी हुई है।

शिक्षा की दृष्टि से देखें तो औसतन 30 से 40 प्रतिश तक ही यहां की साक्षरता दर है। स्कूल और अन्य शैक्षिक संस्थाएं बाढ़ के कारण कहीं कहीं 3 से चार माह तो कहीं-कहीं 6 माह तक बंद रहते है जिससे बच्चों की पढ़ाई बाधित होती है। साथ ही बहुत सारे बच्चे बुनियादी शिक्षा तक से भी वंचित रह जाते है।

सरकारी और गैर सरकार संगठनों के द्वारा चलाए गए विभिन्न योजनाओं कारण यथा सर्व शिक्षा अभिमान, माध्यान भोजन, पोशाक योजना, छात्रवृत्ति योजना के फलस्वरूप शिक्षा के स्तर को बढ़ाने में वृद्धि हुई है।

महिलाओं की स्थिति- यहां की महिलाए सामाजिक आर्थिक सांस्कृतिक, राजनीतिक दृष्टि से भी पिछड़ी हालत में है। बाढ़ ने इसे और संवेदनशील बना दिया है। लेकिन हाल के वर्षों में स्वयं सहायता समूह, शिक्षा, जागरूकता, बाल विवाह में कमी ने महिलाओं को पहले के अपेक्षा अधिक सशक्त किया है।

सामाजिक संरचना में परिर्वतन- इस बेसिन में सांस्कृतिक और जातिगत व्यवस्था बहुत जटील था। सामाजिक व जातिगत भेदभाव यहां स्पष्ट देखी जाती थी। आज भी यह व्यवस्था यहां दिखती दिखती है, लेकिन पहले की अपेक्षा यहां में कमी आयी है। अब यहां जातिगत असमानता कम देखी जाती है। अब लोग पहले के अपेक्षा अधिक सामाजिक समावेशन की और बढ़ रहे है।

इन परिर्वतनों के अलावा बाढ़ और कटाव जलवायु परिवर्तन, पर्यावरण हास, गरीबी, आर्थिक असमानता, आपदा में भी बदलाव हुए है।

सुझाव व समाधान

- इको फ्रेंडली आधारभूत संरचना का निर्माण कर आपदा के प्रति संवेदनशीलता को बढ़ावा देना।
- भारत–नेपाल के संबंधों को मजबूत बनाने के लिए संयुक्त पहल पर बल देना।
- कृषि आधारित प्रसंस्करण उद्योगों को बढ़ावा देना।
- आपदा जोखिम को कम करना जिसके अंतर्गत तैयारी और प्रतिक्रिया में सुधार करना।
- विभिन्न हितधारकों, एजेंसियों और हितधारकों के बीच में समन्वय स्थापित करना।
- कौशल विकास को बढ़ावा देना जिसके अंतर्गत युवाओं को कृषि के प्रति जागरूक करना, पर्यटन एवं उद्यमिता को बढ़ावा देना।
- क्षेत्रीय स्तर पर ग्रामिण स्तर पर योजनाओं का पुनसंरचना का निर्माण।

निष्कर्ष- अंततः कहा जा सकता है कि कोसी बेसिन में सामाजिक आर्थिक परिदृश्य में प्राकृतिक आपदा मुख्यतः बाढ़ के कारण लगातार बदलाव होते जा रहे है। यहां आपदा जलवायु परिवर्तन और संरचनात्मक सुविधाओं की कमी मुख्य च चूनैतियों के रूप में यहां उपस्थित है, जिसके कारण सामाजिक आर्थिक जीवन लगातार पिछड़ता जा रहा है। इसलिए यहां के विकास को बढ़ावा देने के लिए सरकार को और अधिक मूलभूत योजनाओं और नीतियां लागु करनी होगी, इसमें मनरेगा का विस्तार एक अच्छी पहल हो सकती है, इसके साथ ही मौजा स्तर पर ही क्षेत्र का सर्वेक्षण भी आवश्यक है। जिससे इस प्रदेश के लोगों को सुरक्षित और स्थायी आजीविका का साधन विकसित किया जा सके।

संदर्भ ग्रन्थ सूची-

- Barendrecht, Marlies H., Alessia Matanó, Heidi Mendoza, Ruben Weesie, Melanie Rohse, Johanna Koehler, Marleen de Ruiter et al. "Exploring drought-to-flood interactions and dynamics: A global case review." Wiley Interdisciplinary Reviews: Water (2024): e1726.
- Gole, Chintaman V., and Shrikrishna V. Chitale. "Inland delta building activity of Kosi River." Journal of the Hydraulics Division 92, no. 2 (1966): 111-126.
- Hein, Lars. "Assessing the costs of land degradation: A case study for the Puentes catchment, southeast Spain." Land Degradation & Development 18, no. 6 (2007): 631-642.
- History of Kosi Project., WRD, Patna. Govt. of Bihar (1994).
- Latella, Melissa, Davide Notti, Marco Baldo, Daniele Giordan, and Carlo Camporeale. "Short-term biogeomorphology of a gravel-bed river: Integrating remote sensing with hydraulic modelling and field analysis." Earth Surface Processes and Landforms 49, no. 3 (2024): 1156-1178.
- Leopold, Luna Bergere, and Thomas Maddock Jr. "The flood control controversy: Big dams, little dams, and land management." (1954).
- National Plan of Water Resources Development, no.2, New Delhi (1994).
- Poornima, Ramesh, S. Ramakrishnan, Sengottaiyan Priyatharshini, Chidambaram Poornachandhra, Joseph Ezra John, Ambikapathi Ramya, and Periyasamy Dhevagi. "Climate Change Implications in the Himalayas." In The Himalayas in the Anthropocene: Environment and Development, pp. 237-277. Cham: Springer Nature Switzerland, 2024.
- Sinha, Rajiv. "Dynamics of a river system? the case of the Kosi River in north Bihar." Earth Science India 2 (2009).

UGC Journal No. (Old) 2138
Peer-Reviewed Research Journal
Impact Factor 6.375, ISSN 0975-4083
Vol.- 28, Hindi Edition, Year-14, March 2025

जोधपुर जिले में उत्पादित होने वाल विभिन्न फसलों में उत्पन्न होने वाली समस्याएँ

• भींजाराम

•• देवेन्द्र मुझाल्दा

सारांश- जोधपुर जिले में वर्तमान समय में गेहूँ, जो, चना, राया, तारामीरा, ईसबगोल, जीरा, सौफ, मैथी की खेती, लहसुन की खेती, जई, रिजका की खेती, प्याज, आलू , गाजर, राजगीरा/रामदाना आदि प्रकार की फसले उत्पादित की जाती है। बिलाड़ा विकासखण्ड के अंतर्गत भू-प्राकृतिक स्थितियों, वर्षा, मृदा किस्मों, सिंचाई के लिये पानी उपलब्धता और वर्तमान फसल प्रतिरूपों के आधार पर फसलों का उत्पादन इन सुविधाओं के आधार पर किया जाता है।

मुख्य शब्द- मरूस्थलीय मृदा, बाजरा, खरीफ दालें, मोठ, मूंग

प्रस्तावना- जोधपुर में शुष्क मैदानी क्षेत्र शामिल है। कुल लगभग 53 लाख हैक्टेयर भौगोलिक क्षेत्रफल वाले इस खण्ड का अधिकांश भाग मरूस्थलीय मृदाओं और रेतीले टीलों से युक्त है। 27 लाख हैक्टेयर कृषि योग्य क्षेत्र है, जिसका 11.8 प्रतिशत क्षेत्र सिंचित क्षेत्र है। यहां बारीक बुलई-दोमट से मोटी रेतीली मृदा है।

इस क्षेत्र के पश्चिमी भाग में लगभग 100 मिलीमीटर और पूर्व भाग में 300 मिलीमीटर औसत वार्षिक वर्षा होती है। जोधपुर में उच्चतम दैनिक मध्यम तापमान जून में 40 डिग्री सेल्सियस एवं न्यूनतम दैनिक मध्यक तापमान जनवरी में 8 डिग्री सेल्सियस रहता है। यहां खेती वर्षा ऋतु में निम्न से मध्यम ऊंचाई वाले टीबों के ढलान पर होती है और प्राय: बरानी स्थितियों में बाजरा और खरीफ दालें यथा मोठ, मूंग आदि उगाई जाती है। जहां भू-जल स्त्रोतों से पानी उपलब्ध हो पाता है, वहाँ नलकूपों द्वारा सिंचाई के अंतर्गत लवण सहनशील रबी अनाज वाली फसलों की खेती भी की जाती है।

सामान्यत: गेहूं की बौनी किस्म अन्य किस्मों से अधिक उपज देने में सक्षम है। गेहूँ के कई प्रकार पौधे इस क्षेत्र में उपलब्ध हैं, जिसमें राज 1482, राज 3077, डब्ल्यू एच 147, खारचिया 65, राज 3765, राज-3777, राज-4037, राज- 4083, राज मोल्या रोधक-1, पी.बी. डब्ल्यू 590, राज 4120, जी डब्ल्यु 11, एच.डी. 2967, के.आर.एल. 210, के.आर.एल. 213 एवं राज 4238 आदि प्रकार के गेहूँ की प्रजाती पाई जाती है। इस

• शोधार्थी

•• शोध निर्देशक, आचार्य एवं विभागाध्यक्ष भूगोल, विभाग माधव विश्वविद्यालय पिण्डवाड़ा (सिरोही) राजस्थान

फसल को उत्पन्न करने के लिए हल्की दोमट, भारी मिट्टी, क्षारीय व लवणीय क्षेत्र मिट्टी का उपयोग किया जाता है। लवणीय मिट्टी व खारे पानी वाले क्षेत्रों में बीज को सोडियम सल्फेट के तीन प्रतिशत घोल (डेढ़ किलो सोडियम सल्फेट का 50 लीटर पानी में घोल) में 4 घण्टे डुबोना चाहिये। इसके बाद बीज से लवण की परत हटाने के लिए बीज को सादे पानी में अच्छी तरह धोकर सुखा लेवे। बीजोपचार करने से पूर्व खारी मिट्टी एवं खारे पानी का विस्तृत परीक्षण करावें। भूमि तैयार करते समय करते समय सिफारिश के अनुसार खाद एवं रासायनिक उर्वरकों का प्रयोग करें। भूमि का पी.एच. मान 8.5 से अधिक हो तो मई में मिट्टी की जांच करवाकर सिफारिश की गई जिप्सम की मात्रा अनुसार जिप्सम डालें एवं ढैंचा की हरी खाद काम में ले।

जौ की खेती सामान्यतः सभी स्थितियों में की जा सकती है, लेकिन विपरीत परिस्थितियों जैसे पिछेती बुवाई एवं बारानी स्थिति, कम उर्वरा भूमि, क्षारीय और लवणीय भूमि में भी जौ उगाया जा सकता है। खाद एवं उर्वरकों का प्रयोग कर इसकी उपज को काफी सीमा तक बढ़ाया जा सकता है। जौ फसल की प्रजाति जिसमें आर डी 2052, आर डी 2035, आर डी 57, आर डी 103, बी एल 2 (बिलाड़ा 2), आर डी 31, आर डी 2552, आर डी 2715 एवं आर डी 2794 है। इस फसल के उत्पादन के लिए हल्की एवं दोमट मिट्टी, सामान्य बुवाई सिंचित, भारी मिट्टी, लवणीय क्षेत्र, मोल्या ग्रसिम भूमि में इस फसल को उगाया जाता है।

चने की खेती के लिये लवण व क्षार रहित, अच्छे जल निकास वाली उपजाऊ भूमि उपयुक्त रहती है। चने की फसल अधिकतर बारानी क्षेत्र में ली जाती है। वर्षा का पानी अधिक से अधिक खेत में समान रूप से समा सके, इसके लिये हल्की मिट्टी वाले क्षेत्रों में वर्षा प्रारंभ होते ही मेड़ों की मरम्मत करें। अच्छी वर्षा के बाद खरीफ में बाह आते ही जुताई करें। जहां खेत में खरपतवार हों वहां पुनः जुताई करना लाभकारी होगा। इस फसल की भी कई प्रकार की प्रजाति हैं जैसे कि सी 235, आर एस जी 44, जी एन जी 663 (वरदान), आर एस जी 888 (अनुभव), आर.एस.जी. 896 (अर्पण), जी.एन.जी 1488 (संगम), जी.एन.जी 1581 (गणगौर), आर.एस.जी 974 एवं जी.एन.जी. 1958 उन्नत किस्म की प्रजाति है।

राया राजस्थान की प्रमुख तिलहनी फसल है। इसकी खेती राज्य के सभी जिलों में की जाती है। इस तिलहनी फसल की भी कई प्रकार की प्रजाति उपलब्ध हैं, जिसमें टी 59, आर एच 30, बायो 902, जी.एम. 2, उर्वशी, आर.एच. 819, जे.एम. 1 (जवाहर मस्टर्ड 1), सी.एस. 52 एवं आशीर्वाद, सी.एच. 54, आर.जी.एन. 145, एन आर सी एच बी 101, पूसा सरसों 25, पूसा सरसों 26 एवं पूसा सरसों 27 इत्यादि प्रकार की प्रजाति है।

तारामीरा सभी क्षेत्रों में पैदा किया जा सकता हैं इसको अनुपजाऊ, एवं अनुपयोगी भूमि पर भी बोया जा सकता है। इसमें तेल की मात्रा लगभग 35 प्रतिशत पायी जाती है। इस फसल की उपयुक्त किस्में आर एम टी 314 है। तारामीरा हेतु हल्की दोमट मिट्टी अधिक उपयुक्त रहती है। अम्लीय एवं ज्यादा क्षारीय भूमि इसके लिये बिल्कुल उपयोगी नहीं है।

ईसबगोल एक महत्वपूर्ण नकदी फसल है। ईसबगोल की खेती जालोर व सिरोही

जिले में प्रमुखता से की जाती है। इस फसल की किस्में जी आई 2, आर.आई 89, आर. आई. 1 है। जीरा कम समय में पकने वाली मसाले की एक प्रमुख फसल है। इससे अधिक आमदनी होती है। इस फसल को उगाने के लिये हल्की एवं दोमट उपजाऊ भूमि अच्छी रहती है तथा इसमें जीरे की खेती आसानी से की जा सकती है। इस फसल की उन्नत किस्में आर जेड 19, आर जेड 209, जी.सी. 4, आर जेड 223 है।

सौंफ मसाले की एक प्रमुख फसल है। इसका उपयोग औषधि के रूप में भी किया जाता है। भारतवर्ष में सौंफ की खेती मुख्यत: राजस्थान, गुजरात तथा उत्तरप्रदेश में होती है। इस फसल की उन्नत किस्में आर. एफ. 125, आर.एफ. 143, आर.एफ. 101 है। सौंफ की खेती बलुई मिट्टी को छोड़कर प्राय: सभी प्रकार की भूमि में, जिसमें जीवांश पर्याप्त मात्रा में हो, की जा सकती है। लेकिन अच्छी पैदावार के लिये जल निकास की पर्याप्त सुविधा वाली, चूनायुक्त, दोमट व काली मिट्टी उपयुक्त होती है। भारी एवं चिकनी मिट्टी की अपेक्षा दोमट मिट्टी अधिक अच्छी रहती है।

मैथी की खेती यह मसाले की एक प्रमुख फसल है। इसकी हरी पत्तियों में प्रोटीन, विटामिन सी तथा खनिज तत्व पाये जाते है। बीज मसाले तथा दवाई के रूप में उपयोगी है। मैथी को अच्छे जल निकास एवं पर्याप्त जीवांश पदार्थ वाली सभी प्रकार की भूमि में उगाया जा सकता है। परन्तु दोमट मिट्टी इसके लिए उत्तम रहती है। यह ठण्डे मौसम की फसल है तथा पाले व लवणीयता को भी कुछ स्तर तक सहन कर सकती है। इस फसल की उपयुक्त किस्में आर एम टी, आर एम टी 305 है।

लहसुन की खेती यह रबी की एक नगदी फसल है। इसमें विटामिन सी, फास्फोरस तथ कुछ अन्य प्रमुख पौष्टिक तत्व पाये जाते हैं इसका उपयोग अचार, चटनी व मसाले के रूप में किया जाता है। इसमें औषधीय गुण भी पाया जाता है। लहसुन की खेती लगभग सभी प्रकार की भूमि में की जा सकती है लेकिन उपजाऊ दोमट मिट्टी जिसमें जल निकास की अच्छी व्यवस्था हो उपयुक्त रहती है। अत्यधिक गर्म या ठण्डा मौसम इसकी खेती के लिये अनुकूल नहीं होता है। इस फसल में भी कई प्रकार किस्में उपलब्ध हैं जैसे की यमुना, सफेद, लावा, मलेवा व अन्य स्थानीय किस्में।

जई चारे की एक आदर्श फसल हैं जो दिसम्बर से मार्च तक हरा चारा मुहैया कराती है। बहु कटाई व अधिक उपज के साथ-साथ जई एक उच्च गुणवत्ता वाला स्वादिष्ट व पौष्टिक चारा है। इस फसल में उपयुक्त किस्में जावी 8, ओ एल 9, ओ एल 529, केन्ट, डी.एफ. ओ 57 आदि है।

रिजका की खेती बहु वर्षीय फलीदार चारे वाली फसल है। एक बार बुवाई करने पर 2-3 वर्ष चारा लिया जा सकता हैं। इसमें सूखा सहने की शक्ति होती है। बहु कटाई व अधिक उपज के साथ-साथ रिजका एक उच्च गुणवत्ता वाला स्वादिष्ट व पौष्टिक चारा है। इस फसल में उपयुक्त किस्में आन्नद 2, एल.एल.सी 3, एल.एल.सी 5, टाईप 9, टाइप 8, सिरसा 8 एवं सिरसा 9 है।

प्याज एक नगदी फसल हैं जो सर्दियों में उगाई जाती है इसमें विटामिन सी, फास्फोरस आदि पोषक तत्व पाये जाते हैं, प्याज का उपयोग सलाद सब्जी, मसालें के रूप में किया जाता है। गर्मी में लू लग जाने पर भी लाभदायक है। इस फसल की उपयुक्त

किस्में जिसमें प्याज लाल में पूसा रेड, नासिक रेड, पंजाब रेड राउण्ड, आर.ओ. 252, आर.ओ, 59 भीमाराज, हिसार प्याज 3 है एवं प्याज सफेद में उदयपुर 102, पूसा व्हाइट फ्लेट, पूसा व्हाइट राउण्ड, अकोला सफेद है। प्याज पीली में अर्ली ग्रेनो है। आमतौर पर सभी किस्म की भूमि में प्याज की खेती की जा सकती है। भूमि लवणीय एवं क्षारीय नहीं होनी चाहिये, गंधक की कमी हो तो 250 किलो जिप्सम प्रति हैक्टर भूमि में मिलना चाहिये।

आलू की उन्नत खेती मानव आहार में प्रयोग की जाने वाले विभिन्न प्रकार की सब्जियों में आलू का प्रमुख स्थान है। इसमें कार्बोहाइड्रेट की प्रचुर मात्रा के साथ साथ खनिज लवण, विटामिन तथा अमीनों अम्ल की मात्रा भी पायी जाती है, जो शरीर की वृद्धि एवं स्वास्थ्य के लिये आवश्यक है। आलू की फसल सामान्य तौर पर सभी प्रकार की भूमि में उगाई जा सकती है तथा हल्की बलुई दोमट मिट्टी वाला उपजाऊ खेत जहां जल निकास की सुविधा हो इसके लिये विशेष उपयुक्त रहता है। खेत का समतल होना भी आलु की फसल के लिये आवश्यक होता है आलू को 6 से 8 पी एच वाली भूमि में भी सफलता पूर्वक उगाया जा सकता है परन्तु लवणीय व क्षारीय भूमि इस फसल के लिये पूर्णतया अनुपयुक्त रहती है। इस फसल में भी कई प्रकार की किस्में जैसे की कुफरी पुखराज, कुफरी सूर्या है।

गाजर भारतवर्ष की प्रमुख जड़ वाली फसल है। गाजर में विटामिन ए प्रचुर मात्रा में होता है। इसके अलावा इसमें शर्करा, खनिज, लवण, थायोमिन तथा राइबोफ्लेविन विटामिन भी होता है। गाजर को सलाद के रूप में भी खाया जाता है तथा इसके सब्जी, अचार, ज्यूस, मुरब्बा, मिठाइयां आदि व्यंजन बनाये जाते है। इस फसल की उन्नत किस्में पूसा रूधिरा, पूसा वृष्ठि है। गाजर की अच्छी पैदावार के लिए गहरी, भुरभुरी हल्की दोमट तथा अच्छे जल निकास वाली मिट्टी उपयुक्त रहती है।

राजगीरा/रामदाना एक बहुउद्देश्यी धान्य स्वरूप फसल है इसकी खेती बीज, हरे एवं सूखे चारे, प्रारम्भिक में सब्जी व सजावट के लिए की जाती है। इसकी खेती मुख्यतया उत्तर पश्चिमी हिमालयी क्षेत्र में होती रही है परन्तु अब देश के अन्य भागों में भी होने लगी हैं इसका दाना काफी पौष्टिक होता है। इसकी विभिन्न किस्मों में सामान्यतया 12–17 प्रतिशत प्रोटीन तथा प्रोटीन में 5.5 प्रतिशत लाइसिन होता है। राजगीरा एवं गेहूँ की मिश्रित आटे से बनी रोटी को एक पूर्ण आहार माना जाता है। इसके दानों को फलाकर कई तरह के खाद्य पदार्थ, विशेष रूप से लड्डू बनाना अधिक प्रचलित है। इसके अलावा कई प्रकार के बेकरी खाद्य पदार्थ जैसे बिस्किट, केक पेस्ट्री, केक आदि भी बनाये जाते है। राजगीरा से बनाये गये बाल आहार को उत्तम माना जाता है। इसकी पत्तियों में ऑक्जलेट एवं नाइट्रेट की मात्रा कम होने के कारण यह एक पौष्टिक एवं सुपाच्य हरा चारा माना जाता है। राजगीरा तेल रक्तदबाव व कोरोनरी ह्रदय बीमारी में भी उपयोगी है। इस फसल की उन्नत किस्में आर.एम.ए. 4, आर.एम.ए. 7 है।

इस प्रकार से जोधपुर जिले के बिलाड़ी विकासखण्ड में कई प्रकार की फसलों का उत्पादन होता हैं जिसमें इस क्षेत्र की मिट्टी का योगदान बहुत ही अतुल्य है।

उपलब्ध साहित्य का अध्ययन- प्रस्तुत शोध अध्ययन जोधपुर जिले की बिलाड़ा

विकासखण्ड क्षेत्र के आसपास की फसलों और मिट्टी के लाभ का पारिस्थितिक–भौगोलिक अध्ययन में विभिन्न समय में किये गये शोध साहित्य का अध्ययन किया जावेगा।

मित्रा (1990) ने उत्पादन की अस्थिरता पर महाराष्ट्र में सिंचाई के प्रभाव का अध्ययन किया। उन्होंने पाया कि राज्य स्तर पर, गेहूं, बाजरा, गन्ना, कपास और मूंगफली के तहत औसत सिंचित क्षेत्र में चार साल में 100–80 प्रतिशत (गेहूं 285 प्रतिशत) की वृद्धि हुई थी, जो 1979–80 के नौ वर्षों की अवधि 1964–65 को समाप्त हुई।

प्रकाश व अन्य (1995) ने नई आर्थिक नीतियों का कृषि उत्पादों के निर्यात पर प्रभाव के अध्ययन में भारत के विदेश व्यापार की प्रवृत्ति, भारत के सकल निर्यात में कृषि उत्पादों के निर्यात हिस्सा, वैश्विक उत्पादन एवं व्यापार में भारत का प्रतिशत प्रमुख निर्यात उत्पादों की संरचना में परिवर्तन, महत्वपूर्ण प्राप्त निष्कर्षों से ज्ञात होता हैं कि कृषि उत्पादों के निर्यात संबंधी नीतियाँ आदि विभिन्न कारकों का द्वितीयक स्त्रोतों के आधार पर विश्लेषण किया है।

शोध समस्या का चयन- जोधपुर जिले में कई प्रकार की फसलों का उत्पादन किया जाता है, जिनको उत्पादित करने में कई प्रकार की समस्याओं का सामाना करना पड़ता है, जिसमें मुख्य रूप से मौसम का साथ न देना, सही समय पर पर्याप्त संसाधन उपलब्ध न होना, सही समय पर फसलों की देखरेख न करना आदि कई समस्याओं का सामना करना पड़ता है।

अध्ययन का उद्देश्य- इस शोध अध्ययन के निम्नलिखित उद्देश्य हैं–

- जोधपुर जिले में मिट्टी की गुणवत्ता बहुत ही अच्छी है।
- जोधपुर जिले में फसलों का उत्पादन अधिक से अधिक मात्रा में होता है।
- इस क्षेत्र में इन योजनाओं का लाभ कृषकों के द्वारा लिया जा रहा है।

शोध परिकल्पनाऐं- इस शोध अध्ययन के निम्नलिखित परिकल्पनाऐं हैं :–

- जोधपुर जिले की बिलाड़ा विकासखण्ड में लोगों को विभिन्न फसलों एवं मिट्टी की गुणवत्ता की जानकारी है।
- लोगों में इस क्षेत्र में रूचि दिन प्रतिदिन बढ़ती जा रही है।
- इस क्षेत्र में लोगों को रोजगार मिल रहा है।

अध्ययन विधि

अध्ययन का क्षेत्र- राजस्थान राज्य के जोधपुर जिले में उत्पादित फसलों का अध्ययन किया जायेगा।

अध्ययन का समग्र- जोधपुर जिले के क्षेत्र के अंतर्गत उत्पादित होने वाली फसलों का अध्ययन किया जावेगा।

अध्ययन की इकाई- जोधपुर जिले में स्थित ग्रामीण क्षेत्र के अंतर्गत आने वाले समस्त कृषकों को रखा गया है।

निर्देशन विधि- जोधपुर जिले के अंतर्गत उत्पादित होने वाली फसलों का अध्ययन ग्रामीण क्षेत्रों में स्थित 60 कृषक उत्तरदाताओं के माध्यम से किया जाएगा।

अध्ययन का स्तर- शोध पत्र के अध्ययन के लिए जोधपुर जिले के ग्रामीण क्षेत्रों में

फसल उत्पादन में होने वाली विभिन्न समस्याओं को इस लघु शोध पत्र में लिए शामिल किया गया है।

आंकड़ो का संकलन और विधि- जोधपुर जिले के विभिन्न विकासखण्डों में उत्पादित होने वाली फसलों से संबंधित अध्ययन को आधार मानकर अध्ययन के लिए आँकड़ो को दो माध्यम से संकलित किया गया है। व्यक्तिगत सर्वेक्षण के माध्यम से अवलोकन किया गया है। द्वितियक स्त्रोत के अंतर्गत प्रकाशित स्त्रोत का अध्ययन किया गया है तथा भारत सरकार एवं राजस्थान सरकार के द्वारा समय-समय पर प्रकाशित कृषि एवं फसलों से संबंधित पत्र-पत्रिकाओं एवं इंटरनेट आदि के माध्यम से आँकड़ों को प्राप्त किया गया है और इनको वर्णनात्मक विधि के आधार पर प्रस्तुत किया गया है।

तालिका क्रं. 01

क्या आपके गॉव में विभिन्न प्रकार की फसलों का उत्पादन किया जाता हैं ?

स.क्र.	विवरण	प्रतिशत
1	हाँ	40
2	नहीं	20
	कुल योग	60

स्रोत- प्राथमिक समंक के आधार पर प्राप्त तथ्यों के आधार पर नवम्बर 2023

उपरोक्त तालिका क्रं. 01 से स्पष्ट होता है कि जोधपुर जिले विभिन्न ग्रामों में स्थित कृषकों का मानना हैं कि उनके गॉव में विभिन्न प्रकार की फसलों का उत्पादन किया जाता है, इस तथ्य को मानने वाले उत्तरदाताओं की संख्या 40 है, वहीं 20 प्रतिशत उत्तरदाताओं का मानना हैं कि उनके गॉव में विभिन्न प्रकार की फसलों का उत्पादन नहीं किया जाता है।

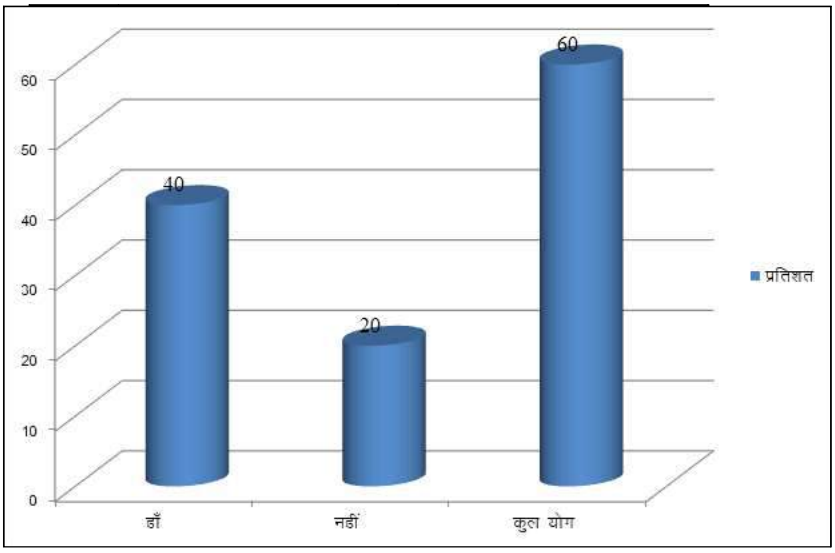

तालिका क्रं. 02
क्या आपको मौसम के द्वारा समय-समय पर साथ दिया जाता हैं ?

स.क्र.	विवरण	प्रतिशत
1	हाँ	38
2	नहीं	22
	कुल योग	60

स्रोत- प्राथमिक समंक के आधार पर प्राप्त तथ्यों के आधार पर नवम्बर 2023

उपरोक्त तालिका क्रं. 02 से स्पष्ट होता है कि जोधपुर जिले के विभिन्न गॉवों में स्थित कृषकों का मानना हैं कि उनको मौसम के द्वारा समय-समय पर साथ दिया जता हैं, इस तथ्य को मानने वाले उत्तरदाताओं की संख्या 38 है, वहीं 22 प्रतिशत उत्तरदाताओं का मानना हैं कि उनको मौसम के द्वारा समय-समय पर साथ नहीं दिया जाता है।

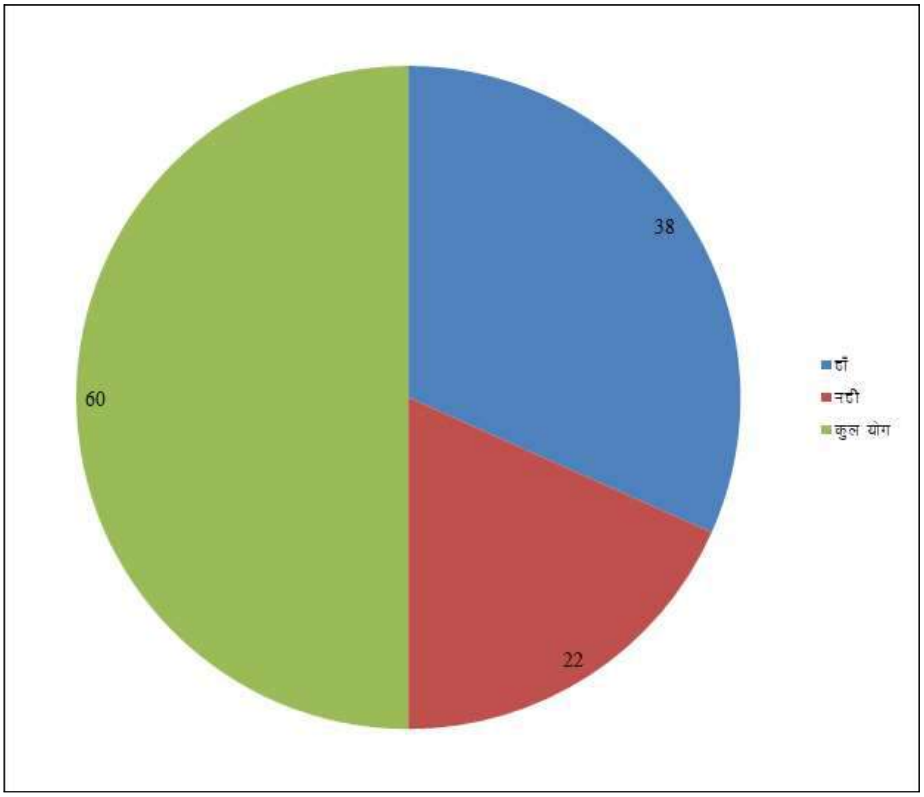

तालिका क्रं. 03
क्या आपको सही समय पर पर्याप्त संसाधन उपलब्ध हो जाते हैं ?

स.क्र.	विवरण	प्रतिशत
1	हाँ	44
2	नहीं	16
	कुल योग	60

स्रोत- प्राथमिक समंक के आधार पर प्राप्त तथ्यों के आधार पर नवम्बर 2022

उपरोक्त तथ्यों से ज्ञात होता हैं कि जोधपुर जिले के विभिन्न ग्रामों में स्थित कृषकों का मानना हैं कि उनको फसलों के उत्पादन के समय पर्याप्त संसाधन उपलब्ध हो जाते हैं, इस तथ्य को मानने वाले उत्तरदाताओं की संख्या 44 है, वहीं 16 प्रतिशत उत्तरदाताओं का मानना हैं कि उन्हें फसलों के उत्पादन के समय पर्याप्त संसाधन उपलब्ध नहीं हो पाते है।

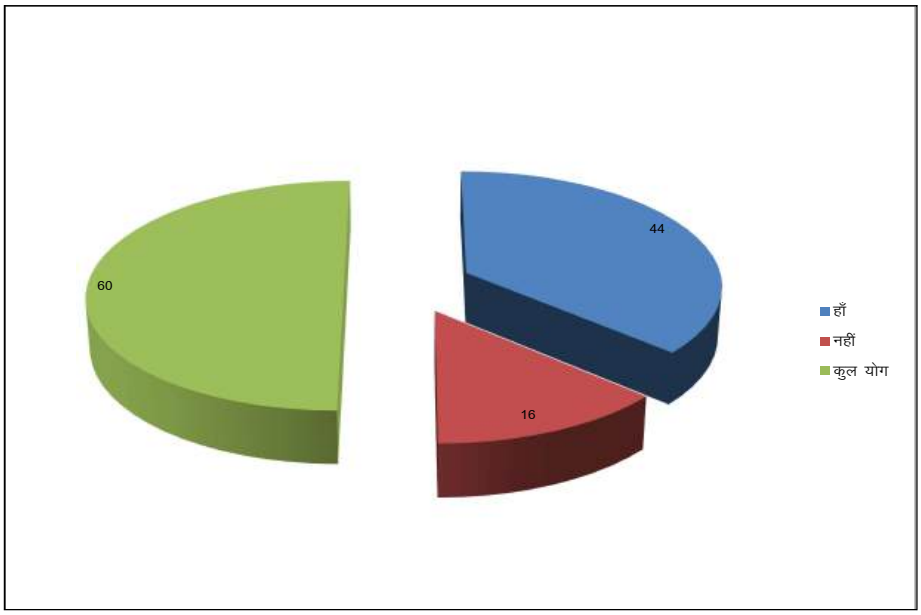

अत: कहा जा सकता हैं कि जोधपुर जिले के विकासखण्डों में स्थित कृषकों को कृषि में फसल उत्पादन के समय कई प्रकार की समस्याओं का सामाना करना पड़ता हैं।

तालिका क्रं. 04
क्या आपके क्षेत्र में फसलों के लिए भूमि उपलब्ध हैं ?

स.क्र.	विवरण	प्रतिशत
1	हाँ	38
2	नहीं	22
	कुल योग	60

स्रोत- प्राथमिक समंक के आधार पर प्राप्त तथ्यों के आधार पर नवम्बर 2022

उपरोक्त तथ्यों से ज्ञात होता हैं कि जोधपुर जिले के विभिन्न ग्रामों में स्थित कृषकों का मानना हैं कि उनके क्षेत्र में फसलों के उत्पादन के लिए भूमि उपलब्ध हैं, इस तथ्य को मानने वाले उत्तरदाताओं की संख्या 38 है, वहीं 22 प्रतिशत उत्तरदाताओं का मानना हैं कि उन्हें क्षेत्र में फसलों के लिए भूमि उपलब्ध नहीं हो पाते है।

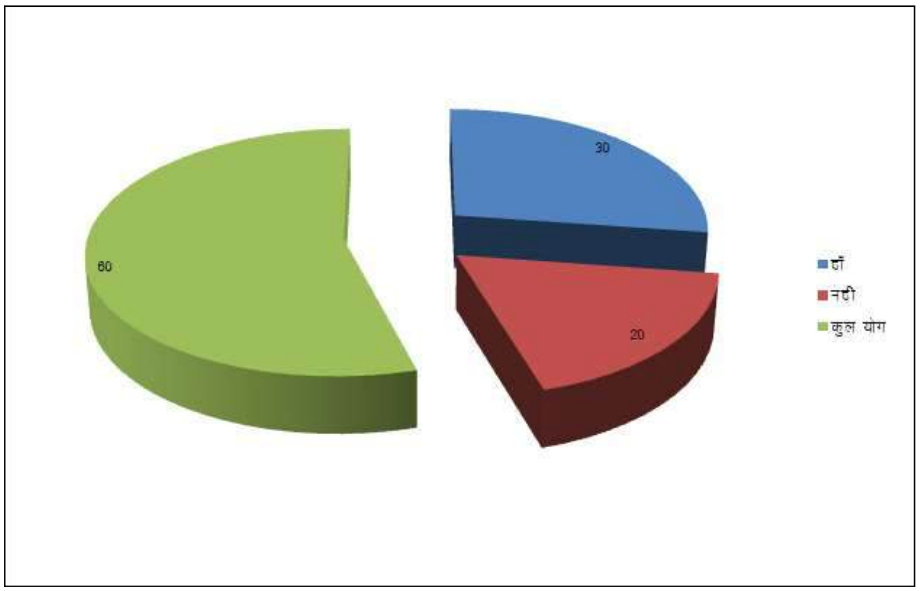

अत: कहा जा सकता हैं कि जोधपुर जिले के विकासखण्डों में स्थित कृषकों को कृषि में फसल उत्पादन के समय कई प्रकार

निष्कर्ष-

- इस लघु शोध के माध्यम से मेरे द्वारा कुछ निष्कर्ष निकाले गये हैं जो कि अग्रलिखित हैं :-
- जोधपुर जिले में कृषकों को कृषि कार्य में कई प्रकार की नवीन समस्याओं का सामना करना पड़ता है।
- प्रत्येक विकासखण्ड में ग्रामीण क्षेत्रों में कृषकों को पर्याप्त संसाधन उपलब्ध न होने के कारण सही समय पर फसलों का उत्पादन होने में समस्या उत्पन्न होती है।
- कृषकों को सही ज्ञान फसलों से संबंधित नहीं होने के कारण उनको कई प्रकार की आर्थिक समस्याओं का सामना करना पड़ता है।
- मौसम का प्रत्येक फसल पर असर दिखाई देता है, लेकिन सही समय पर मौसम का साथ न देने के कारण फसलें कम उत्पादित होती है या फिर समाप्त हो जाती है।
- गॉवों में पर्याप्त संसाधन उपलब्ध न होने के कारण फसल उत्पादन में अधिक समय लगता है।

सुझाव-

- किसान के पास पर्याप्त कृषि से संबंधित संसाधन उपलब्ध हो।
- किसान को वैज्ञानिक कृषि से संबंधित ज्ञान हो।
- मौसम के अनुकूल फसल उत्पादन करना चाहिये है।
- किसान को अपनी कृषि भूमि की मिट्टी परीक्षण करना चाहिए।
- नवीन–नवीन वैज्ञानिक संसाधनों का उपयोग करना चाहिए।

संदर्भ ग्रन्थ सूची-

1. बामनोट दिलीप (2006), किसानों को वास्तविक लाभ पानी के उपयोग कर्ताओं में छिपा है, त्रैमासिक पत्रिका ऑफ महाराष्ट्र सिनकन विक्स, वॉल्यूम. 19, पेज नं. 63–70। गाँधी, महात्मा "मेरे सपनों का भारत", मोहनदास करमचन्द गाँधी, पृष्ठ 12.
2. बहेकर बी.डब्ल्यू. और बी.डी. भोले (1997), अकोला जिले में सिंचाई का गोवर्थ उत्थान महाराष्ट्र जर्नल एग्रीकल्चर इकोनमिक्सवोल 9 (12) 10।
3. गलगले एच.एम. (2000): रिमोट सेंसिंग और जीआईएस तकनीक का उपयोग कर पिंपलगाँव उज्जैनी वाटरशेड में एकीकृत भूमि और जल संसाधन विकास, सिंचाई और जल निकासी इंजीनियरिंग उ.च.अअ. राहुरी पृष्ठ सं. 60–64।
4. हुसैन तारिक (2003), यील्ड पर विभिन्न सिंचाई स्तरों का प्रभाव और कपास के उपज घटकों को दिखाने के दो तरीकों के तहत: लेख, जैविक विज्ञान की ऑनलाइन पत्रिका, ISSN1608-4217-P-3 (7) 655- 659A
5. इरशाद एम (2007): सूखे क्षेत्रों में कृषि के विकास के लिए पानी के प्रबंधन विकल्प अनुच्छेद, एप्लाइड साइंसेज के जर्नल, ISSN 1812-5654

UGC Journal No. (Old) 2138
Peer-Reviewed Research Journal
Impact Factor 6.375, ISSN 0975-4083
Vol.- 28, Hindi Edition, Year-14, March 2025

कोइलवर स्थित बालू उत्खनन में आप्रवासित मजदूरों की सामाजिक-आर्थिक दशा : एक भौगोलिक अध्ययन

• शाहिद अख्तर
•• मो. नजीर अख्तर

सारांश- संसार में बालू उत्खनन का कार्य मुख्यतः नदियों से किया जाता है। वास्तव में बालू अपघर्षण और सन्निघर्षण से उत्पन्न पदार्थ है जिसका उपयोग बड़े पैमाने पर निर्माण कार्य और ईंट उद्योग, धातु निष्कर्षण (सोना, जिरकान, इलमुनाइट) आदि में होता है। कोईलवर 25^{0} 58' उत्तरी अक्षांश और 84^{0}80' पूर्वी देशांतर पर अवस्थित है। भोजपुर जिला में स्थित एक प्रखण्ड मुख्यालय है। यहाँ बालू उत्खनन का कार्य सन् 1960 ई. से होता रहा है। आज यह यहाँ का एक प्रमुख व्यवसाय बन चुका है। बड़ी संख्या में कुशल एवं अकुशल श्रमिक इस व्यवसाय में लगे हैं। शोध का मुख्य उद्देश्य उत्खनन कार्य में लगे श्रमिक की सामाजिक-आर्थिक स्थिति का अध्ययन करना तथा उनकी समस्याओं के प्रति जनचेतना फैलाना तथा सरकार को सूचित करना है। यह शोध प्राथमिक एवं द्वितीयक आकड़ों पर आधारित है। इस शोध में सुदूर संवेदन, भौगोलिक सूचना प्रणाली, मानचित्र, सारणी, अनुसूची, आरेख एवं मनारेख का उपयोग किया गया हैद्य बालू खनन में संलग्न श्रमिकों की सामाजिक-आर्थिक दशा अत्यंत दयनीय है। गरीबी, अशिक्षा, शोषण, बीमारी, बालू माफियाओं का आतंक यहाँ की मुख्य समस्या है। वैकल्पिक रोजगार, सरकारी योजनाओं का क्रियान्वयन, स्वास्थ्य शिविर, अवैध खनन पर रोक तथा पुलिस गश्ती द्वारा बालू माफियाओं पर नियंत्रण द्वारा आप्रवासित मजदूरों की समस्या का निदान सम्भव है। समय रहते उपरोक्त समस्या का निदान नहीं तलाशा गया तो खनन में संलग्न मजदूरों की स्थिति और बद्तर हो जाएगी।

मुख्य शब्द- निष्कर्षण, सुदूर संवेदन, अपघर्षण, सामाजिक-आर्थिक दशा

परिचय- बालू आधारभूत संरचना के निर्माण में प्रयुक्त मुख्य सामग्री है। इसकी मांग दिन प्रतिदिन बढ़ती जा रही है। बिहार में सोन बालू सर्वाधिक लोकप्रिय है क्योंकि यह सीमेंट के साथ मिलकर मजबूत कंक्रीट का निर्माण करती है। यही कारण है कि सोन नदी बेसिन में बालू खनन का कार्य मुख्य रूप से हो रहा है। कोईलवर सोन नदी बेसिन में बालू खनन

• शोध छात्र, भूगोल विभाग, एच. डी. जैन कॉलेज (वी. के. एस. यू.) आरा
•• प्रोफेसर, भूगोल विभाग एच. डी. जैन कॉलेज (वीर कुँवर सिंह विश्वविद्यालय) आरा

के मुख्य केंद्रों में से एक है। यहां आसपास के क्षेत्रों से प्राय: अकुशल श्रमिक खनन कार्यों में संलग्न है। इन श्रमिकों की सामाजिक आर्थिक दशा अत्यंत दयनीय है। यह श्रमिक शारीरिक श्रम के द्वारा बालू खनन का कार्य करते हैं। शारीरिक श्रम द्वारा खनन में नदी तल से हाथ से बालू का खनन एवं ट्रकों द्वारा निर्माण स्थल पर पहुंचाया जाता है। इस काम में देसी नाव एवं हस्त उपकरणों का प्रयोग, नौकायन, पानी की सतह के नीचे गोता लगाना, खनन एवं हाथ के द्वारा ही बालू सामग्री का प्रबंधन कार्य से संबंधित जोखिमों को कई गुना बढ़ा देता है।[1] श्रमिकों को नदी जल में एवं बालू में काम करना पड़ता है जहां हमेशा घातक एवं खतरनाक पदार्थों के प्रति श्रमिक उदभेदित रहते हैं।[2] इन सबके अलावा व्यक्तिगत सुरक्षा उपकरणों एवं सामाजिक सुरक्षा उपायों की अनुपलब्धता कार्य संबंधी जोखिम को बढ़ा देता है।[3,4] बालू की उच्च मांग, मशीनरीज के उपयोग में कानूनी बाधा एवं कार्य की खराब दशा बालू खनन में श्रमिकों के कार्य संबंधी विकारों एवं समस्याओं को बढ़ा देता है। बालू खनन प्राथमिक आर्थिक गतिविधि में शामिल श्रमगहन कार्य है जिसमें सामान्यत: अकुशल श्रमिकों की संलग्नता होती है। यह अकुशल श्रमिक सामाजिक आर्थिक तौर पर समान्यत: पिछड़े वर्ग के होते हैं। इन श्रमिकों की न्यूनतम मजदूरी अत्यंत कम होती है जिसके कारण इनका जीवन स्तर निम्न होता है। यह सामाजिक आर्थिक एवं पर्यावरणीय तौर पर सर्वाधिक सुभेद्य होते हैं। इन श्रमिकों को प्राय: सुरक्षा उपकरणों के बिना ही काम करना पड़ता है। जिसके कारण घातक दुर्घटना एवं डूबने से मृत्यु तक हो जाती है। साथ ही साथ कामगारों को धूल संबंधी फेफड़े के संक्रमण, स्थाई शोरगुल के कारण बहरेपन का जोखिम और आंख संबंधी समस्याओं का सामना करना पड़ता है।[5] बालू खनन में संलग्न श्रमिकों के लिए मशीनीकरण एक अन्य गंभीर चुनौती है जो उनके समक्ष रोजगार का संकट उत्पन्न कर रहा है। बालू खनन में संलग्न बालू माफियाओं द्वारा प्राय: नियम को दरकिनार करते हुए बड़े-बड़े मशीनों एवं यांत्रिक उपकरणों का उपयोग करके तय सीमा से अधिक गहराई तक बालू खनन का कार्य किया जाता है।[6] बड़े-बड़े मशीनों एवं यांत्रिक उपकरणों द्वारा कम समय में सस्ते दर पर वृहत् पैमाने पर खनन का कार्य संभव है । यही कारण है कि बालू खनन में संलग्न श्रमिकों को इस यांत्रिक मशीनों ने प्रतिस्थापित कर श्रमिकों के अस्तित्व के लिए संकट उत्पन्न कर दिया है। सामाजिक-आर्थिक रूप से पिछड़े इन श्रमिकों का शोषण बालू माफियाओं द्वारा किया जाता रहा है। अपनी कमजोर स्थिति के कारण इनकी लॉबिंग क्षमता नगण्य होती है। परिणाम स्वरूप ये हर प्रकार के शोषण से अभिशप्त होते हैं। ये अपने शोषण के विरुद्ध आवाज नहीं उठा पाते हैं । कई बार इन श्रमिकों द्वारा शोषण का विरोध करने पर हिंसा, धमकी एवं अपनी जान तक गंवानी पड़ जाती है।[7] आप्रवासन का सामान्य अर्थ है, एक भौगोलिक क्षेत्र में अधिवासित लोगों का नए क्षेत्र में जीवन यापन अथवा गुणवत्ता पूर्ण जीवन की तलाश में गमनागमन। किसी व्यक्ति अथवा व्यक्तियों के एक समूह का स्थाई अथवा अर्द्धस्थाई रूप में आवास के किसी निश्चित दूरी में परिवर्तन को सामान्यत: प्रवसन के रूप में परिभाषित किया जाता है।[8] प्रवास के लिए सामान्यत: दो कारक उत्तरदायी माने जाते हैं -

प्रतिकर्ष कारक - वह कारक जो किसी मूल स्थान पर अधिवासित व्यक्ति या व्यक्तियों

के समूह को अपने मूल स्थान को छोड़ने एवं किसी अन्य स्थान पर प्रवास करने के लिए बाध्य करते हैं। जैसे आर्थिक–सामाजिक पिछड़ापन, किसी स्थान विशेष का पिछड़ापन, भौगोलिक दुर्गमता आदि।

अपकर्ष कारक- जो प्रवासियों को किसी क्षेत्र विशेष की ओर आकर्षित करते हैं। यथा–रोजगार के अवसर, बेहतर आवासन व्यवस्था, आधारभूत संरचनाओं का बेहतर होना, उच्च स्तरीय सुविधाओं की उपलब्धता, राजनीतिक स्थिरता।

अध्ययन क्षेत्र- कोइलवर भोजपुर जिला का एक प्रखंड मुख्यालय है। पटना से 32 किलोमीटर पश्चिम में अवस्थित पूर्व मध्य रेलवे का स्टेशन भी है। सोन नदी के तट पर अवस्थित कोइलवर का भौगोलिक विस्तार 25°4' उत्तरी अक्षांश एवं 84°25' पूर्वी देशांतर के मध्य है। यह कासो संभाग का हिस्सा है। यहां उष्णकटिबंधीय आर्द्र जलवायु पाई जाती है। पूरे प्रदेश में उष्णकटिबंधीय पर्णपाती वनस्पति पाई जाती है। नदीय बालू का खनन, अधिवासित क्षेत्र एवं पेड़ों के बगीचे इस क्षेत्र के मुख्य लैंडमार्क हैं। अध्ययन क्षेत्र की समुद्र तल से ऊंचाई 67 मीटर है। इस क्षेत्र की औसत वार्षिक वर्षा 100 सेंटीमीटर है।

मानचित्र संख्या 01
कोइलवर की भौगोलिक अवस्थिति

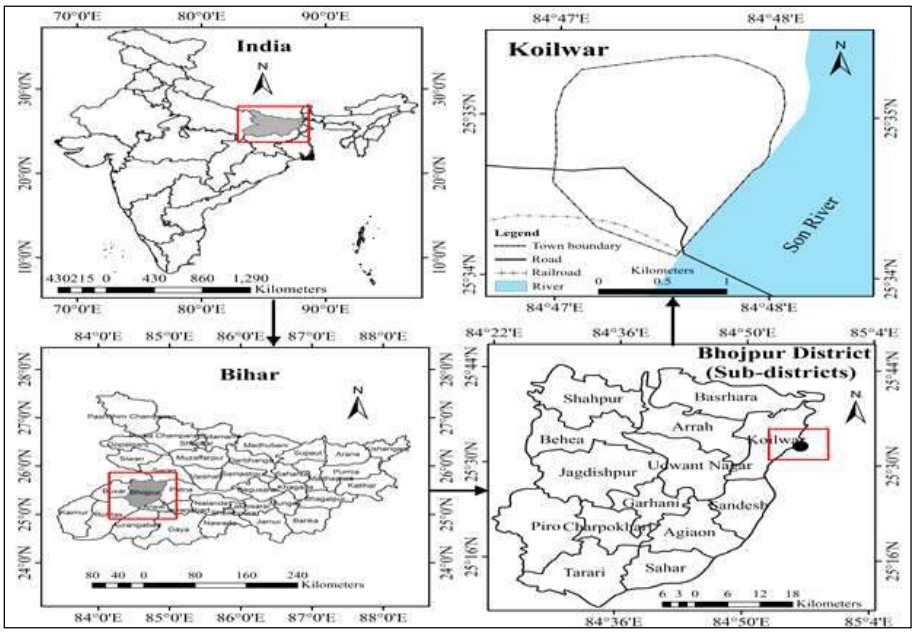

उद्देश्य- बालू खनन में संलग्न श्रमिक प्राय: निकटवर्ती क्षेत्रों से आप्रवासित होते हैं। यह सामान्यत: अकुशल होते हैं जिन्हें न्यूनतम पारिश्रमिकी दी जाती है। सामाजिक–आर्थिक रूप से पिछड़े होने के कारण यह प्राय: शोषण का शिकार होते हैं। कार्य की खराब दशा, सुरक्षा उपकरणों की अनुपलब्धता, तय समय सीमा से अधिक काम लेना, वायु में निलंबित बालू के कणों से स्वास्थ्य संबंधी समस्या , सिलिकोसिस जैसी समस्याएं श्रमिकों के लिए घातक होती है। शोध पत्र का मुख्य उद्देश्य कोइलवर में बालू खनन में संलग्न श्रमिकों की समस्याओं का पता लगाना एवं श्रमिकों में जागरूकता लाना है।

कोइलवर में बालू खनन में संलग्न श्रमिकों की समस्याओं, शोषण एवं दयनीय परिस्थितियों के बारे में स्थानीय प्रशासन, जन प्रतिनिधियों एवं श्रम संगठनों को अवगत कराना है। साथ ही श्रमिकों के जीवन स्तर में सुधार लाने के उपायों का पता लगाना है।

विधि तंत्र- प्रस्तुत शोध पत्र मुख्यत: प्राथमिक आंकड़े पर आधारित है। यह आंकड़े अनुसूची, प्रश्नावली, इंटरव्यू, सर्वेक्षण आदि से एकत्रित किए गए हैं। इसके अलावा तथ्यों के विश्लेषण एवं निष्कर्ष हेतु मानचित्र, आलेख, भौगोलिक सूचना प्रणाली, सुदूर संवेदन तकनीक को व्यवहार में लाया गया है। सरकार की नीतियां, बालू खनन में संलग्न श्रमिकों के हितों की रक्षा के लिए सरकारी योजनाओं एवं उसके आंकड़े भी यथा स्थान प्रयुक्त किये गए हैं। जगह-जगह आरेख, मनारेख का भी उपयोग किया गया है।

आप्रवासित मजदूरों की सामाजिक दशा- बालू खनन आज बिहार का प्रमुख व्यवसाय बन चुका है। कृषि के अंतर्गत आनेवाला खनन नदी तटों पर बसने वाले लोगों का रोजगार बन गया है। कहीं- कहीं लोग समीपवर्ती भागों से आकर कार्य करते हैं जिसकी सामाजिक दशा अत्यंत दयनीय है। कोइलवर में काम करने वाले अधिकांश लोग अकुशल, गरीब तथा पिछड़ी जाति से हैं। रोजगार के अभाव में वे यहाँ जोखिम भरा काम करते हैं। एक सर्वे के दौरान पाया गया है कि सबसे अधिक मजदूरों की संख्या अति पिछड़ी जातियों का है जो कुल श्रमिक का 40 प्रतिशत है। इसके बाद अनुसूचित जाति (चमार, दुसाध, पासी, धोबी) का स्थान आता है। इनकी संख्या कुल श्रमिक का 35 प्रतिशत है। अनुसूचित जनजाति मात्र 4 प्रतिशत ही बालू कार्य में लगे हैं परंतु सबसे कम संख्या सामान्य जाति वर्ग का है जो लगभग 1 प्रतिशत है।

1. कार्य का अधिक बोझ- बालू की मांग का उच्च स्तर, सीमित समयावधि एवं कार्य के पृथक्करण का न होने से कामगारों को लगातार कार्य करना पड़ता है। अत: कामगारों को आराम करने के लिए पर्याप्त समय नहीं मिल पाता है। फील्ड सर्वे में दृष्टिगत हुआ है कि कामगारों को उत्खनन में मौसमी बेरोजगारी से गुजरना पड़ता है वहीं दूसरी ओर म, नसून सीजन के बाद जब उत्खनन शुरू होती है तो काम का बोझ सर्वाधिक होता है। इससे श्रमिकों के शारीरिक एवं मानसिक स्वास्थ्य पर बुरा असर पड़ता है। इसके अलावा इनको जॉब की सुरक्षा भी नही होती है। मॉनसून के समय जब उत्खनन पर रोक लगा दिया जाता है तो काम न मिलने के कारण इन्हें अपना भरण पोषण करना भी मुश्किल हो जाता है। इन्हें आर्थिक तंगी का सामना करना पड़ता है।

तालिका 01

बालू उत्खनन में कार्यरत मजदूरों की कार्यावधि

मजदूर की कार्य अवधि	दिनों की संख्या
जनवरी-मार्च	50
अप्रैल-जून	60
जुलाई-सितम्बर	10
अक्टूबर-दिसम्बर	60

स्रोत- प्राथमिक सर्वेक्षण – दिसम्बर 2024

फील्ड सर्वे में मैंने पाया कि एक वर्ष में औसतन इन्हे 180 दिन तक बालू खनन

में रोजगा प्राप्त होता है। इस 180 दिन में सर्वाधिक 60 दिनों का रोजगार अक्टूबर से दिसंबर तथा अप्रैल से जून के बीच मिला है जो कुल उपलब्ध रोजगार का क्रमश: 33.33 प्रतिशत है। उसके पश्चात सबसे अधिक 50 दिनों का रोजगार जनवरी से मार्च के बीच प्राप्त हुआ है। सबसे कम रोजगार 10 दिन के लिए जुलाई से सितम्बर के बीच उपलब्ध हो पाया था। इस अवधि में कम समय के लिए रोजगार मिलने का मुख्य कारण यह है कि मॉनसून के दौरान बालू खनन पर आधिकारिक तौर पर प्रतिबंध लगा दिया जाता है। प्रतिबंधों के बावजूद बहुत थोड़े समय के लिए बालू खनन का काम माफिया द्वारा किया जाता है।

दंडारेख 01

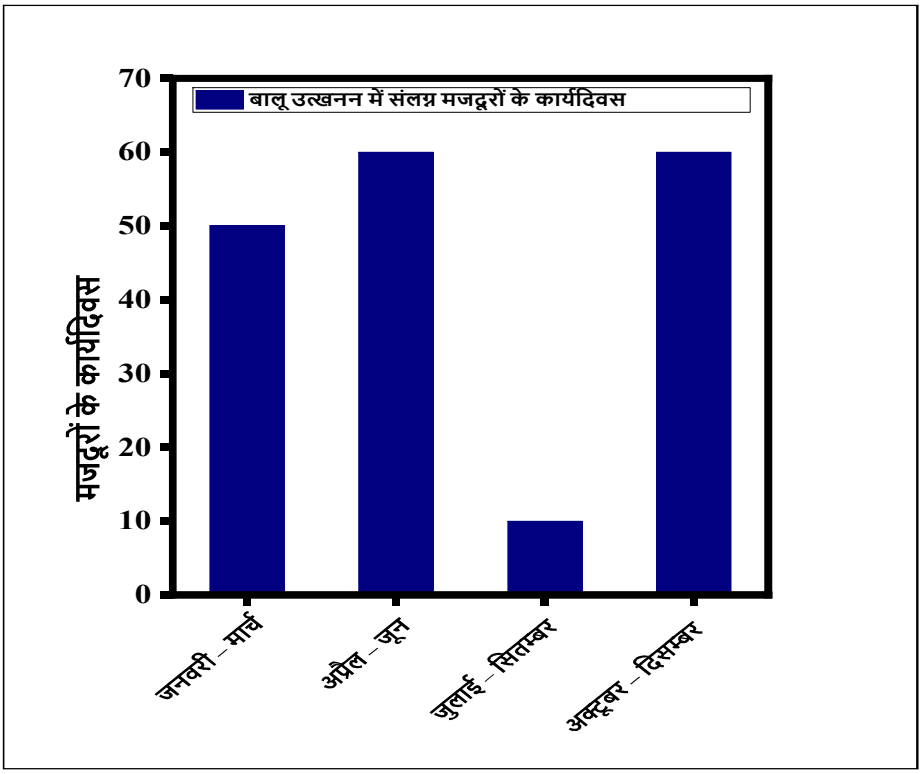

2. न्यून पारिश्रमिकी- श्रमिकों को न्यूनतम मजदूरी तय सीमा से भी कम दी जाती है। जिसके कारण उनका जीवन यापन अत्यंत दुष्कर होता है। न्यूनतम पारिश्रमिकी के कारण यह श्रमिक अपनी मूलभूत आवश्यकताओं कि पूर्ति कर पाने में असमर्थ होते हैं। इनका जीवन सर्वथा अभावों में यापन होता है। यह वंचनाओं से ग्रस्त होते हैं। इनका जीवन प्राय: निम्न स्तर का होता है।

3. सामाजिक पिछड़ापन- यह श्रमिक समाज के अत्यंत पिछड़ी जाति एवं वर्ग से आते हैं। सामाजिक एवं आर्थिक पिछड़ापन इनके लॉबिंग क्षमता को कमजोर कर देता है। यही कारण है कि शोषण के बावजूद यह लोग अपना विरोध दर्ज नहीं कर पाते हैं। सामाजिक तौर पर पिछड़ी जातियाँ इस प्रकार के शोषण के प्रति सर्वाधिक सुभेद्य होते हैं।

तालिका 02
बालू उत्खनन में संलग्न मजदूरों की जातीय स्थिति

जाति	संख्या	संख्या (प्रतिशत में)
अनुसूचित जाति	70	35
अनुसूचित जनजाति	8	4
सामान्य	2	1
पिछड़ा	40	20
अतिपिछड़ा	80	40
कुल संख्या	200	100

स्रोत – प्राथमिक सर्वेक्षण – दिसम्बर 2024

फील्ड सर्वे में मैंने पाया कि कोइलवर में बालू खनन में संलग्न मजदूरों में सर्वाधिक (40 प्रतिशत) अतिपिछड़ा वर्ग समूह से आते हैं। फिर क्रमशः अनुसूचित जाति, पिछड़ा वर्ग, अनुसूचित जनजाति एवं सामान्य वर्ग समूह की जातियों की भागीदारी है। इन जाति समूहों की कोइलवर के बालू उत्खनन में भागीदारी क्रमशः 35 प्रतिशत, 20 प्रतिशत, 4 प्रतिशत तथा 1 प्रतिशत है।

आरेख 02

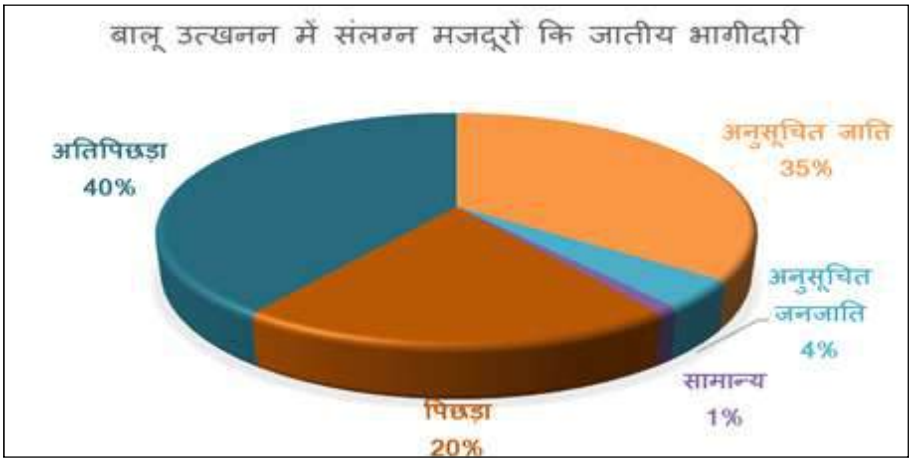

4. निम्न साक्षरता दर- किसी भी समुदाय की तरक्की की कुंजी उसकी शिक्षा का स्तर है। प्रायः गरीबी, शिक्षा तक पहुंच का अभाव, जागरूकता की कमी एवं प्रवसन के कारण श्रमिकों में शिक्षा का अभाव होता है। कोइलवर में बालू खनन में संलग्न श्रमिकों में शिक्षा का स्तर अत्यंत निम्न है। भारत सरकार के अनुसार सात वर्ष या उससे अधिक आयु का कोई व्यक्ति जो किसी भाषा को समझकर पढ़ एवं लिख सकता है, साक्षर कहलाएगा।

तालिका 03
कोइलवर के बालू मजदूरों की शिक्षा का स्तर

शिक्षा का स्तर	संख्या
साक्षर	64
निरक्षर	136
कुल	200

स्रोत – प्राथमिक सर्वेक्षण, दिसम्बर 2024

सर्वे में 200 लोगों की शैक्षणिक स्थिति से सम्बंधित जानकारी प्राप्त की गई। पाया गया कि कोइलवर में 200 में से 136 लोग निरक्षर है जो कि कुल सर्वेक्षित मजदूरों का 68 प्रतिशत है।

आरेख 03

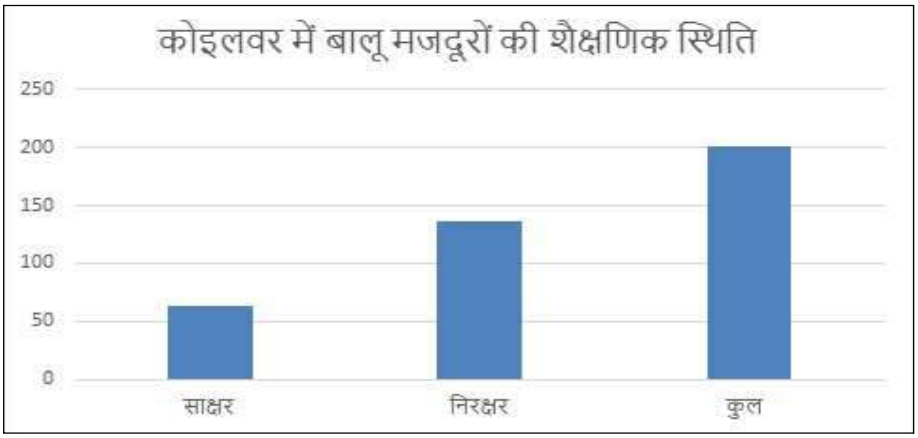

5. बालू खनन सरकारी टेंडरों के अतिरिक्त अवैध रूप से भी की जाती है। बालू माफियाओं का अवैध खनन एवं वर्चस्व की लड़ाई में व्यापक हिंसा होती है। यह सामाजिक तनाव को बढ़ा देते हैं । कई बार इस हिंसा का शिकार खनन कार्य में संलग्न श्रमिक भी होते हैं।

6. बालू खनन में संलग्न श्रमिकों में स्वास्थ्य संबंधी समस्या पाई जाती है। इन समस्याओं में फाइब्रोमायलजिया, सिलकोलीसिस, जीवाण्विक मध्यकर्णशोथ, धूल संबंधी फेफड़ों के संक्रमण, स्थायी शोर गुल के कारण बहरेपन का जोखिम आंख में जलन एवं अन्य समस्याएं प्रमुख है।[9]

तालिका 04
सर्वेक्षित मजदूरों से ली गई विचारों का प्रक्षेप

बीमारी	संख्या	प्रतिशत
आँख से संबंधी	10	5
पीलिया	15	7.5
दमा	18	9
थकान	20	10
कमजोरी	30	15
सिलिकोसिस (टी. बी.)	65	32.5
पेशाब से संबंधी	20	10
सर दर्द	22	11

स्रोत – प्राथमिक सर्वेक्षण – दिसम्बर 2024

फील्ड सर्वे में पाया गया है कि कोइलवर में बालू खनन में संलग्न श्रमिकों में सबसे ज्यादा सिलिकोसिस (टी० बी०) से ग्रसित है जिसकी संख्या 65 है। तत्पश्चात श्रमिकों से स्वास्थ्य समस्याओं में सर्वाधिक कमजोरी, सरदर्द, थकान, पेशाब से सम्बन्धी, दमा, पीलिया, आँख से सम्बंधी आदि प्रमुख हैं। स्वास्थ्य सम्बन्धी सर्वेक्षण में भागीदार कुल 200 मजदूरों में सर्वाधिक 65 मजदूर सिलिकोसिस (टी. बी.) से ग्रसित थे। उसके पश्चात सर्वाधिक संख्या क्रमशः कमजोरी (30), सर दर्द (22), थकान (20), पेशाब से सम्बन्धी (20), दमा (18), पीलिया (15), आँख से सम्बन्धी (10) है।

आरेख 04

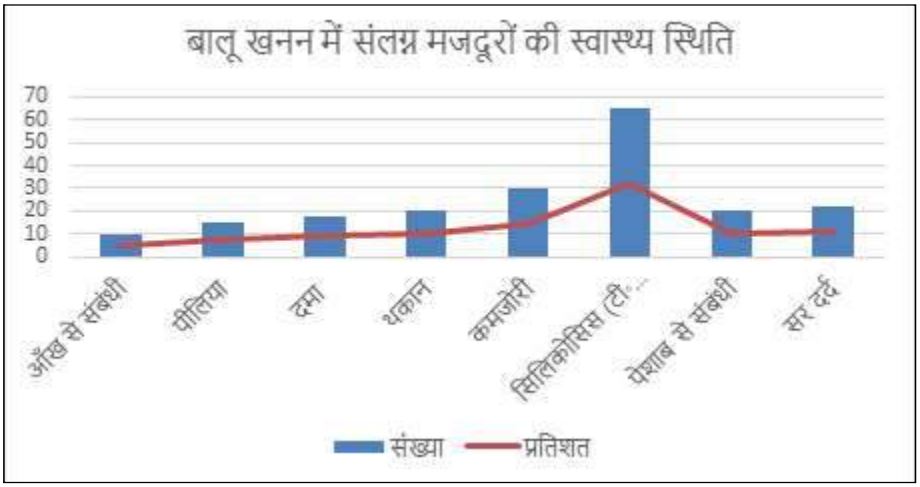

7. जोखिमयुक्त कार्य- खनन के दौरान इन श्रमिकों को प्रायः घातक दुर्घटनाओं का सामना करना पड़ता है। यह श्रमिक सुरक्षा उपकरणों के बिना ही खनन में संलग्न होते हैं। सुरक्षा उपकरणों का सर्वथा अभाव इन श्रमिकों को गंभीर नुकसान पहुंचाता है जिसमें स्वास्थ संबंधी समस्याओं के साथ-साथ स्थाई या अस्थाई विकलांगता एवं मृत्यु तक शामिल है।[10]

8. जागरूकता का अभाव- इन श्रमिकों में शिक्षा एवं जागरूकता का सर्वथा अभाव होता है। यही कारण है कि सरकार द्वारा संचालित श्रमिकों के कल्याण हेतु योजनाओं के लाभ से वंचित रह जाते हैं। जागरूकता में कमी के कारण ही यह स्वयं के साथ हो रहे शोषण को पहचान नहीं पाते हैं और न ही केंद्र एवं राज्य सरकार द्वारा निर्धारित न्यूनतम पारिश्रमिकी कि मांग अपने नियोक्ताओं से कर पाते हैं। इन्ही जागरूकता के अभाव में यह मजदूर अपने अधिकारों का भी उपयोग नहीं कर पाते हैं।

9. बाल मजदूरी- बालू खनन में प्राय: कम आयु के श्रमिक भी खनन कार्यों में संलग्न होते हैं। बाल श्रमिकों की भागीदारी उत्खनन में संलग्न मजदूरों के शोषण को आसान बना देता है। एक ओर तो यह बाल श्रमिक वयस्क मजदूरों की तुलना में कम पारिश्रमिकी पर काम करने को तैयार हो जाते हैं वहीं दूसरी तरफ यह खनन मालिकों का आज्ञाकारी होता है। इनसे खनन मालिक तय कार्य अवधि से अधिक समय तक काम लेते हैं। इन बाल श्रमिकों के कारण वयस्क श्रमिकों को काम मिलने में समस्या आती है और साथ ही बाल श्रमिकों से प्रतिस्पर्धा के कारण इन्हें न्यूनतम मजदूरी पर भी काम करने को बाध्य होना पड़ता है।

तालिका 05
उत्खनन में संलग्न मजदूरों की आयु

आयु (वर्ष)	संख्या	प्रतिशत
15 – 20	18	15
20 – 30	36	30
30 – 40	30	25
40 -50	24	20
50 – 60	12	10
कुल	120	100

स्रोत– प्राथमिक सर्वेक्षण – दिसम्बर 2024

फील्ड सर्वे में स्पष्टत: बाल श्रमिकों की संलिप्तता बालू खनन में देखी गई है। उत्खनन में संलग्न कुल श्रमिकों में 15 से 20 वर्ष आयु वर्ग के 15 प्रतिशत मजदूर शामिल हैं। यदि आयु के आधार पर मजदूरों के भागीदारी की बात की जाए तो सर्वाधिक 30 प्रतिशत श्रमिक 20 से 30 वर्ष आयु के थे। उसके बाद क्रमश: 30 से 40 वर्ष आयु वर्ग के 25 प्रतिशत, 40 से 50 वर्ष आयु वर्ग के 20: मजदूर, 15 से वर्ष आयु समूह के 15 प्रतिशत और सबसे कम 50 वर्ष से 60 वर्ष आयु समूह के 10 प्रतिशत लोग बालू खनन में शामिल है।

आरेख 05

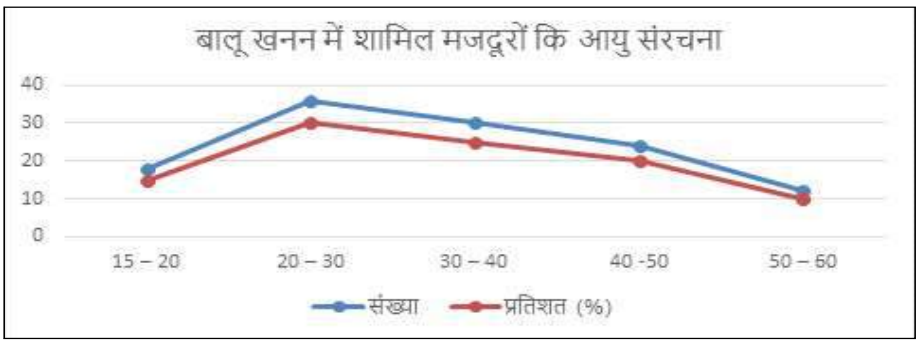

10. आप्रावासन- कोइलवर में प्राय: मजदूर निकटवर्ती ग्रामीण क्षेत्रों से आप्रवासित होकर खनन कार्य सुचारू रूप से करते हैं। प्रवासन का दुष्प्रभाव स्रोत क्षेत्र में सर्वाधिक दृष्टिगत होता है। प्रवासन से स्रोत क्षेत्र के महिलाओं पर कार्य का बोझ बढ़ जाता है। स्रोत क्षेत्र में सुरक्षा संबंधी समस्याएं उत्पन्न होती है। उस स्रोत स्थान के जनांकिकीय संरचना में परिवर्तन आ जाता है। "बुजुर्गों एवं वृद्धों के देखभाल में कमी हो जाति है। पुरुषों के प्रवासन के पश्चात महिलाएं एवं वृद्ध अकेलेपन का शिकार हो जाते हैं।"[11] उस क्षेत्र का सामाजिक सुरक्षा चक्र टूट जाता है। फील्ड सर्वे में स्थानीय मजदूरों की उत्खनन में संलिप्तता सामान्यत: कम ही देखी गई है।

तालिका 06

बालू उत्खनन में कार्यरत मजदूरों की आवास से दूरी

दूरी (किलोमीटर)	संख्या	प्रतिशत
0 – 1	36	30
1 – 3	30	25
3 – 5	36	30
5 – 8	18	15
कुल	120	100

स्रोत – प्राथमिक सर्वेक्षण – दिसम्बर 2024

सर्वे में स्पष्ट देखा गया है कि मात्र 30 प्रतिशत श्रमिक ही 0 से 1 किलोमीटर की दूरी से आकर खनन कार्य करते हैं। इसके अलावा 70 प्रतिशत मजदूर थोड़े दूर के गांव से आते हैं। जिसमे 1 से 3 किलोमीटर की दूरी तय करने वाले मजदूरों की भागीदारी 25 प्रतिशत, 3 से 5 किलोमीटर दूरी तय करने वाले मजदूरों की भागीदारी 30 प्रतिशत तथा 5 से 8 किलोमीटर दूरी तय करने वाले मजदूरों की सहभागिता 15 प्रतिशत है। सर्वे से स्पष्ट है कि दूरी बढ़ने के साथ ही मजदूरों की सहभागिता में कमी दृष्टिगत हुई है और सबसे कम मजदूरों की भागीदारी 5 से 8 किलोमीटर की दूरी तय करने वाले मजदूरों की है जो कि मात्र 15 प्रतिशत है।

आरेख 06

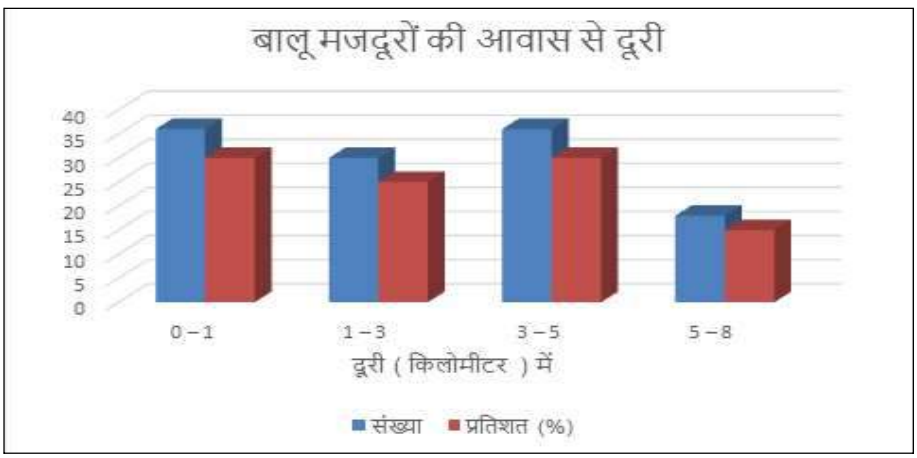

11.अप्रवासित मजदूरों की आर्थिक दशा- कोइलवर में बालू खनन में संलग्न श्रमिकों के जीवन की गुणवत्ता उनकी आर्थिक दशा पर निर्भर है। श्रमिकों को रोजगार की उपलब्धता, उनकी दैनिक मजदूरी, विभिन्न स्रोतों से आय की प्राप्ति आदि उनकी दशा को प्रभावित करते हैं। कोइलवर में बालू श्रमिकों को रोजगार की सतत उपलब्धता नही रहती है। इसमें मौसमी उत्तर चढ़ाव होता है। प्राय: रोजगार तो उपलब्ध रहता है परंतु वह श्रमिकों की क्षमता से कम होता है जिसे प्रच्छन्न बेरोजगारी कहा जाता है। यहाँ बालू श्रमिकों को पारिश्रमिकी भी न्यूनतम प्राप्त होती है। आय के सतत स्रोत के अभाव एवं न्यून पारिश्रमिकी के कारण बालू श्रमिकों की प्रति व्यक्ति आय निम्न होती है। ये वंचनाओं से ग्रसित होते हैं।

तालिका 07

बालू उत्खनन में संलग्न मजदूरों की दैनिक मजदूरी (कोइलवर)

मजदूरी (रुपये में)	संख्या	प्रतिशत
200 – 250	40	20
250 – 300	60	30
300 – 350	30	15
350 – 400	20	10
400 – 450	18	9
450 – 500	16	8
500 – 550	10	5
550 – 600	6	3
कुल	200	100

स्रोत – प्राथमिक सर्वेक्षण – दिसम्बर 2024

हमने एक सर्वे में पाया कि सबसे अधिक संख्या में मजदूरों को प्रतिदिन रु. 250–300 की पारिश्रमिकी मिलती है। रु. 250–300 प्रतिदिन मजदूरी प्राप्त करने वाले मजदूरों की संख्या लगभग 30 प्रतिशत है। इसके बाद सर्वाधिक संख्या रु. 200–250 प्रतिदिन पारिश्रमिकी प्राप्त करने वाले मजदूर हैं जिनकी संख्या 20 प्रतिशत है। इसके बाद क्रमश: 15 प्रतिशत मजदूरों को रु. 300–350 प्रतिदिन मजदूरी, 10 प्रतिशत मजदूरों को रु. 350–400 प्रतिदिन मजदूरी, 9 प्रतिशत मजदूरों को रु. 400–450, 8 प्रतिशत मजदूरों को रु.450–500, 5 प्रतिशत मजदूरों को रु. 500– 550, 3 प्रतिशत मजदूरों को रु. 550–600 मजदूरी प्रतिदिन की प्राप्ति होती है।

आरेख – 7

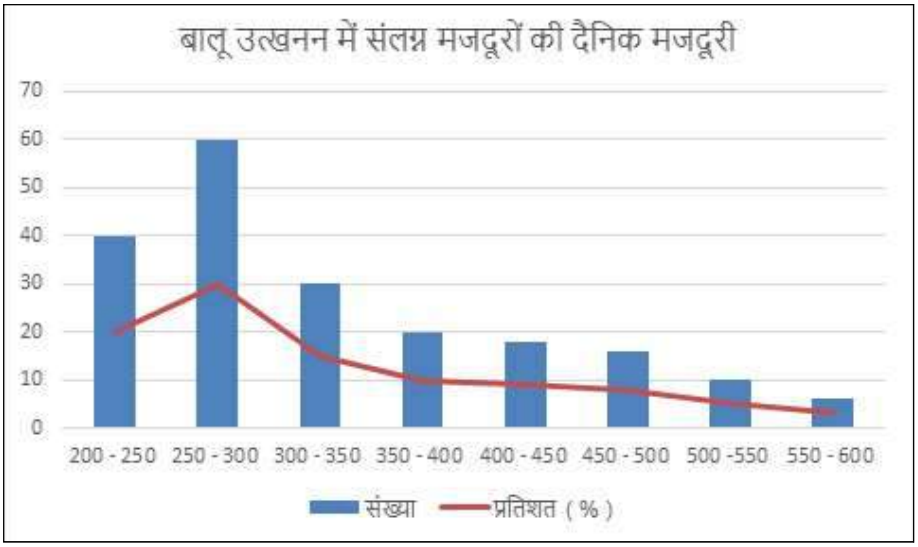

आवास- कोइलवर के बालू श्रमिकों की आवासीय स्थिति भी बहुत अच्छी नहीं है। निम्न प्रति व्यक्ति आय के कारण ये श्रमिक अपनी जरूरतों को पूरा कर पाने में असमर्थ हैं। खराब आवासीय दशा से इनकी कार्य क्षमता दुष्प्रभावित होती है, स्वास्थ्य पर बुरा प्रभाव पड़ता है।

तालिका 08

कोइलवर के बालू श्रमिकों के आवास की स्थिति

आवास के प्रकार	संख्या	प्रतिशत
पक्का घर	20	10
अर्द्ध पक्का घर	30	15
कच्चा घर	70	35
झोपड़ी	80	40
कुल	200	100

स्रोत – प्राथमिक सर्वेक्षण – दिसम्बर 2024

एक सर्वे में हमने पाया कि यहाँ की सर्वाधिक 40 प्रतिशत आबादी झोपड़ी में रहती है। उसी प्रकार 35 प्रतिशत कच्चे मकानों में, 15 प्रतिशत श्रमिक अर्द्धपक्का घरों में एवं 10 प्रतिशत श्रमिक पक्का घरों में रहते हैं। जिनके घरों की दशा अत्यंत दयनीय है। ये घर प्राय: सघन बसावट वाले होते हैं। इनके घर संकुचित होते हैं एवं सामान्यत: इनमें स्वच्छता की कमी, वेंटिलेशन का अभाव, सूर्य प्रकाश की कमी और जल निकासी की पर्याप्त व्यवस्था नहीं है।

आरेख – 8

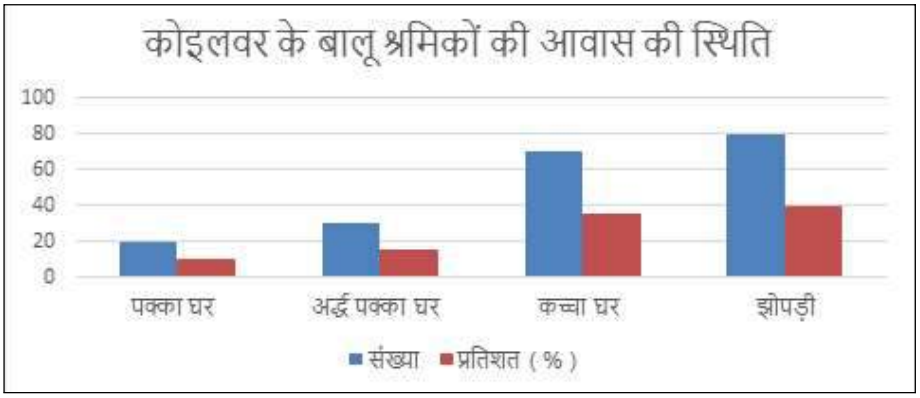

पेयजल- पेयजल किसी भी व्यक्ति की अपरिहार्य आवश्यकता है। स्वच्छ पेय जल तक पहुँच ही लोगों के बेहतर स्वास्थ्य की कुञ्जी है। स्वच्छ पेयजल ही मानव शरीर में खाद्य पदार्थों का अवशोषण सुनिश्चित करता है परंतु वर्तमान समय में भी अधिकांश आबादी सुरक्षित पेयजल से दूर है। "2017 भारत सरकार के डाटा के आधार पर यूनिसेफ की रिपोर्ट में बताया गया है कि केवल 50 प्रतिशत भारतीयों को ही स्वच्छ पेय जल तक पहुँच है जो कि रसायनिक संदूषण या विषाक्त पदार्थों के खतरनाक स्तर से मुक्त है।"[12] कोइलवर के बालू श्रमिकों का भी स्वच्छ पेयजल तक पहुँच का सर्वथा अभाव है।

तालिका 09

बालू उत्खनन में लगे मजदूरों की पेयजल सुविधा

पेयजल की सुविधा	संख्या	प्रतिशत
सार्वजनिक नल	20	10
चापाकल	80	40
कुआँ	55	27.5
नदी	15	7.5
नहर	30	15
कुल	200	100

स्रोत – प्राथमिक सर्वेक्षण – दिसम्बर 2024

पेय जल की सुविधा बालू मजदूरों के लिए एक बड़ी समस्या है। कोइलवर में मेरे द्वारा किए गए 200 प्रतिभागियों के सर्वेक्षण में सर्वाधिक 80 व्यक्ति चापाकल, 55 व्यक्ति कुआं , नहर से 30 लोग, सार्वजनिक नल से 20 लोग पेयजल प्राप्त करते हैं।

आरेख 09

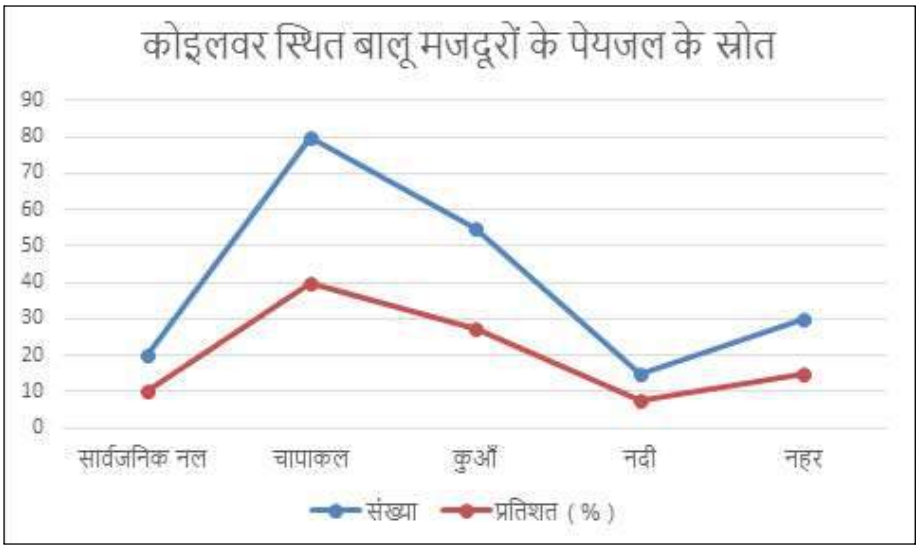

बालू खनन में संलग्न श्रमिकों के समस्याओं के समाधान हेतु उपाय-

- श्रमिक द्वारा बालू खनन के समय नदी के मध्य जाकर गोता लगाकर नदी तल से बालू खोदना पड़ता है जो कि अत्यंत जोखिम भरा कार्य है। इस जोखिम से श्रमिकों को बचाने के लिए लाइफ जैकेट जैसी सुरक्षा उपकरणों की उपलब्धता आवश्यक है। ऐसे उपकरणों का विकास करना चाहिए जिससे कि श्रमिकों को गोता लगाए बिना ही नदी तल से बालू प्राप्त हो जाए।
- कोइलवर समेत संपूर्ण भारत में नेशनल ग्रीन ट्रिब्यूनल के आदेशानुसार मानसून की अवधि में बालू खनन प्रतिबंधित होता है। अत: सीमित समय में बालू की विशाल मांग को पूरा करना एक दुष्कर काम है। इस मांग को पूरा करने के लिए खनन में संलग्न श्रमिक लगातार परिश्रम करते हैं जिससे उन्हें पर्याप्त आराम करने का समय नहीं मिल पाता है। अत: श्रमिकों को काम की अवधि में आराम करने का पर्याप्त समय मिलना चाहिए।
- श्रमिकों को तय की गई न्यूनतम पारिश्रमिक की सुनिश्चित करनी चाहिए। यदि उन्हें बेहतर पारिश्रमिकी मिलती है तो उनका जीवन स्तर सुधरेगा और वह गरीबी के दुष्चक्र से निकल पाएंगे।
- आर्थिक एवं सामाजिक रुप से कमजोर होने के कारण यह खनन मालिकों के शोषण का विरोध नहीं कर पाते हैं। अत: आवश्यकता है मजबूत श्रमिक संगठनों की जो इन श्रमिकों के हितों को सुनिश्चित कर सके।
- अवैध बालू खनन ने कोइलवर क्षेत्र में व्यापक हिंसा को जन्म दिया है। प्राय: इस हिंसा का शिकार खनन में संलग्न निर्धन श्रमिक भी होते हैं।अत: कुशल प्रशासन के द्वारा अवैध खनन एवं हिंसा पर रोक लगानी चाहिए।
- खनन कार्य में संलग्न श्रमिकों को मास्क, हेलमेट एवं अन्य सुरक्षा उपकरणों

विशेषकर व्यक्तिगत सुरक्षा उपकरणों की पर्याप्त उपलब्धता सुनिश्चित करनी चाहिए ताकि उनके स्वास्थ्य पर पड़ने वाले दुष्प्रभाव को रोका जा सके।

- इन श्रमिकों में शिक्षा एवं जागरूकता का सर्वथा अभाव होने से श्रमिकों के कल्याण हेतु सरकार द्वारा संचालित योजनाओं के लाभों से वंचित रह जाते हैं। अत: इन्हें इन योजनाओं के प्रति जागरूक करना चाहिए।
- इन श्रमिकों के कल्याण हेतु सरकार द्वारा संचालित पीएम स्वनिधि योजना, यूनिवर्सल हेल्थ केयर, मनरेगा, प्रधानमंत्री श्रम योगी मानधन योजना ,श्रम सुधार, प्रधान मंत्री रोजगार प्रोत्साहन योजना, पीएम स्वनिधि स्ट्रीट वेंडर्स के लिए योजना, आत्मनिर्भर भारत अभियान, दीनदयाल अंत्योदय योजना, राष्ट्रीय शहरी आजीविका मिशन, पीएम गरीब कल्याण योजना, वन नेशन वन राशन कार्ड, आत्मनिर्भर भारत रोजगार योजना, प्रधानमंत्री किसान सम्मान निधि, भारत के अनौपचारिक श्रमिक वर्ग को विश्व बैंक की सहायता आदि योजनाओं का बेहतर क्रियान्वयन होने से इन श्रमिकों का कल्याण सुनिश्चित होगा और वे भी खुशहाल जिंदगी जी सकेंगे।

निष्कर्ष- कोइलवर स्थित बालू उत्खनन केंद्रों में संलग्न मजदूरों के समक्ष विकराल समस्याएं हैं। उन समस्याओं का समाधान बेहतर प्रशासनिक व्यवस्था एवं सरकार द्वारा खनन में संलग्न श्रमिकों के लिए विशेष योजनाओं के निर्माण एवं उनके बेहतर क्रियान्वयन से ही संभव है। चूंकि यह श्रमिक सामाजिक–आर्थिक रूप से अत्यंत पिछड़े होने के कारण शोषण समेत अन्य जोखिमों यथा–पर्यावरणीय, आपदा, स्वास्थ्य आदि के प्रति सर्वाधिक सुभेद्य होते हैं। अत: इनके लिए विभिन्न प्रकार के सामाजिक सुरक्षा योजनाओं का सु–ढ़ीकरण एवं क्रियान्वयन किया जाना चाहिए। इन श्रमिकों के स्वास्थ्य की नियमित जांच होनी चाहिए और आवश्यकता पड़ने पर उचित एवं निशुल्क इलाज, दवा की उपलब्धता सुनिश्चित करनी चाहिए। इन सबके अतिरिक्त बालू खनन में श्रमिकों के लिए वैकल्पिक रोजगार की व्यवस्था एवं कौशल विकास किए जाने की आवश्यकता है।

संदर्भ ग्रन्थ सूची-

1. Padmalal D, Maya K. (2014)- Sand mining environment impacts and selected case studies, London; Springer; 2014.
2. Park K. (2015)- Park textbook of preventive and social medicine. 23rd ed. Jabalpur: Bhanot; 2015
3. Tiwary G, Gangopadhyay Pk. (2011)- A review on the occupational health and social security of unorganized workers in the construction industry. Indian J Occup Environ Med. 2011; PMC Free article.
4. Mahmood S A (2010)- Social security schemes for the unorganized sector in India: a critical analysis. Manag Labour Stud. 2010; 35(1): 117- 28
5. D. Goh (2016)- Le'ploitation artisanale de'lor en cote d'ivore : la persistance d'une activite' ille'gal. European Scientific journal 12(3), 1857- 7881
6. Marschke Melisa, Rousseau Jean- Francois (2022)- Sand ecologies, livelihood and governance in Asia: A systematic scoping review, ELSEVIER, Resource

Policy, volume 77, August 2022, 102671.

7. Rege Aunshul (2015)- Not biting the dust: using a tripartite model of organized crime to examine India's Sand Mafia, International Journal of comparative and applied Criminal justice, ISSN : 0192 - 4036 .
8. हुसैन माजिद (2012)- मानव भूगोल, रावत पब्लिकेशन, जयपुर.
9. C M Akengoue, R F Lele, A K Dongmo (2018)- Influence De, Le'xploitation Artisanale Du Sable Sur La Sante' Et La Se'curite' Des Artisanale Et L'environment : Cas De La Carriere De Nkol' ossanga, Region Du Centre Cameroun, European Scientific Journal 14, 15- 246.
10. D. Goh (2016)- L'exploitation artisanale de'lor en cote d'ivoire : la persistance d'une activate' ille'gale. European Scientific Journal 12 (3), 1857- 7881.
11. Juliane S. & Zhang Y. (2018) How does internal migration affect the emotional health of elderly parents left- behind? J Popul Econ (2019) 32, pp- 953-980.
12. B. Ranjit (2024) Water, Water everywhere: Can India ever achieve the dream? https://www newindianexpress.com/web- only/2024/Mar/20/Water - Water - everywhere – can-india-ever – achieve – the – dream

UGC Journal No. (Old) 2138
Peer-Reviewed Research Journal
Impact Factor 6.375, ISSN 0975-4083
Vol.- 28, Hindi Edition, Year-14, March 2025

हिन्दी साहित्य का दलित लेखन: कुछ अहम् सवाल,कुछ बुनियादी समस्याएँ

•वीरेन्द्र सिंह यादव

सारांश- वर्तमान दलित साहित्य लेखन में दलित एवं गैर दलित लेखकों के मंतव्य को देखें तो स्पष्ट खेमेवाजी दृष्टिगत नजर आती है। परम्परावादी साहित्यकार खुलेआम इसे नकारते हैं, वहीं प्रगतिशील, जनवादी (जन संस्कृति के पक्षधर) या जो वामपंथी विचारधारा के लोग इसके प्रति सहानुभूति एवं पक्षधरता में स्पष्ट झंडा बुलंदी करते नजर आ रहे हैं। यहाँ मूल प्रश्न चूँकि दलित साहित्य लेखन में दलित एवं गैर दलित जातियों का है इसलिए दलित लेखन में मूल मुद्दा जातीय समीकरणों का है अर्थात् आज का जो दलित लेखन हो रहा है उसमें इसका वास्तविक हकदार कौन है-दलित या गैर दलित? पहला वर्ग आलोचकों का वह है जो यह स्वीकार करता है कि दलितों के बारे में विनम्र सहानुभूति के साथ चाहे जो (सवर्ण या अवर्ण जाति) लिखे वह दलित साहित्य की श्रेणी में माना जाना चाहिए। इसमें प्रमुख लेखक-डॉ. राम विलास शर्मा, डॉ. नामवर सिंह, डॉ. शिव कुमार मिश्र, प्रेमकुमार मणि, खगेन्द्र ठाकुर, डॉ. परमानन्द श्रीवास्तव, रमणिका गुप्ता, मैनेजर पाण्डेय, ज्योतिष जोशी, डॉ. रामचंद, दलवीर सिंह, बी.आर. बुद्धिप्रिय, मोहर सिंह आदि आते हैं। दूसरे वर्ग के लोग वे हैं जो यह मानते हैं कि वास्तविक दलित लेखक वह है जिसने सदियों से शोषण, अत्याचार एवं अमानवीयता की लम्बी दास्तान झेली है यह पीड़ा गैर दलित कैसे महसूस कर सकता है अर्थात् फुले के शब्दों में कहें तो- ''राख ही जानती है जलने का दर्द, दलित होने की पीड़ा सिर्फ दलित जानता है।''

मुख्य शब्द- साहित्य लेखन, जातीय समीकरण, दलित साहित्य

प्रथम वर्ग के समीक्षकों का मानना है कि यह सिर्फ एक प्रोपेगन्डा है और लेखन करते समय लेखक का ध्यान रचना की ओर रहना चाहिए- खेमेबाजी से साहित्य का भला कभी नहीं होता है- उनका मानना है कि आज दलित साहित्य के नाम पर कुछ लोग साहित्य में एक अलग खेमा तैयार करना चाहते हैं, यह गलत है। दलित साहित्य को हिन्दी साहित्य का केन्द्रीय आन्दोलन बनाना है, जैसे कि कभी भक्ति आन्दोलन और प्रगतिशील आन्दोलन था। एक नया कुनबा या प्रकोष्ठ तैयार करना ही यदि उद्देश्य रहा, तब फिर आन्दोलन किस बात का ? दलितों द्वारा दलितों पर लिखना अच्छी बात है, लेकिन दलितों

• प्रोफेसर, हिन्दी एवं अन्य भारतीय भाषा विभाग, डॉ. शकुन्तला मिश्रा राष्ट्रीय पुनर्वास विश्वविद्यालय लखनऊ (उ.प्र.)

द्वारा दलितों पर लिखने भर से दलित साहित्य नहीं हो जाता।"[1] प्रसिद्ध समीक्षक नामवर सिंह के शब्दों में कहें तो "कोई लेखक दलित कुल में जन्म लेने से दलित चेतना का संवाहक नहीं हो जाता। उसके लिए जाति का होना जरूरी नहीं है। कबीर ने यही तो कहा था कि 'जाति न पूछो साधु की, पूछ लीजिए ज्ञान। मोल करो तलवार का, पड़ा रहन दो म्यान। उस जमाने में भी बहुत से चमार जाति के कवि थे लेकिन सभी तो रैदास नहीं हो गए।"[2]

सहानुभूति एवं स्वानुभूति का हवाला देते हुए डॉ.खगेन्द्र ठाकुर का मानना है कि सहानुभूति और स्वानुभूति में वैसा फर्क नहीं रह जाता, जैसा विचारों के स्तर पर हम समझते हैं। वहाँ तो सब रचनाकार की आत्मानुभूति का अंग बन जाता है, रचनाकार रचना करता है। सृजन करता है वह अपने अपार काव्य संसार का प्रजापति होता है। रचना के जरिए दूसरों को जगाता है, नई चेतना, नए मूल्य और नए सम्बन्ध का निर्माण करना चाहता है। इसलिए कोई लेखक दलित नहीं होता.....दलितों के बारे में केवल दलित ही लिखें, इस सिद्धान्त का स्रोत असल में वह राजनीति है। जिसके अनुसार कहा जा रहा है कि दलित केवल दलितों को ही वोट दें।"[3] इस वर्ग के लेखकों में दलित चिन्तक तुलसीराम जी अपनी व्याख्या को वर्ण व्यवस्था से जोड़ते हुए लिखते हैं कि "हमारा दलित साहित्य वर्ण-व्यवस्था के विरोध का साहित्य है। वर्ण व्यवस्था का विरोध चाहे जो भी करे, ब्राह्मण करे या कोई भी, वह दलित साहित्य का अभिन्न हिस्सा है।.....अश्वघोष तो अयोध्या के ब्राह्मण थे, पर उन्हें क्यों दलित साहित्य के अन्तर्गत रखा जाता है, इसलिए कि उन्होंने वर्ण व्यवस्था पर जोरदार हमला बोला था। सरहपा, राहुल को इसलिए दलित लेखन की परम्परा में रखा जाता है कि उन्होंने वर्ण-व्यवस्था की जड़ पर चोट की थी।"[4] यह स्पष्ट है कि मनुष्य समाज का सशक्त अंग होता है और स्वाभाविक है समाज की गतिविधियाँ ही साहित्य का अभिन्न अंग बनती हैं यही सामाजिक गतिविधियों की विषमता मनुष्य को अनुभव जन्यता की ओर ले जाती है- यहाँ पर जातीय नियमों का एवं उसूलों का प्रश्न कहाँ से खड़ा हो गया- "गैर दलित लेखकों की दलित जीवन संदर्भों पर लिखी गई रचनाओं को साहित्य के अन्तर्गत सम्मिलित करने को दलित-लेखक-विचारक जिस लहजे में, जिस तरह उनकी अंतर्वस्तु को सर्वथा नकारते हुए, ऐसे लेखकों की नियति पर शक करते हुए उनकी मानवीय संवेदना का माखौल उड़ाते हुए उन्हें खारिज करते हैं- गोया समाज की रूढ़ और यथास्थितिवाद की पोषक शक्तियाँ नहीं, वही उनके वास्तविक प्रतिस्पर्धी हों।.....वे न मानें उन्हें दलित लेखक और उनकी रचनाओं को दलित लेखन, परन्तु उन पर उठाई गई उनकी आपत्तियाँ उनके पूर्वाग्रहों को ही उजागर करती हैं।"[5]

दूसरे वर्ग, जो दलित साहित्य को लिखने के लिए दलित होने के अपने तर्क बताते हैं वे भी किसी हद तक अकाटच ही हैं। दलित साहित्य क्या है ? क्या वह साहित्य जो दलितों के बारे में अन्य लोगों द्वारा लिखा दलित साहित्य है या वह साहित्य जो दलित लेखकों, विचारकों, बुद्धिवादी लोगों ने अपनी समस्याओं अपनी कठिनाइयों, बेइन्साफियों, अपने पर होने वाले अत्याचारी ज्यादतियों को ध्यान में रखते हुए लिखा और राजनीतिक मान्यताओं और धर्मों की पैदा की हुई समस्याओं पर लिखा वह दलित साहित्य

है ? हम समझते हैं कि दलितों से हमदर्दी रखने वाले लेखकों, जिनमें मुंशी प्रेमचन्द्र, कृश्नचंदर, डॉ. मुल्क राज आनन्द, इस्मत चुगताई, भगवतशरण उपाध्याय, डॉ. रामशरण शर्मा आदि प्रसिद्ध लेखकों के नाम शामिल हैं। उनकी रचनाओं की सराहना की जानी चाहिए परन्तु उसे दलित साहित्य नहीं कहा जा सकता। इसी तरह अछूत जातियों में जन्मे उन नौजवानों द्वारा लिखी प्यार–मुहब्बत की कहानियों को जो भारतीय हिन्दी फिल्मों से प्रभावित होकर लिखी जाती हैं, दलित साहित्य नहीं कहा जा सकता है।...दलित साहित्य सही मायने में वह साहित्य है जो दलितों ने अपने ज्ञान, अपने तजुरबे, अपनी कठिनाइयों और पीड़ा के आधार पर लिखा है।"[6] यही राजेन्द्र यादव की मान्यता है कि 'हाशिए के लोग अपनी जमीन और जीवन स्थितियों से जितने जुडे हैं उतने मुख्यधारा वाले हिन्दी लेखक नहीं।"[7] दलित साहित्य की अवधारणा में कंवल भारतीय लिखते हैं कि "दलित साहित्य से अभिप्राय उस साहित्य से है जिसमें दलितों ने स्वयं अपनी पीड़ा को रुपायित किया है। अपने जीवन संघर्षों में दलितों ने जिस यथार्थ को भोगा है दलित साहित्य उसी की अभिव्यक्ति है, यह कला के लिए कला का नहीं, बल्कि जीवन का और जीवन की जिजीविषा का साहित्य है।" ऐतिहासिक लेखन के प्रति अपनी टिप्पणी से अवगत कराते हुए जय प्रकाश कर्दम लिखते हैं कि "इतिहास में साहित्य लेखन का कार्य गैर दलितों द्वारा ही किया जाता रहा है। दलितों के प्रति साहित्य के इस उपेक्षापूर्ण और नकारात्मक रवैये ने दलितों को अपने दर्द और अनुभवों को स्वयं अभिव्यक्त करने की ओर प्रवृत्त किया। यातना और उत्पीड़न ही नहीं, जीवन के हर पहलू को उन्होंने अपने सृजन का प्रतिपाद्य बनाया।"

दलित लेखकों ने अपने जीवन के कड़वे और तल्ख यथार्थ को बेबाकी और साहस से साहित्य में प्रस्तुत किया है, जो वे केवल वे ही कर सकते हैं।"[8] डॉ. श्यौराज सिंह बेचौन भी इसी तरह अपनी पीड़ा से अवगत कराते हुए लिखते हैं कि प्रेमचंद, निराला आदि साहित्य के महत्वपूर्ण लेखक हैं, इसमें कोई इन्कार नहीं कर सकता, लेकिन उनका सृजन जिस तरह से मुस्लिम समाज, ईसाई समाज और अंग्रेज समाज के भीतर सच लिपिबद्ध कर सकता है, उसी तरह से वे दलितों की वास्तविक यातनाओं, आकांक्षाओं और आवश्यकताओं को व्यक्त नहीं कर पाए उनकी सहानुभूति की सीमाएँ थीं, वे अलग समाज के लोग थे, उन्हें अस्पृश्यता के दंश का अनुभव नहीं था वे नहीं जानते थे कि मनुष्य से मनुष्य घृणा करता है तो उस पर क्या बीतती है ? इतना ही नहीं, डॉ. अम्बेडकर के समय में जो अछूतों के अधिकार की आवाज उठी, उस समय भी ये हिन्दी के महत्वपूर्ण लेखक दलित हितों के विरोध में अम्बेडकर का असहयोग कर रहे थे। यह परम्परा सवर्ण साहित्यकारों में आज भी शामिल है। ऐसी स्थिति में कोई किसी दलित गैर दलित को चाहे वह कितना भी महत्वपूर्ण हो, उसे अपना लेखक कैसे मान सकता है।"[9] साहित्य के रंगमहलों में दलित साहित्य के औचित्य को रेखांकित रखते हुए मोहन दास नैमिशराय लिखते हैं कि "आज जरूरी सवाल है दलित साहित्य को नकारने वालों की मनोस्थिति का ऑपरेशन तथा दलित साहित्य का विश्लेषण। ब्रिट्रेन और फ्रांस की जनसंख्या से अधिक हिन्दी क्षेत्रों में हमारी जनसंख्या है, पर साहित्य और पत्रकारिता में हमारी क्या हिस्सेदारी है, जरूरत इस बात को महसूस करने की है।"

दलित साहित्य की अस्मिता एवं इसकी वर्जनाओं की ओर इशारा करते हुए ओम प्रकाश बाल्मीकि का कहना है कि "दलित की पीड़ा सवर्ण नहीं समझ सकता... बल्कि यह तथ्य उसे गाली की तरह लगता है, जो उसके अहंभाव को विखण्डित करता है। साहित्य उनके लिए कल्पनाओं की विस्तृत ऊँचाई है जहाँ खड़े होकर कल्पना के बलबूते पर वह तमाम दुनिया के यथार्थ को देखने की क्षमता रखने का भ्रम पाले हुए है। उसे खीज होती है जब कोई उसकी इस क्षमता और सामर्थ्य पर उंगली उठाता है। यहाँ यह कहना भी अप्रसांगिक नहीं होगा कि तथाकथित मुख्यधारा का निर्माता अपने विरुद्ध खड़ी हर असहमति को अपना घोर प्रतिद्वन्द्वी समझता है। आत्ममुग्धता के प्रेम में वह सिर्फ अपनी ही तस्वीर देखने का अभ्यस्त है। इसी नजरिये से वह दलित साहित्य पर यह आरोप चस्पा करता है कि वे दलित बोध के संकीर्ण दायरे से बाहर नहीं आते हैं। जबकि वस्तुस्थिति इसके ठीक विपरीत है। हिन्दी के महान रचनाकार भी अपने जातीय संस्कारों से बँधे हुए हैं। जिन्हें सार्वभौम और शाश्वत मूल्य कहा जा रहा है, वे ब्राह्मणवादी एवं सामंती सोच के मूल्य हैं-पन्त हों या महादेवी, या फिर निराला, प्रसाद के चिन्तन की धारा क्या है? वर्ण-व्यवस्था के प्रति उनका दृष्टिकोण क्या है? ब्राह्मणवाद पर वे क्या सोचते हैं? इन तमाम तथ्यों पर गहन विश्लेषण एवं गम्भीर अध्ययन, मनन और व्याख्या करने की आवश्यकता है जिसे समीक्षक अनदेखा ही करते रहे हैं।"[10] दलित लेखन पर सबसे तीखा आक्रोश अखिलेश का है- "सवर्ण यदि दलित जीवन पर लिख सकते हैं तो उन्होंने लिखा क्यों नहीं? सवर्णों ने कितने लाख पृष्ठ रंगे होंगे उसमें से कितना हिस्सा दलित जीवन पर है ? ले देकर तर्क के लिए प्रेमचंद का नाम लेते हैं, प्रेमचंद ने भी तीन सौ कहानियाँ लिखीं जिनमें इक्का, दुक्का में दलित स्वर है। नई कहानी आन्दोलन जो हिन्दी कहानी का स्वर्णकाल है, उसमें दलित जीवन पर कितनी कहानियाँ हैं ? भक्तिकाल से लेकर आज तक सवर्णों द्वारा लिखी गई पूरी काव्ययात्रा में दलित जीवन कितना उपस्थित है ? तो कहने के लिए कहते रहिए कि सवर्ण भी लिख सकता है लेकिन प्रश्न है फिर लिखा क्यों नहीं अब जब दलित खुद अपनी बात कहने के लिए कटिबद्ध हैं तो सवर्ण समाज को लगता है कि लिखना कलाकारी करना तो हमारा काम है, ये कहाँ से चुनौती देने आ गये ?"[11] इसी तरह का आक्रोश मुद्राराक्षस में है। मुद्राराक्षस का मानना है कि "दलित साहित्य में दखल केवल व केवल दलितों की ही होना चाहिए। आपके बल्कि किसी सवर्ण लेखक की हिम्मत नहीं कि अपने जीवन में दलित प्रश्न का सामना कर सके। इनसे पूछना चाहिए कि तुम्हें कौन सा कष्ट है जो पिछड़ों और दलितों पर लिख रहे हो,कालिदास, दंडी,जयदेव, बाणभट्ट की दुनिया का वृत्तांत लिखो, तुम्हें क्या कष्ट है ? तुमको इस दुनिया में आने का हक नहीं है। आना चाहते हो तो पक्का सबूत दो और मजबूरी के कारण सार्वजनिक करो। मजबूरी साफ है। .....लेखकों को सत्ता में घुसने के लिए दलित प्रश्न उठाने ही हैं या वंचितों से सहानुभूति व्यक्त करनी है। बिहार में पिछड़ा शासन है तो वहाँ प्रकाशक राग-विराग ज्यादा बेच लेगा। राजनैतिक प्रभाव में न होते तो क्या श्री लाल शुक्ल उपन्यास लिखते ? इन सबको मालूम है कि दलितों का समय आ रहा है, सत्ता में भागीदारी बढ़ रही है। ये लिखेगें ताकि भागीदारी में हिस्सा बन सकें। भारतेन्दु से लेकर आज तक किसी सवर्ण ने खुद को दलित लेखक नहीं कहा।"[12]

भविष्य का भारत दलितों के वर्चस्व का होगा, जिसमें दलित और दलित साहित्य, दोनों की भूमिका अति महत्वपूर्ण होगी। अब इस उपेक्षित एवं बहिष्कृत दलित समुदाय ने स्वयं ही अपने सुख-दुःख निवारण के लिए साहित्य के स्तर पर प्रयास आरम्भ कर दिया है, क्योंकि दलित साहित्यकार इससे प्रेरणा ग्रहण कर सामाजिक समानता, समरसता और राष्ट्रीय एकता को ध्यान में रखकर दलित साहित्य को उँचाईयाँ प्रदान करने की कोशिश में शिद्दत के साथ जुटा हुआ है।

संदर्भ ग्रन्थ सूची-

1. कथाक्रम 2000, प्रेमकुमार मणि, पृ.-76
2. सिंह डॉ. नामवर , दलित साहित्य की अवधारणा और प्रेमचन्द्र- पृ.-193
3. कथा क्रम 2000, डॉ. खगेन्द्र ठाकुर, पृ.-52
4. उत्तर प्रदेश सितम्बर-अक्टूबर-2002 ,तुलसीराम, पृ.-175
5. कथा क्रम नबम्बर-2000, डॉ. शिवकुमार मिश्र, पृ.-43
6. उत्तर प्रदेश- भगवान दास-सितम्बर-अक्टूबर 2002, पृ.-73
7. हंस-2004, अगस्त-सम्पादकीय, मेरी तेरी उसकी बात।
8. कथा क्रम-नबम्बर 2000 पृ.-85
9. उ.प्र. सितम्बर-अक्टूबर 2000 - डॉ. श्यौराज सिंह बेचौन, पृ.-180
10. दलित साहित्य का सौन्दर्यशास्त्र-ओमप्रकाश वाल्मीकि, राधाकृष्णन प्रकाशन, दिल्ली-2-2001, पृ.-39
11. कथाक्रम, नवम्बर 2000, अखिलेश, पृ.3
12. उत्तर प्रदेश, सितम्बर अक्टूबर 2002, मुद्राराक्षस, पृ.-167

UGC Journal No. (Old) 2138
Peer-Reviewed Research Journal
Impact Factor 6.375, ISSN 0975-4083
Vol.- 28, Hindi Edition, Year-14, March 2025

प्रो. भगवती प्रकाश काम्बोज का आरम्भिक जीवन एवं प्रकृति प्रेम

• कुलदीप कुमार
•• निशा गुप्ता

सारांश- देहरादून एक प्रसिद्ध पर्यटन स्थल है। अपनी सुन्दरता और अद्भुत भौगोलिक दृश्यों के कारण यह पर्यटकों तथा तीर्थ यात्रियों को अपनी ओर आकर्षित करता रहा है। प्रो. बी. पी. काम्बोज का जन्म 15 अगस्त 1928 ई. में देहरादून की इन्हीं वादियों में हुआ। उनका बचपन से ही अच्छे चित्रों के प्रति आकर्षण बना रहा और उन्हें जब भी समय मिलता तो वे चित्रों की अनुकृति बनाने लगते थे। बचपन से उनका अधिकांश फालतू समय तथा जेब खर्च, ड्रॉइग तथा पेटिंग्स बनाने में ही व्यतीत होता था। इन्होंने लन्दन (यू.के.) से प्रकाशित होने वाली प्रतिष्ठित मासिक कला पत्रिका 'द आर्टिस्ट' को अपना सच्चा गुरू माना।

मुख्य शब्द- प्रकृति प्रेम, चित्र, आकर्षण, शिक्षा

जन्म एवं बाल्यावस्था- देहरादून एक प्रसिद्ध पर्यटन स्थल है। अपनी सुन्दरता और अद्भुत भौगोलिक दृश्यों के कारण यह पर्यटकों तथा तीर्थ यात्रियों को अपनी ओर आकर्षित करता रहा है। यहाँ चाय और लीची के बाग इसके सौन्दर्य को कई गुना बढ़ा देते है। उत्तर में हिमालय तथा दक्षिण में शिवालिक पहाड़ियों से घिरे कुछ पहाड़ी नगर बहुत प्रसिद्ध है जैसे मसूरी, हस्त्रधारा, चकराता, डाकपत्थर आदि। यहाँ दूर-दूर से पर्यटक घूमने आते है। पूर्व में गंगा तथा पश्चिम में यमुना नदी बहती है। यहाँ के लोकप्रिय पर्यटन स्थलों में टपकेश्वर मन्दिर, कलंगा स्मारक, मालसीडियर पार्क, वन अनुसंधान संस्थान तथा वाडिया संस्थान विशेष प्रसिद्ध है। यहाँ प्राथमिक शिक्षा से लेकर उच्च शिक्षा तक के महाविद्यालयों में शिक्षार्थी शिक्षा ग्रहण करते है। प्रकृति की अद्भुत छटा कलाकारों को अपनी ओर आकर्षित करती है। यहाँ के प्राकृतिक सौन्दर्य ने अनेक कलाकारों को कला के क्षेत्र में प्रेरणा प्रदान की है। जिससे इस क्षेत्र के कलात्मक विकास को गति मिली है।

प्रो. बी. पी. काम्बोज का जन्म 15 अगस्त 1928 ई. में देहरादून में हुआ था। इनके पिता का नाम श्री गौरीशंकर था, जो वन विभाग में लेखाकार के पद पर थे। इनकी माता का नाम श्रीमती चमन देवी था। बचपन से ही इनमें चित्रकला और प्राकृतिक सौन्दर्य के प्रति विशेष प्रेम रहा।

• शोधार्थी
•• शोध निर्देशिका, पूर्व विभागाध्यक्ष, चित्रकला विभाग जे. के. पी. पीजी कॉलेज मुजफ्फरनगर (उ. प्र.)

प्रो. काम्बोज का विवाह 31, जनवरी सन् 1959 में पारिवारिक रीति-रिवाज के अनुसार श्रीमती इन्दिरा से हुआ। इनकी पत्नी की शिक्षा बी.ए. थी। उस समय ग्रेजुएट होना बहुत बडी बात मानी जाती थी। श्रीमती इन्दिरा तीन भाईयों में अकेली बहन थी। प्रो. काम्बोज की दो पुत्रियाँ और एक पुत्र है। सबसे बड़ी पुत्री श्रीमती श्रुति काम्बोज ने एम. एस.सी. रसायन विज्ञान से की तथा एम.फिल. की डिग्री प्राप्त की। डॉ. ऋचा काम्बोज ने नेशनल म्यूजियम से एम.ए. हिस्ट्री ऑफ आर्ट से किया और गाल्ड मेडलिस्ट रही तथा डॉक्टरेट की डिग्री भी प्राप्त की। ये एम. के. पी. पीजी कॉलेज, देहरादून में विभागाध्यक्ष के पद पर कार्यरत हैं। इस प्रकार इनका पूरा परिवार शिक्षा के क्षेत्र से जुडा रहा। प्रो. काम्बोज का जीवन बहुत ही आनन्द से व्यतीत हो रहा था अचानक ही फरवरी 2016 में इनकी पत्नी का स्वर्गवास हो गया।"[1]

प्रो. काम्बोज अच्छे विचार, अच्छा आचरण तथा देशभक्त लोगों को अपना आदर्श मानते थे। लाल बहादुर शास्त्री, सरदार वल्लभ भाई पटेल, सुभाष चन्द्र बोस, गोपाल कृष्ण गोखले, मदनमोहन मालवीय जैसे देशभक्तों से उन्हें प्रेरणा मिलती थी। प्रो. काम्बोज के पिता बहुत सरल स्वभाव के व्यक्ति थे। उनके घर में उनके चाचा जी भी रहते थे, वे एक दुकान में काम किया करते थे। इनके पिताजी यद्यपि साधारण तथा मिलनसार स्वभाव के थे, लेकिन किसी से ज्यादा मिलते-जुलते नहीं थे। वे अपने में ही खुश रहते थे, इसके साथ वे प्रकृति प्रेमी भी थे। अच्छी चीजों को वे पसन्द करते थे तथा अच्छे वस्त्र पहनते थे। वे कलाकार तो नहीं थे, फिर भी वे सुन्दर चीजों की हमेशा प्रसंशा किया करते थे। उनका नीयम था कि शाम को जब भी वे घूमने जाते थे तो परेड ग्राउण्ड में बैंच पर बैठ जाते थे और वहॉ से ऊपर पहाड़ो की तरफ प्रकृति को देखते रहते थे। जब वे चकराता व लैसडाउन में थे तो वहाँ भी शाम को घूमने जाते थे और किसी एकान्त जगह पत्थर पर बैठकर देर तक वादियों को देखते रहते थे। पहाडों की सुन्दर वादियों को देखकर उन्हें बड़ा आनन्द आता था। ये प्रकृति प्रेम प्रो. काम्बोज को अपने पिता जी से विरासत में मिला। प्रो. काम्बोज शुरू से अपनी माता जी के पास रहे। उनकी माता बाल्याकाल में कभी-कभी काम्बोज जी के देश प्रेम को देखकर परेशान हो जाती थी। वे आर.एस.एस. से जुड़े होने के कारण संगठन में समय देते थे। वह समय सन् 1942 ई. के स्वतंत्रता आन्दोलन का समय था। उस समय समाज में अंग्रजों के प्रति विद्रोह व्याप्त था। उस समय महात्मा गाँधी, सुभाष चन्द्र बोस, तथा सरदार वल्लभ भाई पटेल जैसे देशभक्तों का भाषण होता था। देश प्रेम का ऐसा वातावरण प्रो. काम्बोज को गहराई से प्रभावित करने लगा, जिसका उनके मन पर गहरा प्रभाव पडा। इनमें भी देश प्रेम की संवेदनशीलता जागने लगी। इनके पिताजी शुरूआत से ही बाहर रहते थे। जब उनका तबादला लैसडाउन हो गया था। उस समय सन् 1942 ई0 में जब भारत छोड़ो आन्दोलन प्रारम्भ हुआ तो 14 वर्ष की आयु में जब ये कक्षा 9 के विद्यार्थी थे इन्होंने भी सत्याग्रह आन्दोलन का नेतृत्व किया। इस आन्दोलन में ये गिरफतार भी हो गये थे परन्तु इन्हें उसी दिन रिहा कर दिया गया क्योंकि उस समय वे स्कूल के कम उम्र के विद्यार्थी थे। उस समय समाज में अंग्रेजी सरकार के सख्त आदेश थे कि आन्दोलन में यदि किसी सरकारी सेवारत कर्मचारी के घर का कोई भी सदस्य भाग लेगा तो उसके खिलाफ कडी कार्यवाही की जायेगी। यदि उस परिवार का कोई सदस्य सरकारी

नौकरी में है तो उसकी नौकरी भी जा सकती थी। अत: प्रो. काम्बोज के पिता की इनके पास चिट्ठी आयी कि इन सब गतिविधियों से अलग रहा करो क्योंकि अंग्रेजों की सख्ती के बारे में उनके परिवार में सबको पता था। उसी समय आन्दोलन में उनकी गिरफतारी हो गयी थी। तब प्रो. काम्बोज के पिता के मित्र, मिस्टर माथुर, डी.ए.वी. कॉलेज के प्रोफेसर उनके घर आये। उन्होंने प्रो. काम्बोज की गिरफ्तारी की बात इनकी माता जी को बता दी। उस समय इनकी माता जी यह जानती थी कि प्रो. काम्बोज स्कूल जाते हैं और वहीं से सीधे अपने घर आ जाते हैं। गिरफ्तारी की बात का पता लगते ही इनकी माता जी ने इन्हें बहुत डांट लगाई क्योंकि इनकी माता जी चिन्तित थी।

कला और पहाड़ों के प्राकृतिक सौन्दर्य के प्रति प्रो. काम्बोज का लगाव जन्मजात है। वह कहते हैं कि ऐसा शायद पूर्व जन्म के संस्कारों के कारण है। उन्हें प्रकृति प्रेम उनके पिता जी से विरासत में मिला। इस प्रकार बचपन में ही कला के प्रति रुचि दिखाई पड़ती है इसके साथ ही प्रो. काम्बोज की संगीत के प्रति भी रूचि रही है। हो सकता है कि इनकी बहन सुश्री सुशीला काम्बोज शास्त्रीय संगीत की बहुत अच्छी जानकार व गायिका थी अत: इस प्रकार इनके अन्दर भी संगीत की समझ विकसित हो गयी।

आगरा विश्वविद्यालय द्वारा सन् 1946 में पहली बार बी. ए. की ड्रॉइंग व पेन्टिंग विषय की कक्षाएँ प्रारम्भ हुई थीं। इन्होंने हाईस्कूल के कला गुरू के निर्देशन में प्रशिक्षण और स्वप्रयास और निरन्तर अभ्यास से ही कार्य कर कला शिक्षा ग्रहण की। उन दिनों मैग्जीनों में विख्यात कलाकारों के बनाये चित्र अक्सर छपते थे। प्रो. काम्बोज कबाड़ियों के यहाँ उनकी पुरानी प्रतियाँ अपनी पॉकेट मनी में से खरीद लाते थे और वाटर कलर में उनकी अनुकृति बनाकर अभ्यास भी किया करते थे। उन्हीं से प्रेरित होकर इन्होंने सन् 1945 में अपना पहला मौलिक चित्र 'द ब्लू लूट प्लेयर' बनाया था।

इनके बाल्याकाल के परिश्रम, अभ्यास, कला के प्रति निष्ठा व समर्पण के साथ कार्य के कारण ही इन्हें सन् 1949 में श्री लक्ष्मण विद्यालय हाई स्कूल में बुला कर कला शिक्षक के रूप में नियुक्ति मिल गयी। यद्यपि इनकी योग्यता कला में मात्र हाई स्कूल थी। उस समय ये डी. ए. वी. कॉलेज में एम. ए. (अर्थशास्त्र) कर रहे थे और कुछ समय बाद आगे चल कर इन्हें प्रवक्ता बना दिया गया।

वह कहते हैं कि उनके कलाकार बनने व करियर के रूप में इसे अपनाने तथा जो कुछ भी उनकी उपलब्धियों हुई उसके मूल में उनके जीवन में हुई तीन संयोग या घटनायें है एक, उन्हें बाल्यावस्था में ही सरदार पूरन सिंह (चाचा जी) जैसे योग्य व पिता समान कला गुरू का मिलना तथा उनका सानिध्य व मार्गदर्शन प्राप्त होना। दूसरा बाबू जी (पित्ता जी) का पर्वतीय क्षेत्रों में निरन्तर 14 वर्षों तक कार्यकाल और काम्बोज का बाल्यावस्था से ही पर्वतीय हिमालयी क्षेत्र के रहस्यपूर्ण अलौकिक सौन्दर्य व वहाँ के जीवन व पर्यावरण की वस्तु स्थिति व निश्छलता का प्रत्यक्ष साक्षात्कार जो अन्तत: उनकी चित्र शैली का आज तक का प्रमुख प्रतीकात्मक लक्षण और प्रेरणा स्रोत बना हुआ है। तीसरा कॉलेज में एम. ए. (अर्थशास्त्र) करते हुए सन् 1948 में डी. ए. वी. कॉलेज की लाइब्रेरी में लन्दन (यू.के.) से प्रकाशित होने वाली प्रतिष्ठित मासिक कला पत्रिका द आर्टिस्ट से परिचय होना। इस पत्रिका में इंग्लैण्ड के प्रतिष्ठित कलाकारों की क्रमश:

ड्रॉइंग एण्ड पेन्टिंग की विभिन्न विधाओं, माध्यमों व विषयों पर इलस्ट्रेशन व लेख श्रृंखला प्रकाशित होती थी। काम्बोज उस समय स्टूडेन्ट यूनियन के सेक्रेटरी जनरल भी थे। कॉलेज में उस पुस्तक को उन्हें पढ़ने का समय नहीं मिलता था अतः प्रो. काम्बोज उस समय के अपने लाइब्रेरियन चौहान साहब से आग्रह किया कि वे उन्हें पिछले माह की पत्रिका इश्यू करके घर ले जाने को दे दिया करें। तो इस पर लाइब्रेरियन (चौहान) ने कहा कि "तू पहला लड़का है जो इस मैग्जीन को पढ़ रहा है और उन्होंने प्रत्येक माह के पहले मैग्जीन को इश्यू कर इन्हें घर ले जाने की इजाजत दे दी और यह भी कहा कि जब कॉलेज छोड़ना तब लौटा देना। उस पत्रिका द्वारा इन्होंने वाटर कलर, तैल, पेस्टल, क्रेयॉन आदि माध्यमों में चित्रण शुरू किया और दून घाटी व पर्वतीय क्षेत्रों में जाकर खूब प्रत्यक्ष चित्रण किया। सन् 1948 से 1953 तक के चित्र इसके उदाहरण हैं। वास्तव में 'द आर्टिस्ट जनरल' इनका सच्चा गुरू बन गया शेष जीवन का इनका कला क्षेत्र में सफर इन्हीं तीन स्तम्भों पर खड़ा है। इस प्रकार ये तीन स्तम्भ ही उनके करियर की नींव बन गये। "काम्बोज एक ऐसे कलाकार हैं जिन्होंने सही मायने में कोई औपचारिक कला-शिक्षा नहीं पायी।"[2] इनकी प्रारम्भिक शिक्षा देहरादून के साधु स्कूल से प्राप्त की। ये यहाँ प्रथम कक्षा तक के विद्यार्थी रहे। इसके बाद इनका दाखिला सीधे तीसरी कक्षा में ए. पी. मिशन स्कूल में हो गया। इन्होंने इसी स्कूल से हाई स्कूल तक की पढाई की। इण्टर की पढाई के लिए इन्होंने डी. ए. वी. कॉलेज देहरादून में बी. ए. में प्रवेश ले लिया। उस समय कैरियर के प्रति अधिक जागरूकता नहीं थी इसलिए नौकरी में प्रतिस्पर्धा कम थी। इसी कॉलेज से इन्होंने अर्थशास्त्र विषय में एम.ए. किया। सन् 1951 ई. उन्होंने एकल विषय कला एवं चित्रकारी में आगरा कॉलेज से प्राप्त की। सन् 1962-63 इन्होंने इसी विषय में डी. ए. वी. कॉलेज देहरादून से परास्नातक की उपाधि प्राप्त की। इनके पिता इन्हें आई. ए. एस. बनाना चाहते थे। परन्तु प्रो. काम्बोज अपना जीवन शिक्षा एवं शिक्षण को समर्पित कर चुके थे। ये पिताजी का मन रखने के लिए एक बार आई. ए. एस की परीक्षा में बिना मन के बैठे परन्तु इन्हें उसमें जाना नहीं था इसलिए इसे आधे में ही छोड़ दिया।

समाचार पत्र राष्ट्र टाइम्स में प्रकाशित लेख के अनुसार, "अपने वर्तमान जीवन के लिए श्रेय वे मूल रूप से अपने हाई स्कूल के कला शिक्षक स्वर्गीय सरदार पूरन सिंह को देते हैं, जो स्वयं लाहौर आर्ट स्कूल के स्नातक थे और एक बड़े कुशल कलाकार थे। उनके निर्देशन में इन्होंने चित्रण विधान का इतना ज्ञान अर्जित कर लिया था कि वे किसी भी चित्र की हूबहू अनुकृति पारदर्शी रंगों या अन्य माध्यमों में बनाने में दक्ष हो गये थे। उनकी सन् 1945 की प्रदर्शनी में लगी एक वाटर कलर पेन्टिंग को पुरस्कार इसलिए नहीं दिया गया कि निर्णायक जो स्वयं देहरादून के जाने माने कलाकार थे ने उस पेन्टिंग को प्रिन्ट माना। आज भी उस चित्र को देखकर ऐसा ही भ्रम होता है। सन् 1940 में उन्होंने जिला स्तरीय प्रदर्शनी में प्रथम पुरस्कार प्राप्त किया। तदोपरान्त निरन्तर जब भी किसी प्रदर्शनी में भाग लिए वे पुरस्कृत हुए। उन्हें यह प्रतिभा जन्म से विरासत में मिली।

हाई स्कूल के पश्चात् सन् 1944 में उन्होंने 'सर जे. जे. स्कूल ऑफ आर्ट, बम्बई' जाने का निश्चय किया। माता-पिता से अनुमति भी मिल गयी पर विश्वयुद्ध के बदलते तेवर देख उसे निरस्त भी कर दिया। अतः आगे अध्ययन शुरू हो गया पर

औपचाकि कला शिक्षा समाप्त हो गई और यह स्थिति सन् 1950 तक जब उन्होंने एम. ए. अर्थशास्त्र परीक्षा उत्तीर्ण की, बनी रही पर इस अवधि में उन्होंने स्वप्रयास से न तो कला-अभ्यास छोड़ा और न ही अपने प्रथम कला गुरू का सानिध्य। यह सानिध्य उन्हें कला सृजन में सक्रिय बनाये रहा।

प्रकृति अपने विविध रूपों में सभी को आकर्षित करती रही है। प्रो. काम्बोज को प्रकृति ने अपने विशुद्ध रूप में सदैव प्रभावित किया और प्रेरित भी। उस समय का देहरादून एक छोटा पर शान्त एवं सुरम्य वातावरण का नगर था। घर व बस्ती से निकलते ही थोड़ी दूरी पर खेत, फलों तथा चाय के बागान और घने वनों से आच्छादित सुरम्य दून घाटी का दर्शन होता था। नगर के पास में कच्ची व पक्की नहरों की अधिकता थी। थोड़ी दूर पर ही चारों ओर पहाड़ियों से घिरे, छोटे-बड़े विषम आकृतियों वाले गोलाकार शिलाखण्डों से टकराती, बलखाती, पहाड़ी नदियाँ और नाले घाटी की छटा को सुन्दर रूप प्रदान कर रहे थे। पूरा वातावरण बहुत ही मनमोहक था। प्रसिद्ध लेखिका डॉ. लक्ष्मी श्रीवास्तव' के शब्दों में, "वस्तुतः कलाकार प्रकृति के अनगिनत रूपों की सौन्दर्यमयी सृष्टि का आस्वादन और जनजीवन के यथार्थ भागों के भावों के साथ जीवनयापन करते हुए उससे प्रेरणा पाता है। और अभिव्यक्ति के लिए जीवन और सौन्दर्य को वह महसूस करता है। अपनी कल्पना शक्ति और सृजन शक्ति के माध्यम से सुन्दरतम् कलाओं के रूप में उसे सृजित करता है।"[3]

संदर्भ ग्रन्थ सूची-

1. चिन्मय मेहता, उत्तराँचल की कला प्रकृति पर्यावरण एवं समाज से प्रतिबद्ध चित्रकार काम्बोज क कला सम्पदा एव वैचारिकी, अंक 10-मई-जून 2004
2. कला को समर्पित कलाकार बी. पी. काम्बोज राष्ट्र टाइम्स, 6 से 12 जनवरी 1991 (समाचार पत्र)
3. एस. बी.एल. व लखटकिया, आनन्दः भारतीय चित्रकला परम्परा और आधुनिकता का अर्न्तद्वन्द, पृष्ठ-148

UGC Journal No. (Old) 2138
Peer-Reviewed Research Journal
Impact Factor 6.375, ISSN 0975-4083
Vol.- 28, Hindi Edition, Year-14, March 2025

हरीप्रकाश राठी: कथा साहित्य और कथा कौशल का विवेचन

• ममता तिवाड़ी
•• रेणुका

सारांश- हरीप्रकाश राठी हिंदी कथा साहित्य के ऐसे प्रतिष्ठित लेखक हैं, जिन्होंने अपने लेखन में सामाजिक यथार्थ, मानवीय संवेदनाओं और जीवन के विविध पहलुओं को गहराई से प्रस्तुत किया है। उनकी कहानियों का संसार विस्तृत और समृद्ध है, जिसमें ग्रामीण और नगरीय जीवन की जटिलताएँ, अंतर्विरोध, तथा मानवीय संघर्ष के विविध रूप दिखाई देते हैं। राठी का कथा साहित्य न केवल समाज की वास्तविकताओं का प्रतिबिंब है, बल्कि यह जीवन के गहरे रहस्यों को भी उजागर करता है। राठी का लेखन 2001 में अपने साहित्यिक यात्रा की शुरुआत से ही एक महत्वपूर्ण साहित्यिक योगदान साबित हुआ। उनकी पहली कहानी 'अमरूद का पेड़' ने साहित्य जगत में उनकी पहचान बनाई और इसके बाद उन्होंने कई महत्वपूर्ण कहानियाँ लिखीं जो व्यापक रूप से सराही गईं। उनके कथा साहित्य का मुख्य स्वर आदर्शोमुखी यथार्थ है, जिसमें मानवीय जीवन के कड़वे सच और उसकी जटिलताओं का स्पष्ट चित्रण मिलता है। राठी किसी विचारधारा विशेष या विमर्श में बंधे बिना, समाज के सामान्य जनजीवन और उसकी समस्याओं को अपने लेखन का केंद्र बनाते हैं। उनके लिए साहित्य एक ऐसा साधन है, जिससे वह जनजीवन का सजीव प्रतिबिंब प्रस्तुत करते हैं।

मुख्य शब्द- यथार्थ, संवेदना, अंतर्विरोध, संघर्ष, शिल्प, दृष्टि

परिचय- हरीप्रकाश राठी का जन्म 5 नवम्बर 1955 को राजस्थान के जोधपुर शहर में हुआ था। राजस्थान के सांस्कृतिक और साहित्यिक परिवेश में पले-बढ़े राठी आज एक प्रतिष्ठित कमलकार के रूप में हिंदी कथा साहित्य के क्षेत्र में पहचाने जाते हैं। उनकी लेखन यात्रा का आरंभ जीवन के पाँचवें पड़ाव में हुआ, जब उन्होंने अपनी बैंकर की सफल करियर से स्वैच्छिक सेवानिवृत्ति ली और खुद को साहित्य की ओर समर्पित किया। यह निर्णय उनके जीवन में एक महत्वपूर्ण मोड़ साबित हुआ। जून 2001 से दिसम्बर 2002 के बीच मात्र डेढ़ वर्ष के समय में उन्होंने 31 कहानियाँ लिखीं, जो उनकी गहन साहित्यिक संवेदनशीलता और लेखकीय कौशल का प्रमाण है। अब तक

• शोधार्थी, माधव विश्वविद्यालय, पिण्डवाड़ा, सिरोही, राजस्थान
•• शोध-निर्देशक, सहायक आचार्य, हिंदी विभाग, माधव विश्वविद्यालय, पिण्डवाड़ा, सिरोही, राजस्थान

हरीप्रकाश राठी की 150 से अधिक कहानियाँ, 500 से अधिक निबंध और दर्जनों साक्षात्कार प्रकाशित हो चुके हैं, जो उनके साहित्यिक योगदान की व्यापकता और गहराई को दर्शाते हैं।

साहित्यिक दृष्टिकोण और विचारधारा- हरीप्रकाश राठी ने अपनी कहानियों में आदर्शोंमुखी यथार्थ का प्रस्तुतीकरण किया है। उनका लेखन किसी विचारधारा विशेष या विमर्श में बंधा हुआ नहीं है। उनके लिए साहित्य एक साधन है, जिसके माध्यम से वे जनजीवन के यथार्थ को निरूपित करते हैं। राठी की कहानियों में संवेदना, आत्मीयता, और आस्था की झलक मिलती है। उनका विश्वास है कि कथा साहित्य को समाज का सजीव प्रतिबिंब होना चाहिए, और इसी कारण उनकी कहानियों में कड़वा यथार्थ और मानवीय संवेदनाओं का मेल दिखाई देता है। उनके साहित्य के पाठक उन्हें एक ऐसे लेखक के रूप में मानते हैं, जिनकी रचनाएँ दिल को छूने वाली होती हैं। उनकी कहानियाँ इस विश्वास को मजबूत करती हैं कि मानवीय जीवन की गहराइयों में झांकने के लिए साहित्य एक सशक्त माध्यम हो सकता है।

कहानी रचना में हरीप्रकाश राठी का कौशल- हरीप्रकाश राठी का कथा साहित्य आदर्शोंमुखी यथार्थ की ओर प्रवाहित होता है। उनकी पहली कहानी 'अमरूद का पेड़' बेहद लोकप्रिय हुई और इसके बाद उन्होंने एक के बाद एक कई कहानियाँ लिखीं, जो पाठकों के दिलों पर अमिट छाप छोड़ गईं। कहानी रचना को लेकर राठी का दृष्टिकोण दार्शनिकता से भरा हुआ है। एक साक्षात्कार में उन्होंने कहा था, कहानी समय के गर्भ में पलने वाला एक वलवला है। यह बारिश की तरह होती है, कब बारिश हो जाए, कहा नहीं जा सकता। यह दृष्टिकोण बताता है कि राठी के लिए कहानी लेखन केवल एक बौद्धिक प्रक्रिया नहीं है, बल्कि वह भावनाओं और अनुभवों का मिश्रण है। उनकी कहानियाँ जीवन के विविध आयामों को अभिव्यक्त करने की क्षमता रखती हैं। उन्होंने समाज के अलग-अलग तबकों, जैसे ग्रामीण और शहरी जीवन, दोनों को अपने कथा साहित्य में समाहित किया है। उनकी कहानियों के पात्र जमीनी हकीकत से जुड़े होते हैं, जिनके जीवन संघर्ष, खुशियाँ, और त्रासदियाँ कहानी में जीवंत रूप से उभर कर आती हैं।

भाषा और शैली की विशिष्टता- हरीप्रकाश राठी की कहानियों की भाषा सरल, सहज और बोधगम्य है। उन्होंने कथानक, पात्रों और परिस्थितियों के अनुसार भाषा का कुशलता से प्रयोग किया है। उनकी भाषा पाठक के मन को तुरंत छू जाती है और कहानी के भावों को सहजता से व्यक्त करती है। तत्सम, तद्भव, देशज, विदेशी और ध्वन्यात्मक शब्दों का अद्भुत संयोजन उनकी कहानियों की भाषा की प्रमुख विशेषता है। संस्कृत, उर्दू, अरबी-फारसी पदावली, मुहावरे, और समकालीन बोलचाल के शब्दों का प्रयोग कर उन्होंने अपनी कहानियों को अत्यंत समृद्ध और सांस्कृतिक दृष्टिकोण से विविधतापूर्ण बना दिया है। हरीप्रकाश राठी की कहानियों में पारंपरिक उपमाओं के नूतन प्रयोग देखने को मिलते हैं, जो उनकी रचनाओं को साहित्यिक सौंदर्य प्रदान करते हैं। उदाहरण के लिए, उनकी कहानी 'नैहर' में नायक अपनी प्रेमिका की तुलना पारंपरिक उपमाओं से नहीं करता, बल्कि उसे इन उपमाओं से श्रेष्ठ बताता है। यह शैलीगत नवीनता उनकी कहानियों को विशिष्ट बनाती है और उन्हें समकालीन साहित्य के अन्य लेखकों से अलग खड़ा करती है।

कथानक और शिल्प की नवीनता- हरीप्रकाश राठी की कहानियों में शिल्प की दृष्टि से भी नवीनता है। उनकी कहानियों में शिल्प और कथानक का अद्वितीय समन्वय देखने को मिलता है। उन्होंने अपने कथा साहित्य में नूतन तकनीक और शिल्प का प्रयोग किया है। उदाहरण के लिए, उनकी कहानियों में व्यंग्य और हास्य इस प्रकार से पिरोया गया है कि वह कहानी के कथानक का अभिन्न हिस्सा बन जाता है। राठी के व्यंग्य को 'नाविक के तीर' की तरह कहा जा सकता है, जो सीधे पाठक के हृदय को छूता है और गहरे घाव छोड़ जाता है।

राठी की कहानियाँ मानवीय संवेदनाओं से ओत-प्रोत होती हैं। उन्होंने अपने कथा साहित्य में राजस्थान के लोकजीवन और उसकी विविधताओं को बखूबी चित्रित किया है। उनकी कहानियों में ग्रामीण और नगरीय जीवन के बीच की अंतर्विरोधी स्थितियाँ स्पष्ट रूप से उभर कर आती हैं। उन्होंने अपने कथा साहित्य में पारंपरिक और आधुनिक जीवन के संघर्षों और समस्याओं को बड़े सहज और सजीव तरीके से प्रस्तुत किया है।

राजस्थानी लोकजीवन का चित्रण- हरीप्रकाश राठी ने राजस्थान के ग्रामीण जीवन को अपनी कहानियों में सजीव रूप में प्रस्तुत किया है। उनके कथा साहित्य में राजस्थानी संस्कृति, परंपराएँ, रीति-रिवाज, और लोकजीवन का प्रभावशाली चित्रण मिलता है। राजस्थान के धूल भरे गाँव, वहाँ के निवासियों का सरल और संघर्षमय जीवन, उनके सुख-दुख और उनकी आपसी संबंधों की गर्माहट राठी की कहानियों का अभिन्न हिस्सा हैं।

राजस्थानी लोकजीवन के साथ-साथ उन्होंने अपने कथा साहित्य में नगरीय जीवन की जटिलताओं और अंतर्विरोधों को भी उभारा है। उनकी कहानियाँ इस द्वंद्व को उजागर करती हैं कि किस प्रकार ग्रामीण और नगरीय जीवन एक-दूसरे से अलग होते हुए भी परस्पर जुड़े हुए हैं। उनकी कहानियों में राजस्थान के गाँवों के अलावा शहरी मध्यवर्गीय जीवन की भी स्पष्ट झलक मिलती है।

समकालीन कथा साहित्य में हरीप्रकाश राठी का स्थान- हरीप्रकाश राठी का समकालीन हिंदी कथा साहित्य में एक विशिष्ट स्थान है। उन्होंने जिस प्रकार से अपनी कहानियों में समकालीन युगबोध और मानवीय संवेदनाओं को उकेरा है, वह उन्हें हिंदी कथा साहित्य की अग्रणी पंक्ति में स्थापित करता है। उनके कथा साहित्य में समाज की धड़कन को पहचानने और व्यक्त करने की क्षमता है। उन्होंने कहानियों के माध्यम से समाज के विविध पहलुओं को, चाहे वह आर्थिक विषमता हो, सामाजिक असमानता हो, या फिर सांस्कृतिक संक्रमण, बखूबी दर्शाया है। उनकी कहानियों की एक और महत्वपूर्ण विशेषता यह है कि वे समाज की वास्तविक समस्याओं को गहराई से समझते हैं और उन्हें बिना किसी अतिशयोक्ति के प्रस्तुत करते हैं। यही कारण है कि उनकी कहानियाँ पाठकों के दिलों में लंबे समय तक बनी रहती हैं और उन्हें सोचने पर मजबूर करती हैं।

राठी की कहानियों पर समीक्षाएँ और प्रतिक्रियाएँ- प्रसिद्ध साहित्यकार गोपाल भारद्वाज ने हरीप्रकाश राठी की कहानियों की प्रशंसा करते हुए कहा है कि यदि वे इसी प्रकार निरंतर लिखते रहे, तो प्रेमचंद जैसे महान कथाकारों की तरह प्रतिष्ठा प्राप्त कर

सकते हैं। भारद्वाज के अनुसार, राठी की कहानियाँ आधुनिक भारत के नगरीय और मध्यवर्गीय जीवन की समस्याओं और संघर्षों को उजागर करती हैं।

महाराजा गज सिंह ने भी राठी की कहानियों की संवेदनशीलता और मर्मस्पर्शी दृष्टिकोण की सराहना की है। उन्होंने कहा है कि राठी की कहानियाँ पाठकों के दिल को गहराई से छूती हैं और उन्हें जीवन की वास्तविकताओं से अवगत कराती हैं।

हरीप्रकाश राठी का यह मानना है कि सकारात्मक ऊर्जा के साथ किया गया हर कार्य सफल होता है। उनकी कहानियाँ भी इसी सकारात्मक दृष्टिकोण और मानवीय संवेदनाओं के साथ लिखी गई हैं। उनका साहित्य न केवल साहित्यिक दृष्टिकोण से महत्वपूर्ण है, बल्कि समाज की धड़कन को भी बखूबी समझता और व्यक्त करता है।

हरीप्रकाश राठी की कहानियों की प्रमुख विशेषता उनकी सजीव और सरल भाषा है। उन्होंने अपनी कहानियों में तत्सम, तद्भव, देशज और विदेशी शब्दों का प्रयोग अत्यंत कुशलता से किया है, जिससे उनकी कहानियों की भाषा समृद्ध और सजीव हो उठती है। राठी ने उर्दू, अरबी-फारसी और संस्कृत शब्दों का भी प्रयोग किया है, जिससे उनकी कहानियों में भाषाई विविधता और सांस्कृतिक समृद्धि का अद्भुत समन्वय देखने को मिलता है। उनकी कहानियों में पारंपरिक उपमाओं और प्रतीकों का नूतन प्रयोग हुआ है, जो उनकी मौलिकता और साहित्यिक कौशल को दर्शाता है।

राठी की कहानियों में संवेदनाओं का गहन चित्रण मिलता है। उन्होंने ग्रामीण और नगरीय जीवन के बीच की अंतर्विरोधी स्थितियों को अपनी कहानियों में प्रभावशाली ढंग से उकेरा है। राजस्थान के लोकजीवन और उसकी सांस्कृतिक विविधताओं को उन्होंने अपनी कहानियों में इस प्रकार चित्रित किया है, कि पाठक उन दृश्यों को अपनी आँखों के सामने सजीव देख सके। उनकी कहानियों में राजस्थानी समाज की परंपराओं, रीति-रिवाजों और लोकजीवन के साथ-साथ नगरीय जीवन की जटिलताएँ और संघर्ष भी जीवंत रूप में प्रस्तुत होते हैं।

निष्कर्ष- हरीप्रकाश राठी की कहानियों में हास्य और व्यंग्य का समन्वय एक और महत्वपूर्ण विशेषता है। उन्होंने व्यंग्य को इस प्रकार प्रयोग किया है, कि वह कहानी के कथानक का अभिन्न हिस्सा बन जाता है। राठी के व्यंग्य को "नाविक के तीर" की तरह कहा जा सकता है, जो सीधे पाठक के हृदय को छूता है और गहरे घाव छोड़ जाता है। उनकी कहानियाँ मानवीय त्रासदियों और सामाजिक विडंबनाओं को व्यंग्य और हास्य के माध्यम से उजागर करती हैं, जिससे उनकी कहानियाँ न केवल मनोरंजक बनती हैं, बल्कि पाठक को गहरे विचार में भी डाल देती हैं।

राठी का साहित्य किसी एक सामाजिक या सांस्कृतिक परिवेश तक सीमित नहीं है। उन्होंने अपने लेखन में समाज के विभिन्न वर्गों, विशेषकर ग्रामीण और नगरीय मध्यवर्गीय जीवन के संघर्षों को बखूबी चित्रित किया है। उनकी कहानियाँ समाज की वास्तविक समस्याओं को बड़ी सहजता से सामने रखती हैं और पाठकों को उन पर गहराई से सोचने के लिए प्रेरित करती हैं।

साहित्यिक दृष्टिकोण से हरीप्रकाश राठी का योगदान अत्यंत महत्वपूर्ण है। उन्होंने समकालीन हिंदी कथा साहित्य को नए आयाम दिए हैं और समाज की वास्तविकताओं को अत्यंत सजीव और संवेदनशील ढंग से प्रस्तुत किया है। उनका कथा साहित्य न केवल पाठकों को मनोरंजन प्रदान करता है, बल्कि उन्हें समाज की वास्तविकताओं से अवगत कराता है और जीवन के विभिन्न पहलुओं पर गहराई से सोचने के लिए प्रेरित करता है।

राठी की कहानियों की एक और विशेषता यह है कि वे बिना किसी जटिल बौद्धिकता के भी गहरे दार्शनिक और सामाजिक संदेश देती हैं। उनके लेखन में समाज के निचले तबके, आर्थिक विषमता, सामाजिक असमानता, सांस्कृतिक संक्रमण और पारिवारिक संबंधों की जटिलताओं का स्पष्ट और संवेदनशील चित्रण मिलता है। उनकी कहानियाँ जीवन की वास्तविकताओं को बेहद सरल और सहज भाषा में प्रस्तुत करती हैं, जिससे वे पाठकों के दिलों में अपनी गहरी छाप छोड़ती हैं।

संदर्भ ग्रन्थ सूची-

1. राठीहरीप्रकाश,"अमरूद का पेड़" (2002), राजस्थान साहित्य अकादमी, उदयपुर
2. महाराजा गज सिंह, "हरीप्रकाश राठी की कहानियों की संवेदनशीलता'', दैनिक जोधपुर समाचार पत्र (2003)
3. भारद्वाजगोपाल,"समकालीन हिंदी कथा साहित्य में हरीप्रकाश राठी का योगदान" सुदर्शन साहित्य समीक्षा, भाग 15, अंक 4 (2005)
4. ठकुरैला त्रिलोक सिंह, ''व्यंग्य की अंतर्धाराएँ: हरिप्रकाश राठी की कहानियाँ'', कथा साहित्य दृष्टिकोण (2004)
5. राठीहरीप्रकाश,"राजस्थान के लोकजीवन की झलकियाँ" (2007), राजस्थानी भाषा और संस्कृति पर केंद्रित संग्रह
6. भारद्वाजगोपाल, "प्रेमचंद के बाद: हरिप्रकाश राठी की कहानियों का मूल्यांकन'', साहित्य वार्ता (2008)
7. राठीहरीप्रकाश,"व्यावहारिक जीवन में कहानी और यथार्थ" (2010), साहित्य समाज प्रकाशन, जोधपुर
8. गोस्वामीकैलाश, "समकालीन हिंदी कहानी में नई संवेदनाएँ", साहित्य मार्ग (2009)
9. शर्मा, राजेश्वर, ''हरीप्रकाश राठी का भाषा कौशल'', कहानी यात्रा (2011)
10. राठीहरीप्रकाश, "लोकभाषा और साहित्यिक प्रयोग" (2015), जोधपुर साहित्य परिषद

UGC Journal No. (Old) 2138
Peer-Reviewed Research Journal
Impact Factor 6.375, ISSN 0975-4083
Vol.- 28, Hindi Edition, Year-14, March 2025

उर्मिला शिरीष की कहानियों में नारी चित्रण यथार्थवाद, संघर्ष और सशक्तिकरण

• नरपत मोरी
•• रेणुका

सारांश- भारतीय साहित्य में नारी चित्रण का एक महत्वपूर्ण स्थान रहा है। स्त्री विमर्श ने साहित्यिक अभिव्यक्ति के विविध स्वरूपों को उजागर किया है, जिसमें लेखिकाओं ने अपने अनुभवों और विचारों के माध्यम से समाज में स्त्री की स्थिति को रेखांकित किया है। उर्मिला शिरीष समकालीन हिंदी साहित्य की एक ऐसी प्रमुख लेखिका हैं, जिनकी कहानियाँ नारी संवेदनाओं, संघर्षों और सशक्तिकरण के यथार्थवादी चित्रण के लिए प्रसिद्ध हैं। उनकी रचनाओं में स्त्री जीवन के विविध पहलू जैसे सामाजिक बंधन, पारिवारिक दायित्व, आत्मनिर्भरता की जद्दोजहद और मानसिक संघर्ष गहराई से उभरकर आते हैं।

मुख्य शब्द- यथार्थवाद, संघर्ष, सशक्तिकरण

परिचय- उर्मिला शिरीष हिंदी कथा साहित्य की एक प्रखर लेखिका हैं, जिनकी कहानियाँ नारी मन की गहराइयों में उतरती हैं और समाज के विविध स्तरों पर व्याप्त स्त्री जीवन के यथार्थ को उजागर करती हैं। उनकी कहानियों में नारी केवल एक पात्र नहीं, बल्कि विचारधारा, संघर्ष और परिवर्तन की प्रतीक बनकर उभरती है। उनकी लेखनी में समाज के प्रति गहरी संवेदनशीलता और स्त्री अस्तित्व के प्रति सजग दृष्टिकोण परिलक्षित होता है।

नारी चित्रण के प्रमुख आयाम

यथार्थवाद- उर्मिला शिरीष की कहानियाँ समाज के उस यथार्थ को उजागर करती हैं, जहाँ स्त्री को पारंपरिक भूमिकाओं में बाँधने का प्रयास किया जाता है। उनकी रचनाओं में स्त्री जीवन के कटु और मधुर दोनों पहलू स्पष्ट रूप से उभरकर आते हैं। उदाहरण स्वरूप, उनकी कहानियों में निम्न-मध्यम वर्गीय परिवारों की स्त्रियाँ अपने आर्थिक, सामाजिक और पारिवारिक संघर्षों के बीच जूझती दिखाई देती हैं। यह यथार्थवाद केवल बाहरी संघर्ष तक ही सीमित नहीं है, बल्कि आंतरिक द्वंद्व और भावनात्मक खींचतान को भी उजागर करता है।

संघर्ष- उर्मिला शिरीष की नायिकाएँ परंपरागत स्त्री भूमिकाओं से बाहर निकलने की

• शोधार्थी, माधव विश्वविद्यालय, पिण्डवाड़ा,सिरोही, राजस्थान
•• शोध-निर्देशक, सहायक आचार्य, हिंदी-विभाग माधव विश्वविद्यालय, पिण्डवाड़ा,सिरोही, राजस्थान

कोशिश करती हैं। उनके संघर्ष केवल बाहरी समाज से नहीं, बल्कि उनके अपने भीतर के सवालों और दुविधाओं से भी होते हैं। वे समाज द्वारा थोपे गए स्त्रीत्व के आदर्शों को चुनौती देती हैं और अपने अस्तित्व को नए सिरे से परिभाषित करने का प्रयास करती हैं। इन कहानियों में स्त्रियों का संघर्ष व्यक्तिगत, सामाजिक, आर्थिक, और मानसिक स्तर पर स्पष्ट रूप से परिलक्षित होता है।

सशक्तिकरण- उर्मिला शिरीष की कहानियों में नारी सशक्तिकरण का विचार गहराई से जुड़ा हुआ है। उनकीकहानियों के पात्र स्वयं अपने निर्णय लेने की क्षमता रखती हैं और अपने अधिकारों के प्रति सजग रहते हैं। वे समाज की परंपरागत धारणाओं को चुनौती देती हैं और अपने अस्तित्व की पहचान के लिए संघर्षरत रहती हैं। यह सशक्तिकरण केवल बाहरी रूप से नहीं, बल्कि मानसिक और भावनात्मक रूप से भी व्यक्त होता है।

साहित्यकार अपनी रचनाओं के माध्यम से उसके समय की सामाजिक, धार्मिक तथा राजनीतिक परिस्थितियों को व्यापक रूप से प्रभावित करता हैं। वह जिस वातावरण में निवास करता हैउसका गहरा प्रभाव उसके दृष्टिकोण और जीवन-दर्शन पर पड़ता है। उर्मिला शिरीष समकालीन हिंदी साहित्य की प्रमुख लेखिकाओं में से एक हैं जिनकी कहानियाँ विशेष रूप से मध्यवर्गीय समाज में रहने वाली महिलाओं के संघर्ष, आकांक्षाओं और जीवन के विभिन्न पहलुओं को बखूबी दर्शाती हैं। उनके लेखन में नारी के जीवन की जटिलताओं और सामाजिक सीमाओं का संवेदनशील चित्रण देखने को मिलता है।

उर्मिला शिरीष की कहानियों का आधार मध्यवर्गीय परिवार और उसमें रहने वाली महिलाओं के जीवन की गहराई से केन्द्रित है। उनके लेखन में नारी के विभिन्न रूप और उनकी समस्याएँ स्पष्ट रूप से उभरकर सामने आती हैं। उर्मिला के पिता भी एक मध्यवर्गीय परिवार से थे और खेती-बाड़ी करते थे। उन्होंने अपनी बेटी की उच्च शिक्षा के लिए गाँव छोड़ दियाजिससे उर्मिला को अपने सपनों की दिशा में आगे बढ़ने का अवसर मिला। उर्मिला शिरीष की कहानियों में मध्यवर्गीय नारी के विभिन्न रूपों का प्रभावशाली चित्रण देखने को मिलता हैजो न केवल उनके संघर्षों को उजागर करता हैबल्कि उनकी आकांक्षाओं और सामाजिक चुनौतियों को भी बयां करता है।

उर्मिला शिरीष की कहानियों में मध्यवर्गीय नारी का संघर्ष एक प्रमुख तत्व है। उनकी कहानियों में नायिकाएँ सामाजिक, आर्थिक और व्यक्तिगत समस्याओं का सामना करती हैं। वे आत्मनिर्भर बनने के लिए प्रयासरत रहती हैं और जीवन की कठिनाइयों से जूझती हैं। उनकी कहानी "दलाल" में नायिका सौम्या की मां अपने परिवार की आर्थिक तंगी से जूझते हुए अपनी ही बेटी का सौदा कर देती है जिससे उसकी स्थिति अत्यंत दयनीय हो जाती है। उसे काम करके भी पति की जोर-जबरदस्ती का शिकार होना पड़ता है लेकिन नायिका इस परिस्थिति का सामना करती है एवं अपने पति रतन को तलाक दे देती है।

यह कहानी दर्शाती है कि मध्यवर्गीय महिलाएँ अपनी आकांक्षाओं को पूरा करने के लिए कितनी संघर्षरत रहती हैं। कहानी में उर्मिला शिरीष ने नायिका के माध्यम से महिलाओं के संघर्ष, सामाजिक दबाव और आत्मसम्मान की लड़ाई को बहुत ही सजीव

और संवेदनशील तरीके से प्रस्तुत किया है। नायिका का चित्रण एक सशक्त, आत्मनिर्भर और संघर्षशील महिला के रूप में किया गया है जो पाठकों को उसकी स्थिति के प्रति सहानुभूति और प्रेरणा दोनों प्रदान करता है।

उर्मिला शिरीष के कहानी-साहित्य में मध्यवर्गीय नारी का चित्रण विविधतापूर्ण और गहराई से किया गया है। उनकी कहानियाँ इस बात का प्रमाण हैं कि मध्यवर्गीय महिलाएँ न केवल पारिवारिक और आर्थिक चुनौतियों से जूझती हैंबल्कि सामाजिक कुरीतियों और आत्मदमन से भी संघर्षरत रहती हैं। कहानी "चीख" की नायिका एक ऐसी महिला है जो बलात्कार की त्रासदी झेलती है। इस घटना के बाद न केवल वह स्वयं बल्कि उसका पूरा परिवार समाज की अवहेलना और निंदा का शिकार बनता है। यह कहानी समाज में व्याप्त लैंगिक भेदभाव और महिलाओं के प्रति असंवेदनशीलता को उजागर करती है।

"शून्य" में नायिका अपने पति को आईएएस बनाने के लिए दिन-रात मेहनत करती है। इस प्रक्रिया में वह स्वयं को पूरी तरह से समर्पित कर देती हैजिससे उसके व्यक्तिगत सपने और इच्छाएँ शून्य हो जाती हैं। यह कहानी उन महिलाओं की कथा है जो परिवार की सफलता के लिए अपनी आकांक्षाओं और इच्छाओं का बलिदान करती हैं।"बाबा ! मम्मी को रोको"की नायिका एक मध्यवर्गीय महिला होते हुए भी अल्ट्रामॉडर्न बनने का प्रयास करती है। वह अपने आपको आधुनिकता के मापदंडों पर खरा उतारने की कोशिश में लगी रहती हैजिससे उसे समाज में मान्यता मिल सके।

"तूफान" की नायिका अपने सामाजिक स्तर को ऊँचा दिखाने के लिए अपनी सहेली के सामने झूठा दिखावा करती है। इसके लिए वह कार जैसी वस्तुएँ उधार लेती है ताकि उसकी सामाजिक प्रतिष्ठा बनी रहे। यह कहानी मध्यवर्गीय समाज में दिखावे और झूठी प्रतिष्ठा की प्रवृत्ति को बखूबी उजागर करती है। उर्मिला शिरीष ने अपनी रचनाओं में नारी पात्रों के माध्यम से यह स्पष्ट किया है कि मध्यवर्गीय महिलाएँ न केवल बाहरी संघर्षों का सामना करती हैंबल्कि वे आंतरिक संघर्ष और आत्मदमन के कठिनाईयों से भी जूझती हैं। वे पारिवारिक अपेक्षाओं और सामाजिक मानदंडों के बीच उलझी हुई होती हैं, जिससे उनकी आत्मा पर गहरा प्रभाव पड़ता है।

"शहर में अकेली लड़की" की नायिका बहन के जुल्मी पति को सजा दिलाने के लिए कड़ा संघर्ष करती है। वह अपने साहस और न्याय के प्रति अपने दृढ़ संकल्प के कारण सफल होती है। यह कहानी नारी सशक्तिकरण का उत्कृष्ट उदाहरण प्रस्तुत करती है, जिसमें नायिका अन्याय के खिलाफ लड़ती है और अंततः जीतती है। "प्रतिरोध की नायिका" हर मुसीबत का डटकर सामना करती है और कॉलेज के बिगड़े लड़कों का साहसपूर्वक मुकाबला करती है। उसकी साहसिकता और दृढ़ता यह दर्शाती है कि वह किसी भी परिस्थिति में झुकने वाली नहीं है। यह कहानी समाज में महिलाओं के प्रति होने वाले अत्याचारों के खिलाफ नारी शक्ति के प्रतिरोध का प्रतीक है।

"संयोजक"और "तिकड़ी" की नारी पात्र भी पद, प्रतिष्ठा और प्रदर्शन की प्रियता के कारण संघर्ष करती हैं। ये पात्र अपने जीवन में उच्च लक्ष्यों को प्राप्त करने की कोशिश में लगी रहती हैंचाहे इसके लिए उन्हें कितनी भी कठिनाइयों का सामना क्यों न करना पड़े।उर्मिला शिरीष के कहानी-साहित्य में नारी पात्रों की विशेषता यह है कि वे अत्यंत

कर्मठ, सचेत और सजग होती हैं। चाहे वे मध्यवर्गीय हों या निम्न मध्यवर्गीय, वे अपने सपनों को साकार करने और अपने अधिकारों के लिए लड़ने में संकोच नहीं करतीं। उनकी कहानियाँ यह दर्शाती हैं कि नारी की शक्ति और आत्मविश्वास किसी भी बाधा को पार कर सकते हैं।

मध्यवर्गीय नारी की विशेषता यह है कि उसमें संघर्ष करने की शक्ति, कड़ी मेहनत की आदत और आत्मविश्वास अधिक होता है। उर्मिला शिरीष की कहानियाँ इस बात का प्रमाण हैं कि महिलाएँ किसी भी चुनौती का सामना कर सकती हैं और अपने अधिकारों और सपनों के लिए संघर्ष करने के लिए तैयार रहती हैं। उनके साहित्य में नारी की इस अदम्य शक्ति और संकल्प को बड़े प्रभावशाली ढंग से प्रस्तुत किया गया है।उर्मिला शिरीष के साहित्य में मध्यवर्गीय नारी का यह चित्रण समाज के विभिन्न पहलुओं को उजागर करता है और पाठकों को सोचने पर मजबूर करता है कि महिलाओं की स्थिति में सुधार के लिए क्या किया जा सकता है।

निष्कर्ष- उर्मिला शिरीष की कहानियाँ मध्यवर्गीय नारी के जीवन के विविध पहलुओं को गहराई से उभारती हैं। उनकी कहानियों में नारी का संघर्ष, आत्मनिर्भरता, सामाजिक मान्यताओं से टकराव, मानसिक और भावनात्मक संघर्ष, शिक्षा और सशक्तिकरण जैसे महत्वपूर्ण मुद्दों को दर्शाया गया है। उर्मिला शिरीष की कहानियाँ न केवल मध्यवर्गीय नारी की वास्तविकता को दर्शाती हैं बल्कि समाज में उनके संघर्ष और उपलब्धियों को भी उजागर करती हैं। उनके लेखन से यह स्पष्ट होता है कि मध्यवर्गीय नारी अपने जीवन में कितनी महत्वपूर्ण भूमिका निभाती है और किस प्रकार वह समाज में परिवर्तन की दिशा में अग्रसर होती है।

संदर्भ ग्रन्थ सूची-

1. आलीस बी.ए. : स्वतंत्रतापूर्व हिन्दी महिला लेखिकाओं की कहानियों का अध्ययन
2. उर्मिला शिरीष : रंगमंच,चीख,वाणी प्रकाशन
3. उर्मिला शिरीष : केंचुली, शून्य,राजकमल प्रकाशन
4. उर्मिला शिरीष : केंचुलीय चौथी पगडंडी
5. उर्मिला शिरीष : सहमा हुआ कल, बाबा ! मम्मी को रोको,साहित्य भंडार प्रकाशन
6. उर्मिला शिरीष : दीवार के पीछे, किताबघर प्रकाशन
7. उर्मिला शिरीष : शहर में अकेली लड़की, किताबघर प्रकाशन
8. उर्मिला शिरीष : रंगमंच,तूफान, वाणी प्रकाशन
9. उर्मिला शिरीष : सहमा हुआ कल, प्रतिरोध,किताबघर प्रकाशन

UGC Journal No. (Old) 2138
Peer-Reviewed Research Journal
Impact Factor 6.375, ISSN 0975-4083
Vol.- 28, Hindi Edition, Year-14, March 2025

छापाकला में महिला कलाकारों का योगदान

• अर्चना

सारांश- आज के शिक्षित समाज में प्रत्येक क्षेत्र में महिला अग्रणिय है। एक महिला का शिक्षित होना पूरे परिवार को शिक्षित बनाने में अहम भूमिका अदा करता है। वर्तमान में प्रत्येक क्षेत्र में महिलाओं को समान अधिकार प्राप्त है जिससे महिलाएँ सशक्त है। कला जगत भी प्रत्येक क्षेत्र में महिला कलाकारों का बोलबाला है। अपने जीवन के अनुभवों को वह अनेकों माध्यम से प्रस्तुत करने में सक्षम है। यदि बात छापाकला की करे तो उसमें भी ऐसी हजारों छापा कलाकार महिलाएँ है जो छापाकला क्षेत्र में ख्याति प्राप्त किये हुए है।

मुख्य शब्द- छापाकला, महिला, शिक्षित, सशक्त

प्रस्तावना- छापाकला में महिला कलाकारों का योगदान ऐतिहासिक रूप से महत्वपूर्ण रहा है, हालांकि लंबे समय तक उन्हें अपेक्षित मान्यता नहीं मिली। फिर भी कई महिला कलाकारों ने इस विधा में उल्लेखनीय कार्य किए हैं और छापाकला को एक सशक्त अभिव्यक्ति का माध्यम बनाया है।

1. प्रारंभिक योगदान- 19वीं और 20वीं शताब्दी की शुरुआत में जब छापाकला एक स्वतंत्र कला विधा के रूप में उभर रही थी, उस समय महिला कलाकारों ने इसमें अपनी रचनात्मकता का परिचय दिया। यूरोप और अमेरिका में कई महिला कलाकारों ने लिथोग्राफी, वुडकट और एटचिंग जैसी तकनीकों में काम किया, जैसे कि डंतल ब्ैंजज और ज्ञक्तजीम ज्ञवससूपज्ञ।

2. भारत में महिला कलाकारों का योगदान- भारत में छापाकला की परंपरा 20वीं शताब्दी में मजबूत हुई, और इस दौर में कई महिला कलाकारों ने इसे अपनाया। अनुपम सूद एक प्रमुख नाम हैं, जिन्होंने छापाकला में अंतरराष्ट्रीय स्तर पर भारत का प्रतिनिधित्व किया। कृपा शाह, शकुंतला कुलकर्णी, और नीलिमा शेपाी जैसी कलाकारों ने भी इस माध्यम में गंभीर और वैचारिक कला कार्य किए।

3. विषयवस्तु और दृष्टिकोण- महिला कलाकारों ने छापाकला के माध्यम से स्त्री अनुभव, सामाजिक असमानता, घरेलू जीवन, आत्म-छवि, और नारी सशक्तिकरण जैसे विषयों को अभिव्यक्त किया। इनके कार्यों में गहराई, संवेदना और समाज के प्रति सजग दृष्टिकोण देखने को मिलता है।

• शोध छात्रा, सी.सी.एस. विश्वविद्यालय मेरठ (उ.प्र.)

4. तकनीकी नवाचार- महिला कलाकारों ने पारंपरिक तकनीकों को अपनाने के साथ-साथ नई तकनीकों और मिश्रित माध्यमों के प्रयोग से छापाकला को समृद्ध किया। आज भी समकालीन महिला कलाकार डिजिटल प्रिंटिंग, फोटो-एटचिंग आदि का प्रयोग कर रहीं हैं।

5. संस्थागत योगदान- कई महिला कलाकार शिक्षण संस्थानों में भी सक्रिय रहीं हैं, जहाँ उन्होंने नई पीढ़ी को छापाकला सिखाने का कार्य किया है। इन कलाकारों ने कार्यशालाओं और प्रदर्शनियों के माध्यम से भी इस विधा को लोकप्रिय बनाने में योगदान दिया।

जीव के धरावतरण के साथ ही उसकी नियति प्रत्यक्ष या परोक्ष रुप में तय हो जाती है। मनुष्य अनेकों माध्यमों से अपने कर्मपथ की तरफ बढ़ता चला जाता है। व्यक्ति अपनी आने वाली पीढ़ी के लिये सदैव से ही अपनी जीवन शैली, अपनी परम्पराएँ, अपने विचारों को सुरक्षित रखने के लिये अनेकों माध्यमों की खोज करता आया है। उनमें से एक छापाकला ऐसा माध्यम रहा है। आने वाली पीढ़ी के लिए सुरक्षित रखने में सर्वाधिक महत्वपूर्ण भूमिका अदा करता है। समय के साथ-साथ छापाकला में अनेकों परिवर्तन होते रहे है जो और अधिक सुलभ तकनीक के रुप में उभर कर सामने आयी है। छापाकला की मुख्यत: तीन विधाएँ हैं, उभार सतह छापा पद्धति, अन्तसतह पद्धति, समतल सतह पद्धति इन तीनो विधाओं के अन्तर्गत ही सभी छापा विधाएँ विद्यमान है जिन्हे कलाकार अपनी रुचिनुसार चुनाव कर कलाकर्म करते है। छापाकला एक श्रम साध्य प्रक्रिया के रुप में जानी जाती है जिसमें पूर्ण श्रद्धा के साथ पूर्ण एकाग्रचित कार्य किया जाता है। इसका परिणाम अदभुत है। कठिन तकनीक होने के बावजूद इसमें अनेकों महिला कलाकार आश्चर्यजनक कार्य कर इस क्षेत्र में अपनी पहचान बनाए हुए है। ऐसे ही कुछ महान महिला छापाकलाकारों में वडोदरा (गुजरात) की महान कलाकार नैना दलाल जी है। जो भारत ही नही अपितु विदेशों तक अपनी पहचान बनाए है। आपका जन्म गुजरात के मध्यम वर्ग परिवार में हुआ। बचपन की सभी अच्छी बुरी यादे आपके छायाचित्रों में स्पष्ट रुप में दिखाई देती है। नारी के विभिन्न रुपों को आपके छापाचित्रों में देखा जा सकता है। नारी को सहेली, माँ, बहन, उसकी दयनीय स्थिति, उसकी बेबसी आदि सभी पहलुओं को आपके चित्रों में बखुबी देखा जा सकता है।

वडोदरा, गुजरात की दूसरी महान महिला छापाकलाकार रिनी धूमल जी है। छापाकला क्षेत्र आपका नाम सम्मानपूर्वक लिया जाता है। आपने छापाकला के साथ-साथ चित्रकला, मूर्तिकला, सिरेमिक में भी कार्य किया है। आपके चित्रों में नारी प्रधान रही है जिसमें उसे आपने देवी शक्ति के रुप में प्रस्तुत किया है। कही काली, कही दुर्गा, नारी को सशक्त रुप में आपने अपने छापा चित्रों में स्थान दिया है जो नारी के लिये प्रेरणादायक है।

ऐसी ही एक और महान छापाकलाकार अनुपम सूद जी है जिन्होने प्रिंट मेकिंग की दुनिया में अपनी अलग छाप छोड़ी है। आपने नक्काशी के माध्यम से कपड़े पहने और बिना कपड़े वाले मानव आकृतियों की खोज में गहन रुचि विकसित की। आपके छापाचित्रों को देखकर शायद ही कोई व्यक्ति होगा जो उसकी गहराई को ना जानने की कोशिश करे।

आपके चित्रों को देखकर दर्शक मन में चित्रों की और अधिक जानने की इच्छा बढ़ती चली जाती है। इसी क्रम में एक और छापा कलाकार अनिता दास चक्रवर्ती भी है। आपने भी छापाकला क्षेत्र में बहुत प्रसिद्धी प्राप्त की है। आपके लिनोकट छापे विशेष रुप से जाने जाते है। ऐसी ही महान महिला छापा कलाकारों में अन्जू चौधरी, अनु गुप्ता, अर्पिता दास गुप्ता, गोगी सरोज पाल आदि कुछ ऐसी महिला छापा कलाकार हैं जो राष्ट्रीय अन्तर्राष्ट्रीय ख्याति प्राप्त है जिनके छापे विश्व भर में पुरस्कृत हुए हैं। आज महिलाओं ने छापाकला के क्षेत्र में अपने योगदान से समाज में अपनी अलग पहचान बनाई है, जो आगे आने वाली पीढ़ी को आत्मनिर्भर व अभिप्रेरित करने के लिए महत्वपूर्ण भूमिका अदा करती है। आज के समाज में छापाकला के क्षेत्र में महिला सशक्त, आत्मनिर्भर व अपनी एक अलग पहचान बनाए हुए है।

संदर्भ ग्रन्थ सूची-

1. कुमार सुनील, भारतीय छापा चित्रकला
2. यादव, डॉ नरेन्द्र ग्राफिक डिजाइन
3. परिमू रतन, कृष्णा परिमू गोरी, द आर्ट ऑफ नैना दलाल

UGC Journal No. (Old) 2138
Peer-Reviewed Research Journal
Impact Factor 6.375, ISSN 0975-4083
Vol.- 28, Hindi Edition, Year-14, March 2025

भारतीय संगीत में राग की ऐतिहासिकता

• रेनूवाला
•• निष्ठा शर्मा

सारांश- हिन्दुस्तानी शास्त्रीय संगीत की यह परम्परा रही है, कि हमारे संगीत की उत्पत्ति देवी देवताओं से मानी गई है। राग के सम्बन्ध में भी इस प्रकार की धारणायें प्रचलित है। नारद कृत संगीत मकरद तथा पं. दामोदर कृत संगीत दर्पण जो कि 1625 के सन्निकट लिखा गया जिसमें राग की उत्पत्ति को शिव तथा शक्ति से जोड़ा गया है।

मुख्य शब्द- पुरातन, अर्न्तभूत, रंजकता, विभूषित, अनुरंजन, इत्यादि

भारतीय संगीत में राग एक महत्वपूर्ण एवं पारिभाषिक शब्द है। इसी पर सम्पूर्ण संगीत निर्भर है। राग मूलत: संस्कृत भाषा का शब्द है। इसकी उत्पत्ति रंज धातु में 'धञ' प्रत्यय लगने से होती है। इस उत्पत्ति से स्पष्ट होता है कि रजकता राग का प्रमुख तत्व है। राग शब्द की सर्वप्रथम प्रमाणिक परिभाषा मंतग द्वारा रोचक ग्रन्थ बृहदेशी में देखने को मिलती है। भरत की परम्परा में जो जगह जातियों को प्राप्त थी, वर्तमान समय में वही जगह रागों को प्राप्त है। वर्तमान समय में थाट से राग उत्पन्न होते है, उसी प्रकार पुरातन काल में मूर्च्छनाओं से जातियां उत्पन्न होती थी। संगीत में राग की उत्पत्ति के विषय में व्याख्या करते हुये मतंग ने कहा है[1] –

हत्थेव रागशब्दस्य व्युव्पत्तिरमिधीयते
रंजनाजजायते रागों व्युत्पत्ति: समुदाहृत:।।

अर्थात मतंग के अनुसार रंजन के कारण ही इसकी संज्ञा राग है। यही राग भी उत्पत्ति का कारण है। इसी प्रकार आचार्य कल्लिनाथ ने राग मे विषय में कुछ इस प्रकार कहा है –

स्वरवर्ण विशिष्टेन ध्वनिभंदेन वा पुन:
राज्यते येन सच्चित स राग: सम्मत: सन्ताम्।।

आचार्य जी के अनुसार स्वर और वर्ण विशेष अथवा ध्वनि भेद से जिसके द्वारा सज्जनों के चिन्त एवं मन का रंजन होता हो, वही राग है। इसी प्रकार मध्यकाल में

• शोधार्थिनी, संगीत विभाग, महात्मा गाँधी बालिका विद्यालय पी.जी. कॉलेज फिरोजाबाद डॉ. भीमराव आम्बेडकर विश्वविद्यालय, आगरा
•• सहायक प्राध्यापक, निर्देशिका, संगीत विभाग, महात्मा गाँधी बालिका विद्यालय पी.जी. कॉलेज फिरोजाबाद डॉ. भीमराव आम्बेडकर विश्वविद्यालय आगरा

सोमनाथ ने राग की परिभाषा देते हुये कहा –

स्वर वर्ण भूषितो यो ध्वनि भेदो रन्जक: स राग इह।

अर्थात जो स्वर वर्ण से अलंकृत हो एवं ध्वनि भेद के द्वारा रंजक हो वह राग है। इसी पं. अहोबल ने भी राग के विषय में कुछ इस प्रकार श्लोक के माध्यम मे अपने विचार प्रस्तुत किये हैं

रन्जक: स्वरसंदर्भो राग इव्यमिधीयते।

अर्थात स्वरों का एक रंजक संदर्भ राग कहलाता है। पं. व्यकंटमखी के अनुसार राग सें परिभाषा इस प्रकार है–

रन्जयन्ति मनांसीति रागा:।

अर्थात जो मन का रंजन करते है वे राग है। उपर्युक्त विद्धानों की परिभाषाओं मे यह निष्कर्ष निकाला जा सकता है कि –

1- राग ध्वनि की एक विशिष्ट रचना है।
2- वह स्वर और वर्ण से विभूषित है।
3- वह मनुष्यों के चित्त का रंजन करता है, अर्थात आनन्द प्रदान करता है।

ध्वनि के नवीन संसार में पहले नाद की विद्यमानता थी। नाद से श्रुति, श्रुति से स्वर, स्वरों से सप्तक और सप्तक से जाति एवं रागों का विकास हुआ। प्राचीन तथा आधुनिक ग्रन्थकारों ने राग की परिभाषा को प्राय: एक ही माना है। जिसके अनुसार, ध्वनि की ऐसी विशिष्ट रचना जो स्वरों वर्ण से विभूषित हो राग कहलाती है। परिभाषा से यह ज्ञात होता है, कि स्वरवर्ण से विभूषित ध्वनि की विशिष्ट रचना राग है, किन्तु ध्वनि की स्वरवर्ण से विभूषित रचना को गीत भी कहा जाता है। राग शब्द कई बार नाट्य शास्त्र में कई अर्थो में प्रयुक्त हुआ है, रंजकता के अर्थ में राग शब्द का प्रयोग नाट्यशास्त्र में इस प्रकार बताया गया है[2] –

यथा वणद्वित्ते चित्र न शोभोत्पादन भवेत्
एवमेन बिना गांन नाट्य राग न गच्छति।

अर्थात जिस प्रकार (वर्णो) रंग के बिना चित्र की शोभा में वृद्धि नही होती उसी प्रकार संगीत विहीन नाट्य रंजकता को प्राप्त नही होता। कालिदास, चन्द्रगुप्त, विक्रमादित्य (शासन काल 385–415 ई.पू.) दरबार के नवरत्नों में से एक थे। उस समय संगीत का प्रचार–प्रसार प्रचलन में था। संगीत शाला में स्वर, वर्ण, गीति, मूर्च्छना, तान, राग, तथा अभिनय की विधिवत शिक्षा दी जाती थी। संगीत के सन्दर्भ में राग शब्द का उल्लेख कालिदास की कृतियों में अनेक बार देखने को मिला है।

हिन्दुस्तानी संगीत मे राग ही गायन तथा वादन का आधार है। जब हम इतिहास पर दृष्टि डालते है तो रागों की उत्पत्ति के सन्दर्भ में बहुत से ऐसे राग दिखाई देते है जिनकी उत्पत्ति प्रादेशिक धुनों तथा वन्य लोक धुनों से हुई है। हिन्दुस्तानी संगीत का ढांचा कोई ऐसी इमारत की तरह नहीं है जो एक बार निर्मित हो गई। संगीत हमेशा से ही परिवर्तन शील रहा है तथा इसमें निरन्तर परिवर्तन अपेक्षित है। उदाहरणर्थ राग गुर्जरी की उत्पत्ति विदेशी धुनों से सम्बन्धित बताई गई है, जिसकी उत्पत्ति सम्भवत: गुर्जर देश के ग्रामीण जन जाति में गाई जाने वाली धुन से हुई है। यह जाति मध्य एशिया के मरूस्थलीय प्रदेश में रहने वाली थी।

संगीत में इन धुनों को ग्रहण किया जा चुका है, तथा उसे धुन या राग के नाम हिन्दुस्तानी से सम्बोधित किया जाता है, जैसे- पूर्वी धुन, पहाडी, पील आदि रागों भी उत्पत्ति इस प्रकार हुई। लोक प्रचलित धुन किसी व्यक्ति विशेष की धुन नही होती है, जिन धुनों में कोई सामान्य धर्म पाया गया उन्हे एक जाति के अन्तर्गत रखकर कालातर में उनमें राग के गुण देखकर राग की संज्ञा प्रदान की जाती है।

शिव शक्ति समायो भाद्रायाणा सम्भवो भवत्
पचास्यात् पन्च रागाः स्युः ष्ठस्तु गिरिजामुखात्।

शिव तथा शक्ति इन दोनों के योग से ही राग की उत्पत्ति मानी गई है। महादेव के पांच मुखों से पांच राग तथा छठा राग पार्वती के मुख से निकला। शिव ने जब नाट्य (नृत्य) का आरम्भ किया तो उनके मुख से भी राग, व्रहमदेव के मुख से बसंत, तत्पुरूष के मुख से पंचम, ईशान के मुख से मेघ नृत्य के प्रसंग में पार्वती के मुख से नटनारायण राग उत्पन्न हुआ। कुछ रागों के विषय में राग दर्पण में बताया जा चुका है कि राग किसके द्वारा गाये जाते थे जैसे- शंकराभरण को सर्वप्रथम महादेव ने गाया था। लंका ध्वनि को पहले हुनमान ने गाया था। खम्बाबती को पहले भरत ने गाया था, सोरठ और मल्हार और केदार को मिला देने से नाग धुन हो जाता है, और यह नागधनु लोक में प्रचलित भी हुई। राग की उत्पत्ति के विषय में पन्द्रवी शताब्दी के शुभांकर विचरित संगीत दामोदर में है। इस ग्रन्थ काल मे रागों को कृष्ठः तथा गोपियों से सम्बन्धित बताया है।[3]

राग का एतिहासिक विकास- राग के विषय में मतभेद दूर करने के लिये कश्यप नामक ग्रन्थकार के नाम का आश्रय लेना अनुचित न होगा। कई विद्वानों ने कश्यप के राग विषय की चर्चा विस्तृत रूप से की है जिसमे यह मालूम होता है कि कश्यप का राग सम्बन्धी कोई न कोई ग्रन्थ रहा होगा। मतंग, नान्यदेव, अभिनव, शारंगदेव, कल्लिनाथ, सिंह-भूपाल आदि ग्रन्थकार ने कश्यप के राग वर्णन की चर्चा की है। कश्यप के राग वर्णन को मानते हुये सभी ग्रन्थकारों ने उसे अपने ग्रन्थ में स्थान दिया है। प्राचीन भारतीय वाड्न्मय में एक अन्य कश्यप का भी नाम समय-समय पर ग्रन्थों में प्रयोग हुआ है जो कि यह संदेह उत्पन्न करता है कि राग विषय का वर्णन करने वाले कश्यप, तथा कश्यप मुनि एक ही व्यक्ति थे? किन्तु कुछ साक्ष्य के आधार पर कश्यप मुनि तथा कश्यप (राग के विषय की चर्चा करने वाले) दो भिन्न व्यक्ति है।[4]

कश्यप का राग विषयक वर्णन- कश्यप के रागों का सर्वप्रथम उल्लेख मतंग की बृहदेशी से होता है। गीतियों का उल्लेख करते हुये कश्यप की राग की परिभाषा को मतंग ने इस प्रकार बताया है।

चतुर्णामपि वर्णाना योगा रागः शोभना
स सर्वो दुव्यते येन तेन रागा इति स्मृताः।।

कश्यप की इस राग परिभाषा से प्रमाणित होता है कि राग पारिभाषिक रूप से चौथी, पाँचवी शताब्दी में अधिप्रचार में आया। कैशिक राग का उल्लेख रामायण, नाट्यशास्त्र, नारदीयशिक्षा तथा कालीदास कृत कुमार संभव में हुआ है, जो इस निष्कर्ष की पुष्टि करता है कि ई. 5 तक इस राग का अधिक प्रचार था।

"ज्ञात्वा जाव्यंश बाहुल्यं निर्देश्या मूर्छना बुधैः।"

राग प्रकरण में नान्यदेव ने प्रायः कश्यप तथा मतंग को उद्वत किया है। नान्य देव के विवेचन में कश्यप का संदर्भ इस प्रकार है।

"अस्माभिः कश्यपादेवः निगद्यते"।

भरत भाष्य में कश्यप तथा बृहत् दोनों का उल्लेख एवं ग्राम रागों का उल्लेख उपलब्ध है।

मध्यकालीन ग्रन्थकार शारंगदेव, पार्श्वदेव के ग्रन्थों में कश्यप का वर्णन प्राचीन संगीताचार्य के रूप में सुलभ है। कल्लिनाथ तथा सिंह भूपाल ने संगीत रत्नाकर की टिप्पणी में कश्यप के उदाहरण प्रस्तुत किये है। कुछ रागों के नाम कश्यपपूर्व ग्रन्थों में भी देखे जा सकते है, किन्तु उनकी विशेषता जानने के लिये उन ग्रन्थों में राग का कोई उल्लेख देखने को नहीं मिलता। केवल कुछ राग के नाम के आधार पर राग की शुरूआत रामायण काल, या भरतादि ग्रन्थकारों के समय से हुआ यह पुष्ट करना उचित प्रतीत नहीं होता, निसंदेह यह जरूर कहा जा सकता है कि नाट्य शास्त्र जैसे विशाल ग्रन्थ में राग के विकास मे बीज समाविष्ट है, जिनका प्रस्फुटन क्रमानुसार हुआ, तथा कश्यप के समय तक यह राग पद्वति स्थिर होकर उसे एक नवीन प्राविधिक रूप दिया। रागों का वर्णन प्राचीन ग्रन्थों में हुआ, जैसा कि पहले बताया जा चुका है, लेकिन रागों के उल्लेख से यह नहीं कहा जा सकता कि रागों का स्वरूप उस समय कैसा था। कश्यप का ग्रन्थ उपलब्ध न होने से रागों का स्वरूप मानने के लिये वृहदेशी को ही सभी के समक्ष रखा जाता है।[4]

बृहदेशी में मतंग के रागों का लक्षण युक्त विवेचन प्रथम बार अभिमुख है। बृहदेशी की रचना 7-8 ई. में हुई ऐसा विदित है। मतंग के शब्दों में राग-मार्ग के जिस रूप का वर्णन भरतादि ग्रन्थकारों ने नहीं किया उसे वे निम्न प्रस्तुत करते है।

देशे देशे प्रवृतोडसौ ध्वनिर्देशीति संक्षितः
अबलाबाल गोपालैः क्षितिपालैर्निजेच्छया
गीयते सानुरागेण स्वदेशे देशीरूच्चयते
निबद्वश्चानिबहश्च मार्गोहयं द्विविधो मतः
आप्लापादि निबन्धो यः स च मार्गः प्रकीर्तितः

अर्थात अलग-अलग देश में जो ध्वनि प्रवृत्त होती है, वह देशी कहलाती है। नारियाँ, और देश के राजा अपनी स्वतः इच्छा के अनुसार अपने-अपने देश में अनुराग सहित गाते है। मतंग ने ग्राम रागों से भिन्न भाषा, विभाषा इत्यादि रागों का उल्लेख किया है। ग्राम से भाषा का उदभव माना गया है। मतंग ने भाषा रागों के लिये देशी संज्ञा का असंदिग्ध ढंग से प्रयोग किया है। परंतु ग्राम रागों से इनका उदभव मानने का यह अर्थ हो सकता है, कि सारे राग देशी के दूसरे अर्थ के अनुसार देशी संगीत के अन्तर्गत आ जाते है। अभिनव भारती, अभिनव गुप्त द्वारा रचित पुस्तक है। इनकी रचनाओं का काल 990ई. से लेकर 1020 ई. तक माना गया है। रागों के इतिहास की दृष्टि से अभिनव-भारती अत्यन्त महत्वपूर्ण स्थान रखती है। अभिनव गुप्त ने कश्यप के रागों का उल्लेख अभिनव भारती में किया है जिससे पूर्वप्राचीन रागों की भिज्ञता के लिये ठोस आधार स्तम्भ प्राप्त होता है। अभिनव ने कश्यप द्वारा बताये हुये शुद्ध, भिन्न, और इत्यादि रगों का उल्लेख किया है, जो

अत्यन्त महत्वपूर्ण है। कोहल के मत को भी अभिनव गुप्त जी ने अभिनव भारती में वर्णन किया है। नाट्यशास्त्र के उनत्तीसवें अध्याय के तेरहवें श्लोक की टीका में अभिनव ने एक दृष्टान्त दिया है जिसमें विभिन्न प्रसंगो में विभिन्न जातियों एवं रागों के प्रयोग के विषय में कश्यप आदि शास्त्रकारों के मतों का उल्लेख हे।

मतंग द्वारा बताये हुये द्वादश मूर्च्छना वाद का अभिनव भारती में खण्डन किया गया है, गुप्त जी का कथन है, कि यह अनुपेक्षणीय नहीं है, कि मूर्च्छना में द्वादश स्वर हो, क्योंकि इसमें स्वरों का पुनः उच्चारण होता है। नाट्यशास्त्र में उल्लेखित संगीत सम्बन्धी तथ्यों का व्यवस्थित स्पष्टीकरण अभिनव भारती के द्वारा होता है।[5]

रागों के इतिहास की कड़ी में अभिनव भारती के पश्चात उल्लेखनीय नाम भरतभाष्यम है। भारत भाष्यम के कर्ता नान्यभूपाल मिथिला नरेश थे। नान्यदेव ने मिथिला का शासन ई.सं. 1907 से 1133 तक किया। भरत भाष्यम में भरतोक्त संगीत की मीमांसा विस्तार से की गई है। शिक्षाध्याय से नारदी शिक्षान्तर्गत संगीत विवेचनात्मक सभी अंश नान्यदेव ने उद्वत किये है। उनमें नारदीय शिक्षा का ग्राम राग वर्णनात्मक श्लोक ईषत्स्पृष्टो निषादः स्यात् भी अन्तर्भूत है।

राग प्रकरण में नान्यदेव ने अधिकांश कश्यप तथा मतंग को उद्वत करते हुये कश्यप के सन्दर्भ को इस प्रकार प्रस्तुत किया है।[5]

"अस्माभिस्तु कश्यपादिभी रागा अभ्यनुज्ञाता।"

प्राचीन संगीत में कविपय विषय नान्यदेव ने दिये है, जिनकी मीमांसा रामाकर आदि में नही की गई है। गन्धार ग्राम के अन्तर्गत रागों के नाम बताये गये है जो इस प्रकार है -1. उद्वेशाध्याय 2. शिक्षाध्याय 3. स्वराध्याय 4. मूर्च्छना, तानाध्याय 5. अलंकाराध्याय 6. जात्यध्याय 7. रागोत्पव्यध्याय 8. सप्तगीतकाध्याय 9. ध्रुवाध्याय 10. तालाध्याय 11. देशिकाध्याय 12. सुषिराध्याय 13. पुष्कराध्याय 14. छन्दोध्याय 15. भाषध्याय। भरत भाष्य में जाति के विशद वर्णन के पश्चात रागों का वर्णन किया गया है, जिसमें ग्राम राग, मूलराग, उपराग, भाषा, विभाषा, अंतरभाषा क्रियांग आदि राग वर्गो का वर्णन किया गया है। राग वर्णन में नान्यदेव ने राग के ग्रह, अंश, न्यास और कही-कही विदारी तथा अनुवादी स्वरों के बारे में बताया है।[6]

इस प्रकार राग भारतीय संगीत की वस्तु है यह वह रंजक धुन है जिससे स्वर-संवाद सम्बंध से परस्पर सम्बंद्ध रहते है। राग के लक्षणों से सम्मल्लित राग विशिष्ट प्रभाव अथवा वातावरण उत्पन्न करने में समर्थ होते है, जिससे आनन्द की सृष्टी होती है नाद का यही साक्षात्कार संगीत की उद्धत व वास्तविक रसानुभूति है।

सन्दर्भ ग्रथ सूची

1. भातखण्डे, वि.एन. (1964) भतखण्डे संगीत शास्त्र पृ. सं. 40
2. पाठक (डॉ.) एस. (1989) हिन्दुस्तानी संगीत में राग की उत्पत्ति व विकास, पृथम संस्करण पृ. सं. 257
3. बनर्जी (डॉ.) जी. (1999) राग शास्त्र भाग एक पृ. सं. 132
4. चौधरी (डा.) वी.के. (1982) राग व्याकरण पृ.सं. 454
5. एस.बी. (1955) राग निधि भाग -2 पृ. सं. 201

6. बृहस्पति (डा.) एस.बी. (2004) संगीत चिन्तन प्रथम खण्ड पृ.सं. 117
7. राजन आर. (1996) हिन्दुस्तानी संगीत में राग लक्षण पृ.सं. 44-50
8. यमन के.ए. (2008) संगीम रतनावली पृ.सं. 317

UGC Journal No. (Old) 2138
Peer-Reviewed Research Journal
Impact Factor 6.375, ISSN 0975-4083
Vol.- 28, Hindi Edition, Year-14, March 2025

तत् वाद्यों का परिवर्तित स्वरूप : एक अध्ययन

• राधा यादव,
•• निष्ठा शर्मा

सारांश- मानव हृदय में उदित भावों की अभिव्यक्ति संगीत द्वारा होती है। संगीत का आधार नाद है। संगीत रचना में अभिव्यक्ति विचार एवं भाव केवल शब्दों के माध्यम से ही नहीं वरन् स्वयं के माध्यम से नादात्मक अभिव्यक्ति पाते है। उसी प्रकार वाद्यों में किसी भी प्रकार से भावात्मक शब्दों का प्रयोग नहीं होता, इसमें नादात्मक ध्वनि के माध्यम से भाव अभिव्यक्ति करने में सक्षम होते है। वाद्यों को चार प्रकार के अंतर्गत विभाजित किया गया है जिनमें से प्राचीन तत्वों के आकार व वादन शैली में परिवर्तन हुए, जिसके फलस्वरुप नवीन तत् वाद्यों का स्वरूप निखरकर सामने आया। जिस प्रकार परिवर्तनशील व्यक्ति समय वह स्थिति के अनुसार स्वयं को बदलकर उन्नति के सोपान को प्राप्त करता है। उसी प्रकार प्राचीन काल के वाद्यों में शनैः शनैः परिवर्तन हुए तथा उनका रूप सामने आया है । परिवर्तन ही संसार का नियम है। कल के प्रवाह के साथ वर्तमान में प्रचलित वाद्य प्राचीन वाद्यों के ही संशोधित रूप हैं। उदाहरणस्वरूप - सरोद वाद्य रबाब का , सुरबहार वाद्य कच्छपी वीणा का, संतूर वाद्य शततन्त्री वीणा का, स्वरमण्डल वाद्य मत्तकोकिला वीणा का, सितार वाद्य त्रितंत्री वीणा का परिवर्तित स्वरूप है।

मुख्य शब्द- परिष्कृत, प्रवाहित, वर्गीकरण, तत् वाद्य, परिवर्तन।

भूमिका- संगीत रूपी कला वह ज्योति है, जो आत्मा का परमात्मा से संपर्क कराती है। मानव के अंतकरण में स्थित भावनाओं को व्यक्त करने का सशक्त माध्यम है, संगीत। सृष्टि के प्रत्येक तत्व में संगीत की धारा सदियों से प्रवाहित हो रही है। संपूर्ण ब्रह्मांड नादमय व गतिमय है। संगीत का आधार स्तंभ स्वर व ताल है। स्वर व ताल नाद के ही परिष्त रूप हैं। संगीत के अंतर्गत गायन, वादन व नृत्य में नाद के इन्हीं दोनों तत्वों के दर्शन होते हैं। अतः संगीत का भौतिक आधार नाद है। जिसकी उत्पत्ति मानव कंठ व वाद्यों के माध्यम से ही संभव है।

• शोधार्थी, संगीत विभाग, महात्मा गांधी, बालिका विद्यालय (पी. जी.) कॉलेज फिरोजाबाद, डॉ. भीमराव आंबेडकर विश्वविद्यालय, आगरा
•• निर्देशिका, संगीत विभाग, महात्मा गांधी बालिका विद्यालय (पी. जी.) कॉलेज फिरोजाबाद डॉ. भीमराव आंबेडकर विश्वविद्यालय, आगरा।

प्रकृति की सभी ध्वनियाँ मौलिक रूप से संगीतपयोगी नहीं होती। जिससे संगीतपयोगी ध्वनि की उत्पत्ति हो सके उसे वाद्य यंत्र कहा जा सकता है। संगीत में वाद्यों का महत्वपूर्ण स्थान है। पौराणिक आख्यानों में भी श्री कृष्ण को वंशीधर, भगवान शिव को डमरू धारण करने वाला व माँ सरस्वती को वीणा वादिनी कहा गया है।

इस प्रकार हिंदू धर्म में देवी देवता मे सदा ही किसी न किसी वाद्य यंत्र का स्वरूप प्राप्त होता है। अत: वाद्यों का इतिहास बहुत पुराना है। वैदिक काल से लेकर रामायण, महाभारत, जैन काल, बौद्ध इत्यादि कालों में विभिन्न वाद्यों भारतीयों के उल्लेख प्राप्त होते हैं।

वाद्यों का वर्गीकरण- वाद्यों की बनावट वादन विधि के आधार पर वाद्यों को चार भागों में बांटा गया है तत्, अवनद्ध, सुषिर, घन। इस वर्गीकरण को चतुर्भुज वर्गीकरण भी कहा जाता है। तत्व वाद्यों के अन्तर्गत तार से बजाए जाने वाले वाद्य, अवनद्ध वाद्य के अन्तर्गत जो चमड़े से बने होते, सुषिर वाद्यों के अन्तर्गत जो मुंह से फूंक मारकर या वायु से प्रवेश से बजाएं जाते है। इसी प्रकार घन वाद्य के अन्तर्गत वे वाद्य जो लोहे के बने होते है। इस प्रकार वाद्यों की बनावट स्वर उत्पन्न के आधार पर वाद्यों का वर्गीकरण प्राप्त होता है।

वाद्य वर्गीकरण व वादन क्रिया के आधार पर तत् वाद्यों का वर्गीकरण

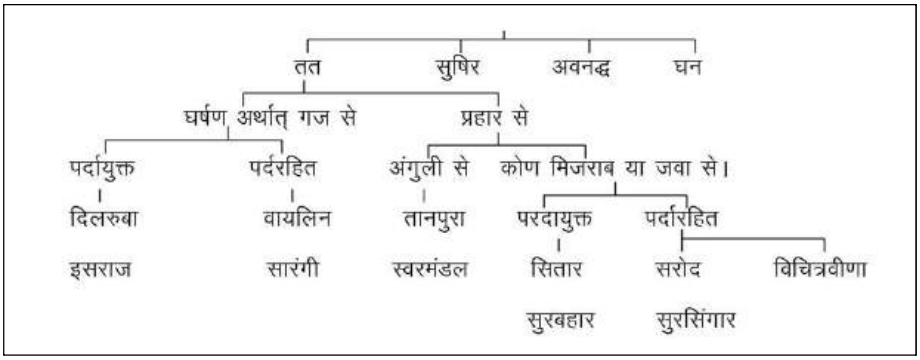

प्राचीन काल में तत् वाद्यों का स्वरूप धनुषाकार के रूप में मिलता है। सभ्यता के विकास के साथ-साथ तन्त्र वाद्यों के स्वरूप व बनावट में परिवर्तन आए। आरम्भ में तत् वाद्यों को उनमें जन्मकाल से गान व सहयोगी के रूप में प्रयुक्त किया गया। मध्यकाल तक अनेक वाद्यों का सृजन हुआ परंतु वे मात्र संगीत का ही माध्यम रहे।

वस्तुत: प्रारम्भ में तत् वाद्यों का जन्म नैसर्गिक की ध्वनियों के अनुकरण व अन्य चेष्टा के परिणामस्वरुप हुआ था। जब ये वाद्य प्रयोग किए जाने लगे तो इन्हीं वाद्यों के आधार पर नवीन वाद्यों का निर्माण विकास समय अनुसार होता रहा। काल परिवर्तन अनुसार तत् वाद्यों के स्वरूप में परिवर्तन हुआ जिनसे कुछ नये वाद्य प्रकाश में आऐ। उदाहरण स्वरूप प्राचीन वीणा कच्छपी वीणा से सुरबहार वाद्य, रबाब के परिवर्तन स्वरूप सरोद वाद्य, मत्तकोकिला के आधार पर स्वमण्डल वाद्य, त्रितंत्री वीणा से सितार वाद्य इत्यादि वाद्यों का सृजन हुआ।

अत: प्राचीन काल में अनेक तत् वाद्य प्रचलित थे आजकल प्रचलित अधिकांश वाद्यों का विकास इन्हीं प्राचीन वाद्यों के आधार पर हुआ है। वर्तमान में प्रचलित सरोद,

सुरबहार, सितार , स्वरमंडल, सन्तूर इत्यादि प्राचीन वीणाओ के संशोधित और परिवर्तित रूप ही है।

इस प्रकार कह सकते हैं, कि नवीन वाद्यों का निर्माण जब हुआ जब किसी वाद्य को कुछ समय बजाया गया तो उसके कुछ दोष दृष्टिगत हुए। इन दोषो को दूर करने के लिए उनके स्वरूप में संशोधन व परिवर्तन किए गए और इस प्रकार नवीन वाद्य प्रकाश में आए। इन कारणों के अतिरिक्त एक कारण और भी है। मानव मस्तिष्क सतत् गतिशील रहा है। जिसके कारण वह सदैव कुछ ना कुछ नवीनता खोजता रहा है। मानव की इसी प्रवृत्ति ने तत् वाद्यों की नवीन उत्पत्ति एवं विकास में योगदान दिया है।

तत् वाद्यों का परिवर्तित स्वरूप

कच्छपी वीणा का परिवर्तित रूप सुरबहार

कच्छपी वीणा- कच्छपी वीणा का सर्वप्रथम उल्लेख नाटच शास्त्र में हुआ। महर्षि भरत तत् वाद्यों के अंग (मुख्य) व प्रत्यंग (सहायक) वाद्यों में विवेचना में कच्छपी वीणा को प्रत्यंग कहा है। नाटच शास्त्र के टीकाकार अभिनव गुप्त ने इस वीणा को प्रसिद्ध वीणा बताया है, तथा अन्य नाम कुर्मी व सैरन्धी नाम बताया है। गजपति नारायण ने कच्छपी वीणा को रूपवती वीणा की संज्ञा दी।[1] उन्होंने कच्छपी वीणा का वर्णन किया । तद्नुसार इस वीणा की लंबाई 18 अंगुल व चौड़ाई 14 अंगुल होता है। इसकी पीठ कछुए की तरह ऊपर नीचे उठी रहती है। दण्ड अंगूठा का जो मूल में एक अंगूल मोटा व आगे पतला होता है। दण्ड की लंबाई 13 अंगुल होती है। इसमें दो तार होते है। इसमें 7 अंगुल लंबा 6 अंगुल ऊंचा सारीग्रह है, पांच मत्तकोकिला से लगी होती हैं, जो सारिक कहलाती है। दोनों हाथों की उंगलियो से इसका वादन होता है।

सुरबहार- उत्तर मध्यकालीन वीणा सुरबहार वीणा 19 वी शताब्दी का वाद्य है। इसके अविष्कार में विषय के कई मतभेद हैं। कुछ विद्वानजन उमराव खां को तो कुछ गुलाम मोहम्मद खां तथा कुछ ने साहबदाद को अविष्कारक मानते है।[2] सुरबहार कच्छपी वीणा का विकसित रूप है, किन्तु सुरबहार की बनावट सितार के सदृश लगती है। सुरबहार का आकार में सितार से बड़ा होता है। इसके तार सितार वाद्य की अपेक्षा मोटे होते है। इसमें 7 से 8 तार होते है, तरब के तार 11 से 13 तक होते है। इसमें पर्दे अचल होते है। तुम्बा चपटा व कछुए के आकार में होता है। इसे प्राय: दो मिजराब से बजाया जाता है। सुरबहार की ध्वनि गम्भीर होने के कारण कम प्रचलित है। इसके आलाप जोड़ अलाप धुपद अंग से बजाया जाता है बीनकार इसे पखावज के साथ बजाते हैं।

रबाब वाद्य का परिवर्तित रूप सरोद

रबाब- रबाब वाद्य का वर्णन मध्यकालीन ग्रन्थों में उपलब्ध होता है। ऐसा उल्लेखित है कि तानसेन के वंशजों ने रबाब के जिस रूप को अपनाया वह चित्रा वीणा का परम्परानुरूप विकसित रूप है। रबाब की इसी भारतीयता को अहाबेल ने स्वीकार किया है। समयनुसार इस वाद्य के दो रूप सामने आये सरोद व सुरसिंगार। रबाब वाद्य को सोनिया घराने की समृद्धता मिली है। इस वाद्य की संगति अधिकांश भक्ति परक गीतों के साथ की जाती थी। रबाब वाद्य लम्बे व खोखले डांड से बनाया जाता है। इसके नीचे की ओर एक तुम्बा होता है जो डांड का ही एक हिस्सा होता है, तूम्बे का ऊपरी भाग भेड़ की

खाल से मढा रहता है, जिसे मांद कहा जाता है। इस वाद्य में 3 से 6 तांत्रियाँ होती हैं। तांत के तार से बनी होती है। इसे बजाने के लिए हाथी के दांत का तिकौना का टुकड़ा जिसे जवा कहते हैं।[3]

सरोद- वर्तमान में सरोद वाद्य तन्त्री वादन में लोकप्रिय वाद्य है। वास्तव में सरोद शब्द की उत्पत्ति अरबी के शहरूद अथवा सारोद शब्द से हुई है, जिसका अर्थ संगीत है। डॉ. पराजये सरोद की वादन शैली के विषय में लिखते हैं– इसको दो शैलियों से बजाया जाता है। रबाब व सुरसिंगार की शैली तानसेन के बासत खां के शिष्य परम्परा में रबाब की शैली प्रचलित रही। रामपुर में उस्ताद वजीर खां की परम्परा में सुरसिंगार की शैली अपनाई। वर्तमान में इस वाद्य के दो स्वरूप प्रचलित है, छह: खूंटियों वाला सरोद व आठ खूटियों वाला। सरोद के ऊपरी भाग में खूंटियाँ लगाई जाती है, मध्य भाग में इस्पात का पत्र लगाया जाता है। जहां से वादन क्रिया की जाती है। सरोद का नीचला भाग तुम्बे पर चमड़ा मढा होता है और इसके ऊपर घोड़ी लगाई जाती है। इसमें 12 तरब के तार होते हैं। ये तार मुख्य तार के नीचे लगे होते हैं। यह सारिकारहित तन्त्र वाद्य है। जिसे कोण से बजाया जाता है।[4]

मत्तकोकिला का परिवर्तित रूप स्वरमण्डल

मत्तकोकिला- मत्तकोकिला वाद्य की ध्वनि मधुर व रम्य होती है। मत्तकोकिला दो शब्दों से मिलकर बना जिसका अर्थ है।जिसकी आवाज कोयल जैसी हो। इस वाद्य में 21 तन्त्रीयाँ होती है। जिसे नारद की वीणा कहा जाता है। इस वीणा में तीन सप्तक व कोण से बजाने का वर्णन प्राप्त होता है। कुछ विद्वान जन इसे महती वीणा समान बताते है। महाराणा कुम्भा ने मत्तकोकिला को स्वरमण्डल कहा है। इस सन्दर्भ में उल्लेखित है– मतंग ,कालिदास व नान्यदेव द्वारा वर्णित महती वीणा आगे चलकर संगीत रत्नाकर में मत्तकोकिला कही जाने लगी।[5]

स्वरमण्डल- स्वरमण्डल मध्यकालीन वाद्य है। यह अधिक वर्षों बाद प्रचार में आया। पण्डित अहोबल के अनुसार स्वरमंडल स्वरूप मुक्त तन्त्री वीणा है। इसकी आकृति पंच कोणात्मक होती है। फकीरूल्लाह के राग दर्पण में स्वरमंडल के विषय में वर्णन किया है। जो इस प्रकार है एक बाजा स्वरमंडल कहलाता है, जो कि ईरान वाद्य कानून वाद्य से मिलता जुलता है। संगीत रत्नाकर के टीकाकार कल्लिनाथ के अनुसार– लोक में मतकोकिला वीणा को ही स्वरमण्डल कहा जाता है। स्वरमण्डल वाद्य में 21 से 29 तन्त्रीयाँ होती है। जिसे बजाने के लिए अंगूली नाखून व मिजराब की आवश्यकता होती है। आजकल स्वर का प्रयोग गायन की संगति के लिए किया जाता है। इससे पूर्व स्वतन्त्र वाद्य के रूप में प्रयोग होता है। इसमें बायीं ओर कीलनुमा खूंटियाँ होती है। जिन्हें हथोड़े के आकार की चाबी से घुमाया जाता है।[6]

शततन्त्री वीणा का परिवर्तित रूप संतूर

शततन्त्री- शततन्त्री वीणा प्राचीन वीणा में से एक है। ऋग्वेद में शततन्त्री वीणा का उल्लेख किया गया है। शततन्त्री सौ तार वाली व आकार धनुषाकार रूप में वर्णित है। मध्य एशिया व फारसी आक्रमणों में इस वाद्य को खो दिया ,जिसे आज कई लोग संतूर वाद्य का श्रेय विदेशी प्रभावों को देते है।

सन्तूर- 20 वीं शताब्दी के उत्तरार्ध में सन्तूर वाद्य का आगमन हुआ। सन्तूर दो शब्दों से मिलकर बना है। ईरानी के सन+तूर जिसका अर्थ है, सौ तारों वाली वीणा वैदिक काल में शततन्त्री युक्त वाण वीणा प्रचलित थी। सन्तूर वादक शिवकुमार शर्मा के अनुसार सन्तूर वाद्य शततन्त्री वीणा का ही रूप है। आज भी कश्मीर वाद्य सौ तार होते हैं। जिन्होंने इस बात का दृढ़ता के साथ खण्डन किया है, कि यह वाद्य ईरान से आया है, यदि यह वाद्य ईरान से आया होता तो आज की तरह सौ तार लगाए जाते, किन्तु ईरान में प्रचलित सन्तूर में केवल 72 तारों का प्रयोग किया जाता है। सन्तूर का आकार एक चौकोर पेटी की तरह होता है। एक भुजा लम्बाई में छोटा व तीन भुजा की लम्बाई समान होती है। इसमें सौ तारों की संख्या व पच्चीस घुड़च होते हैं। प्रत्येक घुड़च में चार-चार तन्त्रियाँ लगाई जाती हैं। चार-चार तन्त्रियाँ एक ही स्वर में मिलायें जाने के कारण इस वाद्य में जोड झाला, लयकारी आदि बजाते समय झनकार की खासियत होती है। इसे सोलो रूप में बजाया जाता है। इसे दो डंडियों से बजाया जाता है।[7]

त्रितंत्री वाद्य का परिवर्तित स्वरूप सितार

त्रितंत्री- त्रितंत्री वीणा मध्ययुगीन प्रचलित तंत्रीय वीणाओं में से एक है। त्रितंत्री वीणा को विषय में कल्लिनाथ ने उल्लेखित किया है कि त्रितंत्री वीणा को लोक में जंत्र नाम से जाना जाता है। कुंभ ने नकुल वीणा के साथ वर्णन किया है- त्रितंत्री में तीन तार होते है, दो मुट्ठी का लंबा स्थान छोड़कर तुंबा लगाना चाहिए इसका वादन कोण द्वारा होता है। त्रितंत्री का दण्ड ग्यारह मुठ्ठी का होता है। डॉ. लालमणि मिश्र के मतानुसार कि षारंगदेव के समय तक जो वीणा त्रितंत्री वीणा के नाम से प्रचलित थी आगे चलकर सितार रूप में प्रचलित हुई।[8]

सितार वाद्य- सितार वाद्य अपनी मधुरता व झंकार के कारण लोकप्रिय वाद्य है। सितार की उत्पत्ति के विषय में अनेक भ्रांतियां व धारणाएँ है। कुछ विद्वानों ने सितार को ईरानी व पर्शियन वाद्य है कुछ विद्वानों अमीर खुसरो को सितार वाद्य को सितार वाद्य का ईजाद मानते है। सितार वाद्य को त्रितंत्री वीणा का परिष्कृत रूप है। रविंद्रनाथ टैगोर ने यंत्र दीपिका में लिखा है कि सितार का प्राचीन नाम त्रितंत्री है। त्रितंत्री का अर्थ संस्कृत में तीन तारों वाला वाद्य होता है। इसी प्रकार संगीत रत्नाकर में त्रितंत्री वीणा का वर्णन किया है। ओमकार ठाकुर ने महाराष्ट्र में प्रचलित सितार को सतार कहने की प्रथा का आश्रय लेकर इस शब्द की व्युत्पत्ति भी कहा था प्रथा का प्राचीन आश्रय लेकर इस शब्द की उत्पत्ति सप्ततंत्री वीणा से माना है। इस प्रकार समय परिवर्तन के अनुसार त्रितंत्री तारों को वृद्धि करने पर सहतार से सितार वाद्य रूप में प्रचलित हुआ है।[9]

सितार का तुंबा पनस की लकड़ी से या कद्दू से बनाया जाता है। इसमें सात तंत्रियाँ होती हैं। मुख्य तारों के नीचे 12 से 20 तांत्रियां लगी होती है, जिन्हें तरब के तार कहा जाता है। सितार के दंड पर 18 से 20 पीतल की सारिकाएं होती है। इसमें सात तार होते हैं जिन्हें प्रथम बाज का तार कहलाता है। वर्तमान में सितार की दो शैलियां प्रचलित है- मसीतखानी व रजाखानी।

निष्कर्ष- समय के प्रवाह के साथ जिस प्रकार सभ्यता का विकास होता गया, उसी अनुरूप स्वर संक्रमो एवं स्वर प्रबंधों का प्रयोग मनुष्य अपने कंठ रूपी वाद्य से करता

गया उसके पश्चात् उसी की नकल कर तंत्र वाद्य व अन्य वाद्यों का निर्माण हुआ। मानव मस्तिष्क की सतत् गतिशीलता प्रमुख गुण है, जिसके कारण वह सदा कुछ न कुछ नवीन खोजता रहता है, जो तथा प्रयोग करता रहता है। इसी प्रवृत्ति ने वाद्यों को एक नवीन रूप के विकास में योगदान दिया है।

संदर्भ सूची

1- मिश्र, एल. (2005) 'भारतीय संगीत वाद्य' भारतीय ज्ञान पीठ, नई दिल्ली , पृष्ठ स.- 86
2- गुप्ता, ए. (2013) 'तंत्री वाद्यों का ऐतिहासिक विवेचन' राधा पब्लिकेशंस ,नई दिल्ली, पृष्ठ स.-89-90
3- शर्मा, ए. (2012) 'तंत्र वाद्यों की जननी वीणा' कनिष्क पब्लिशर्स, नई दिल्ली, पृष्ठ स.-129
4- शर्मा, एस. (2013) 'प्रतिष्ठित सितार एवं सरोद वादकों की साधना और संघर्ष' कनिष्क पब्लिशर्स, नई दिल्ली ,पृष्ठ स.-84
5- सिंह , एस. (2009) उत्तर भारतीय संगीत में तंत्र वाद्यों का स्थान व उपयोगिता कनिष्क पब्लिशर्स, नई दिल्ली पृष्ठ स.-49 -50
6- वही, पृष्ठ स.- 87
7- शर्मा, ए. (2012) तंत्र वाद्यों की जननी वीणा, कनिष्क पब्लिशर्स , नई दिल्ली, पृष्ठ स.- 136
8- गुप्ता, ए. (2013) 'तंत्री वाद्यों का ऐतिहासिक विवेचन' राधा पब्लिकेशंस ,नई दिल्ली, पृष्ठ स.-118
9- वही पृष्ठ स. -86

UGC Journal No. (Old) 2138
Peer-Reviewed Research Journal
Impact Factor 6.375, ISSN 0975-4083
Vol.- 28, Hindi Edition, Year-14, March 2025

गंगा-गंडक दोआब में जीवन की गुणवत्ता: एक सूक्ष्म स्तरीय विश्लेषण

• गणेश कुमार शर्मा

सारांश- प्रस्तुत शोध पत्र गंगा-गंडक दोआब में जीवन की गुणवत्ता का सूक्ष्म स्तरीय विश्लेषण पर केन्द्रित है। यहाँ जनसंख्या का इतिहास अति प्राचीन है। प्राक्-वैदिक काल से ही (10,000 वर्ष पूर्व) यह एक सुविकसित संस्कृति एवं सभ्यता का क्षेत्र रहा है। जनसंख्या विकास की भिन्न-भिन्न अवस्थाओं से गुजरने के क्रम में इसने अनेक परिवर्तन देखे हैं। विशेषकर स्वतंत्रता प्राप्ति कि पश्चात् कृषि के क्षेत्र में किये जाने वाले विकास तथा चिकित्सा विज्ञान की चमत्कारपूर्ण उपलब्धियों के कारण यहाँ कई सारे सामाजिक एवं आर्थिक परिवर्तन हुये हैं। उदाहरणार्थ भूमि-मानव अनुपात का बढ़ता असंतुलन एवं जैवमंडल का प्रदूषण उल्लेखनीय प्रघटन है। यद्यपि कि इस अवधि में जीवन की गुणवत्ता में ज्वलन्त रूप से प्रगति भी हुयी है। कृषि उत्पादन में वृद्धि एक निश्चित सीमा तक ही संभव है, जबकि जनसंख्या की वृद्धि अनियंत्रित रूप में अबाध गति से होती है। ऐसी दशा में जीवन की उपलब्ध गुणवत्ता को बनाये रखना एक संघर्षपूर्ण कार्य है। अतएव जीवन की गुणवत्ता पर जनसंख्या की वृद्धि द्वारा पड़ने वाला प्रभाव विद्यमान है। वर्तमान अध्ययन प्राथमिक आँकड़ों पर आधारित है, जिसका संग्रह प्रश्नावली विधि द्वारा (2025) में किया गया है। प्रतिदर्श अध्ययन हेतु गाँवों का चयन स्तरीकृत सउद्देशीय प्रतिदर्श विधि द्वारा किया गया है, तत्पश्चात् जीवन की गुणवत्ता हेतु संकेतकों का चयन कर सामूहिक अवस्थिति लब्धांक (Composite Location Quotient) तकनीक द्वारा जीवन की गुणवत्ता निर्धारण कर सूक्ष्म स्तरीय विश्लेषण करने का प्रयास किया गया है।

मुख्य शब्द- जीवन की गुणवत्ता, प्रतिदर्श, प्रश्नावली, स्तरीकृत सउद्देशी प्रतिदर्श एवं सामूहिक अवस्थिति लब्धांक

क्षेत्रीय विन्यास- गंगा–गंडक दोआब (वर्तमान सारण जिला) 2664.76 वर्ग किमी. के क्षेत्र में $25^0$36' से $26^0$13' उत्तरी अक्षांश एवं $84^0$34' से 85015' पूर्वी देशान्तर के बीच स्थित है। इसकी दक्षिणी सीमा गंगा एवं घाघरा नदियाँ संयुक्त रूप से बनती हैं जबकि उत्तरी सीमा का निर्धारण गंडक नदी द्वारा होता है। इस त्रिकोणीय आकार की पश्चिमी सीमा सिवान एवं गोपालगंज जिला है जबकि शीर्ष (Apex) पूर्व में गंगा एवं गंडक नदियों

• असिस्टेन्ट प्रोफेसर, भूगोल विभाग, आर.डी.एस. कॉलेज, बी.आर.ए.बी.यू., मुजफ्फरपुर

के संगम बिन्दु से निर्मित है। यहाँ पटना एवं वैशाली जिलों की सीमायें भी मिलती हैं।

संकल्पना- आधुनिकोत्तर भूगोल में जन-कल्याण की अवधारणा के अभ्युदय भूगोलविदों का ध्यान समाज की उन समस्याओं की ओर आकर्षित किया है जो न केवल पिछड़ेपन के कारण है, बल्कि सामाजिक-आर्थिक रूपान्तरण की गति को भी धीमा किये रखा है, जीवन की गुणवत्ता के स्थानिक प्रारूप तथा इसमें आनेवाले कालिक परिवर्तन का अध्ययन सर्वांगीण विकासे लिये अपेक्षित हैं प्रारंभिक अध्ययनों में किसी क्षेत्र की सम्पूर्ण जनसंख्या के जीवन की गुणवत्ता पर बल दिया गया था जबकि अब समाज के निर्धन एवं पिछड़े तबकों के जीवन की गुणवत्ता पर अध्ययन का केन्द्र-बिन्दू खिसकता जा रहा है। विशेषकर महिलाओं के जीवन की गुणवत्ता का विचार और भी अधिक घनीभूत हुआ है बल्कि लैंगिक आधार पर उपेक्षा का सामना भी समाज में करना पड़ता है। (कामिनी, कुमारी 2011)[1]

जीवन की गुणवत्ता एक समग्र अवधारणा है जिसमें मानव जीवन के आर्थिक, सामाजिक, जनसांख्यिकीय और सांस्कृतिक आयाम शामिल है। जीवन की गुणवत्ता में मुख्यत: आवास, स्वास्थय या सामाजिक संबंध जैसे जीवन के विभिन्न क्षेत्रों को शामिल किया जाना चाहिए (वाल्फगैंग और हंस, 1987)[2]। जीवन की गुणवत्ता को मानवीय आवश्यकताओं, जैविक आवश्यकताओं, विशेष आवश्यकताओं की संतुष्टि के रूप में परिभाषित किया जा सकता है।

मानव जीवन की गुणवत्ता का अध्ययन सामाजिक प्रतिमान (स्मिथ, 1973[3], 1977[4], 1983[5]) का परिणाम है। संयुक्त राष्ट्र विकास कार्यक्रम (यू.एन. डी.पी.) ने जीवन की गुणवत्ता के स्थान पर मानव विकास शब्द का उपयोग मानव विकास समाज के केवल एक हिस्से के लिए नहीं बल्कि सभी लोग के लिए विकल्पों को बढ़ाने की एक प्रक्रिया है। विकास का उद्देश्य सभी मानवीय विकल्पों को बढ़ाना है न कि केवल आय को।

जीवन की गुणवत्ता की संरचना तथा स्थानिक-प्रारूप का ज्ञान सामाजिक-आर्थिक दशाओं के विश्लेषण बिना संभव नहीं हैं विशेष कर सामाजिक समुदायों को सामाजिक-भौगोलिक अभिव्यक्ति प्रदान करने के उद्देश्य से यह और भी उपादेय है। विगत् तीन दशकों में समाज-कल्याण, सभी अनुशासनों का अध्ययनार्थ केन्द्र बिन्दु रहा है। विदित हो कि 1960-70 के दशक में अमेरिकी भूगोलवेताओं के बीच समाज कल्याण के अध्ययन की बल्कि आँधी ही आ गयी थी। अर्न्तराष्ट्रीय भौगोलिक संघ (आई.जी.यू.) में भी योजना, कल्याण तथा विकास पर विशेष आयोगों की स्थापना की। भारत में एल.के.सेन (1975)[6] एल.एस. भट (1976)[7], जगदीश सिंह (1979)[8] एवं आर.वी.पी. सिहं (1985)[9] ने भी इस क्षेत्र में भी योगदान का प्रयास किया है। उपरोक्त संकल्पनाओं के अध्ययन से स्पष्ट होता है कि अध्ययन क्षेत्र में सभी वर्गों में जीवन की गुणवत्ता समान रूप में विधमान नहीं है। अतएव वर्तमान अध्ययन क्षेत्र के समान वर्ग, पिछड़ा, अति-पिछड़ा एवं अनु. जाति के जीवन की गुणवत्ता का सूक्ष्म स्तरीय विश्लेषण करने का प्रयास किया गया है।

विधि-तंत्र- गंगा-गंडक दोआब में जीवन की गुणवत्ता का सूक्ष्म स्तरीय विश्लेषण में

प्राथमिक आँकड़े (2025) का उपयोग किया गया है। प्रतिदर्श अध्ययन हेतु गाँवों का चयन स्तरीकृत सउद्देश्यी प्रतिदर्श विधि द्वारा किया गया है जिसका आधार जनसंख्या संसाधन संभाग से सीमांकन से प्राप्त है। जो चार संभागों–(1) शहरी सेवाकेन्द्र रहित पिछड़ापन बेला (दरियापुर), (2) शहरी सेवा केन्द्र रहित कम विकसित से धमसर (दरियापुर), (3) शहरी सेवा केन्द्र युक्त सामान्य रूप से विकसित, चन्दना (मड़होरा), (4) शहरी सेवा केन्द्र युक्त सामान्य रूप से विकसित से फकुली (छपरा) ग्राम प्रतिदर्श रूप में इस अध्ययन में चयनित है। ग्रामों के चयन में उनमें निवास करनेवाली जनसंख्या के आकार को ध्यान मं रखा गया है। साथ ही साथ सामाजिक आर्थिक दृष्टि से वैसे ग्रामों का चयन हुआ है जहाँ भिन्न–भिन्न जाति एवं भिन्न–भिन्न आर्थिक दशाओं वाली जनसंख्या निवास करती है।

प्रतिदर्श गाँव से 40 प्रतिशत परिवारों का चयन किया गया है, तत्पश्चात् चयनित चार प्रतिदर्श ग्रामों के सर्वेक्षित 60 परिवारों से जीवन की गुणवत्ता हेतु संकेतकों का चयन किया गया है जो निम्न हैं –

क्रम सं.	संकेतक	व्यहत चिन्हमान (मान)
1	2	3
1.	परिवार का प्रकार	X_1
2.	मासिक आमदनी	X_2
3.	गृह की दशाएँ	X_3
4.	साक्षरता	X_4
5.	महिला साक्षरता	X_5
6.	पोषण	X_6
7.	जीवन की प्रत्याश्य	X_7
8.	मर्लता	X_8
9.	मनोरंजन की सुविधा	X_9
10.	संचार के साधन	X_{10}
11.	परिवहन के साधन	X_{11}
12.	सरकारी सेवाओं में स्थिति	X_{12}
13.	आदत	X_{13}
14.	शैक्षणिक योग्यता	X_{14}
15.	श्रम शक्ति में महिला की भागीदारी	X_{15}

यद्यपि यहाँ जीवन की गुणवत्ता में अपनायी गयी विधि–तंत्र सामूहिक अवस्थिति लब्धांक

परिकलन के प्रथम चरण में प्रत्येक सवेक्षित परिवार के प्रत्येक संकेतक के विरूद्ध भारित मूल्यों का योग $(\sum)$ प्राप्त किया गया है तत्पश्चात् उसे परिवारों की कुल संख्या से विभाजित कर सामूहिक अवस्थिति लब्धांक निकाला गया है जो निम्न सूत्र से प्राप्त है।

$$X \quad \frac{X}{N}$$

जिसमें X सामूहिक माध्य का प्रतिनिधित्व करता है; X वास्तविक भारित मूल्य का कुल योग तथा N परिवारों की कुल संख्या तत्पश्चात् माध्य से विभाजित कर

पृथक-पृथक सामूहिक अवस्थिति लब्धांक भी निम्नांकित सूत्र से प्राप्त किया गया है।

$$C.L.Q. = \frac{X}{X^-}$$

C.L.Q. = सामूहिक अवस्थिति लब्धांक, X= वास्तविक भारित मूल्यों का कुल योग = माध्य का प्रतिनिधित्व करता है।

तालिका-1
जीवन की गुणवतत्ता का स्तर

क्र. सं.	विचलन प्रसार	संभाग	संभाग आधारित परिवारों की कुल संख्या	प्रतिशत	प्रतिदर्श आधारित परिवारों की क्रम संख्या
1.	> 1.25	उच्च जीवन की गुणवत्ता	15	25.00	1, 2, 3, 4, 5, 17, 19, 20, 31, 32, 33, 35, 37, 42, 49
2.	1.00—1.25	सामान्य जीवन की गुणवत्ता	18	30	6, 7, 8, 9, 10, 16, 18, 21, 22, 23, 24, 34, 36, 38, 39, 40, 47, 48
3.	0.75—1.00	निम्न जीवन की गुणवत्ता	11	18.33	11, 13, 25, 50, 51, 52, 53, 54, 55, 56, 59
4.	< 0.75	अति निम्न जीवन की गुणवत्ता	16	26.67	12, 14, 15, 26, 27, 28, 29, 30, 41, 42, 43, 44, 45, 52, 58, 60

स्रोत :- व्यक्तिगत सर्वेक्षण, 2025

विश्लेषण एवं व्याख्या- यहाँ घटते क्रम में विचलनों के कोटि निर्धारण के अनुसार >1.20 से उच्चतर लब्धंक पर उच्च जीवन की गुणवत्ता संभाग (1, 2, 3, 4, 5, 17, 19, 20, 31, 32, 33, 35, 37, 46 एवं 49), 1.00-1.25 के प्रसार में सामान्य जीवन की गुणवत्ता संभाग (6, 7, 8, 9, 10, 16, 18, 21, 22, 23, 24, 34, 36, 38, 39, 40, 47 एवं 48), 0.75-1.00 के प्रसार में निम्न जीवन की गुणवत्ता संभाग (11, 13, 25, 59, 51, 52, 53, 54, 55, 56 एवं 59) और 0.75 अति निम्न जीवन की गुणवत्ता संभाग (12, 14, 15, 26, 27, 28, 29, 30, 41, 42, 43, 44, 45, 52, 58 एवं 60) निर्धारित है। (तालिका-1 एवं तालिका-2)। संभागों पर टिप्पणियाँ निम्नांकित हैं :-

1.उच्च जीवन की गुणवत्ता संभाग (>1.25)- उच्च जीवन की गुणवत्ता संभाग में प्रतिदर्श ग्राम के कुल परिवारों की संख्या में 15 (25.00 प्रतिशत), आते हैं। इसमें अगर प्रतिदर्श ग्राम फाकुली 5 (33.33 प्रतिशत), चान्दना 3 (20.00 प्रतिशत), धमसर 5 (33.33 प्रतिशत), बेला 2 (13.33 प्रतिशत), परिगणित किया गया है। तालिका 2+1 द्रष्टव्य है कि जिन परिवारों की मासिक आमदनी दो लाख रूपये से अधिक है तथा जिनकी शिक्षा का स्तर स्नातकोत्तर है और चयनित परिवारों में राजपत्रित पदों पर बैठे इनके परिजन जीवन के रहन-सहन के उच्च स्तर का प्रदर्शन करते हैं। इन परिवारों के परिजनों के जीवन की प्रत्याशा अपेक्षाकृत अधिक लम्बी है और हल के 10 वर्ष में इनमें मृत्यु का कोई भी प्रघटन प्रतिवेदित नहीं है।

2. सामान्य गुणवत्ता संभाग (1.00-1.25)- तालिका 2 से संभाग में जीवन की गुणवत्ता का स्तर प्रदर्शित होता है विधिगत प्रक्रिया के अनुसार 1.00-1.25 के प्रसार द्वारा सामान्य गुणवत्ता का निर्धारण करता हैं। यहाँ इस संभाग में कुल प्रतिदर्श ग्राम के (30.00

प्रतिशत), परिवार की संख्या विद्यमान है जो कि प्रतिदर्श ग्राम आधार पर फकुली 5 (33.33), चनदना 6 (40.00 प्रतिशत), धमसर 5 (33.33 प्रतिशत) एवं वेल 2 (13.33 प्रतिशत) आकलित किया गया है। द्रष्टव्य है कि इसमें सम्मिलित परिवार सामान्य, पिछड़ा एवं अति-पिछड़ा वर्गों में है। आमदनी इनकी 150,000-200,000 रूप में प्रतिवेदित है और जीवन की प्रत्याशा की दृष्टि से और ये सभी शिक्षित हैं। जीवन प्रत्याशा की दृष्टि से सामान्य, पिछड़ा वर्गों का 90 वर्षीय परिजनों के लिए उल्लेखनीय है। मृत्यु जैसी अप्रिय कोई घटना इन परिवारों में नहीं हुई है। लगभग इन सभी परिवारों में मनोरंजन, संचार एवं परिवहन की उन्नत से उन्नत सुविधाएं उपलब्ध हैं। गैर अराजपत्रित पदों से लेकर राजपत्रित पदों पर इनके परिजन नियोजित हैं। हालांकि नशीले पदार्थों (शराब, ताड़ी, बीड़ी एवं तम्बाकू) का सेवन सामान्य; पिछड़ा एवं अति-पिछड़ा सभी वर्गों में एक जैसा होता है।

3. निम्न गुणवत्ता संभाग (0.75-1.00)- लब्धांक के 0.75 से 1.00 के प्रसार से निम्न जीवन की गुणवत्ता संभाग का प्रतिनिधित्व होता है (तालिका 1) ज्ञातव्य है कि प्रतिदर्श ग्राम का अवलोकन किया जाए तो फकुली (13.33 प्रतिशत), चन्दना 1 (6.67 प्रतिशत), धमसर 0 (0.00 प्रतिशत) एवं बेला 8 (53.33 प्रतिशत) विद्यमान है। जो कुल प्रतिदर्श पारिवारिक तुलना में 11 (18.33 प्रतिशत) ऑकलन किया गया है। विदित हो कि इस संभाग में परिजनों की मासिक आमदनी क्रमश: 20,000 से 30,000 रूपये है। इसमें झोपड़ियों एवं एस्बेस्टस से बने मकानों में निवास करते हैं। इसमें साक्षर एवं निरक्षर जीवन की प्रत्याशा इनकी क्रमश: 45 से 55 वर्षों की है। इन परिवारों में मृत्यु की घटना वर्ष के अंदर में हुई है। सुविधाओं की दृष्टि से रेडियो साइकिल है। इन परिवारों में कोई भी परिजन किसी प्रकार की सेवा में न नियोजित और न शैक्षिक योग्यता ही उल्लेख के योग्य है। किन्तु ताड़ी, बीड़ी, तम्बाकू एवं गुटका की बुरी आदतों से परिवारों के परिजन ग्रस्त हैं। महिलाएँ इनमें घरेलू कार्यों तक सीमित हैं।

4. अतिनिम्न गुणवत्ता संभाग (50.75)- लब्धांक विचलन 40.75 के प्रसार से जीवन की अति निम्न गुणवत्ता का प्रतिनिधित्व होता है। इसमें सम्मिलित कुल प्रतिदर्श परिवारों में यहाँ 16 (21.6) विद्यमान है। प्रतिदर्श ग्राम आधारित परिवारों का संख्या फकुली 3 (20.00 प्रतिशत), चन्दना 5 (33.33 प्रतिशत), धमहर 5 (33.33 प्रतिशत) एवं बेला 3 (20.00 प्रतिशत) परिगणित किया गया है। ज्ञातव्य है कि इनकी मासिक आमदनी 5000 से 10,000 तक सीमित है। गृह की दशा अन्य तीन संभागों की तुलना में निम्न स्तर के हैं। ये परिवार अशिक्षित, मांसाहारी और अल्प आयु वाले हैं। मृत्यु की घटनाएँ इन सभी परिवारों में प्रतिवेदित हैं। जीवन उपयोगी सुविधाओं के नाम पर इनमें साइकिल व मोटर साइकिल तक सीमित है। किन्तु नशीली वस्तुओं के सेवन की दृष्टि से ताड़ी, तम्बाकु एवं शराब सेवन में इन्हें महारथ हासिल है।

उपरोक्त विश्लेषण से प्रस्फुटित होता है कि उच्च आमदनी वाले शिक्षित तथा सरकारी नौकरियों में नियोजित परिजनों से युक्त परिवारों में जीवन की गुणवत्ता स्तर सामान्य रूप से उच्च है जो कि प्राय: सामान्य वर्ग के परिवारों में द्रष्टव्य है। जीवन की उच्च गुणवत्ता वाले परिवार पिछड़ा वर्ग में भी है जो वृति (पेशा) की दृष्टि से कुटीर उद्योगों

एवं कृषि कार्यों में निपुण माने जाते हैं तथा साथ ही साथ उनके परिजनों का सरकारी सेवाओं में नियोजन भी है। निम्न शैक्षणिक योग्यता वाले निम्न मासिक आमदनी की अनुसूचित जाति एवं मुस्लिम समुदाय के पारिवारिक जीवन की निम्न गुणवत्ता का प्रदर्शन करते हैं। बल्कि ऐसी आर्थिक दशा वाले एक सामान्य वर्गीय परिवार भी गुणवत्ता की इस श्रेणी में हैं। निम्न आय वाले सामान्य वर्ग के परिवारों के जीवन की गुणवत्ता भी सामान्य कोटि की है। इनमें नशीली वस्तुओं (ताड़ी, दारू, शराब, बीड़ी, तम्बाकू एवं गुटका) का उपयोग बिना किसी नियंत्रण के होता है। अति पिछड़ा एवं पिछड़ा वर्गों के कुछ परिवारों की गुणवत्ता का स्तर भी सामान्य वर्ग के परिवारों के समकक्ष हैं क्योंकि उनके द्वारा अपनायी गयी वृतियों (पेशा) में उन्हें निपुणता प्राप्त है तथा उनकी आदतों में नशीली वस्तुओं के सेवन से अपरिग्रह हैं।

तालिका 02

प्रतिदर्श ग्राम आधारित जीवन की गुणवत्ता का स्तर

म सं.	प्रतिदर्श ग्राम	उच्च जीवन की गुणवत्ता संभाग		सामान्य जीवन की गुणवत्ता सवंभाग		निम्न जीवन की गुणवत्ता संभाग		अति निम्न जीवन की गुणवत्ता संभाग		कुल परिवारों की संख्या
			प्रतिशत		प्रतिशत		प्रतिशत		प्रतिशत	
1.	2	3	4	5	6	7	8	9	10	11
1.	फकुली	5	33.33	5	33.33	2	13.33	3	20.00	15
2.	चन्दना	3	20.00	6	40.00	1	6.67	5	33.33	15
3.	धमसर	5	33.33	5	33.33	0.00	0.00	5	33.33	15
4.	बेला	2	13.33	2	13.33	8	53.33	3	20.00	15
5.	कुल प्रतिदर्श ग्राम परिवारों की संख्या	15	25.00	18	30.00	11	18.33	16	26.62	60

स्रोत :- व्यक्तिगत सर्वेक्षण, 2025

निष्कर्ष- गंगा-गंडक दोआब में जीवन की गुणवत्ता प्रतिदर्श के लिए चयनित चार गाँवों के 16-15 परिवारों से प्रश्नावली विधि द्वारा एकत्रित आँकड़ों के विश्लेषण से स्पष्ट होता है कि सामान्य रूप से सामान्य वर्ग के उन परिवारों में जीवनप की गुणवत्ता का स्तर उच्च है जिनमें उच्च मासिक आमदनी एवं उच्च शैक्षणिक योग्यता से युक्त परिजन राजपत्रित एवं अराजपत्रित पदों पर नियुक्ति हैं। नशीली वसतुओं के सेवन में भी ये अपेक्षाकृत अधिक संयमित है। जीवन की उच्च गुणवत्ता पिछड़ा वर्ग के उन परिवारों में भी द्रष्टव्य है कि जिनकी आमदनी सामान्य वर्ग के परिवारों के समकक्ष हैं तथा जो सरकारी (राजपत्रित और अराजपत्रित) पदों पर वियुक्त है। जीवन की निम्न गुणवत्ता वाले परिवारों सामान्य और पिछड़ा दोनों वर्गों में है। जिनमें अशिक्षा निम्न मासिक आमदनी सुविधाओं की दृष्टि से निर्धनता और नशीले पदर्था के सेवन से संलग्नता पायी गयी है। अति निम्न मासिक आय वाले परिवार अति-पिछड़ा वर्ग एवं मुस्लिम समुदाय के हैं जो न शिक्षित हैं और न नियोजित। लेकिन नशीली वस्तुओं के सेवन में उनकी संलिप्तता इनके जीवन की गुणवत्ता को अति-निम्न स्तर तक ले जाती है। जीवन की गुणवत्ता का स्तर सामान्य वर्ग में उच्च हें यद्यपि कि गुणवत्ता का स्तर वर्ग या जाति की सीमा में सीमित नहीं है। वर्तमान अध्ययन में सामान्य वर्ग के परिवारों के जीवन की गुणवत्ता का स्तर सामान्य वर्ग में उच्च है यद्यपि कि गुणवत्ता का स्तर वर्ग या जाति की सीमा में सीमित नहीं है। वर्तमान अध्ययन में सामान्य वर्ग के परिवारों के जीवन की गुणवत्ता का स्तर भी पिछड़ा एवं अति-पिछड़ा

वर्गों के समकक्ष है। दूसरी ओर अति पिछड़ वर्ग के दो परिवारों में भी जीवन की गुणवत्ता का स्तर सामान्य रूप से उच्च है। अंततः जीवन की गुणवत्ता का सीधा सम्बन्ध मासिक आमदनी; शैक्षणिक, योग्यता और सामाजिक परिप्रेक्ष में उनकी हैसित से जुड़ा लगता है। पिछड़ा वर्ग, अति पिछड़ा वर्ग या सामान्य वर्ग कुछ भी है जिनकी आमदनी कृषि, व्यवसाय या नौकरी चाहे जिस किसी वृति से उच्च है उनमें उनके जीवन की गुणवत्ता उन्नत है।

परिशिष्ट I

पारिवारिक स्तर पर विभिन्न संकेतकों को दिया गया भारित मूल्य

संकेतक	भारित मूल्य
1. परिवारों का प्रकार	
(i) संयुक्त	2
(ii) एकल	1
2. मासिक आमदनी	
(i) 50,000 से कम	1
(ii) 50,000-10,0000	2
(iii)10,0000-25,000	3
(iv) 250000	4
3. गृह की दशाएँ	
(i) पक्का	3
(ii) ईट-खपड़ा	2
(iii)झोपड़ी	1
4. साक्षरता	
(i) साक्षर	2
(ii) निरक्षर	1
5. महिला साक्षरता	
(i) साक्षर	2
(ii) निरक्षर	1
6. पोषण	
(i) मांसाहारी	2
(ii) शाकाहारी	1
7. जीवन की प्रत्याशा	
(i) 75-85	3
(ii) 60-75	2
(iii) 60 से कम	1
8. मर्त्यता	
(i) मृत्यु नही	3
(ii) एक मृत्यु	2
(iii) एक से अधिक मृत्यु	1
9. मनोरंजन की सुविधाएँ	
(i) टेलीविजन (स्मार्ट टी.वी.)	3
(ii) टेप (होम थियेटर)	2
(iii) रेडियो	1
10. संचार के साधन	
(i) आई फोन	3
(ii) स्मार्टफोन	2
(iii) मोबाईल	1
11. परिवहन के साधन	
(i) कार	3
(ii) मोटर साइकिल	2

संदर्भ सूची-

1. कामनि, कुमारी, 2011 सारण जनपद में जनसंख्या की गत्यात्मकता तथा जीवन की गुणवत्ता, बी.आर.ए.बी.यू., मुजफ्फरपुर, अप्रकाशित शोध ग्रंथ, पृ.पृ.-156-172।
2. बोल्फार्ग, डुलेजर्ड एम., मोर च., 1987, क्वालिटी ऑफ लाइफ: कॉन्सेप्ट एवं मेजरमेंट सोशल इंडिकेटर रिसर्च वॉल्यूम, नं.-1, पृ.पृ.-15-23।
3. स्मिथ, डी.एम., 1973, ज्योग्राफी ऑफ सोशल वेल वीरंग इन यूनाइटेड, स्टेट्स मैगाहिल, न्यूयार्क।
4. स्मिथ, डी.एम., 1977, ह्यूमन ज्योग्राफी: ए वेल्फेयर अप्रोच अडवर्ड अर्नाल्ड लि., लंदन।
5. स्मिथ डी.एम. 1983, बेयर द ग्रास इज ग्रीनर लिविंग इन एन अनइक्वल वर्ल्ड पेगुंइन बुक्स, हारमोंडस, वर्थ।
6. सेन, एल. के एण्ड अदर्स, 1971, प्लानिंग एण्ड रूरल ग्रोथ सेन्टर फॉर ईटीग्रेटेड एरिया डेवलपमेंट, ए स्टडी इन मेरियालगुड तालिका, नेशनल इन्स्टिस्यूट ऑफ रूरल डेभलपमेंट हैदराबाद।
7. भट, एल. एस. एण्ड अदर्स, 1976, माइक्रो लेभेल प्लानिंग, ए केस स्टडी कैनाल एरिया हरियाणा, इण्डिया, के.बी. पब्लिकेशन्स, नई दिल्ली।
8. सिंह, जगदीश 1979 सेन्ट्रेल प्लेसेस एण्ड स्पेशियल ऑरगेनाईजेशन इन ए बैकवार्ड इकोनॉमी गोरखपुर रीजन्स; ए स्टडी इन इन्टीग्रेटेड एरिया डेभलपमेंट, उत्तर भारत भूगोल परिषद्, गोरखपुर।
9. सिंह, आर0 बी0 पी0 1985 सोशल प्रोभिजन्स इन बांका सबडिविजन भागलपुर, ए ज्याग्राफीकल एनालाईसिस पी.एच-डी. थेसिस (पब्लिस) पटना।

UGC Journal No. (Old) 2138
Peer-Reviewed Research Journal
Impact Factor 6.375, ISSN 0975-4083
Vol.- 28, Hindi Edition, Year-14, March 2025

राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020- चुनौतियाँ

•सीमा श्रीवास्तव

सारांश- शिक्षा को किसी भी राष्ट्र के सामाजिक, सांस्कृतिक और आर्थिक विकास का मुख्य स्तंभ माना जाता है। इस संदर्भ में, राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020 एक ऐतिहासिक पहल है जो भारत की शिक्षा व्यवस्था में व्यापक परिवर्तन की दिशा में काम कर रही है। यह नीति भारत को एक विकसित राष्ट्र बनाने के उद्देश्य से तैयार की गई है, जिसमें न केवल शिक्षा के स्तर को बढ़ाना है, बल्कि भारतीय शिक्षा को वैश्विक मानकों के अनुरूप बनाना है। इसका मुख्य ध्यान छात्रों की समग्र क्षमता का विकास, क्रिएटिविटी, आलोचनात्मक सोच और जीवन कौशल को बढ़ावा देने पर है। इसे तैयार करते समय भारतीय ज्ञान परंपरा को विशेष महत्व दिया गया है। राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020 लचीली बहु आयामी बहु स्तरीय होने के साथ साथ इसमें खेल आधारित गतिविधि शोध नवाचार कौशल विकास इत्यादि का समावेश किया हुआ है। इसे भावी पीढ़ियों के समक्ष आने वाली चुनौतियों को ध्यान में रखकर बनाया गया है। सामाजिक आर्थिक वैश्विक परिदृश्य में भारत की युवा पीढ़ी अपने आप को स्थापित कर सके इस बात को ध्यान में रखते हुए इसमें अनेक प्रावधान किए गए हैं। राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020 ने भारतीय शिक्षा प्रणाली में कई सुधारों का प्रस्ताव दिया है, जो कि समग्र रूप से शिक्षा को बेहतर बनाने की दिशा में महत्वपूर्ण कदम हैं। हालांकि, इन सुधारों के रास्ते में कई चुनौतियाँ हैं, लेकिन अगर सही उपायों को अपनाया जाए और सभी संबंधित पक्षों का सहयोग मिले, तो ये समस्याएँ हल हो सकती हैं। भविष्य की आवश्यकताओं को ध्यान में रखकर बनाई गई राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020 में गुणवत्तापूर्ण शिक्षा के साथ समाज के प्रति जवाबदेही भी है तो संस्कृति से लेकर पर्यावरण, सतत विकास, नवाचारों को प्राथमिकता दी गई है। इन सभी लक्ष्यों को पाना अनेक चुनौतियों से भरा है किंतु असंभव नहीं है।

मुख्य शब्द- राष्ट्रीय शिक्षा नीति, कौशल विकास, चुनौतियाँ

शिक्षा किसी भी देश के सामाजिक आर्थिक विकास में विकास का मुख्य स्तंभ मानी जाती है। बहु संस्कृति वाला भारत देश अपनी विशिष्ट संस्कृति, विविधता, ज्ञान व दर्शन के लिए विश्व में अपनी विशिष्ट पहचान रखता है। शिक्षा को किसी भी राष्ट्र के सामाजिक, सांस्कृतिक और आर्थिक विकास का मुख्य स्तंभ माना जाता है। इस संदर्भ

• प्राध्यापक, समाजशास्त्र, शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, बालाघाट

में, राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020 एक ऐतिहासिक पहल है जो भारत की शिक्षा व्यवस्था में व्यापक परिवर्तन की दिशा में काम कर रही है। यह नीति भारत को एक विकसित राष्ट्र बनाने के उद्देश्य से तैयार की गई है, जिसमें न केवल शिक्षा के स्तर को बढ़ाना है, बल्कि भारतीय शिक्षा को वैश्विक मानकों के अनुरूप बनाना है। इस शोध पत्र में राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020– चुनौतियाँ का विश्लेषण करेंगे। राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020 एक ऐतिहासिक कदम है जो भारत की शिक्षा व्यवस्था में व्यापक बदलाव के साथ–साथ देश को विकसित राष्ट्र बनाने में महत्वपूर्ण योगदान देगी । 29 जुलाई 2020 को प्रधानमंत्री मोदी की अध्यक्षता में कैबिनेट द्वारा राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020 को मंजूरी मिली। इसरो के पूर्व अध्यक्ष कस्तूरीरंगन की अध्यक्षता में इसका मसौदा तैयार किया गया। राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020 इसलिए महत्वपूर्ण हो जाती है क्योंकि लगभग 2 लाख सुझावों के विश्लेषण के बाद इसे तैयार किया गया है।

राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020 का उद्देश्य- राष्ट्रीय शिक्षा नीति का उद्देश्य भारत की शिक्षा व्यवस्था को सुधारना और भविष्य की जरूरतों के अनुरूप बनाना है। इसका मुख्य ध्यान छात्रों की समग्र क्षमता का विकास, क्रिएटिविटी, आलोचनात्मक सोच, और जीवन कौशल को बढ़ावा देने पर है। राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020 का उद्देश्य भारत को पुन: एक वैश्वीक महाशक्ति बनना है। इसे तैयार करते समय भारतीय ज्ञान परंपरा को विशेष महत्व दिया गया है। राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020 लचीली, बहु आयामी, बहु स्तरीय होने के साथ साथ इसमें खेल आधारित गतिविधि, शोध , नवाचार, कौशल विकास इत्यादि का समावेश किया हुआ है । राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020 का मुख्य उद्देश्य भारतीय शिक्षा को वैश्विक मानकों के समक्ष लाना एवं देश में शिक्षा के स्तर को बढ़ाना है। इसमें इस बात का विशेष ध्यान रखा गया है कि शिक्षा व्यवस्था में परिवर्तन भविष्य के आवश्यकताओं के अनुरूप हो इसके लिए विद्यार्थी की क्षमता के अनुरूप उसके रचनात्मकता को बढ़ाने हेतु पाठ्यक्रम उपलब्ध हो इसके साथ ही कौशल संवर्धन को विशेष महत्व दिया गया है ।प्रत्येक विद्यार्थी अपने रुचि व योग्यता के अनुरूप व्यावसायिक कौशल में निपुण हो और देश के आर्थिक विकास में महत्वपूर्ण भूमिका का निर्वहन कर सके।

गुणवत्तापूर्ण शिक्षा- राष्ट्रीय शिक्षा नीति का मुख्य उद्देश्य है हर विद्यार्थी को गुणवत्तापूर्ण शिक्षा के साथ ही सभी को शिक्षा के समान अवसर उपलब्ध कराना है। इसके लिए गरीब व दिव्यांग विद्यार्थियों को भी शिक्षा के समान अवसर उपलब्ध कराने की बात कही गई है और यह शिक्षा गुणवत्तापूर्ण हो इस बात का विशेष ध्यान रखा गया है।

कौशल विकास- राष्ट्रीय शिक्षा नीति का दूसरा महत्वपूर्ण उद्देश्य विद्यार्थियों को कौशल विकास की शिक्षा देना है। विभिन्न क्षेत्रों में गतिविधि आधारित कौशल विकास की संकल्पना निश्चित ही विकसित भारत के लिए बहुत महत्वपूर्ण है।

व्यावसायिक शिक्षा- वैश्विक परिदृश्य में तीव्र परिवर्तनों के साथ कदम मिलने हेतु शिक्षा व्यवस्था की जड़ता को समाप्त करना नितांत आवश्यक है। इस पृष्ठभूमि में राष्ट्रीय शिक्षा नीति में विद्यार्थियों को विभिन्न क्षेत्रों से संबंधित व्यावसायिक शिक्षा उपलब्ध कराना राष्ट्रीय शिक्षा नीति का महत्वपूर्ण उद्देश्य है ।

मातृभाषा को प्रमुखता- राष्ट्रीय शिक्षा नीति में प्रारंभिक शिक्षा हेतु मातृभाषा को प्रमुखता दी गई है ताकि बच्चों का प्रारंभिक विकास अच्छे से हो सके।

बहुविषयक- शिक्षा राष्ट्रीय शिक्षा नीति में शिक्षा को किसी एक संकाय तक सीमित नहीं रखा गया है बल्कि विद्यार्थी अपनी रुचि के अनुरूप बहु विषयक शिक्षा प्राप्त कर सकता है।

शोध व नवाचार को विशेष महत्व- राष्ट्रीय शिक्षा नीति में शोध व नवाचार को विशेष महत्व दिया गया है। इसके लिए पाठ्यक्रम में अनेक सुधार किए गए हैं आधुनिक समय के अनुरूप शोध व नवाचार का बहुत ज्यादा महत्व है। वैश्विक परिदृश्य के समकक्ष आने में इसकी भूमिका बहुत महत्वपूर्ण हो जाती है।

शिक्षकों का प्रशिक्षण- राष्ट्रीय शिक्षा नीति का एक उद्देश्य शिक्षकों को भी प्रशिक्षण उपलब्ध कराना है ताकि बदलते पाठ्यक्रम के अनुरूप वे भी अपडेट हो जाए इसके लिए अनेक प्रशिक्षण कार्यक्रम चलाए जाएंगे।

ऑनलाइन शिक्षा- सभी विद्यार्थियों तक शिक्षा की पहुंच के लिए ऑनलाइन शिक्षा का प्रावधान किया गया है। राष्ट्रीय शिक्षा नीति का एक उद्देश्य विभिन्न एप्लीकेशनों के माध्यम से दूर दराज के विद्यार्थियों को ऑनलाइन शिक्षा उपलब्ध कराना है ताकि वह विभिन्न क्षेत्रों में अपनी क्षमताओं का विकास कर सके।

लक्ष्य- राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020 का लक्ष्य वर्ष 2030 तक स्कूल शिक्षा में 100 प्रतिशत नामांकन करना है। उसके साथ ही भारत द्वारा वर्ष 2015 में अपनाए गए सतत विकास एजेंडा 2030 के लक्ष्य 4 जो कि वैश्विक शिक्षा एजेंडा है के अनुसार सभी के लिए समावेशी और समान गुणवत्ता युक्त शिक्षा सुनिश्चित करना और जीवन पर्यंत शिक्षा के अवसरों को बढ़ावा देने का लक्ष्य है। विकसित भारत के लिए यह आवश्यक भी है कि हर नागरिक को शिक्षा के समान अवसर मिले जिससे देश का समग्र विकास हो सके और इस दिशा में राष्ट्रीय शिक्षा नीति में अनेक प्रावधान किए गए हैं।

राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020 की विशेषताएं- इसके मुख्य विशेषताएं हैं कि इसे भावी पीढ़ियों के समक्ष आने वाली चुनौतियों को ध्यान में रखकर बनाया गया है। सामाजिक आर्थिक वैश्विक परिदृश्य में भारत की युवा पीढ़ी अपने आप को स्थापित कर सके इस बात को ध्यान में रखते हुए इसमें अनेक प्रावधान किए गए हैं।इसमें एक ओर प्राचीन भारतीय ज्ञान परंपरा को महत्व दिया गया है तो दूसरी ओर नवाचार अनुसंधान व कौशल विकास को भी महत्वपूर्ण माना गया है। शिक्षा किसी भी देश के समग्र विकास में महत्वपूर्ण स्थान रखती है।देश के सामाजिक आर्थिक विकास के लिए राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020 एक महत्वपूर्ण कदम है।आजादी के बाद देश की शिक्षा प्रणाली में अनेक सुधार वा परिवर्तन किए गए। इसी क्रम में राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020 भारत के शैक्षणिक परिदृश्य में अनेक परिवर्तन लेकर आई। इसमें अनेक ऐसे प्रावधान है जो भारत को विकसित राष्ट्र बनने में सहयोगी होंगे। राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020 की महत्वपूर्ण विशेषताएं इस प्रकार हैं–

- बहु आयामी शिक्षा
- शिक्षा का सार्वभौमीकरण
- तकनीकी शिक्षा व कौशल विकास
- मातृभाषा को महत्व

- समावेशी शिक्षा प्रणाली
- उच्च शिक्षा में सुधार
- ऑनलाइन व डिजिटल शिक्षा को बढ़ावा
- शिक्षक प्रशिक्षण
- प्रत्येक विद्यार्थी की विशिष्ट सक्षम क्षमताओं की पहचान
- शिक्षा में लचीलापन
- बहुविषयक पाठ्यक्रम
- विद्यार्थी में विवेचनात्मक क्षमता उत्पन्न करना
- नवाचारों का विकास
- नैतिक मूल्य से विद्यार्थियों का परिचय
- सतत मूल्यांकन
- स्थानीय आवश्यकताओं के अनुरूप शिक्षा
- शोध केन्द्रों की स्थापना
- भारतीय ज्ञान परंपराओं का समावेश
- व्यावसायिक पाठ्यक्रमों का समावेश
- अकादमिक बैंक ऑफ क्रेडिट
- स्टार्टअप को पाठ्यक्रम में शामिल करना
- इनक्यूबेशन सेंटर की स्थापना के द्वारा अनुसंधान को बढ़ावा देना
- वैयक्तित्व का सर्वांगीण विकास
- सामुदायिक जुड़ाव को महत्व
- आत्मनिर्भरता के लिए प्रशिक्षण
- अंतरराष्ट्रीय प्रतिस्पर्धा हेतु प्रशिक्षण
- गुरु शिष्य परंपरा
- वैदिक ज्ञान
- संस्कृत के महत्व में वृद्धि
- प्राथमिक स्तर पर मातृभाषा में पढ़ाई
- साइन लैंग्वेज को मानकीकृत करना
- शिक्षा के अधिकार हेतु पात्रता 6 से 14 वर्ष से बढ़कर 3 से 18 वर्ष करना

राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020 भारत में शिक्षा के क्षेत्र में एक बड़ा परिवर्तन लाने का उद्देश्य रखती है। इस नीति के तहत शिक्षा के विभिन्न पहलुओं को सुधारने और नया दृष्टिकोण अपनाने की दिशा में कई महत्वपूर्ण कदम उठाए गए हैं। राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020 लंबे विचार विमर्श के बाद तैयार की गई है किंतु बावजूद इसमें अनेकों चुनौतियां हैं जो इस प्रकार हैं–

चुनौतियाँ

1 पाठ्यक्रम का निर्धारण- राष्ट्रीय शिक्षा नीति की सबसे बड़ी चुनौती वैश्विक परितर्शी के समक्ष उचित पाठ्यक्रम का निर्धारण करना है इसके साथ ही पाठ्यक्रम बनाने वाले शिक्षकों का चुनाव कैसे हो यह भी एक बड़ी चुनौती है उचित पाठ्यक्रम के मंडा मानदंड

क्या होंगे यह भी निर्धारित किया जाना एक परी चुनौती है

2 शिक्षकों का प्रशिक्षण- राष्ट्रीय शिक्षा नीति के सफल क्रियान्वयन में सबसे बड़ी भूमिका शिक्षकों की होगी अत: इस हेतु उन्हें प्रशिक्षित करना अति आवश्यक होगा प्रारंभिक स्तर पर ही बहुत बड़ी संख्या में प्रशिक्षित शिक्षकों की आवश्यकता होगी जो की एक बड़ी चुनौती है

3 डिजिटल संसाधनों की उपलब्धता- राष्ट्रीय शिक्षा नीति का उद्देश्य दूर दराज के तथा ग्रामीण इलाकों तक बच्चों को समावेशी शिक्षा उपलब्ध कराना है इसके लिए बड़ी संख्या में डिजिटल संसाधनों की आवश्यकता होगी निर्धनता के चलते हर बच्चे के पास यह साधन उपलब्ध नहीं होंगे ऐसी स्थिति में ऑनलाइन शिक्षा किस प्रकार संभव होगी यह भी एक बड़ी चुनौती है

4 कौशल विकास की चुनौती- राष्ट्रीय शिक्षा नीति में कौशल विकास को बहुत अधिक महत्व दिया गया है प्राथमिक स्तर से ही विद्यार्थियों को कौशल विकास प्रशिक्षण दिया जाना है दूर दराज के क्षेत्र में यह प्रशिक्षण देना एक बड़ी चुनौती होगी।

5 सतत मूल्यांकन- विद्यार्थियों का सतत मूल्यांकन कर परिणाम में सुधार किया जाना है एक सत्र में विद्यार्थियों का आंतरिक मूल्यांकन वह मूल्यांकन के आधार पर परिणाम निश्चित होगा सीमित संसाधनों के चलते यह एक बड़ी चुनौती है

6 शिक्षा की गुणवत्ता और परिणामों में सुधार- शैक्षिक परिणामों में सुधार लाना और गुणवत्तापूर्ण शिक्षा सुनिश्चित करना एक बड़ी चुनौती है, खासकर तब जब परंपरागत शिक्षा पद्धतियाँ बदल रही हैं और नई पद्धतियों को अपनाना समयसापेक्ष है।

7 शिक्षक छात्रों का अनुपात

8 शिक्षकों से गैर शैक्षणिक कार्य करवाना

9. क्रियान्वयन की चुनौतियां

10. शिक्षकों के प्रशिक्षण हेतु निश्चित रूप रेखा एवं संसाधनों की कमी

11. राष्ट्रीय शिक्षा नीति द्वारा भारत की शिक्षा व्यवस्था में अनेक बदलाव किए गए हैं लेकिन उनके क्रियान्वयन में अनेक चुनौतियों का सामना करना पड़ रहा है शारीरिक गतिविधियों व खेलकूद योजना इत्यादि को पाठ्यक्रम में शामिल किया गया है किंतु इसके लिए आधारभूत संरचना प्रशिक्षक व प्रशिक्षण का अभाव है।

12. बहुविषयक शिक्षा के लिए विषय विशेषज्ञ शिक्षकों की कोई व्यवस्था नहीं है।

13. व्यावसायिक पाठ्यक्रम बहुत ही अच्छे हैं किंतु इसके लिए प्रशिक्षित शिक्षकों का पूर्णतया अभाव है ।आंतरिक मूल्यांकन के तीन स्तर विद्यार्थी शिक्षक अनुपात के कारण वास्तविक मूल्यांकन में कठिनाई आती है

14. मातृभाषा में अध्ययन का प्रावधान तो है किंतु निजी विद्यालयों में अंग्रेजी में ही अध्यापन कार्य होता है

15. उच्च शिक्षा में उपयोगी अधिकांश पुस्तक अंग्रेजी में ही उपलब्ध है

राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020 ने भारतीय शिक्षा प्रणाली में कई सुधारों का प्रस्ताव दिया है, जो कि समग्र रूप से शिक्षा को बेहतर बनाने की दिशा में महत्वपूर्ण कदम हैं। हालांकि, इन सुधारों के रास्ते में कई चुनौतियाँ हैं, लेकिन अगर सही उपायों को अपनाया

जाए और सभी संबंधित पक्षों का सहयोग मिले, तो ये समस्याएँ हल हो सकती हैं। सही कार्यान्वयन और निरंतर प्रयास से हम भारतीय शिक्षा को विश्वस्तरीय बना सकते हैं इसमें जो सुधार किए गए हैं वह भारतीय शिक्षा व्यवस्था को वैश्विक स्तर पर लाने में सफल होगी। देश में ही वैश्विक स्तर की शिक्षा प्राप्त कर विद्यार्थी स्वयं के सर्वांगीण विकास के साथ-साथ देश को भी शिक्षित सशक्त व आत्मनिर्भर राष्ट्र के रूप में स्थापित करने में सहयोगी होंगे। राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020 भारत को एक अधिक समृद्ध और विकसित राष्ट्र बनाने की दिशा में एक महत्वपूर्ण कदम है। इसमें शिक्षा के विभिन्न पहलुओं को सुधारने की योजना बनाई गई है, जो न केवल भारतीय नागरिकों को बेहतर शिक्षा प्रदान करेगी, बल्कि उन्हें वैश्विक स्तर पर प्रतिस्पर्धी के लिए तैयार करेगी। भविष्य की आवश्यकताओं को ध्यान में रखकर बनाई गई राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020 में महत्वपूर्ण सुधार किए गए हैं। गुणवत्तापूर्ण शिक्षा के साथ समाज के प्रति जवाबदेही भी है तो संस्कृति से लेकर पर्यावरण सतत विकास नवाचारों को प्राथमिकता दी गई है । इन सभी लक्ष्यों को पाना अनेक चुनौतियों से भरा है किंतु असंभव नहीं है। संकल्प के साथ प्रयास करने से सभी चुनौतियों का सामना किया जा सकता है।

संदर्भ ग्रन्थ सूची-

1. कछावा डॉ. प्रीति नई शिक्षा नीति 2020 समता मूलक एवं समावेशी शिक्षा
2. ISSN2582:7162 International journal of Interdiciplinary Reasearch
3. कुरुक्षेत्र फरवरी 2020
4. मानव संसाधन विकास मंत्रालय भारत सरकार
5. राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020 मानव संसाधन विकास मंत्रालय भारत सरकार नई दिल्ली
6. सिंह डॉ. अभिषेक कुमार डॉ अमित अग्रवाल व्यवसायिक एवं पेशेवर शिक्षा हेतु में पुनरकल्पना का एक अध्ययन अधिगम अंक जून 2022 ISSN:2394_773X उमंगवाणी 2022
7. यादव डॉ उत्तरा 21वीं सदी के भारत की शिक्षा नीति 2020: एक मूल्यांकन ISSN 2349-1876
8. www.education.in
9. www.pdffile.co.in_national_education policy_nep2022

UGC Journal No. (Old) 2138
Peer-Reviewed Research Journal
Impact Factor 6.375, ISSN 0975-4083
Vol.- 28, Hindi Edition, Year-14, March 2025

प्राथमिक क्षेत्र में महिलाओं की वर्तमान स्थिति व स्वरोजगार की भावी संभावनाएँ (सीधी जिले के विशेष संदर्भ में)

•आर. बी. एस चौहान
•• राखी सिंह बघेल

सारांश- किसी भी राष्ट्र के विकास में महिलाओं की सामाजिक, आर्थिक और शैक्षिक स्थिति में परिवर्तन अतिआवश्यक है। महिलाओं की सहभागिता के बिना आर्थिक विकास सम्भव नही हो सकता है। भारत में आदिकाल से महिलाएँ उपेक्षा का शिकार रही, जिसमें इनके कार्यक्षेत्र का दायरा घर परिवार तक ही सीमित रहा है। जबकि भारतीय अर्थव्यवस्था विकास की ओर अग्रसर है और विशेष रुप से प्राथमिक क्षेत्र में महिलाओं की सामाजिक-आर्थिक गतिविधियों व विभिन्न क्षेत्र में भागीदारी बढ़ रही है। महिलाओं की शिक्षा, स्वास्थ्य, रोजगार और आर्थिक स्वतंत्रता की स्थिति में परिवर्तन देखने को मिल रहा है जिले की महिलाओं की शिक्षा प्रशिक्षण व स्वरोजगार के क्षेत्र मे विकास के लिए महत्वपूर्ण योगदान दे रही है। राष्ट्र में आर्थिक विकास की गाति बढ़ने में महिलाओं की भूमिका बढ़ती जा रही है। जिले की अधिकांश महिलाएँ प्राथमिक क्षेत्र मे जैसे कृषि, कृषिकगत के क्षेत्र में काम कर रही है।

मुख्य शब्द- स्वरोजगार, भारतीय अर्थव्यवस्था, महिला श्रमिक, आर्थिक स्थिति

प्रस्तावना- महिलाओं की सामाजिक और आर्थिक स्थिति किसी भी देश के विकास का महत्वपूर्ण सूचक होती है। भारत जैसे विकासशील देश में महिलाओं की भूमिका प्राथमिक क्षेत्र (प्राथमिक क्षेत्र में कृषि, पशुपालन, मत्स्य पालन, वानिकी आदि शामिल हैं) में विशेष रूप से महत्वपूर्ण है। पारंपरिक रूप से महिलाएँ इस क्षेत्र में श्रमशक्ति के रुप में कार्यरत रही हैं, वर्तमान समय में सरकार और विभिन्न संगठनों के प्रयासों के कारण महिलाओं प्राथमिक क्षेत्र मे स्थिति में सुधार हुआ है उनके लिए कई स्वरोजगार के नए अवसर उभर सामने आ रहे हैं।

आधुनिक युग में महिलाएँ न केवल सफल गृहिणी की भूमिका बखूबी निभा रही हैं। वे हर क्षेत्र में सफल कामकाजी बन रही हैं, हालांकि, वे अपने सभी कार्यों का प्रबंधन सुनियोजित तरीके से करती हैं और बदलते वैश्विक दौर में महिलाएँ का सामाजिक

• प्राध्यापक एवं विभागाध्यक्ष, अर्थशास्त्र, (प्रधानमंत्री कालेज ऑफ एक्सीलेंस), सं.गाँ. स्मृति
•• शा. स्नातको., महा. सीधी (म.प्र.)
शोधार्थी, अर्थशास्त्र

परिवर्तित और व्यावसायिक परिवेश के अनुरूप स्वयं को ढालने में सक्षम हो रही हैं। सरकारी या निजी कार्य स्थलों, अपने कौशल, अपनी योग्यता का उपयोग प्रभावी ढ़ग से, हर जिम्मेदारी को कुशलतापूर्वक निभा रही हैं।

सरकार और विभिन्न गैर-सरकारी संगठनों ने महिलाओं के स्वरोजगार को बढ़ावा देने के लिए कई योजनाएँ चलाई हैं। स्वयं सहायता समूह, मुद्रा योजना, राष्ट्रीय ग्रामीण आजीविका मिशन, महिला किसान सशक्तीकरण योजना जैसी योजनाओं ने महिलाओं को वित्तीय सहायता, कौशल प्रशिक्षण और स्वरोजगार के अवसर प्रदान किए हैं। जैसे- जैविक खेती, डेयरी फार्मिंग, मधुमक्खी पालन, हस्तशिल्प, कृषि-आधारित स्टार्टअप और खाद्य प्रसंस्करण जैसे क्षेत्रों में आत्मनिर्भर बनने की ओर अग्रसर हैं। इन प्रयासों से न केवल उनकी आर्थिक स्थिति में सुधार होगा, बल्कि समाज में उनकी सशक्त भूमिका स्थापित हो रही है। महिलाएँ प्राथमिक क्षेत्र में आत्मनिर्भर होकर देश के आर्थिक विकास में महत्वपूर्ण योगदान दे रही हैं।

महिलाओं की वर्तमान स्थिति- प्राथमिक क्षेत्र में महिलाओं का योगदान केवल कृषि और पशुपालन में थी, जहाँ कृषि श्रमिकों का एक बड़ा हिस्सा महिलाओं का हैं, लेकिन अब इस दायरे से निकलकर पुरुषों के साथ कंधे से कंधा मिलाकर हर क्षेत्र में अलग पहचान बना ली है। सामाजिक बाधाएँ, पारम्परावादी दृष्टिकोण व रुढ़वादिता के दायरे में सीमित नही हैं। तकनीकी ज्ञान, वित्तीय संसाधनों, उच्च शिक्षा, स्वरोजगार के माध्यम से महिलाओं ने अपनी योग्यता और कौशल से इस क्षेत्र में अपनी महत्वपूर्ण पहचान बनाई है।

शिक्षा- महिलाओं की शिक्षा दर अभी भी अपेक्षाकृत कम है। जहाँ पहले के समय में महिलाओं की शिक्षा को अधिक महत्व नही दिया जाता था, परन्तु आज सभी सरकारी योजनाओं व गैर-सरकारी संगठनों के प्रयासों से इसमें काफी सुधार देखने को मिल रहा है। शिक्षा किसी भी समाज के विकास की आधारशिला होती है, महिलाओं के सशक्तिकरण में इसकी भूमिका अत्यंत महत्वपूर्ण है। विशेषकर ग्रामीण क्षेत्रों में जहाँ अन्धविश्वास, रुढ़िवादिता और सामाजिक प्रतिबंधों के कारण उनकी शिक्षा सीमित रहती थी। लेकिन आज महिलाएँ उच्च शिक्षा एवं तकनीकी क्षेत्रों में अपनी अलग पहचान बनाई है। महिलाओं की संख्या तेजी से बढ़ रही है। ग्रामीण क्षेत्रों की महिलाओं के लिए सरकार द्वारा चलाई विभिन्न योजनाओं, बेटी बचाओ बेटी पढ़ाओ, सर्व शिक्षा अभियान, सुकन्या समृद्धि योजना के कारण महिलाओं में सुधार हुआ है। आज, लड़कियाँ शिक्षा में लड़कों के बराबर भागीदारी कर रही हैं।

शिक्षा से इस बदलाव के प्रभाव से महिलाओं का व्यवसाय, राजनीति, तकनीक विज्ञान, चिकित्सा और प्रशासनिक सेवाओं में भी अपनी महत्त्वपूर्ण उपस्थिति दर्ज करा रही हैं। डिजिटल और ऑनलाइन शिक्षा के बढ़ते प्रभाव ने ग्रामीण क्षेत्रों की महिलाओं को भी सशक्त बनाया है, जिससे वे न केवल स्वरोजगार के नए अवसर तलाश रही हैं, बल्कि आत्मनिर्भरता की ओर भी बढ़ रही हैं निरंतर प्रयासों से महिलाओं की स्थिति में सकारात्मक परिवर्तन हो रहा है।

सामाजिक स्थिति- महिलाओं की अब भी पारिवारिक और सामाजिक निर्णयों में सीमित भागीदारी बढ़ रही है। सरकार द्वारा अनेकानेक योजनाओं के माध्यम से उनकी

स्थिति में सुधार हो रहा है। अभी भी कई चुनौतियाँ हैं, जैसे कि बाल विवाह, शिक्षा में लैंगिक भेदभाव और आर्थिक असमानता, लेकिन निरंतर प्रयासों से महिलाओं की स्थिति में सकारात्मक परिवर्तन हो रहा है, जो एक प्रगतिशील समाज की दिशा में महत्वपूर्ण कदम है।

स्वरोजगार की संभावनाएँ- प्राथमिक क्षेत्र से महिलाओं के स्वरोजगार एवं आय का एक महत्वपूर्ण साधन बन रहा है। जिससे वे आत्मनिर्भर बनकर समाज में अपनी एक अलग पहचान बना रही हैं। पहले महिलाएँ अधिकतर घरेलू कार्यों तक सीमित रहती थीं, लेकिन बदलते समय के साथ वे अब स्वरोजगार की ओर तेजी से अग्रसर हो रही हैं। कुटीर उद्योग, हस्तशिल्प, सिलाई-कढ़ाई, ब्यूटी पार्लर, फूड प्रोसेसिंग, कृषि आधारित व्यवसाय, मुर्गी पालन और अ,नलाइन कारोबार जैसे कई क्षेत्रों में महिलाएँ सफलता प्राप्त कर रही हैं। सरकार भी महिला उद्यमिता को बढ़ावा देने के लिए मुद्रा योजना, स्टैंड-अप इंडिया, महिला ई-हाट जैसी योजनाओं के माध्यम से वित्तीय सहायता और प्रशिक्षण प्रदान कर रही है।

महिला स्वरोजगार का समाज पर सकारात्मक प्रभाव पड़ रहा है, क्योंकि इससे न केवल महिलाओं की आय बढ़ रही है, बल्कि वे अपने परिवारों के आर्थिक सहयोगी भी बन रही हैं। विशेष रूप से ग्रामीण क्षेत्रों में, जहाँ रोजगार के अवसर सीमित होते हैं, वहाँ महिलाएँ छोटे उद्यमों के माध्यम से अपने घर से ही काम कर रही हैं। डिजिटल प्लेटफॉर्म और ऑनलाइन मार्केटिंग ने भी महिला उद्यमियों को एक नया अवसर प्रदान किया है, जिससे वे अपने उत्पादों और सेवाओं को वैश्विक स्तर तक पहुँचा रही हैं। हालाँकि, कई चुनौतियाँ, जैसे पूँजी की कमी, पारिवारिक दायित्व और सामाजिक बाधाएँ अभी भी बनी हुई हैं, लेकिन निरंतर प्रयासों से महिलाएँ स्वरोजगार के माध्यम से आत्मनिर्भरता की ओर बढ़ रही हैं और समाज में अपनी सशक्त भूमिका निभा रही हैं।

हस्तशिल्प और हस्तकला- महिलाओं के लिए स्वरोजगार का एक बेहतरीन अवसर प्रदान करती है, जिससे वे अपनी रचनात्मकता और कुशल कौशल का प्रयोग कर अच्छे डिजाइनिंग, कढ़ाई या ब्लॉक प्रिंटिंग के माध्यम से अनोखे डिजाइने बनती है। इसके अलावा मिट्टी के बर्तन और मूर्तियॉ बनाने का काम भी व्यवसाय करती है, जहॉ महिलाएॅ पारंपरिक और आधुनिक कलाकृतियाँ व अन्य व्यवसाय न केवल आर्थिक रुप से लाभदायक है, बल्कि भारतीय कला और संस्कृति को भी आगे बढ़ाने में सहायक होता है।

घरेलू व्यवसाय- महिलाओं के लिए ब्यूटी पार्लर, सिलाई व बुनाई, अगरबत्ती उद्योग, पापड़ व आचार, घरेलू सजावटी वस्तुएॅ और मेकअप आर्टिस्ट तेजी से लोकप्रिय बनती जा रही है, जहॉ महिलाएॅ अपने कौशल का उपयोग कर दूसरों को सुंदरता और आत्मविश्वास प्रदान करती हैं। क्योंकि शुद्ध और घर के बने उत्पादों की बाजार में हमेशा मांग रहती है। आजकल व्यस्त जीवनशैली के कारण घर का स्वादिष्ट और पौष्टिक खाना लोगों की पहली पसंद बन रही है। इसके अलावा, होममेड जैम, अचार और मसाले बनाने का व्यवसाय भी बहुत फायदेमंद साबित हो रहा है, ये व्यवसाय न केवल महिलाओं को आत्मनिर्भर बनाते हैं, बल्कि उनके प्रतिभाओं को पहचान दिला रही हैं।

डिजिटल और ऑनलाइन- इंटरनेट और मोबाइल तकनीक के बढ़ते उपयोग से महिलाएँ अ, नलाइन व्यापार, नई टेक्नालाजी का उपयोग, यूट्यूब चैनल और फ्रीलांसिंग के माध्यम से स्वरोजगार प्राप्त हो रही हैं।

सरकारी योजनाएँ- प्रधानमंत्री मुद्रा योजना, महिला उद्यमिता योजना, स्टार्टअप इंडिया, प्रधानमंत्री विश्वकर्मा योजना और अन्य सरकारी कार्यक्रमों के माध्यम से महिलाओं को आर्थिक सहायता और स्वरोजगार से वृद्धि देखने को मिल रही है।

तालिका क्र. 01

क्र.	महिलाओं के कार्य	संख्या	प्रतिशत
1	कृषि कार्य	25	50
2	घरेलू व्यवसाय	20	40
3	भवन निर्माण/ सड़क निर्माण	5	10

तालिका से स्पष्ट है कि 10 प्रतिशत महिलायें भवन निर्माण/ सड़क निर्माण के कार्य में व 40 प्रतिशत महिलायें घरेलू व्यवसाय (स्वरोजगार) के कार्य में और 50 प्रतिशत महिलायें कृषि में संलग्न रहती है। भवन निर्माण/सड़क निर्माण क्षेत्रों में महिलाओं की संख्या में कमी देखी गई है और घरेलू व्यवसाय (स्वरोजगार) में महिलाओं की संख्या बढ़ी है।

तालिका क्र. 02

क्र.	परिवार में महिलाओं स्थान	संख्या	प्रतिशत
1	उच्च स्थान	15	30
2	मध्यम स्थान	25	50
3	निम्न स्थान	10	20

तालिका से स्पष्ट है कि 10 प्रतिशत महिलाओं निम्न स्थान में व 50 प्रतिशत महिलाओं मध्यम स्थान और 30 प्रतिशत महिलाओं उच्च स्थान प्राप्त की है, क्योंकि स्वरोजगार के माध्यम से निम्न स्थान वाली महिलाओं संख्या घटी है और ये महिलाएँ परिवार में मध्यम व उच्च स्थान प्राप्त कर रही है।

निष्कर्ष- प्राथमिक क्षेत्र में महिलाओं की स्थिति में निरंतर सुधार हो रहा है, शिक्षा, वित्तीय सहायता और सामाजिक जागरूकता के माध्यम से महिलाओं को स्वरोजगार की ओर प्रेरित हो रही है। सरकार, गैर-सरकारी, महिला सशक्तीकारण, और समाजिक संगठन सभी मिलकर कार्य कर रहे है, महिलाओं को आत्मनिर्भर बनाया जा रहा है। महिला स्वरोजगार से केवल व्यक्तिगत विकास न हो कर, बल्कि पूरे समाज, प्रदेश और देश की आर्थिक प्रगति के विकास में भी सहायक है। महिलाएँ आत्मनिर्भर हो रही हैं और अपने सपने व क्षेत्र को साकार कर रही हैं।

संदर्भ सूची-

1. सुधीर श्रीवास्तव, वूमेन इमपावरमेंट, टाटा मैग्रोहिल प्रकाशन, नई दिल्ली, 1985
2. मैत्रेयी कृष्णराज, रिपोर्ट आन वर्किंग वीमेन साइंटिस्ट्स इन बाम्चे एस.एन.डी.टी,.वीमेन यूनिवर्सिटी रिसर्च यूनिट आन वीमेन स्टडीज, बम्बई, 1971
3. मीनाक्षी व्यास, मिडिल एंड लोअर क्लास वर्किंग वूमेन, सौम्या पब्लिकेशन, मुंबई, 2002
4. मंजू जैन, कार्यशील महिलाएँ एवं सामाजिक परिवर्तन, प्रिंटवैल, जयपुर 1994
5. प्रभा आष्टे, भारतीय समाज में नारी, क्लासिक पब्लिशिंग हाउस, जयपुर 1996
6. डॉ. तिवारी अंशुजा, डॉ. तिवारी संजय–महिला उद्यमिता, ओमेगा
7. पब्लिकेन्स दिल्ल डॉ. एम. के. शर्मा,– 'भारतीय समाज में नारी', पब्लिशिंग हाउस दिल्ली, 2010
8. राम आहुजा, 'सामाजिक समस्यायें, रावत पब्लिकेशन, जयपुर एवं नई दिल्ली, 2000

UGC Journal No. (Old) 2138
Peer-Reviewed Research Journal
Impact Factor 6.375, ISSN 0975-4083
Vol.- 28, Hindi Edition, Year-14, March 2025

बौद्ध साहित्य में वर्णित चिकित्सा

• ज्योति सिंह

सारांश- 248भगवान बुद्ध मानव जीवन की पीड़ा को देखकर उनके उनके हृदय में जो प्रश्न खड़े हुए उसके दो आधार थे। पहला शारीरिक पीड़ा दूसरा मानसिक पीड़ा। दोनों से मनुष्य को किस प्रकार बाहर निकाला जाए, इसके लिए उन्होंने मानसिक संतुलन के लिए अपने उपदेशों में मिथ्या जगत को समझने की बात कही, परन्तु शारीरिक व्याधि कष्ट को ठीक करने के लिए प्रकृति, प्रकृक्ति से उत्पन्न मूल, फल रस को किस प्रकार औषधि के रुप में लिया जा सकता है, उसका ज्ञान दिया। इसी परम्परा को उनके साथ जीवक ने नागार्जुन तथा सुश्रुत ने आगे बढ़ाया जो कनिष्क के काल में अश्वघोष ने भी प्रेरणा के तौर पर अपनाया।

मुख्य शब्द- चिकित्सा, पीड़ा, जगत, व्याधि

भूमिका -भारतीय समाज के विकास में जो निरन्तरता का स्वरुप है. वो आदि अनादिकाल से चला आ रहा है. समाज की विषमता और एकता दोनों ही पक्ष साहित्यों के द्वारा उद्धृत होते रहते है। इसी परम्परा में वैदिक, जैन, बौद्ध आदि उल्लेखनीय साहित्यों से हमें समाज के अध्यात्मिक एवं भौतिक जीवन का ज्ञान प्राप्त होता है। वैदिक ग्रंथो से समाज जितना प्रभावित था या भारतीय समाज उस पर आधारित था वहीं से समाज में उत्पन्न जिज्ञासा ने कई विषयों को जन्म दिया वेदों में आयुर्वेद की बात आती है, सेवा की बात आती है, इस वैदिक परम्परा में आयुर्वेद की परम्परा को बुद्ध ने भी आगे बढ़ाया।

भूरत्नेन हि बुद्धेन प्रज्ञा चक्षुर्विशोधितम।
नमस्तस्मै सुवैद्याय चिकित्सा यस्य कीदृशी।

दिव्यावदान 567/27-28 बौद्ध धर्म में जीवन के आदर्श के सम्बन्ध में प्राचीन काल से ही दो मत है-

प्रथम- मलिन वासना के क्षय का सिद्धान्त

दूसरा- वासना का शोधन (देह शुद्धि)

बुद्ध का लक्ष्य था प्रत्येक दु:ख का नाश तथा बुद्धत्व की प्राप्ति। हमारे भारतीय समाज में अत्यन्त प्राचीन कहावते चली आ रही है जैसे स्वस्थ शरीर में स्वस्थ मन निवास करता है। इस कहावत में जीवन के सभी रंग जो सुन्दर भी है और जो बदरंग भी है दोनों ही आ जाते हैं। स्वस्थ तन स्वस्थ मन समाज में विश्व में, और परिवार में अच्छे विचारों को जन्म देता है, कुरीतियों को दूर करता है, मानव की पीड़ा को समझकर उसे दूर करने का

• सहायक आचार्य डी.ए.वी. पी.जी. कॉलेज, बी.ए.यू. वाराणसी

प्रयास करता है। इसी श्रृंखला में आयुर्वेद ने बौद्ध काल में उत्कृष्ट औषधियों का निर्माण किया चिकित्सा के लिए औषधियों के साथ साथ शल्य चिकित्सा को भी आगे बढ़ाया। बौद्ध साहित्य से ज्ञात होता है कि इस युग में भैषज्य अथवा वैद्यक शास्त्र का विशेष महत्व था। निघण्टु की प्रसिद्धि भी आयुर्वेद विद्या की उन्नति का परिचायक है। वैद्य की समुचित शिक्षा की व्यवस्था तथा उसके पूर्ण योगदान के कारण ही कुशल वैद्य बनते थे। इस युग में शल्य चिकित्सा एवं औषधियों से उपचार अत्यन्त विकसित अवस्था में था। राजसभाओं में भी शल्य चिकित्सक रहता था जो उन लोगों का भी परीक्षण करता था जिन्हें चोरी में मार दिया जाता था। विभिन्न रोगों के निदान के लिए औषधियों बनायी जाती थी, तथा उनका अन्वेषण किया जाता था।

गौतम बुद्ध की देशना का उद्देश्य उन लोगों को उत्तम मार्ग दिखाना था जो मार्ग से भटक गए थे।[1]

गौतम बुद्ध का ज्ञान अनन्त था 'वृद्धज्ञानमनन्त'[2] गौतम बुद्ध का उद्देश्य गृह त्याग और उनका बोधित्व को प्राप्त करना मनुष्य के दु:खों को देखकर ही उत्पन्न हआ था। मनुष्य की अनियमितताएँ उसके दु:खों में परिणत हो जाती है और वह पीड़ा पर आधारित हो जाता है।[3] उन्होंने मनुष्यों को कई प्रकार की पीडा विपत्तियों से घिरा पाया है[4] संसार को दु:ख से वशीभूत पाकर क्रोध रहित होकर दु:खी मनुष्यों के प्रति मैत्री और करुणापूर्ण व्यवहार का उपदेश दिया। मानव को दोषों से भरा देखकर वैद्य के समान उसकी व्याधियों को दूर करने के लिए समुचित औषधि उपचार और सुपथ्य बताया।[5] वे महावैद्य थे।[6] यही उनका सद्धर्म था।[7] इन्होंने मध्यम मार्ग की व्याख्या की तथा तय राग और विराग को वैराग्य के मध्य चलने वाले को दु:खों से निवृत्ति का मार्ग बताया, जिसमें सुख मिलता है।[8]

बुद्ध ने अपने अभूतपूर्व शिक्षा पद्धति में चार आर्य सत्यों को जोड़ा दुख, दु:ख समुदय, दु:ख निरोध, दु:ख निरोध गामिनि।[9] बुद्ध के अनुसार सम्पूर्ण दु:ख स्कन्ध अविद्या और तृष्णा पर आधारित थी।

बुद्धत्व का आदर्श प्राचीन समय में भी था, जनता के लिए बुद्ध होना आपतत: शम्य नहीं था परन्तु अर्हत पद पर उत्थित होकर निर्वाण लाभ करना अर्थात दु:ख का उपशम करना, सभी को इष्ट था। किन्तु जिस स्थिति में अपना और दूसरों का दु:ख समान प्रतीत होता है और अपनी सत्ता का बोध विश्व्यापी हो जाता है अर्थात् जब समस्त विश्व में अपनत्व आ जाता है उस समय सबकी दु:ख निवृत्ति ही अपने दु:ख की निवृत्ति में परिणत हो जाती है। इस क्रम विकास में व्यक्ति का शत शत जन्म बीत जाता है।[10]

शरीरमाद्यं खलु धर्मसाधनम् कुमार संभवम्[11]

स्वस्थ शरीर ही सर्वप्रथम धर्म का साधन है। प्राचीन भारत में इस रहस्य को भली भाँति समझ लिया गया था कि स्वास्थ्य संवर्धन शरीर का प्रथम धर्म एवं लक्ष्य है। बौद्ध ग्रंथ मिलिन्द पण्हो में मनुष्य के शरीर के दस गण माने गए है– सर्दी गर्मी, भूख, प्यास, मल, मूत्र थकावट रोग बुढ़ापा एवं मृत्यु।

शारीरिक कष्ट से आयु क्षीण होती है और आर्युविद्या इसका उपचार एवं समाधान बताती है। अन्य वेदों की शिक्षा के साथ आयुर्वेद का भी अध्ययन अध्यापन होता था।[12] इस काल में (बुद्ध के काल में) भैषज्य[13] एवं वैद्यक[14] शास्त्र का विशेष महत्व था। विभिन्न रोग

चाहें वो शारीरिक हो या मानसिक उसका निदान औषधि विज्ञान और वैद्यकों पर यथेष्ट विचार किया गया था।[15]

तिब्बती बौद्धग्रंथों में पंच महाविद्याओं का वर्णन मिलता है। तीसरी बौद्ध विद्या चिकित्सा विद्या को कहते है। इसमें शरीर की रक्षा गुप्तयंत्र औषधि संबंधी धातुएँ शल्य चिकित्सा और जड़ी बूटियों का निर्देशन है। आर्युविद्या में रोगी के रोग का ज्ञान, रोग की उत्पत्ति का ज्ञान, रोग का निरोध एवं रोग के निरोध के लिए उपचार का ज्ञान निहित है। बौद्ध परंपरा के ज्ञानी पुरुष वैद्य चिकित्सक, को भिषक कहते है।

बौद्ध ग्रंथों विनयपिटक से ज्ञात होता है कि भगवान् बुद्ध एक रोगी भिक्षु की सेवा, शुश्रूषा करते है। साथ में आनन्द सहायक की भूमिका में कार्य करते है। जीवक कौमारमृत का विवरण महावग्ग में आता है जो तत्कालीन वैद्य एवं शल्य चिकित्सक संबंधी ज्ञान और उसके अभ्यास का अच्छा परिचय देता है। स्वस्थ शरीर के लिए स्सावन का उपयोग नागार्जुन के ग्रंथो से पता चलता है।

छठी शताब्दी ई. के पूर्व भारतीय समाज में प्रचलित औषधियों विनय पिटक के भैषज्य स्कन्धक एवं संस्कृत ग्रंथ मूल सर्वास्तिवाद – विनयवस्तु के भैषज्य वस्तु शीर्षक के अन्तर्गत आते है। शल्य चिकित्सा की दृष्टि से जीवक का नाम प्रसिद्ध है। सम्राट् अशोक ने औषधालय खुलवाएँ तथा चिकित्सा पर जोर दिया, दवाईयों पर जोर दिया गया।

"सब्बीतीयों विज्जन्तु, सख्खरोग विनस्सतु भा ते भवतु अंतरायो, सुखी दिर्घायुभयो।।'

भगवान् बुद्ध ने अपने अभिभाषण में विकृत मोचन को बताया है जिनका परिचय निम्नलिखित प्रस्तुत है–

1. उच्चार
2. प्रस्राव
3. गायिका
4. मृत्तिका
5. उच्चार– अचिर वत्सकों का शब्द
6. प्रस्राव– उसी का मूत्र
7. गायिका– कान्वन कमीबल, अश्वत्थ, उदुम्बर और अयोथ का भस्म
8. मृत्तिका–चार अंगुली को खोदकर जो मिट्टी निकाली जाय, वह मृत्तिका है।

बुद्ध भैषज्य थे उन्होंने अपने शिष्य को स्वस्थ करने के लिए आनन्द को महामयूरी विद्या सीखाई थी। भगवान बुद्ध महामयूरी विद्या की महिमा बताते हुए कहते है वाराणसी में किसी समय एक दारक को सर्प ने डस लिया था उसको मृतक घोषित कर दिया गया नाग मण्डलिक ने तब उसे इसी विद्या से पुर्नजिवित किया था।[16]

शरद ऋतु में बुद्ध ने शिष्यों को पाँच औषधि की अनुमति दी थी जिसको लेने से वह रोग मुक्त रहे पाँच भैषज्य धी, मक्खन, तेल, मधु और खांड। इसे सेवन करने का उपदेश दिया था।[17]

बौद्ध कालीन आर्युविद्या का अभिलेखों में उल्लेख- मौर्य वंश के शासक सम्राट्

अशोक ने बौद्ध धर्म को प्रचार प्रसार के लिए पश्चिम एशिया में बौद्ध भिक्षुओं को भेजा था। बर्मा, लंका से लेकर सुदूर पश्चिम मिश्र, सीरिया, फिलीस्तीन, मकदूनियाँ तक धर्म प्रचारक प्रचारार्थ गए। शिलालेखों को जगह- जगह खुदवाया गया। अशोक के दूसरे शिलालेखों में यह लिखित है कि उसने दो प्रकार की चिकित्सा प्रबन्धन की बात कही है- (1) पहला मनुष्यों के लिए, दूसरा पशुओं के लिए। औषधीय वनस्पतियाँ, मूल एवं फल जहाँ नहीं होते वहाँ बाहर से पहुँचाए गए और उनका बीजारोपण किया गया। औषधालयों का निर्माण कराया।[18]

अशोक अभिलेखों में कहते है कि मैंने मनुष्यों एवं पशुओं दोनों के लिए चिकित्सा का प्रबन्ध किया है। कंद मूल, वनस्पतियों मंगाकर बोई गई, जगह जगह पहुँचाई गई।[19]

बौद्ध धर्म की कथाओं में जीवक का नाम आता है, जिनके गुरु आत्रेय बताये जाते है। षतिब्बत की उपकथाओं में तक्षशिला के एक आत्रेय का जिक्र आता है जो जीवक के आचार्य थे। तक्षशिला दिशा प्रमुख (दिंगत प्रमुख) वैद्य आत्रेय से जीवक ने भैषज्य विद्या का ज्ञान प्राप्त किया था।[20] जीवक बौद्ध युग के महान रसायनज्ञ एवं शल्य चिकित्सक थे। जीवक ने राजा बिंबिसार की भी चिकित्सा की, उनका रोग ठीक हो जाने के उपरान्त राजा बिंबिसार पाँच सौ स्त्रियों को स्वर्ण आभूषण से अलंकृत करवाकर सारे गहने उतरवाकर जीवक को पारितोषक के रुप में दिया था। जीवक को प्रसन्न होकर ष्वैद्यराज्याभिषेक का आयोजन किया एवं कुमार वैद्यराज की उपाधि से सुशोभित किया।[21]

जीवक के बारे में बताया गया है कि राजगृह के श्रेष्ठि के सिर में सात वर्ष से दर्द था। जीवक ने खोपड़ी में चीरा लगाकर उसमें से दो कीड़ो को निकाला। श्रेष्ठि ने प्रसन्न होकर एक लाख मुद्राएँ उपहार में दी।[22]

जीवक शैल्य चिकित्स थे। पेट से गाँठ निकालने में तथा चीरे को सीलकर उसके घाव में दवा का लेप लगाते थे और उसकी सिलाई भी करते थे।

कपाल मोचिनी विद्या द्वारा इलाज- चिकित्सा के लिए प्रसादन नाम की मार्ग का प्रयोग करते थे। रोगी के सम्मुख रहने से रोग का यथार्थ ज्ञान हो जाता था। कपालमोचिनी विद्या के आधार पर रोगी को स्वस्थ कर देते थे।

सर्वभूत शास्त्र के बल द्वारा इलाज- जीवक ने जलोदर रोग से ग्रसित व्यक्ति का इलाज किया जलानिक्षीत दूध मथा हुआ तथा मूलक बीज को पीसकर उस रोगी को पिला दिया। सर्वभूतशास्त्र के बल पर दोनों ही प्रयोगों को जान लिया था। वैशाली में एक मल्ल (पहलवान) को कर्ण सूर रोगी को व्याप्त मुक्त किया। जीवक भस्म द्वारा भी उपचार करते थे। एक ब्राह्मण ने अपने अक्षि रोग का भैषज्य पूछा- तो उसे भस्म देकर उसे स्वस्थ होने का आशीर्वाद दिया।[23] उज्जैन के राजा प्रघोत को पाण्डुरोग की बीमारी थी उसने बिम्बसार के पास दूत भेजा तथा जीवक से उपचार हेतु निवेदन किया जब जीवक उज्जैन आए जब कषाय गंध, कषाय रस, कषाय धी के द्वारा उनको व्याधि मुक्त किया।[24]

गौतम बुद्ध का इलाज भी जीवक ने किया था। हिमालय प्रवाह के समय शीतल वायु लगने से भगवान बुद्ध पीड़ित हो गए थे। जीवक ने उनकी चिकित्सा: बहुत सावधानी

से की। गुरुहरीत का अवलेह बनाकर खाने का परामर्श दिया। राजगृह में बीसवी वर्षावास व्यतीत करते समय बुद्ध कब्ज एवं वित्त रोग से ग्रसित हो गए तब स्थविर एवं आनन्द ने जीवक को बुलाकर उनका उपचार करवाया। वैद्यराज जीवक के उपचार से प्रसन्न होकर उन्हें ग्राम, सहस्र मूल्यक गृहतिका प्रावरण (चीवर) भेंट किया। उन्होंने भगवान् बुद्ध के चरणों में अर्पित किया जिसे आनन्द ने फाड़कर भगवान एवं भिक्षुक संघ के लिए चीवर बनवाया।

राजा चण्डप्रद्योत के द्वारा प्राप्त दुशाला वस्त्र भगवान बुद्ध को अर्पित कर उनसे अनुरोध किया मन्ते । आप केवल पान्सुकुल पहनते हैं और संघ के सभी भिक्षु भी आपका अनुकरण करते है। आप उन्हें भी गृहस्थों के द्वारा प्राप्त चीवरों को पहनने की अनुमति दे।

चिकित्सकों द्वारा विभिन्न रोगों का निदान और उनकी चिकित्सा भली प्रकार से की जाती थी। रोग कई प्रकार के थे (बहु रोगों पहता)[25] विशेष कर कायिक और मानसिक[26] दिव्यावदान में चिकित्सा का उल्लेख मिलता है।

रोग– स्त्री पुरुष के भिन्न शारिरीक अवयवों के रोगों और उनकी औषधियों का भी वर्णन किया गया है।

वात रोग
पित्त रोग
कफ रोग (श्लेष्म)

चक्षु दन्त, कर्ण, धर्म, कंठ, उदगण्ड, उन्माद, सन्निपात, प्लीहा, जलोदर, मुखरोग[27] पाण्डुरोग[28] क्षय एवं व्याधि[29] इत्यादि।

रोगों को 4 भागों में बाँटा गया है– वतिका, पैत्तिका, श्लेष्मिका और सन्निपात।[30]

संसार में बहुत से कष्ट, रोग, वात, पित्त, कफ के संतुलन बिगड़ जाने से होते है। इनका उपचार बौद्ध आर्युविद्या बताती है कि जो रोगी है उसी को दवाई की जरुरत होती है। जो निरोगी है उसे दवाई का कोई प्रयोजन नहीं। मूखे को भोजन की जरुरत होती है, जिसका पेट भरा है वह भोजन का वन्या करेगा।[31]

बौद्ध ग्रंथ मिलिन्द पण्हो में एक अच्छे वैद्य जिसने पुराने सभी औषधियों का अध्ययन कर लिया हो सूत्र तथा मंत्र को ठीक ठाक जानता हो, जिसकी सारी हिचक दूर हो गयी हो, जिसको रोग की पहचान बड़ी बारीकी से हो उसका उपचार सभी रोगों की अचूक दवाईयों से निरोगी कर देता है।[32]

बौद्ध साहित्य में नागार्जुन के माध्यमिक अथवा शून्यवाद दर्शन का महत्व ज्ञात होता है। नागार्जुन ने बुद्ध की शिक्षाओं का विश्लेषण शून्य तत्व की महत्ता प्रतिपादित करते हुए की है। नागार्जुन सातवाहन वंश के राजा शातकर्णी के समकालीन माने जाते है। इन्होंने रसायन संबन्धी ग्रंथो की रचना की जिनके नाम लौह शास्त्र, रस रत्नाकर, कक्षपुट, आरोग्यमंजरी, योगसार, रसेन्द्रमंगल, रसकच्छपुट, रतिशास्त्र इत्यादि हैं। योग शतक में चिकित्सा सम्बन्धी एक सौ सूत्र है। रसरत्नाकर में रासायनिक प्रक्रियाओं का वर्णन वार्तालाप शैली मे किया गया है। नागार्जुन ने अपने उत्तर तंत्र नामक ग्रंथ में बहुत सी औषधियों बनाने के तरीके बताए है।

रस रत्नाकर में पारे के यौगिक बनाने के प्रयोग दिये गये है। इसमें सोना, चांदी, ताँबा आदि कच्ची धातुओं को निकालने और उन्हें शुद्ध करने के तरीके दिये गये है। इनका मानना था कि चिकित्सा में रस की महत्ता बहुत ज्यादा है मनुष्य की आयु की रक्षा करना चिकित्सक का कर्तव्य है वमन, विरेचनादि, संशोधन व संशयन चिकित्सा रसाधीन है।

नागार्जुन के विचार भारत में ही नहीं, भारत भूमि के बाहर ईरान मिश्र, रोम, अरब, बेबीलोन तथा ग्रीक तक पहुँचे।

औषधियाँ और उपचार- स्वयं बुद्ध को महाभैषज्य कहा गया है जो पृथ्वी पर रह रहे मानवों को विभिन्न व्याधियों से मुक्त करने के लिए घूमते रहे।[33] अत: अति पीड़ितों को स्वस्थ रखने के लिए औषधियाँ थी। अल्प मूल्य वाली औषधी जनप्रिय थी।[34]

मूल औषधियाँ- जड़ वाली औषधियों में मूलत: हल्दी, अदरक, वचस्थ, अतीस, खस, नागरमोथा और भी जड़ों का सेवन औषधि के रुप में किया जाता था।

हल्दी- इसका सेवन कफ, पित्त, चर्मरोग, मंजन, प्रेमह जोड़ों के दर्द, चोट लगने पर किया जाता है।[35]

अदरक- अदरक पाक में गुरु, तीक्ष्ण, उष्ण, अग्नि दीपक, स्वाद में कटुवाद व कफ करने वाली हाती है। आमाशय में पाचन रस पैदा करती है। इसमें प्रतिरोधात्मक क्षमता होती है।

नागर मोथा- यह चटपटा, शीतल, कड़वा, पाचक, कसैल, पित्त, रक्तविकार नाशक है।[36]

अतीस- अतीस गर्म चटपटा कड़वा, पाचक, कफ पित्त एवं खाँसी नाशक है। यह कफ नाशक है।

त्रिफला- आमलकी (आंवला) हरीक की (हड) और विभितकी (बहेड़ा) ही त्रिफला होता है। प्रमेह एवं अन्य रोग में इसका प्रयोग किया जाता है।

सूदया- सूदया नाम की औषधि घी में पका कर पीने से बुद्धि और बल बढ़ता था।

प्रमास्वरा- प्रमास्वरा नामौषधि पंचगुणोपेता[37] ।।

संजीवनी- इस औषधि से सर्प विष दूर किया जाता था।

अमोघा- नेत्र औषधि थी।

शंखनाम- यह औषधि भी आँखों में लगायी जाती है।

इक्षुरस- यह क्षय रोग की उत्तम औषधि थी।

प्रमत्तता की औषधि उन्माद के लिए यह औषधि दी जाती थी।

नीम- नीम एक विश्वविख्यात रोग प्रतिरोधक है। नीम की पत्ती, नीम का दातून, नीम का तेल, सभी औषधि के काम आते है।

तुलसी- तुलसी पित्तनाशक, वात, कृमि तथा दुर्गधनाशक है।[38] तुलसी रोगनाशक है, काली तुलसी हृदय के लिए, गरम पित्त, वृद्धि, कर, कोढ़ कफनाशक है। काढ़ा औषधि में सबसे उपयोगी है।

पीपर- सोंठ, पीपर, काली मिर्च को त्रिकूट कहा जाता है। खाँसी, दमा तथा श्वास रोगों में इसका सेवन किया जाता है।

चर्बी वाली औषधियों- मछली की चर्बी, रीद्द की चर्बी सुअर की चर्बी आदि का प्रयोग औषधि के रुप में किया जाता है।

अजवायन – अजवायन प्रकृति की ऐसी देन है जिसमें औषधीय गुण भरा हुआ है। यह तीखा, गर्म, पाचक पित्त नाशक है।

गोंद की दवाईयाँ – बबूल, हींग, सब्ज का गोंद वात पित्त कफ में दिया जाता है।

लवण की दवाईयाँ– सामुद्रिक लवण का नमक, काला नमक, सेंधा नमक, वानस्पतिक नमक रोग में प्रयोग किया जाता था।

सिर का तेल– सिर के दर्द के लिए तेल प्रयोग किया जाता था। चंदन, नीम, सरसों, (त्तिल) आदि का प्रयोग होता था। वात रोग में पका हुआ तेल का प्रयोग किया जाता था।

सर्प एवं विष चिकित्सा भी की जाती थी। विष होने पर महाविकार पिलाया जाता था। शरीर का स्वस्थ या अस्वस्थ होना आहार–विहार खान–पान पर निर्भर करता है। आहार विहार का संबन्ध ऋतुओं से रहता है। ऋतु के प्रतिकूल आहार लेने से रोगग्रस्त होने की संभावना बढ़ जाती है। बौद्धचिंतन में भोजन एवं ऋतु के विषय में यह कहा गया है कि किसी को मीठा और किसी को खट्टा भोजन अनुकूल होता है। भारतवर्ष में ऋतुओं के अनुसार विभिन्न प्रकार के आहार का प्रयोग होता है। ऋतुओं के अनुकूल ही आहार लेने से व्यक्ति स्वस्थ रहता है। सब्जियों, फल, रस, दूध, दही, छाछ, यह ऋतुओं के बदलने से इनके प्रयोग में भी बदलाव करना चाहिए।

मिलिन्द पण्हो में बताया गया है कि आहार में संयम रखना चाहिए– भोजन के पाँच गुण बताए गए है–

- भोजन सभी जीवों के प्राण की रक्षा करता है।
- भोजन सभी जीवों के बल की वृद्धि करता है।
- भोजन सभी जीवों के सौंदर्य को बनाए नखता है।
- भोजन सभी जीवों के कष्ट को दूर करता है।
- भोजन सभी जीवों की कमजोरी के हटा देता है।

दूध, दही, छाछ, नवनीत मक्खन एवं घी स्वास्थवर्धक है। गुड़ को औषधि रुप में खाना चाहिए। इच्छानुसार मूंग का सेवन करना चाहिए। छाछ को पानी मिलाकर पीना चाहिए। बीज निकाल कर फल कर सेवन करना चाहिए।[39]

विहार का अर्थ टहलना, चलना है। क्रीड़ा, व्यायाम एवं योग से शरीर स्वस्थ रहता है। बौद्ध आर्युविद्या का ऐतिहासिक विकास कनिष्क के काल में भी हुआ। अश्वघोष एक महान विद्वान् थे। इनके काल में भी आर्युविद्या के विषय में विचार प्राप्त होते है। बुद्धचरित ग्रंथ में कहा गया है कि जिस चिकित्साशास्त्र को अत्रि मुनि नहीं बना सके उसे आत्रेय मुनि ने बना दिया। कवि ने चरक का वर्णन किया है, चरक को कनिष्क के समकालीन बताया जाता है। सुश्रुत बाद में उनके अनुयायी हुए।

निष्कर्ष- गौतम बुद्ध की जडी बूँटी का विधान धर्म से जुड़ा है– चार स्मृति प्रस्थान, चार सम्यक् प्रधान, चार ऋषिवाद, पाँच इन्द्रियाँ, पाँच बल, सात बोध्यांग, संकल्प और निर्वाण की ओर ले जाने का कार्य गौतम बुद्ध ने किया। संसार में इससे बड़ी जड़ी बूटी कोई भी नहीं है।

उपर्युक्त विवरण से हमें यह ज्ञात होता है कि बुद्धकालीन चिकित्सा अपने उच्चस्थ स्थिति में थी। विदेशी धरती पर भी बौद्ध चिकित्सा का प्रचार प्रसार हुआ। वहीं

लोगों ने इसे अपनाकर स्वास्थ लाभ लिया। फल, रस, जड़, मूल, पत्तो, पारद, धातुओं इत्यादि से निर्मित औषधियों आज भी प्रयोग में आ रही है। बुद्ध मानसिक चेतना को प्रभावित कर संतुलन सिखाते है उसी प्रकार आयुर्वेद के द्वारा शरीर को किस प्रकार स्वस्थ रखें इस ज्ञान को भी आगे बढ़ाते है। बौद्ध आयुर्वेद विद्या को बौद्ध ग्रंथो में असीमित स्थान प्राप्त है जो आज भी दिशानिर्देशन कर रहा है।

संदर्भ सूची-

1. लैफमैन ललित विस्तर (439/13) (आग्नेय लाल पृ० 138)
2. लैफमैन ललित विस्तर (439/13) (आग्नेय लाल पृ० 138)
3. रेबसे सेखाय अनिच्या च ।।
4. बुद्धचरित 23/52
5. वही
6. सद्धर्म पृ० 66/7
7. सद्धर्म पृ० 66/7 ललित विस्तर 3/7 अवदान शतक 1/261/14
8. बुद्ध चरित 15/32
9. वही
10. बौद्धधर्म दर्शन पृ. अ आचार्य नरेन्द्र देव
11. कुमारसंभव
12. दिव्यावदान 328/6
13. अवदानशतक पृ० 1/3/2 दिव्यवदान 212/19, 353/3
    ंण " "21 " " 2/85/18
14. वैद्य ललितविस्तर 55/10
15. मूल सर्वास्तिवाद की विजयवस्तु मैबजन वस्तु स.अ.एस
16. विनयपिटक राहुल सांकृत्यायन पृ० 215 वागची पृ०- 29
17. महामानव बुद्ध राहुल सांकृत्यायन पृ०65
18. सम्राट् अशोक डी. आर भण्डारकर पृ० 160
19. 910भारत के वैज्ञानिक कर्णधार स्वामी सत्यप्रकाश सरस्वती
20. मूल सर्वास्तिवाद की विनयवस्तु भैषज्य पृ 157 158
21. बुद्धचर्या, राहुल सांकृत्यायन पू. 283स. डा. एस बागची पृ. 35
22. मूल सर्वास्तिवाद की विनयवस्तु सारांश भैषज्य 24- विनयपिटक महाबग्ग, अनुवाद राहुल सांकृत्यायन
23. करुणा 88/2 प्रो० ऑगनेय लाल (संस्कृत बौद्ध साहित्य में इतिहास और संस्कृति पृ० 268
24. सौ० 8/3
25. ललित विस्तर में रोगों की लम्बी सूचि दी गई है आग्नेयलाल पृ० 269
26. सौ० 9/44
27. अवदान जि. 1/119/7
28. सद्धर्म० 65-27/28
29. अनुदित मिलिन्द प्रश्न, अनु भिक्षु जगदीश काश्यप पृ० 132
30. मिलिंद पण्हो पृ०- 221
31. मित्रा ललितविस्तर 466/12-13
32. अवदानशतकजिल्द- 1/1/8
33. विनयपिटक भैषज्य स्कन्धक पृ०212 अनु० राहुल सांकृत्यायन

34. गुणकारी जड़ी बूटियाँ, आचार्य नारायण पृ०101/28
35. दिव्यावदान 71/7–9
36. जड़ी बूटियों का संसार डॉ. दीनानाथ त्रिपाठी पृ०110
37. विनयपिटक भैषज्य स्कन्धक ६ गौरस एवं फल रस का विधान अनु राहुल सांकृत्यायन पृ०248
38. बुद्धचरित 1/43 अनु० राहुल सांकृत्यायन पृ० 9

UGC Journal No. (Old) 2138
Peer-Reviewed Research Journal
Impact Factor 6.375, ISSN 0975-4083
Vol.- 28, Hindi Edition, Year-14, March 2025

भारत में क्षेत्रीय ग्रामीण बैंकों के लाभदायकता का विश्लेषण

• सुरेश कुमार जांगिड़
•• ज्योति कपूर भार्गव

सारांश- भारत के बैंकिग क्षेत्र एक अनुठा प्रयोग ग्रामीण क्षेत्रों की साख व बैंकिंग आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए क्षेत्रीय ग्रामीण बैंक की स्थापना के रूप में किया गया जिसकी सिफारिश नरसिम्हन समिति ने की थी। लाभ किसी भी उद्योग का अनिवार्य अंग हैं यह प्ररेणादायक होता हैं। वाणिज्य बैंकों के विकास और कार्यकुशलता के मापन में लाभ एक निर्णायक भुमिका निभाता हैं। लाभ बैंक के बेरोमीटर की भांति कार्य करता हैं। वर्तमान परिदृश्य में किसी भी बैंक के संतोषजनक परिचालन का माप उसके लाभ से ज्ञात किया जाता हैं। लाभ आर्थिक क्रियाकलाप का माप हैं। प्रस्तुत अध्ययन में नाबार्ड और क्षेत्रीय ग्रामीण बैंकों से व'ि 2018-19 से 2022-23 तक के आंकड़े प्राप्त क्षेत्रीय ग्रामीण बैंकों की लाभदायकता का अध्ययन किया जिसमें पाया कि लाभदायकता की स्थिति में सुधार हुआ हैं। भारत में क्षेत्रीय ग्रामीण बैंक बैंकिंग सेवाओं के विस्तार करने व असमानता को मिटाने में महत्वपुर्ण भूमिका निभा रहें हैं। क्षेत्रीय ग्रामीण बैंकों के लाभ को बढ़ानें के लिए गैर लाभकारी आस्तियों (एनपीए) को घटानें,गैर परम्परागत क्षेत्रों में निवेश करनें,प्रबंधन में दक्षता लाने जैसे उपायों को शामिल करना होगा। परिचालन व्यय में कमी,लागतों में कमी लाकर उत्पादकता को बढाना होगा। वर्तमान में एक प्रदेश एक आरआरबी के लक्ष्य की तरफ बढत हुए एकीकरण किया जाना प्रस्तावित हैं जिससे इनकी संख्या 28 हो जाएगी। इस एकीकरण प्रक्रिया से क्षेत्रीय ग्रामीण बैंकों का पूंजी आधार,तकनीकी स्तर व क्षेत्र बढ़ेगा और संचालन लागतें घटेगी।

प्रस्तावना–भारतीय अर्थव्यवस्था की अधिकांश आबादी ग्रामीण क्षेत्रों में निवास करती है जो जीविकोपार्जन के लिए कृषि व उसके सहायक कार्यों पर निर्भर रहती हैं। कृषि व उसके सहायक गतिविधियों के विकास के लिए वित्त की आवश्यकता अनिवार्य हैं। भारत में परम्परागत बैंकिंग का विकास मुख्यत: शहरी क्षेत्र में हुआ जबकि ग्रामीण क्षत्रों में बैंकिंग का विकास निम्न स्तर का रहा हैं। ग्रामीण क्षेत्र में वित्त व बैंकिग आवश्यकता की पूर्ति हेतू नरसिम्हन समिति की सिफारिश पर अध्यादेश के माध्यम से 02 अक्टूबर 1975 को क्षेत्रीय ग्रामीण बैंकों की स्थापना हुई, जिसे बाद में संसद द्वारा आर.आर.बी. एक्ट

• शोधार्थी महाराजा श्री गंगासिंह विश्वविद्यालय,बीकानेर
•• प्रोफेसर एंव विभागाध्यक्ष, श्री डुंगर राजकीय महाविद्यालय,बीकानेर

1976 द्वारा कानून बना दिया गया।

क्षेत्रीय ग्रामीण बैंक मुख्यत: ग्रामीण क्षेत्रों में स्थापित वाणिज्यक संस्थान हैं जो कृषि व उसकी सहायक गतिविधियों,व्यापार व वाणिज्य,लघु व कुटीर उद्योगों एंव अन्य उत्पादक गतिविधियों के लिए ऋण व बैंकिग सुविधाएं उपलब्ध करवाता हैं। क्षेत्रीय ग्रामीण बैंक भारत के सरकारी स्वामित्व के अधीन संचालित अनुसूचित वाणिज्यक बैंक हैं जिसमें भारत सरकार ,राज्य सरकार व प्रायोजित बैंक कि हिस्सेदारी का अनुपात 50%15%35 से संचालित हैं।

प्रोफेसर व्यास समिति (2001) जो ग्रामीण साख हेतु गठित विशेषज्ञ समिति के नाम से भी जानी जाती हैं ने क्षेत्रीय ग्रामीण बैंकों के पुर्नगठन की सिफारिश की। पहले चरण में वित्तिय वर्ष 2004-05 में 196 क्षेत्रीय ग्रामीण बैंकों का पुर्नगठन किया जिसका उद्धेश्य बेहतर नियंत्रण व वित्तिय प्रबंघन, परिचालन खर्चों में कटौती व तकनीकी क्षमता संर्वधन था। तीन चरणों में हुए एकीकरण के पश्चात 2020-21 में इनकी संख्या 43 रह गई हैं। वर्तमान में राष्ट्रीय कृषि एंव ग्रामीण विकास बैंक (नाबार्ड) के परामर्श से वित्त मंत्रालय भारत सरकार द्वारा एकीकरण के तहत 'एक राज्य,एक क्षेत्रीय ग्रामीण बैंक' की योजना प्रस्तावित हैं।

साहित्य समीक्षा-

जितेंद्र सिंह,नाउरेम शरद सिंह (2024) ने एनपीए व उसके क्षेत्रीय ग्रामीण बैंकों की रणनीति पर पडने वाले प्रभाव का अध्ययन किया। इस अध्ययन के अनुसार एनपीए बैंको की स्थिरता व प्रदर्शन में बाधाएं उत्पन्न करता हैं। एनपीए लाभदायकता में कमी के साथ फंड के रिसाइक्लिंग को भी प्रभावित करता हैं। इनके आंकलन के अनुसार 2019 तक सकल और शुद्ध एनपीए दोनों में बढ़ोतरी हुई पर बाद के वर्षों में कमी देखी गई हैं। खर्चों में कटौती व विर्िीय लचीलापन क्षेत्रीय ग्रामीण बैंकों की मजबूती के लिए अनिवार्य हैं।

तन्मय सरकार (2022) ने एकीकरण से पुर्व व पश्चात क्षेत्रीय ग्रामीण बैंकों की कार्यकुशलता का अध्ययन प्रस्तुत किया । इनके अध्ययन के अनुसार क्षेत्रीय ग्रामीण बैंको ने ग्रामीण क्षेत्रों में बैंकिंग सुविधाओं का पर्याप्त विस्तार किया हैं, लेकिन स्थापना के बाद 30 वर्षों तक गरीबों के लिए पर्याप्त ऋणों की व्यवस्था नहीं कर पाया। क्षेत्रीय ग्रामीण बैंकों ने लगातार शाखा विस्तार किया हैं। साख जमा अनुपात (C-D Ratio)घटा हैं, निवेश जमा अनुपात (I-D Ratio)बढ़ा हैं। शुद्ध लाभ की मात्रा में वृद्धि हुई हैं। क्षेत्रीय ग्रामीण बैंक ग्रामीण अर्थव्यवस्था में महत्वपूर्ण भूमिका निभा रहे हैं जिससे छोटे किसान, दस्तकार, कारीगर व समाज के वंचित वर्ग लाभांवित हो रहे हैं।

अनिल कुमार, निखिल, निशांत व अरूण कुमार (2022) ने अपने शोध में 2015-16 से 2020-21 के मध्य क्षेत्रीय ग्रामीण बैंकों में लाभदायकता का अध्ययन कर बताया कि आर्थिक सुधारों के पश्चात्(1991) बैंकिग क्षेत्र में लाभप्रदता पर ज्यादा जोर दिया गया हैं। अध्ययन के अनुसार कुल व्यय व रिटर्न टू एसेट(ROA) के मध्य नकारात्मक सम्बन्ध हैं,जो बैंको की निम्न लाभदायकता का कारण भी हैं । क्षेत्रीय ग्रामीण बैंको को गैर परम्परागत कार्यों, लागत व दक्षता प्रबंधन पर कार्य करना होगा। सावधानी

पूर्वक खर्चों में कटौती करनी होगी।कर्जमाफी की बजाए कर्ज न चुकाने वालों पर गंभीर कार्यवाही करनी होगी। लागत नियंत्रित कर उत्पादकता बढाने के प्रयास करनें होंगे।

इब्राहिम सैय्यद (2010) ने अपने अध्ययन भारत में क्षेत्रीय ग्रामीण बैंकों के प्रदर्शन मूल्यांकन में निष्कर्ष दिया कि एकीकरण के पश्चात् क्षेत्रीय ग्रामीण बैंकों के प्रदर्शन में उल्लेखनीय सुधार हुआ हैं।

जसवीर एस सुरा (2008) के अध्ययन के अनुसार क्षेत्रीय ग्रामीण बैंकों का प्रदर्शन उत्साहजनक नहीं रहा हैं। खराब क्रेडिट जमा अनुपात क्षेत्रीय ग्रामीण बैंकों के सुधार में सेंध लगा रहा हैं। क्षेत्रीय ग्रामीण बैंक को गरीबों का बैंक माना जाता हैं इसलिए देश के सभी राज्यों विशेष तौर पर पिछड़े राज्यों में इनका होना बेहतर हैं। सरकार को आरआरबी को जमीनी तौर लाभकारी बनाने के लिए शाखाओं का विस्तार करना होगा। बैंक प्रबंधन और प्रायोजक बैंक का दायित्त्व हैं कि क्रेडिट जमा अनुपात को बढाने के लिए उचित कदम उठाएं ताकि ग्रामीण भारत के लिए क्षेत्रीय ग्रामीण बैंक प्रासंगिक रह सके।

नरसिम्हन समिति (1991) के अनुसार क्षेत्रीय ग्रामीण बैंकों की आर्थिक स्थिति कमजोर हैं कुल 196 में से 172 को ऋण वसूली प्रदर्शन के साथ लाभहीनता की स्थिति में दर्शाया गया हैं(जुन 1993)। इन बैंकों का कम ईक्विटी आधार अधिकांश क्षेत्रीय ग्रामीण बैंकों के ऋण घाटे को कवर नहीं करता था। कुछ बैंकों का पूंजी के अलावा सार्वजनिक जमा का भी क्षरण हुआ था । क्षेत्रीय ग्रामीण बैंकों के सफल संचालन के लिए सुझाव दिया कि क्षेत्रीय ग्रामीण बैंकों को सभी प्रकार के बैंकिंग व्यवसाय में शामिल होने की अनुमति देनी चाहिए और उन्हे अपने संचालन को लक्षित समूह तक रखने के लिए मजबूर नहीं किया जाना चाहिए। इस सुझाव को तुरंत स्वीकार कर लिया गया जो एक अच्छा कदम साबित हुआ।

कनिका व नेन्सी (2013) ने 2006 से 2012 तक क्षेत्रीय ग्रामीण बैंकों के वित्तिय प्रदर्शन का अध्ययन कर बताया सरकार को क्षेत्रीय ग्रामीण बैंकों को लाभकारी संस्था बनाने के लिए ऐसे उपाय अपनाने होंगे जो गुणात्मक,सुरक्षित व तेज बैंकिग को बढावा दे। साथ ही सुझाव दिया कि सहकारी बैंको को भी वाणिज्यक बैंको के साथ मिलकर क्षेत्रीय ग्रामीण बैंकों की स्थापना करनी चाहिए। क्षेत्रीय ग्रामीण बैंकों को आय बढाकर व लागतों पर नियंत्रण कर लाभ को बढाने पर जोर देना होगा।

संदीप चौधरी व मनदीप कौर (2021) ने क्षेत्रीय ग्रामीण बैंको के एकीकरण से पूर्व व पश्चात् लाभदायकता का अध्ययन किया जिसके अनुसार केन्द्र सरकार, आरबीआई की एकीकरण की मुहीम से क्षेत्रीय ग्रामीण बैंको की लाभदायकता व प्रदर्शन में सुधार आ रहा हैं। अध्ययन से पता चला हैं कि विविधीकरण और क्रेडिट जोखिम का क्षेत्रीय ग्रामीण बैंको की लाभदायकता से सकारात्मक और महत्वपूर्ण संबंध हैं जबकि लागत अक्षमता ने क्षेत्रीय ग्रामीण बैंकों की लाभप्रदता को कमजोर किया हैं। इस अध्ययन में पाया कि एकीकृत क्षेत्रीय ग्रामीण बैंको की आरओए व आरओई में सुधार आया हैं।

अध्ययन के उद्धेश्य–

- क्षेत्रीय ग्रामीण बैंकों के लाभदायकता को प्रभावित करने वाले कारकों का अध्ययन करना।
- क्षेत्रीय ग्रामीण बैंकों में लाभदायकता की प्रवृति का अध्ययन करना।
- क्षेत्रीय ग्रामीण बैंकों के कुल व्यय और परिसंपत्तियों पर रिटर्न (ROA) के मध्य संबंध का अध्ययन करना।

शोध प्रविधि व आंकड़े - इस अध्ययन में अनुपात आकंलन विधि का उपयोग किया जाएगा जिसमें लाभदायकता को निर्धारित करने वाले विभिन्न अनुपातों का उपयोग किया जाएगा। यह अध्ययन पुर्णत: द्वितीयक आंकडों पर आधारित हैं। इस अध्ययन में वित्तिय वर्ष 2018-19 से 2022-23 तक के आंकड़े शामिल किए गए हैं। शोध के उद्धेश्यों के अनुसार आंकडे रिजर्व बैंक ऑफ इंडिया, नाबार्ड व क्षेत्रीय ग्रामीण बैंकों के वार्षिक प्रकाशनों व विभिन्न रिर्पोट्स से प्राप्त किए गए हैं। प्राप्त आंकड़े को रेखाचित्रों के माध्यम से प्रस्तुत किया गया हैं।

लाभदायकता के निर्धारक घटक- लाभ किसी भी उद्योग का अनिवार्य अंग हैं यह प्रेरणादायक होता हैं। वाणिज्य बैंकों के विकास और कार्यकुशलता के मापन में लाभ एक निर्णायक भुमिका निभाता हैं। लाभ बैंक के बेरोमीटर की भांति कार्य करता हैं। वर्तमान परिदृश्य में किसी भी बैंक के संतोषजनक परिचालन का माप उसके लाभ से ज्ञात किया जाता हैं। लाभ आर्थिक क्रियाकलाप का माप हैं।

लाभ से तात्पर्य निश्चित अवधि समग्र आय व समग्र व्यय के निरपेक्ष अन्तर के माप से हैं,वहीं लाभदायकता एक सापेक्ष माप हैं जिसके आधार पर विभिन्न बैंकों के मध्य लाभ हानि की तुलना की जा सकती हैं। लाभदायकता वह अनुपात हैं जो लाभ का कुल आगम, कुल जमा या कुल निधि के प्रतिशत के रुप में निर्धारित किया जाता हैं जो ऋणात्मक या धनात्मक हो सकता हैं। इस प्रकार आय और व्यय दो महत्वपुर्ण स्तम्भ हैं जिन पर लाभदायता निर्भर करती हैं जिनका संक्षिप्त विवरण इस प्रकार हैं-

विश्लेषणऔरव्याख्या-लाभदायकता एक व्यापक विषय हैं जिसका विश्लेषण करना नीति निर्माताओं,व्यावसायियों व बैंकर्स के लिए आवश्यक होता हैं। लाभदायकता के विश्लेषण करने के लिए नाबार्ड, रिजर्व बैंक ऑफ इंडिया द्वारा जारी वित्तिय वर्ष 2018-19 से 2022-23 तक के आंकड़ों का उपयोग करेंगे। लाभदायकता को प्रभावित करने वाले अनेकों कारक हैं उनका विश्लेषण भी किया गया हैं।

तालिका 01

लाभ व हानि प्राप्त करनें वाले क्षेत्रीय ग्रामीण बैंको का विवरण

Financial year	No.of RRB's	No.in Profit	Profit of RRB's (Amount in crore)	No.in Loss	Loss of RRB's (Amount in crore)
2018-19	56	45	2506	11	1005
2019-20	45	26	2203	19	4411
2020-21	43	30	3550	13	1867
2021-22	43	34	4116	9	897
2022-23	43	37	6178	6	1205

स्त्रोत-वित्तिय सेवाएं विभाग,भारत सरकार

सर्वप्रथम वित्तिय वर्ष 2018–19 से 2022–23 तक के लाभ व हानि प्राप्त करनें वाले क्षेत्रीय ग्रामीण बैंको का विवरण का अवलोकन करते हैं। तालिका 01 के अवलोकन से ज्ञात होता हैं कि वित्तिय वर्ष 2018–19 में 56 क्षेत्रीय ग्रामीण बैंक कार्य कर रहे थे जिसमें से 45 बैंक लाभ में तथा 11 बैंक हानि प्राप्त कर रहे थे। वित्तिय वर्ष 2019–20 एकीकरण के पश्चात् 56 के स्थान पर 45 क्षेत्रीय ग्रामीण बैंक कार्य कर रहे थे जिसमें से 26 बैंक लाभ में तथा 19 बैंक हानि प्राप्त कर रहे थे। वित्तिय वर्ष 2020–21 एकीकरण के पश्चात् 45 के स्थान पर 43 क्षेत्रीय ग्रामीण बैंक कार्य कर रहे थे जिसमें से 30 बैंक लाभ में तथा 13 बैंक हानि प्राप्त कर रहे थे। इसी प्रकार वित्तिय वर्ष 2021–22 में 43 क्षेत्रीय ग्रामीण बैंक कार्य कर रहे थे जिसमें से 34 बैंक लाभ में तथा 9 बैंक हानि प्राप्त कर रहे थे। वित्तिय वर्ष 2022–23 में 43 क्षेत्रीय ग्रामीण बैंक कार्य कर रहे थे जिसमें से 37 बैंक लाभ में तथा 6 बैंक हानि प्राप्त कर रहे थे। आंकडों कों देखने से पता चलता हैं कि 2019–20 के पश्चात् हानि वहन करने वाली क्षेत्रीय ग्रामीण बैंको की संख्या में लगातार कमी आई हैं जो 19 से घटकर 2022–23 में 6 हो गई हैं। क्षेत्रीय ग्रामीण बैंकों कें पुर्नपूंजीकरण स्कीम के कारण व अन्य उपायों के लागू करने के कारण बैंको की वित्तिय स्थिति में सुधार आया हैं।

तालिका 02 में हमनें कुल आय, कुल व्यय, परिचालन लाभ, शुद्ध लाभ व कुल परिसंपत्ति के वित्तिय वर्ष 2018–19 से 2022–23 तक के आंकड़ों कों दर्शाया हैं, फिर उनके समान्तर माध्य, प्रमाप विचलन व विचरण गुणांक आंकलित कर दर्शाए गए हैं–

तालिका 02

क्षेत्रीय ग्रामीण बैंको का वित्तिय प्रदर्शन (राशि करोड़ रूपये में)

Year	Total Income	Total Expenditure	Operating Profit	Net profit	Total Assests
2018-19	43180	42893	5619	-548	516263
2019-20	49452	51660	2972	1682	555660
2020-21	53858	52176	8304	-2208	617305
2021-22	56585	53367	10337	3219	705400
2022-23	59427	54454	10845	4974	771462
Average	52500.4	50910	7615.4	1423.8	633218
Standard Deviation	5703.81	4123.94	2961.70	2567.93	94094.19
C.V.(%)	10.86	8.1	38.89	180.36	14.86

स्त्रोत–नाबार्ड द्वारा जारी क्षेत्रीय ग्रामीण बैंको की वित्तिय विवरण रिर्पोट्स 2018–19 से 2022–23 तक

उपरोक्त तालिका 02 के अनुसार शुद्ध लाभ 2018–19 से 2022–23 में से 2018–19 व 2020–21 में ऋणात्मक रहा हैं जबकि शेष वर्षों में वृद्धि हुई हैं, माध्य 1423.8 रहा हैं। 2020–21 में कोविड महामारी व घटती ब्याज आय के कारण शुद्ध लाभ में भारी कमी आई थी। यहां प्रमाप विचलन 2961.70 व विचरण गुणांक 180.36 हैं। कुल व्यय 2019–20 को छोडकर शेष वित्तिय वर्षों में कुल आय से कम ही रहा हैं। परिचालन लाभ 2019–20 को छोडकर शेष वित्तिय वर्षों में वृद्धि हुई हैं, यहां प्रमाप विचलन 2961.70 व विचरण गुणांक 38.89 हैं।

तालिका 03
क्षेत्रीय ग्रामीण बैंको के लाभदायकता अनुपात

Year	Operating profit Ratio	Return on assets Ratio	Assests Utilisation Ratio	Expenditure Ratio	Profit Margin Ratio
2018-19	1.09	-0.11	8.36	8.31	-1.27
2019-20	0.53	0.30	8.90	9.30	3.40
2020-21	1.35	-0.36	8.72	8.45	-4.10
2021-22	1.47	0.48	8.02	7.57	5.69
2022-23	1.41	0.69	7.70	7.06	8.37
Average	1.17	0.20	8.34	8.14	2.42
Standard Deviation	0.34	0.38	0.44	0.77	4.54
C.V.(%)	29.44	192.12	5.27	9.47	187.87

स्त्रोत- उपरोक्त तालिका -01 से आंकलित

तालिका 02 व रेखाचित्र 01 से ज्ञात होता हैं कि क्षेत्रीय ग्रामीण बैंको का परिचालन लाभ अनुपात (Operating Profit Ratio) अच्छा नहीं हैं जो अधिकतम 2021-22 में 1.47 और न्यूनतम 2019-20 में 0.53 रहा हैं। प्रमाप विचलन 0.34 तथा विचलन गुणांक 29.44 रहा हैं। अध्ययन अवधि के दौरान परिचालन लाभ अनुपात (Operating Profit Ratio) उतार चढाव वाला रहा हैं।

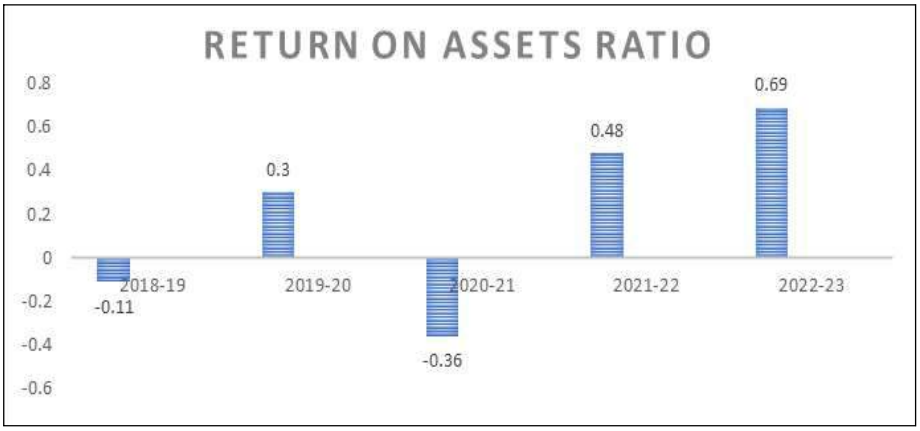

रेखाचित्र 02

तालिका 02 व रेखाचित्र 02 से ज्ञात होता हैं कि क्षेत्रीय ग्रामीण बैंको के परिसंपतियों पर प्रतिफल के अनुपात (Return on Assets Ratio) वर्ष 2020-21 में न्यूनतम -0.36 तथा अधिकतम 2022-23 में 0.69 रहा हैं। अध्ययन अवधि के दौरान उतार चढाव देखा गया हैं जो बैंको की लाभदायकता के लिए उचित नहीं हैं।

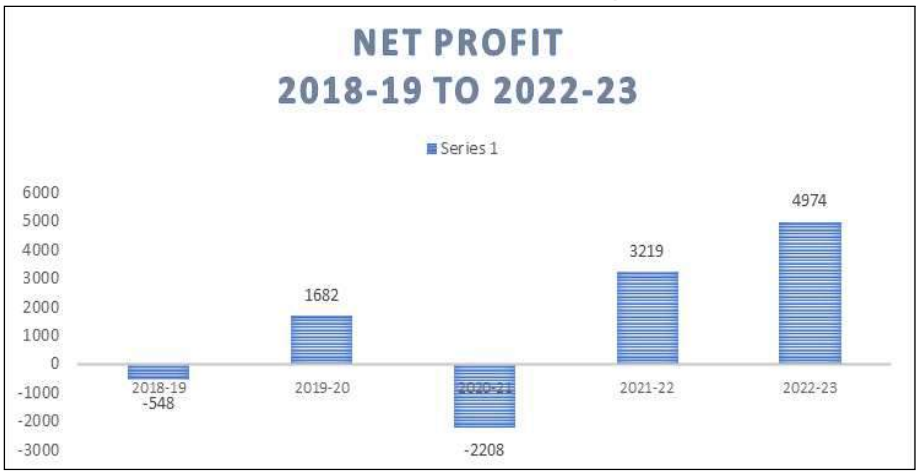

तालिका 01 व रेखाचित्र 03 से ज्ञात होता हैं कि क्षेत्रीय ग्रामीण बैंको के शुद्ध लाभ में काफी उतार चढाव देखे गए हैं। वर्ष 2018-19 में -548 करोड़ और 2020-21 में -2208 करोड. का शुद्ध लाभ रहा वहीं वर्ष 2019-20 में 1682 करोड, वर्ष 2021-22 में 3219 करोड़ व वर्ष 2022-23 में 4974 करोड़ का शुद्ध लाभ अर्जित किया। इस प्रकार 2021-22 व 2022-23 में लगातार बढ़ोतरी हुई हैं।

निष्कर्ष व सुझाव- भारत में बैंकिग क्षेत्र आर्थिक उदारीकरण के बाद काफी सुधार की अग्रसर हुआ हैं और अब बैंकिग क्षेत्र में भी अन्य क्षेत्रों की तरह लाभदायकता की चर्चा होने लगी हैं। इस अध्ययन में वर्ष 2018-19 से वर्ष 2022-23 तक भारत के क्षेत्रीय ग्रामीण बैंकों की लाभदायकता का विश्लेषण किया, जिससे पता चलता हैं कि लाभदायकता की स्थिति काफी कमजोर पर सुधार की और अग्रसर हैं। तालिका 01 के अवलोकन से ज्ञात होता हैं कि वित्तिय वर्ष 2018-19 में 56 क्षेत्रीय ग्रामीण बैंक संचालित हो रहे थे जिसमें से 45 बैंक लाभ में तथा 11 बैंक हानि प्राप्त कर रहे थे। वित्तिय वर्ष 2019-20 एकीकरण के पश्चात् 56 के स्थान पर 45 क्षेत्रीय ग्रामीण बैंक संचालित हो रहे थे जिसमें से 26 बैंक लाभ में तथा 19 बैंक हानि प्राप्त कर संचालित हो रहे थे। वित्तिय वर्ष 2022-23 में 43 क्षेत्रीय ग्रामीण बैंक कार्य कर रहे थे जिसमें से 37 बैंक लाभ में तथा 6 बैंक हानि प्राप्त कर संचालित हो रहे थे। आंकडों कों देखने से पता चलता हैं कि 2019-20 के पश्चात् हानि वहन करने वाली क्षेत्रीय ग्रामीण बैंको की संख्या में लगातार कमी आई हैं जो 19 से घटकर 2022-23 में 6 हो गई हैं। इसी तालिका का अवलोकन से ज्ञात होता हैं कि हानि की राशि 2018-19 में 1005 करोड थी जो 2019-20 बढ़कर 4411 करोड़ हो गई। हानि की राशि घटते हुए 2022-23 में 1205 करोड़ रह गई वहीं लाभ की मात्रा 2018-19 करोड़ था जो बढकर 2022-23 में 6178 करोड़ तक हो गया हैं। क्षेत्रीय

ग्रामीण बैंको के परिसंपतियों पर प्रतिफल के अनुपात (Return on Assets Ratio) वर्ष 2020-21 में न्यूनतम -0.36 तथा अधिकतम 2022-23 में 0.69 रहा है जो काफी उतार चढाव वाला रहा है यह बैंको की लाभदायकता के लिए उचित नहीं है। क्षेत्रीय ग्रामीण बैंको के शुद्ध लाभ में काफी उतार चढाव देखे गए है। वर्ष 2018-19 में -548 करोड़ और 2020-21 में -2208 करोड़ का शुद्ध लाभ रहा वहीं वर्ष 2019-20 में 1682 करोड़, वर्ष 2021-22 में 3219 करोड़, व वर्ष 2022-23 में 4974 करोड़ का शुद्ध लाभ अर्जित किया। क्षेत्रीय ग्रामीण बैंकों कें पुर्नपूंजीकरण स्कीम के कारण व अन्य उपायों के लागू करने के कारण बैंको की वित्तिय स्थिति में सुधार आया है।

भारत में क्षेत्रीय ग्रामीण बैंक बैंकिंग सेवाओं के विस्तार करने व असमानता को मिटाने में महत्वपुर्ण भुमिका निभा रहें है। क्षेत्रीय ग्रामीण बैंकों से ग्रामीण क्षेत्रो में साख का विस्तार, ग्रामीण क्षेत्रो तक बैंकिंग सेवाओं के विस्तार व व्यापक पहुंच और आम ग्रामीण के घर तक बैंक की सेवाओं की उपलब्धता सुनिश्चित हुई है। क्षेत्रीय ग्रामीण बैंकों के लाभ को बढ़ानें के लिए गैर लाभकारी आस्तियों (एनपीए) को घटानें,गैर परम्परागत क्षेत्रों में निवेश करनें,प्रबंधन में दक्षता लाने जैसे उपायों को शामिल करना होगा। परिचालन व्यय में कमी, लागतों में कमी लाकर उत्पादकता को बढ़ाना होगा।

संदर्भ सूची-

- Annual report of RBI.
- Batra, G.S., & Dangwal, R.C. (2005). Management ofnon-performing assets in RRBs" in Jain, S.C (eds). *Management of Non-Performing Assets in Banks*, RBSA Publishers, Jaipur, 1-19.
- Calculated from the figures available in Reserve Bank of India, Report on Trend and Progress of Banking in India,
- Chakrabarti, M. (2013). Impact of merger on the profitability performance of Regional Rural Banks (RRBS) in India: A region-wise comparative study. Asian Journal of Research in Banking and Finance, 3(8), 53-61.
- Das, A & Ghosh, S. (2004-05). Examining excess capacity in regional rural banks : Some empirical insights for India. *Prajnan,* 33(4).
- Das, S. (2014). Performance mantra of the regional rural banks: An evaluation between the pre-merger and postmerger Era. Jindal Journal of Business Research, 3(1-2), 14-28.
- Gagandeep (2015). Performance of regional rural banks pre and post amalgamation: A study of Himachal Pradesh. International Journal of Research in Commerce & Management, 6(2),76-81.
- Goenka, N.(2017). Analysis of operational efficiency of regional rural banks in Rajasthan (Doctoral dissertation, University of Kota).Shodhganga.
- Govt. of India (1991). Report of the Committee on Financial System (Narasimham Committee), Ministry of Finance, 54
- Govt. of India (2006). *Committee on Financial Sector Assessment (CFSA).*
- https://www.nabard.org/Hindi/whats-new.aspx
- Ibrahim, M. S. (2016). Role of Indian regional rural banks (RRBs) in the priority sector lending: An analysis.International Journal of Computer

Science, 2(1), 11 - 23

- Kumar (2018). Performance of regional rural banks (RRBs) in Bihar : An analytical study, International Journal of Emerging Technologies and Innovative Research, 5 (1),756-762.
- Kumar, A., Nishant, N., & Kumar, A. (2022).Profitability Analysis of Regional Rural Banks in India. International Journal of Commerce and Economics, IT , 7(1), 42-47.
- Kumar, S., Goyal, V., & Sharma, P. (2017). Performance Evaluation of Regional Rural Banks (RRBs) in India. International Journal of Management, IT and Engineering, 7(4), 202-230.
- Nair K Girish, Thirumal R Dr. Profitability and Growth of Regional Rural Banks (RRBS) In India (With Reference to the Profit Making RRBS), International Journal of Management, IT and Engineering,2012:2(9):146-167.
- Rangarajan, C (1996). *The Role of Rural Credit,* RBI Bulletin, 1(5).
- RBI (2007). *Report of the technical group to review efi cacy of existing legislative framework governing money lending and its enforcement machinery*
- Sundharam KPM. Money and Banking and International Trade; Sultan Chand & Sons, New Delhi, 2004.

UGC Journal No. (Old) 2138
Peer-Reviewed Research Journal
Impact Factor 6.375, ISSN 0975-4083
Vol.- 28, Hindi Edition, Year-14, March 2025

भारत में लोकतांत्रिक प्रक्रिया का ऐतिहासिक विश्लेषण

• अनिल हनवत्त

सारांश- भारत विश्व का सबसे बड़ा लोकतंत्र है, जिसकी लोकतांत्रिक प्रक्रिया का एक समृद्ध और जटिल इतिहास रहा है। यह शोध पत्र भारतीय लोकतंत्र की ऐतिहासिक यात्रा का विश्लेषण करता है, जिसमें प्राचीन काल से आधुनिक समय तक की लोकतांत्रिक परंपराओं, संविधान निर्माण, चुनावी प्रक्रिया, राजनीतिक संस्थाओं और लोकतांत्रिक सदृढ़ीकरण की प्रक्रिया को विस्तृत रूप से अध्ययन किया गया है। यह अध्ययन भारत में लोकतंत्र की जड़ों को वैदिक काल, गणराज्यों और मौर्य तथा गुप्त साम्राज्य की प्रशासनिक प्रणालियों में खोजता है। इसके पश्चात, औपनिवेशिक काल में ब्रिटिश शासन के दौरान संवैधानिक सुधारों, 1857 के विद्रोह, 1935 के भारत सरकार अधिनियम और स्वतंत्रता संग्राम के दौरान लोकतांत्रिक विचारधारा के विकास पर प्रकाश डाला गया है। स्वतंत्रता के पश्चात 1950 में संविधान लागू होने से लेकर वर्तमान समय तक चुनावी सुधारों, राजनीतिक दलों की भूमिका, चुनाव आयोग की स्वतंत्रता, न्यायपालिका और विधायिका के संबंधों तथा नागरिक सहभागिता के बढ़ते प्रभाव को परखा गया है। इस शोध पत्र में भारतीय लोकतांत्रिक प्रणाली की स्थिरता और चुनौतियों का भी विश्लेषण किया गया है, जिसमें वंशवादी राजनीति, धन-बल और बाहुबल का प्रभाव, चुनाव सुधार, ईवीएम तथा हाल के वर्षो में बढ़ती लोकभागीदारी जैसे कारकों को समाहित किया गया है। निष्कर्षत:, यह अध्ययन भारत में लोकतंत्र के सतत विकास और सुदृढ़ीकरण की प्रक्रिया को रेखांकित करता है

मुख्य शब्द- भारतीय लोकतंत्र, चुनावी प्रक्रिया, संविधान, राजनीतिक दल, लोकतांत्रिक सुदृढ़ीकरण, चुनाव सुधार, नागरिक सहभागिता

भारत में लोकतांत्रिक प्रणाली के विकास का इतिहास

1.वैदिक काल में लोकतांत्रिक तत्व- वैदिक ग्रंथों (ऋग्वेद, अथर्ववेद) में सभा और समिति का उल्लेख मिलता है, जो सामूहिक निर्णय लेने की संस्थाएँ थीं (संकेत- ऋग्वेद 10-191-3)।[1] सभा में श्रेष्ठ वर्ग (राजा, पुरोहित) होते थे, जबकि समिति में आम जनता की भागीदारी होती थी (आर.सी. मजूमदार,1954)। ये संस्थाएँ राजा को निरंकुश बनने से रोकती थीं और शासननिर्णयों में सहायक होती थीं (डी.डी. कौशांबी, 1965)।[2]

• सहायक प्राध्यापक राजनीति विज्ञान, जटाशंकर त्रिवेदी, शासकीय पीजी महाविद्यालय बालाघाट (म.प्र.)

2.महाजनपदों और गणराज्यों में लोकतांत्रिक परंपराएँ- छठी शताब्दी ईसा पूर्व में 16 महाजन पदों में कई गणराज्य थे, जहाँ सामूहिक शासन प्रणालीथी (संकेत बौद्ध ग्रंथ अंगुत्तर निकाय 1910)। लिच्छवी, शाक्य, मल्ल, वज्जि, और काशीगण राज्यों में निर्णय जनसभा द्वारा होते थे (आर.सी. दत्त, 1902)। विशेष रूप सेवज्जि संघ में राजा के बजाय एक निर्वाचित परिषद शासन करती थी, जिसे बाद में "संवैधानिक लोकतंत्र" के पूर्ववर्ती रूप में देखा गया (रोमिला थापर,1990)।[3]

3.मौर्य प्रशासन में लोकतांत्रिक तत्व- चाणक्य के अर्थशास्त्र (321 ईसा पूर्व) में शासन को लोक कल्याणकारी और उत्तरदायी बनाने पर जोर दिया गया (आर.पी. कांगले,1965)।अशोक (268-232 ईसा पूर्व) के शासन में "धम्म महामात्र" नामक अधिकारी नियुक्त किए गए, जो जनता की राय लेकर शासन को सूचित करते थे (एच. सी. रेचौधरी,1923")। मौर्य साम्राज्य में विकेंद्रीकृत प्रशासन की नीति थी, जिससे प्रजा को स्थानीय स्तर पर निर्णय लेने का अवसर मिलता था (डी.एन. झा, 2004)।[4]

4.गुप्त प्रशासन और लोकतांत्रिक प्रवृत्तियाँ- गुप्त शासन (319-550 ईसा पूर्व) मेंग्राम सभाओं और नगर समितियों को प्रशासनिक अधिकार दिए गए, जो लोकतांत्रिक प्रक्रिया की ओर संकेत करते हैं (रोमिला थापर, 1990)। प्रशासनिक विकेंद्रीकरण और पंचायत प्रणाली ने जनता की भागीदारी को बढ़ावा दिया (नीलकंठ शास्त्री, 2001)। हालांकि गुप्त काल में राजशाही मजबूत थी, लेकिन स्थानीय शासन में जनता की भागीदारी एक लोकतांत्रिक तत्व को दर्शाती है (आर.सी. मजूमदार, 1954)

इस तरह भारत में लोकतंत्र की ऐतिहासिक जड़ें गहरी हैं। वैदिक काल की सभा-समिति, महाजनपदों के गणराज्य, और मौर्य एवं गुप्त प्रशासन की विकेंद्रीकृत प्रणाली भारतीय लोकतांत्रिक परंपराओं की नींव रखती हैं। आधुनिक भारतीय लोकतंत्र इन्हीं ऐतिहासिक परंपराओं की उन्नत अभिव्यक्ति है।[5]

5.औपनिवेशिक काल में संवैधानिक सुधार- ब्रिटिश औपनिवेशिक शासन के दौरान भारत में लोकतांत्रिक संस्थाओं और संवैधानिक सुधारों की एक क्रमिक विकास यात्रा देखी गई। 1857 के विद्रोह से लेकर 1935 के भारत सरकार अधिनियम तक, भारत में संवैधानिक सुधारों की प्रक्रिया चली, जिससे भारतीय स्वतंत्रता संग्राम में लोकतांत्रिक चेतना का विकास हुआ।

1857 का विद्रोह और राजनीतिक चेतना का उदय- 1857 का विद्रोह भारतीय स्वतंत्रता संग्राम का पहला संगठित प्रयास था, जिसने ब्रिटिश शासन के विरुद्ध व्यापक असंतोष को प्रकट किया। ब्रिटिश आर्थिक शोषण, सामाजिक-धार्मिक हस्तक्षेप और सैन्य असंतोष प्रमुख कारण थे (सी.ए. बेली,)।विद्रोह के बाद, 1858 का अधिनियम पारित हुआ, जिससे ईस्ट इंडिया कंपनी का शासन समाप्त हुआ और भारत ब्रिटिश क्राउन के अधीन आ गया (आर.सी. मजूमदार, 1954) इस विद्रोह ने भारतीयों में एकजुटता और राष्ट्रीय पहचान को विकसित किया, जो आगे के राजनीतिक आंदोलनों के लिए प्रेरणा बना।

ब्रिटिश संवैधानिक सुधार और भारतीय राजनीतिक भागीदारी- ब्रिटिश सरकार ने 19 वीं और 20 वीं शताब्दी में संवैधानिक सुधार लागू किए, जिससे भारतीयों को धीरे-धीरे राजनीतिक अधिकार मिले।

1.भारतीय परिषद अधिनियम,1861- पहली बार भारतीयों को गवर्नर-जनरल की परिषद में नामांकित किया गया। प्रशासनिक निर्णयों में भारतीयों की सीमित भागीदारी सुनिश्चित हुई। यह सुधार ब्रिटिश सरकार द्वारा 1857 के विद्रोह के बाद भारतीयों को शांत करने के लिए किया गया था (एच.एच. डोडवेल, 1932)।

2.भारतीय परिषद अधिनियम 1832- पहली बार प्रतिनिधित्व की अवधारणा आई और विधान परिषदों में बहस की अनुमति दी गई। यद्यपि यह सीमित सुधार था, परंतु इससे भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस को संवैधानिक संघर्ष की दिशा में आगे बढ़ने का आधार मिला (बी.एन. पांडे, 1969)

3.मार्ले-मिंटो सुधार, 1909- पहली बार अलग निर्वाचिका की शुरुआत हुई, जिससे सांप्रदायिक आधार पर राजनीति को बढ़ावा मिला। भारतीयों को केंद्रीय एवं प्रांतीय विधान परिषदों में सीमित प्रतिनिधित्व मिला। यह अधिनियम मुस्लिम लीग की राजनीति को संस्थागत रूप से सशक्त करने वाला साबित हुआ (पीटर हार्डी, 1972)।

4.मोंटेग्यू-चेम्सफोर्ड सुधार 1919- द्वैध शासन की शुरुआत हुई, जिससे प्रांतीय स्तर पर भारतीय मंत्रियों को शिक्षा, स्वास्थ्य, और कृषि जैसे विषय सौंपे गए। भारतीयों को पहली बार शासन में प्रभावी भागीदारी का अवसर मिला, लेकिन वास्तविक सत्ता ब्रिटिश सरकार के पास ही बनी रही। इस अधिनियम की सीमाओं की आलोचना गांधीजी और कांग्रेस ने की, जिससे असहयोग आंदोलन का जन्म हुआ (बिपिन चंद्र, 1988)।1935 का भारत सरकार अधिनियम और लोकतांत्रिक नींव भारत सरकार अधिनियम, 1935, ब्रिटिश भारत में सबसे व्यापक संवैधानिक सुधार था। द्वैद शासन की जगह पूर्ण प्रांतीय दी गई। संघीय व्यवस्था की अवधारणा आई, लेकिन इसे लागू नहीं किया गया। भारतीयों को पहली बार सीमित सीधे मतदान के अधिकार मिले। गवर्नर-जनरल की शक्तियाँ अभी भी ब्रिटिश सरकार के नियंत्रण में रहीं। इस अधिनियम ने भारतीय लोकतंत्र की बुनियाद रखी और 1947 के भारतीय संविधान के लिए प्रेरणा स्रोत बना (ग्रेनविल ऑस्टिन, 1966)।

स्वतंत्रता संग्राम और लोकतांत्रिक विचारधारा का विकास- भारतीय स्वतंत्रता आंदोलन के दौरान लोकतांत्रिक चेतना का विकास हुआ, जिसने आधुनिक भारत के लोकतांत्रिक ढांचे को आकार दिया।1885 में भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस की स्थापना लोकतांत्रिक विचारधारा के विकास में एक महत्वपूर्ण कदम था। 1920 के बाद गांधीजी ने असहयोग आंदोलन और सविनय अवज्ञा आंदोलन के माध्यम से लोकतांत्रिक विरोध प्रदर्शन की परंपरा विकसित की (रामचंद्र गुहा, 2007)। नेहरू रिपोर्ट (1928) में संविधान सभा द्वारा भारतीय संविधान निर्माण की मांग की गई। लाहौर अधिवेशन (1929) में पूर्ण स्वराज की मांग की गई। क्रिप्स मिशन (1942) और कैबिनेट मिशन (1946) ने भारतीय संविधान निर्माण का मार्ग प्रशस्त किया।

इस तरह 1857 के विद्रोह से लेकर 1935 के भारत सरकार अधिनियम और स्वतंत्रता संग्राम तक, भारत में लोकतांत्रिक चेतना धीरे-धीरे विकसित हुई। ब्रिटिश शासन के संवैधानिक सुधारों ने भारत में प्रतिनिधित्व की नींव रखी, जिसे स्वतंत्रता संग्राम ने सशक्त किया। अंततः, 1947 में भारत एक संप्रभु लोकतांत्रिक राष्ट्र बना, जिसकी जड़ें इन्हीं ऐतिहासिक प्रक्रियाओं में निहित थीं।

1950 में संविधान लागू होने पर भारतीय लोकतांत्रिक प्रणाली- भारत ने 15 अगस्त 1947 को स्वतंत्रता प्राप्त की और इसके बाद 26 जनवरी 1950 को भारतीय संविधान लागू हुआ। भारतीय संविधान न केवल देश के प्रशासनिक ढांचे को निर्धारित करता है, बल्कि यह लोकतंत्र के सिद्धांतों को भी प्रस्तुत करता है। संविधान लागू होने के साथ भारत एक संप्रभु, लोकतांत्रिक गणराज्य के रूप में स्थापित हुआ। भारतीय लोकतंत्र की स्थापना में संविधान का महत्वपूर्ण योगदान है। संविधान लागू होने के साथ भारतीय लोकतंत्र के बुनियादी सिद्धांतों की शुरुआत हुई।

भारतीय लोकतंत्र के बुनियादी सिद्धांत- लोकतांत्रिक गणराज्यरूभारतीय संविधान के अनुच्छेद 1 के अनुसार भारत एक संप्रभु, धर्मनिरपेक्ष, समाजवादी और गणराज्य देश है। यहां के नागरिकों को अपनी सरकार चुनने का अधिकार है। यह सिद्धांत भारतीय लोकतंत्र का मूल आधार है।

संविधान की सर्वोच्चता- भारतीय संविधान ने सरकार के सभी अंगों को संविधान के अधीन रखा। इससे लोकतांत्रिक प्रक्रिया में पारदर्शिता और वैधता सुनिश्चित हुई।

संविधान और नागरिक अधिकार- संविधान ने भारतीय नागरिकों को मूल अधिकार प्रदान किए, जैसे समानता का अधिकार, स्वतंत्रता का अधिकार, और धार्मिक स्वतंत्रता का अधिकार। इससे नागरिकों को लोकतांत्रिक प्रक्रियाओं में सक्रिय भागीदारी का अवसर मिला।

संस्थाओं का गठन और उनका कार्य- संविधान लागू होने के बाद भारतीय लोकतंत्र के विभिन्न प्रमुख संस्थानों का गठन हुआ, जिनका उद्देश्य लोकतांत्रिक सिद्धांतों को मजबूत करना था

विधायिका- भारतीय संविधान ने एक chambers विधायिका का प्रावधान किया, जिसमें लोकसभा (निचला सदन) और राज्यसभा (ऊपरी सदन) शामिल हैं। यह प्रणाली जन प्रतिनिधित्व को सुनिश्चित करती है।

कार्यपालिका- राष्ट्रपति, प्रधानमंत्री और कैबिनेट मंत्रालयों के माध्यम से कार्यपालिका का संचालन किया जाता है। कार्यपालिका का प्रमुख कार्य कानूनों का पालन और सरकार की नीतियों को लागू करना है।

न्यायपालिका- भारतीय न्यायपालिका का उद्देश्य नागरिकों के अधिकारों की रक्षा करना और सरकार की नीतियों का न्यायिक समीक्षा करना है। सर्वोच्च न्यायालय को संविधान की सर्वोच्चता बनाए रखने का कार्य सौंपा गया है।

चुनाव आयोग- संविधान ने स्वतंत्र और निष्पक्ष चुनाव सुनिश्चित करने के लिए चुनाव आयोग की स्थापना की, जो चुनावों की स्वतंत्रता और निष्पक्षता को सुनिश्चिभारत में चुनाव आयोग की स्वतंत्रता भारतीय लोकतंत्र का एक प्रमुख स्तंभ है, जिसने चुनावी प्रक्रिया को निष्पक्ष और पारदर्शी बनाने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई है।

अत: कहा जा सकता है कि 1950 में भारतीय संविधान का लागू होना भारतीय लोकतंत्र के लिए एक ऐतिहासिक मोड़ था। इसने लोकतांत्रिक सिद्धांतों को सशक्त किया, नागरिकों के अधिकारों की सुरक्षा की और संस्थाओं को संविधान के तहत कार्य करने का मार्गदर्शन दिया। संविधान ने भारतीय लोकतंत्र को स्थिर, सशक्त और समावेशी

बनाने के लिए एक मजबूत आधारप्रदान किया।

भारतीय लोकतांत्रिक प्रणाली की स्थिरता– भारतीय संविधान के लागू होने और तब से आज तक भारतीय राजनीति में कई महत्वपूर्ण बदलाव जैसे चुनावी सुधारों, राजनीतिक दलों की भूमिका में बदलाव, चुनाव आयोग की स्वतंत्रता, न्यायपालिका और विधायिका के संबंधों में विकास, और नागरिक सहभागिता के बढ़ते प्रभाव का महत्वपूर्ण योगदान रहा है जिस से भारतीय लोकतांत्रिक प्रणाली की स्थिरता को मजबूती मिली है।

यूनिवर्सल फ्रैंचाइज- संविधान ने हर भारतीय नागरिक को मतदान का अधिकार दिया, जिससे कोई भी व्यक्ति, चाहे वह पुरुष हो या महिला, किसी भी जाति, धर्म, या समुदाय से हो, स्वतंत्र रूप से सरकार चुन सकता है।

चुनावी सुधारों का विकास- भारत में चुनावी सुधारों की प्रक्रिया स्वतंत्रता के पश्चात निरंतर चलती रही है, और यह लोकतंत्र की सशक्त नींव के रूप में उभरी है।.1951–52 में हुए पहले आम चुनाव के बाद से भारतीय चुनावी प्रक्रिया में निरंतर सुधार होते रहे हैं। 1952 का चुनाव आयोग अधिनियम और उसके बाद 1961 में प्रतिनिधित्व कानून ने भारतीय चुनावों को और अधिक पारदर्शी और व्यवस्थित बनाया। समान्य मतदाता सूची, आधिकारिक मतपत्र प्रणाली, और निर्वाचन क्षेत्रों का परिसीमन चुनावी सुधारों के प्रारंभिक चरण थे।

1989 में राष्ट्रीय चुनाव आयोग की संरचना में बदलाव और 1990 एवं 1996 में चुनावी सुधारों की समिति का गठन, इलेक्ट्रॉनिक वोटिंग मशीनों का उपयोग ने भारतीय चुनावों को और अधिक निष्पक्ष और आधुनिक बनाया । नोटा (NOTA) प्रणाली को भी 2013 में चुनाव आयोग द्वारा लागू किया गया, जिससे मतदाता को विकल्प देने का अवसर मिला। (एम. ए. नाइक,1982)। 2016 में आंतरिक चुनाव सुधार और मतदाता वेरिफिएबल पेपर ऑडिट ट्रेल (VVPAT) का निर्माण चुनावी प्रक्रिया को और अधिक सशक्त बनाता है। चुनाव आयोग ने 2020 में डिजिटल मतदान प्रक्रिया को लागू किया। मनी पावर और वंशवाद की समस्याओं ने चुनावी प्रक्रिया को चुनौती दी, चुनाव आयोग ने इसके समाधान के लिए कई कड़े कदम उठाए हैं (एस.एस. चक्रवर्ती, 2001)

राजनीतिक दलों की भूमिका में बदलाव- भारत में राजनीतिक दलों का लोकतांत्रिक प्रक्रिया में केंद्रीय स्थान है। उनकी भूमिका चुनावी राजनीति, विचारधारा, और सरकार की स्थिरता में महत्वपूर्ण रही है। नेहरू–गांधी परिवार द्वारा कांग्रेस पार्टी का प्रमुख प्रभाव 1950–80 के दशक तक था, जिसके कारण भारतीय राजनीति में एक पार्टी के वर्चस्व की स्थिति बनी। 1967 के बाद, क्षेत्रीय दलों का उभार हुआ, और भारतीय राजनीति में मल्टीपार्टी सिस्टम की स्थापना हुई। 1977 में जनता पार्टी की जीत ने भारतीय राजनीति में गठबंधन सरकारों की परंपरा को जन्म दिया। वर्तमान में भा.ज.पा और कांग्रेस के बीच की प्रतिस्पर्धा, साथ हीराज्य आधारित क्षेत्रीय दलोंकी बढ़ती शक्ति ने राजनीतिक दलों की भूमिका को और अधिक विस्तारित किया है। राजनीतिक दलों में लोकतांत्रिक प्रक्रियाओं का पालन, जैसे उम्मीदवारों का चयन और नेतृत्व में पारदर्शिता, की आवश्यकता बढ़ी है।

नागरिक सहभागिता का बढ़ता प्रभाव- स्वतंत्रता के बाद से नागरिकों का राजनीतिक जीवन में भागीदारी का स्तर बढ़ा है, और अब यह लोकतंत्र का एक महत्वपूर्ण हिस्सा बन

चुका है।वोटिंगकाअधिकारऔरजागरूकतासभी वयस्क नागरिकों को वोटिंग का अधिकार मिलने से नागरिक सहभागिता में वृद्धि हुई। मीडिया, समाजिक नेटवर्किंग साइट्स और जन जागरूकता के कारण चुनावी प्रक्रिया में नागरिकों की भागीदारी में महत्वपूर्ण वृद्धि देखी गई है। आंदोलनों और विरोध प्रदर्शन जैसे जन लोकपाल आंदोलन और अन्ना हजारे का आंदोलन जैसे सामाजिक आंदोलनों ने लोकतांत्रिक प्रक्रियाओं में नागरिकों की सक्रिय भागीदारी को बढ़ाया। नागरिकों के द्वारा सार्वजनिक मुद्दों पर ध्यान केंद्रित करने के कारण सरकारों को जनहित में कई निर्णय लेने के लिए प्रेरित किया गया है।

न्यायपालिका और कार्यपालिका के बीच संतुलन- संविधान ने न्यायपालिका और कार्यपालिका के बीच संतुलन बनाए रखने की व्यवस्था की, जिससे लोकतंत्र की मजबूती सुनिश्चित हुई न्यायपालिका का कार्य कार्यपालिका की कार्रवाईयों की निगरानी करना और संविधान का उल्लंघन होने पर उसे चुनौती देना था।सुप्रीम कोर्ट को संविधान की सर्वोच्चता बनाए रखने का अधिकार मिला, जिससे लोकतंत्र को संरक्षित किया गया।

विविधता और सहिष्णुता- भारत में विभिन्न भाषाएँ, धर्म, जातियाँ, और सांस्कृतिक समूह मौजूद हैं। बावजूद इसके, भारतीय लोकतंत्र में इन विविधताओं को एक साथ समाहित करने की क्षमता है। भारतीय संविधान में समानता, न्याय, और बंधुत्व के सिद्धांतों को स्थान दिया गया है, जो भारतीय लोकतंत्र की स्थिरता को सुनिश्चित करते हैं। संविधान में निहित सामाजिक और राजनीतिक अधिकारों ने समाज के विभिन्न वर्गों को समाहित किया है, जिससे भारतीय लोकतंत्र में समावेशिता और स्थिरता बनी रही है।

निः संदेह भारत में चुनावी सुधारों, राजनीतिक दलों की भूमिका, चुनाव आयोग की स्वतंत्रता, न्यायपालिका और विधायिका के संबंध, और नागरिक सहभागिता के विकास ने भारतीय लोकतंत्र को और अधिक मजबूत और निष्पक्ष बनाया है। भारतीय लोकतांत्रिक प्रणाली की स्थिरता का आधार इसकी संवैधानिक संरचना, स्वतंत्र चुनाव प्रक्रिया, सक्रिय न्यायपालिका, और नागरिक सहभागिता है। सतत सुधार, पारदर्शिता, और जवाब देही से लोकतंत्र को मजबूती मिली है जिससे शासन प्रणाली अधिक समावेशी और प्रभावी हुआ है।

भारतीय लोकतंत्र की चुनौतियाँ

(क) राजनीतिक अस्थिरता और गठबंधन- राजनीति में गठबंधन सरकारों का दौर आया है, जिसमें छोटे क्षेत्रीय दलों का प्रभाव बढ़ा है। यह कभी-कभी सरकार की स्थिरता को प्रभावित करता है। राजनीतिक अस्थिरता और नेता विरोधी राजनीति के कारण कई बार संवैधानिक तंत्र और कार्यपालिका में परेशानी उत्पन्न होती है। विधानसभा चुनावों में जातिवाद और क्षेत्रवाद की भूमिका बढ़ी है, जिससे चुनावी राजनीति में अस्थिरता उत्पन्न होती है।

(ख) भ्रष्टाचार और अपराधीकरण- भारतीय लोकतंत्र में भ्रष्टाचार और अपराधीकरण एक प्रमुख चुनौती है। कई बार नेताओं और विधायकों पर आपराधिक आरोप लगे हैं, जो लोकतांत्रिक प्रक्रिया पर नकारात्मक प्रभाव डालते हैं।राजनीतिक दलों के भीतर

पारदर्शिता का अभाव और चुनावों में धनबल का प्रभाव लोकतंत्र की गुणवत्ता को प्रभावित करता है।विधायिका और कार्यपालिका में भ्रष्टाचार की समस्या लोकतंत्र की स्थिरता को चुनौती देती है।

(ग) सामाजिक विषमताएँ और असमानता- जातिवाद, धार्मिक असहमति, और आर्थिक असमानता भारतीय लोकतंत्र के सामने एक गंभीर चुनौती हैं। इन सामाजिक विषमताओं का राजनीतिकरण किया जाता है, जिससे लोकतांत्रिक संस्थाओं में टकराव उत्पन्न हो सकता है। आर्थिक असमानता और गरीबी के मुद्दे लोकतांत्रिक प्रक्रिया में कमजोर वर्गों के प्रतिनिधित्व को प्रभावित करते हैं।

(घ) धर्म निरपेक्षता और सांप्रदायिकता- भारत में धर्म निरपेक्षता के सिद्धांत के बावजूद, कई बार सांप्रदायिक तनाव और धार्मिक राजनीति ने लोकतांत्रिक प्रणाली को चुनौती दी है। धार्मिक अल्पसंख्यकों और मूल निवासियों के अधिकारों को लेकर कई बार राजनीतिक विवाद उत्पन्न हुए हैं, जो भारतीय लोकतंत्र की स्थिरता को खतरे में डाल सकते हैं।

(च) न्यायपालिका की स्वतंत्रता और कार्यपालिका का दबाव- न्यायपालिका का स्वतंत्रता और निष्पक्षता भारतीय लोकतंत्र की स्थिरता का प्रमुख आधार है। हालांकि, कई बार न्यायपालिका और कार्यपालिका के बीच विवाद उत्पन्न हुए हैं, जो लोकतांत्रिक प्रणाली में संस्थागत टकराव का कारण बनते हैं। न्यायिक सक्रियता और विधायिका के दखल ने एक शक्ति संतुलन की स्थिति को चुनौती दी है।

इस अध्ययन से यह स्पष्ट होता है कि भारत में लोकतांत्रिक प्रक्रिया का विकास एक निरंतर चलने वाली प्रक्रिया रही है, जिसे अनेक ऐतिहासिक घटनाओं, सामाजिक आंदोलनों और संविधानिक सुधारों ने आकार दिया है। भारतीय लोकतंत्र की नींव प्राचीन काल के गणराज्यों, वैदिक काल, और मौर्य तथा गुप्त साम्राज्य की प्रशासनिक प्रणालियों में भी देखी जा सकती है, जो समाज के विविधतापूर्ण और समावेशी दृष्टिकोण को प्रस्तुत करते हैं।

औपनिवेशिक काल में ब्रिटिश शासन के दौरान किए गए संवैधानिक सुधारों, 1857 के विद्रोह, 1935 के भारत सरकार अधिनियम और स्वतंत्रता संग्राम के दौरान लोकतांत्रिक विचारधारा के विकास ने भारतीय समाज में लोकतांत्रिक मूल्य स्थापित किए। स्वतंत्रता प्राप्ति के बाद, भारतीय संविधान की स्थापना ने लोकतंत्र को एक मजबूत और स्थिर रूप में स्थापित किया।हालांकि, भारतीय लोकतंत्र को चुनावी सुधारों, राजनीतिक दलों की भूमिका, चुनाव आयोग की स्वतंत्रता, और नागरिकों की बढ़ती भागीदारी के संदर्भ में कई चुनौतियों का सामना करना पड़ा है। इन चुनौतियों का निराकरण करने के लिए निरंतर सुधारों की आवश्यकता है। इस प्रकार, भारतीय लोकतंत्र की सफलता इसके निरंतर सुधार, समावेशिता, और विविधता को सम्मान देने में है। इस अध्ययन ने यह भी संकेत दिया है कि भारतीय लोकतांत्रिक प्रणाली अपनी चुनौतियों के बावजूद समृद्ध और मजबूत हो रही है, जिससे भविष्य में समाज में और अधिक समानता और न्याय की संभावना बढ़ेगी।

संदर्भ ग्रन्थ सूची-

1. Majumdar, R.C. Ancient India. Bharatiya Vidya Bhavan, 1954.
2. Kosambi, D.D. The Culture and Civilization of Ancient India. Vikas Publishing House,1963.
3. Nikaya (Vol. I). Translated by T.W. Rhys Davids, Pali Text Society, 1910.
4. Dutt, R. C. The Economic History of India. Kegan Paul, 1902.
5. Thapar, Romila. A History of India, Vol. 1. Penguin Books, 1990.
6. Kangale, R. P. Kautilya's Arthashastra. Motilal Banarsidass, 1965.
7. Raychaudhuri,H.C.Political History of Ancient India.Oxford University Press,1923
8. Jha,D.N.Ancient India:A Historical Outline.MunshiramManoharlal Publishers2004.
9. Shastri, K.A. Neelkanth. History of South India. Oxford University Press, 2001.
10. Majumdar, R.C. Ancient India. Bharatiya Vidya Bhavan, 1954.
11. Dodwell, H. H. The Cambridge History of India, Vol. 6: The Indian Empire 1858-1918. Cambridge University Press, 1932.
12. Pandey, B. N. The Break-up of British India. Macmillan, 1969.
13. Hardy, Peter.The Muslims of British India. Cambridge University Press, 1972
14. Chandra, Bipan. India's Struggle for Independence, 1857-1947.Penguin,1988.
15. Austin, Granville. The Indian Constitution: Cornerstone of a Nation. Oxford University Press, 1966.
16. Guha, Ramachandra. India After Gandhi: The History of the World's Largest Democracy. HarperCollins, 2007
17. Naik, M. A. A History of Indian English Literature. Sahitya Akademi, 1982.

UGC Journal No. (Old) 2138
Peer-Reviewed Research Journal
Impact Factor 6.375, ISSN 0975-4083
Vol.- 28, Hindi Edition, Year-14, March 2025

मानव जीवन मे शिक्षा व संस्कार का सामंजस्य

• मधुबाला शर्मा
•• सुकन्या तिवारी

सारांश- मानव जीवन में शिक्षा और संस्कार दो पहिये है। ये व्यक्ति को एक सफल संतुलित और समाज का उत्तरदायी सदस्य बनाने में सहायक होते है। शिक्षा से जीवन की उन्नति होती है और संस्कार से उसकी सुंदरता। दोनो के बिना जीवन अधूरा है।इन दोनों का समन्वय ही मनुष्य को एक बेहतर इंसान बनाता है। शिक्षा केवल ज्ञान का माध्यम नही,बल्कि जीवन को सही दिशा देने वाला मार्गदर्शक है,वही संस्कार किसी भी व्यक्ति के व्यवहार, आचरण और मूल्यों को निर्धारित करने वाला तत्व है। प्रस्तुत शोध पेपर मानव जीवन मे शिक्षा के संतुलन पर केंद्रित है तथा इस बात का विश्लेषण करता है कि कैसे शिक्षा और संस्कार के मेल से एक सशक्त व्यक्ति और समाज का निर्माण हो सकता है।

मुख्य शब्द- शिक्षा,संस्कार,मानव जीवन,संतुलन

महात्मा गांधी- "शिक्षा का उद्देश्य चरित्र निर्माण और समाज की सेवा के लिए मनुष्य को तैयार करना है।"

स्वामी विवेकानंद- "शिक्षा मनुष्य में पहले से मौजूद पूर्णता की अभिव्यक्ति है।"

मानव जीवन को सफल, सार्थक और सामाजिक रूप से उपयोगी बनाने में शिक्षा और संस्कार दोनों की महत्त्वपूर्ण भूमिका होती है। ये दोनों एक दूसरे के पूरक हैं। जहाँ शिक्षा व्यक्ति को ज्ञान, विवेक और तर्क प्रदान करती है, वहीं संस्कार उसे नैतिक मूल्यों, सद्गुणों और मानवता से जोड़ते हैं। शिक्षा केवल पुस्तकीय ज्ञान नहीं है, बल्कि यह जीवन जीने की कला सिखाती है। यह व्यक्ति को सोचने, समझने और निर्णय लेने की क्षमता प्रदान करती है। आज के प्रतिस्पर्धात्मक युग में शिक्षा ही वह माध्यम है जिससे व्यक्ति आत्मनिर्भर बन सकता है और समाज में अपना योगदान दे सकता है। संस्कार वे नैतिक मूल्य हैं जो व्यक्ति के व्यवहार, आचरण और सोच को आकार देते हैं। यह पारिवारिक, सामाजिक और सांस्कृतिक वातावरण से प्राप्त होते हैं। जैसे– सत्य बोलना, बड़ों का आदर करना, करुणा, सहयोग, सहनशीलता आदि। ये गुण व्यक्ति को मानवीय

• विभागाध्यक्ष, संगीत विभाग, एन.एम.एस.एन.दास कॉलेज,बदायूँ, रुहेलखंड यूनिवर्सिटी, बरेली
•• शोधार्थी ,संगीत विभाग, रूहेलखंड यूनिवर्सिटी बरेली

बनाते हैं और समाज में सद्भाव बनाए रखते हैं। यदि शिक्षा बिना संस्कार के हो, तो वह केवल सूचनाओं का भंडार बन जाती है, जो अहंकार, स्वार्थ और अव्यवस्था को जन्म दे सकती है। वहीं, यदि संस्कार हों पर शिक्षा न हो, तो व्यक्ति के पास जीवन को प्रभावशाली ढंग से जीने का कौशल नहीं होगा। इसीलिए शिक्षा और संस्कार दोनों का संतुलन अत्यंत आवश्यक है। संस्कारों की नींव परिवार में रखी जाती है, जबकि शिक्षा का विस्तार विद्यालयों और विश्वविद्यालयों में होता है। माता-पिता, शिक्षक और समाज- तीनों की यह सामूहिक जिम्मेदारी है कि वे बच्चों को न केवल शिक्षित करें, बल्कि उन्हें अच्छे संस्कार भी दें। शिक्षा और संस्कार मिलकर व्यक्ति को सम्पूर्ण बनाते हैं। जहाँ शिक्षा से ज्ञान मिलता है, वहीं संस्कार उस ज्ञान का सदुपयोग करना सिखाते हैं। एक आदर्श समाज की रचना तभी संभव है जब इसके नागरिक शिक्षित होने के साथ-साथ सुसंस्कृत भी हों। अत: हमें ऐसे शैक्षणिक वातावरण की आवश्यकता है जो बच्चों को केवल ज्ञान न दे, बल्कि अच्छे इंसान भी बनाए। शिक्षा और संस्कार दोनों की मानव जीवन में अत्यंत महत्वपूर्ण भूमिका है। शिक्षा जीवन की मार्गदर्शक शक्ति है जो व्यक्ति को न केवल ज्ञान प्रदान करती है बल्कि उसे सामाजिक, आर्थिक और बौद्धिक रूप से सक्षम बनाती है।

शिक्षा शब्द संस्कृत भाषा की शिक्ष धातु में 'अ' लगने से बनता है। जिसका अर्थ व्यक्ति को सभ्य, सुसंस्कृत और योग्य नागरिक बनाना है। शिक्षा न केवल पढ़ाई लिखाई तक सीमित है, बल्कि यह व्यक्ति के मानसिक बौद्धिक और सामाजिक विकास की प्रक्रिया है।

शिक्षा

औपचारिक शिक्षा	अनौपचारिक शिक्षा	गैर-औपचारिक शिक्षा
स्कूल, कॉलेज	परिवार	वयस्क शिक्षा कार्यक्रम
विश्वविद्यालय	समाज	

शिक्षा मनुष्य को अज्ञानता के अंधकार से बाहर निकालकर ज्ञान के प्रकाश में ले जाती है। यह केवल स्कूल और विश्वविद्यालय में प्राप्त होने वाली डिग्री तक सीमित नहीं है, बल्कि यह जीवन के हर मोड़ पर सीखने की प्रक्रिया है। शिक्षा हमें तर्कशील बनाती है, विचारशील दृष्टिकोण प्रदान करती है और समाज में सकारात्मक योगदान देने योग्य बनाती है। आज के युग में तकनीक के विकास के साथ शिक्षा का स्वरूप भी बदल रहा है। अ, नलाइन शिक्षा, स्मार्ट क्लासरूम और डिजिटल लर्निंग ने ज्ञान अर्जन को सरल बना दिया है। लेकिन केवल सैद्धांतिक ज्ञान पर्याप्त नहीं है; व्यावहारिक शिक्षा भी उतनी ही आवश्यक है।

संस्कार शब्द की उत्पत्ति कृ धातु में सम उपसर्ग से होती है। इसका अर्थ है- शुद्धिकरण 'ऐसा आचरण व्यवहार और नैतिक गुंजू व्यक्ति के चरित्र निर्माण और जीवन को आदर्श बनाने में सहायक होते हैं।'

"संस्कारो नाम स भर्वात यस्मि-जाते पदार्थों भवति योग्य: कस्यचिदर्थस्य"

अर्थात संस्कार वह है जिसके होने से कोई पदार्थ या व्यक्ति किसी कार्य के लिए योग्य हो जाता है। आचार्य मनु का कथन- शारीरिक संस्कार वैदिक कर्मों के साथ करने चाहिए जो इहलोग और परलोक दोनों को पवित्र करते हैं।

वर्तमान समय में जब समाज तीव्र गति से प्रगति कर रहा है शिक्षा की आवश्यकता हर क्षेत्र में महसूस की जाती है परंतु केवल शिक्षा ही पर्याप्त नहीं है। यदि व्यक्ति में नैतिकता सहानुभूति और सामाजिक मूल्यों की कमी होगी तो वह समाज के लिए उपयोगी नागरिक नहीं बन सकेगा। इसके लिए संस्कारों का भी उतना ही महत्व है। क्योंकि शिक्षा व संस्कार का प्रथम सोपान घर से आरंभ होता है अत: माता-पिता नैतिक शिक्षा को स्कूल की अपेक्षा अधिक सजगता पूर्ण संपन्न कर सकते हैं शिक्षा व संस्कार दोनों ही मानव जीवन के आधार हैं शिक्षा बुद्धि को प्रखर करती है और संस्कार हृदय को संवेदनशील बनाते हैं।

विद्या ददाति विनयं, विनयाद् याति पात्रताम।
पात्रत्वाद् धनमाप्नोति, धनाद्धर्मं तत: सुखम ।।

इस श्लोक के अनुसार शिक्षित शिक्षा विनम्रता लाती है और पात्रता प्रदान करती है शिक्षित व्यक्ति आत्मनिर्भर बनता है और समाज को बेहतर बनाने में योगदान करता है शिक्षा से आत्मज्ञान तहसील का और बौद्धिक विकास होता है।

माता शत्रु: पिता वैरी येन बालो न पाठित:।
न शोभते सभामध्ये हंसमध्ये बको यथा ।।

बिना शिक्षा और संस्कार के व्यक्ति समाज में सम्मानजनक स्थान प्राप्त नहीं कर सकता है। वैज्ञानिकों से लेकर आध्यात्मिक वेतन प्रत्येक के लिए मनुष्य का जीवन उद्देश्य एक गंभीर और चिंतन का विषय है मानव अन्य प्राणियों से वरिष्ठ भी है उसकी तुलना के में असाधारण योग्यताओं एवं प्रतिभाओं का भी धनी है। यही कारण है जिसके कारण मानवीय डायटों में उत्कृष्ट शालीनता सभ्यता एवं सुसान संस्कृत नैसर्गिक रूप से समाविष्ट हो गए हैं। यदि मनुष्य शिक्षा के माध्यम से सुविधा संपन्न हो गया है परंतु संस्कारों की दृष्टि से शून्य बना रहा है और उसके चिंतन में निकृष्टता बसती रही तो ऐसा जीवन कलंक के समान ही रह जाता है। शारीरिक यात्रा की दृष्टि से देखें तो मनुष्य की जीवन यात्रा भी अन्य प्राणियों की तरह ही होती है पैदा होते ही किसी में सभ्यता शिष्ट आ जाती है तो ऐसा कहा जाता है की मात्रा पेट भर लेने की एवं प्रजनन कर लेने की क्षमता ही नैसर्गिक रूप से प्राप्त हो पाती है ऐसे मनुष्य को अनपढ़ ही कहा जाता है उसके अंदर सुगरात का समावेश तब होता है जब उसका चिंतन व्यवहार आचरण मर्यादा इत्यादि मानव चित गरिमा के अनुरूप कार्य करते दिखाई पड़ते हैं यह शिक्षा व संस्कार दोनों के समावेशन से ही संभव है। इसी प्रक्रिया को भारतीय विचारों ने संस्कार परंपरा का नाम दिया है कहा भी जाता है कि-

शिक्षा बिन पंख हैं,जैसे पक्षी शून्य।
संस्कार हो साथ में, तब जीते जीवन पूर।

एक समृद्ध समाज के निर्माण के लिए शिक्षा और संस्कार का संतुलन आवश्यक है। यदि शिक्षा बुद्धि को तीव्र बनाती है, तो संस्कार आत्मा को शुद्ध करते हैं। भारतीय संस्कृति में गुरु–शिष्य परंपरा इसी संतुलन का उदाहरण है, जहाँ शिक्षा के साथ नैतिक मूल्यों को भी सिखाया जाता था।

आज के समय में हमें ऐसी शिक्षा प्रणाली की आवश्यकता है, जो केवल तकनीकी और व्यावसायिक ज्ञान न दे, बल्कि नैतिक शिक्षा और जीवन मूल्यों को भी महत्व दे। माता–पिता और शिक्षकों को बच्चों में अच्छे संस्कार विकसित करने के लिए स्वयं उदाहरण बनना होगा।

निष्कर्ष- शिक्षा और संस्कार मानव जीवन के दो ऐसे आधार स्तंभ हैं, जो व्यक्ति को न केवल सफल बल्कि महान भी बनाते हैं। यदि शिक्षा आत्मनिर्भरता की कुंजी है, तो संस्कार चरित्र निर्माण की नींव। दोनों के सही समन्वय से ही एक बेहतर समाज और उज्ज्वल भविष्य की रचना संभव है।

संदर्भ सूची-

1. डॉ. जोहरी सीमा, संगीतिक निबंध माला, पीयूष प्रकाशन दिल्ली
2. डॉ. गर्ग लक्ष्मी नारायण, संगीत निबंध सागर, संगीत कार्यालय हाथरस
3. प्रोफेसर श्रीवास्तव हरिश्चंद्र, संगीत निबंध संग्रह, संगीत सदन प्रकाशन इलाहाबाद
4. 'सत्यार्थ प्रकाश', अगस्त(2020), महर्षि दयानंद सरस्वती, 101 वॉ, संस्करण
5. प्रो. शर्मा मधुबाला (1995), हरियाणा प्रदेश के सांसारिक लोकगीतों का शास्त्रीय अध्ययन, मेरठ
6. डॉ. एस.एस. चौहान, शिक्षा मनोविज्ञान

UGC Journal No. (Old) 2138
Peer-Reviewed Research Journal
Impact Factor 6.375, ISSN 0975-4083
Vol.- 28, Hindi Edition, Year-14, March 2025

श्रीमद्भगवद्गीता के विशेष संदर्भ में निष्काम कर्म का दार्शनिक विश्लेषण

• विवेकानन्द मिश्र

सारांश-श्रीमद्भगवद्गीता युद्ध भूमि में श्रीकृष्ण एवं अर्जुन के बीच हुए संवाद से उत्पन्न एक आध्यात्मिक विचार धारा है, जो अन्ततः मनुष्य मात्र के लिए शुभ संदेश है, मानसिक शांति का स्रोत है और विश्व कल्याण का मार्ग अनायास ही प्रशस्त करता है। शंकराचार्य ने श्रीमद्भगवद्गीता का भाष्य लिखकर यह सिद्ध करने का प्रयास किया है कि मोक्ष के लिए ज्ञान मार्ग ही श्रेयस्कर है। रामानुज द्वारा प्रणित भाष्य में प्रतिपादित किया गया है कि मनुष्य भक्ति मार्ग के द्वारा ही मोक्ष प्राप्त कर सकता है। बीसवीं शताब्दी के प्रारंभ में बाल गंगाधर तिलक ने श्रीमद्भगवद्गीता पर ''गीता रहस्य'' का प्रणयन किया जिसे वर्तमान युग में एक क्रांति का सूचक माना जाता है। बालगंगाधर तिलक ने श्रीमद्भगवद्गीता के दूसरे अध्याय के 47 वें श्लोक को चतुसुत्री की संज्ञा दी और इसके आधार पर यह सिद्ध करने का प्रयास किया है कि कर्म ही मनुष्य के लिए मोक्ष का मार्ग हो सकता है।

मुख्य शब्द- निष्काम कर्म, आध्यात्मिक, किंकर्त्तव्यविमूढ़, जीवन मुक्त, विदेह मुक्त, स्थितप्रज्ञ

मनुष्य गृहस्थ जीवन में अपने सांसारिक दायित्वों का पालन करते हुए कर्मयोग के आधार पर मोक्ष का मार्ग प्रशस्त कर सकता है। इस संदर्भ में श्रीमद्भगवद्गीता का यह श्लोक उल्लेखनीय है:-

कर्मण्येवाधिकारस्ते मा फलेषु कदाचन।
मा कर्मफलहेतुर्भूर्मा ते संगोऽस्त्वकर्मणि।।1

01. कर्मण्येवाधिकारस्ते
अर्थात् मनुष्य का कर्म पर ही अधिकार है।

02. मा फलेषु कदाचन
अर्थात् मनुष्य का अधिकार फल पर कदापि नही है।

03. मा कर्मफल हेतुर्भू:

अर्थात् मनुष्य में अकर्तृत्व भाव होना चाहिए। यदि वह कोई अच्छा कार्य करता है, तो उसका कारण खुद को नही समझना चाहिए।

• अतिथि सहायक प्राध्यापक,दर्शनशास्त्र विभाग, बी.एम. कॉलेज, रहिका, मधुबनी

04. मा ते संगोऽस्त्वकर्मणि

अर्थात् मनुष्य को कर्म न करने के प्रति आसक्ति नहीं होनी चाहिए। उसे सक्रिय रहकर मनोयोगपूर्वक कर्म करते रहना चाहिए।

इस चतु: सूत्र के आधार पर निष्काम कर्म का प्रतिपादन किया जाता है। इस शोध पत्र मे निष्काम कर्म के विविध आयामों के संदर्भ में गंभीर विवेचना प्रस्तुत करने की योजना है।

श्रीमद्भगवद् गीता में कर्मयोग के माध्यम से तथा इसके मर्म की व्याख्या द्वारा एक विषादग्रस्त अर्जुन को जो बंधु-बांधव के मोह के कारण युद्ध भूमि में किंकर्तव्यविमूढ़ होकर रथ पर शिथिल शरीर के साथ बैठ गये थे। ऐसी स्थिति में श्रीकृष्ण अर्जुन से कहते हैं-

क्षुद्रं हृदयदौर्बल्यं त्यक्त्वोत्तिष्ठ परन्तप।

अर्थात हृदय की शुद्र (तुच्छ) दुर्बलता को त्यागकर कर्मरत हो जाओ। वस्तुत: अर्जुन के माध्यम से भगवान कृष्ण का यह महत्वपूर्ण संदेश है। मनुष्य का अधिकार केवल कर्म करने में है, क्योंकि फलाफल पर उसका अधिकार नही है। मनुष्य कर्मो के माध्यम से लक्ष्य का संधान करता है। लक्ष्य की संधान के लिए श्रीमद्भगवद् गीता में शनै: शनै: विभिन्न सोपानों का उल्लेख किया गया है। परन्तु किसी सोपान पर आरूढ़ होने के लिए कर्म का ही प्रयोजन होता है। श्रीकृष्ण कहते हैं कर्म की एकाग्रता में ही कर्म की कुशलता है। अब प्रश्न उपस्थित होता है कि मनुष्य का परम लक्ष्य क्या है? भारतीय दर्शन के सम्प्रदायों ने मोक्ष को जीवन का परम लक्ष्य माना है। चार्वाक दशेन एक अपवाद है। चार्वाक कहता है-मरणं एव अपवर्ग: अर्थात मृत्यु ही मोक्ष है। चार्वाक को छोड़कर प्राय: सभी सम्प्रदायों ने मोक्ष को जीवन के परम लक्ष्य के रूप में स्वीकार किया है, क्योंकि मोक्ष प्राप्त हो जाने के पश्चात् ही मनुष्य जन्म और मृत्यु के चक्र से (Cycle of Birth and death) मुक्ति संभव है। साधारणत: मोक्ष के दो प्रकार माने जाते है-

- जीवन मुक्त
- और विदेह मुक्त।

जीवन मुक्त का तात्पर्य होता है कि मनुष्य साधना के द्वारा वर्तमान जीवन में सांसारिक कार्यों का निष्पादन करते हुए जीवन मुक्त हो जाता है। पूर्व जन्म कृत कर्म अर्थात् प्रारब्ध और संचित कर्म के फलों का परिणाम नि:शेष (निशेष) हो जाता है, तब मनुष्य मृत्यु के माध्यम से विदेह मुक्ति होता है और पुन: ऐसे व्यक्ति का जन्म नही होता है। अर्थात् वह जीव जन्म और मरण के चक्र से मुक्त हो जाता है। श्रीमद्भगवद् गीता में जीवन मुक्ति की अवधारणा को स्थितप्रज्ञ से अभिहित किया जाता है।

स्थितप्रज्ञ की अवस्था को प्राप्त करने के लिए श्रीमद्भगवद् गीता में तीन मार्गो का उल्लेख किया गया है, जिसका विवरण पहले भी दिया जा चुका है। ये तीन मार्ग है- ज्ञान मार्ग, कर्म मार्ग और भक्ति मार्ग। साधारणत: जिस व्यक्ति में सत्व गुण की प्रधानता होती है, उसके लिए ज्ञान मार्ग का विधान किया गया है। जो व्यक्ति रजोगुणी होता है, उसके लिए कर्म मार्ग को श्रेयस्कर माना जाता है तथा तमगुण से युक्त मनुष्य के लिए भक्ति मार्ग को उपयुक्त माना जाता है। इस शोध पत्र में कर्म मार्ग अर्थात् कर्मयोग की विवेचना

अपेक्षित है। निष्काम कर्म के द्वारा कर्मयोग की साधना की जाती है, तथा निष्काम कर्म के माध्यम से ही मनुष्य स्थितप्रज्ञ की अवस्था को प्राप्त करने में सक्षम हो सकता है। विषादग्रस्त होकर अर्जुन कातरभाव से श्रीकृष्ण से कहते है–

कार्पण्यदोषोपहतस्वभावः
पृच्छामि त्वां धर्मसम्मूढ़चेताः।
यच्छ्रेयः स्यान्निश्चितं ब्रूहि तन्मे
शिष्यस्तेऽहं शाधि मां त्वां प्रपन्नम्।।[2]

अर्थात अर्जुन श्रीकृष्ण से कहता है कि उनके जैसे कायरता गुणयुक्त कर्तव्य के विषय में मोहितचित्त व्यक्ति के लिए श्रेयस्कर मार्ग की शिक्षा दिया जाय। क्योंकि वह शिष्य है। गीता के एक श्लोकार्थ का उल्लेख पूर्व में किया जा चुका है, वह श्लोक इस प्रकार है–

क्लैब्यं मा स्म गमः पार्थ नैतत्त्वय्युपपद्यते।
क्षुद्रं हृदयदौर्बल्यं त्यक्त्वोत्तिष्ठ परन्तप।।[3]

उपर्युक्त श्लोक का अंतिम भाग में निष्काम कर्म की साधना को प्रारंभ करने से पूर्व प्रशिक्षण का संकेत अंतर्निहित है। इसमें तीन महत्वपूर्ण शब्द है–त्यक्त्वा, उत्तिष्ठ तथा परन्तप। सर्वप्रथम कहा गया है कि निष्काम कर्म को साधना से पूर्व मनुष्य को हृदय की दुर्बलताओं का परित्याग करना चाहिए। मोह, काम, क्रोध, लोभ इत्यादि को हृदय की दुर्बलताओं में गणना की जाती है। हृदय की दुर्बलताओं के कारण ही मनुष्य सांसारिक भोग विलास में लिप्त हो जाता है तथा श्रेयस्कर साधना से वंचित रहता है। अतः यह निष्काम कर्म का प्रथम सोपान माना जाता है। पुनः कहा गया है–उत्तिष्ठ। उत्तिष्ठ का साधारण अर्थ होता है, उठकर खड़ा होना। परंतु यहाँ उत्तिष्ठ विशेषार्थ है कि निष्काम कर्म के लिए मनुष्य को संकल्पित होना पड़ता है। किसी अच्छे कार्य के लिए प्रारंभ में संकल्प की आवश्यकता होती है। संकल्प से स्वभाव में दृढ़ता उत्पन्न होता है, तीसरा महत्वपूर्ण शब्द है–परन्तप। वस्तुतः परन्तप एक संबोधन है जो अर्जुन को संबोधित किया गया है। इसका तात्पर्य यह है कि अर्जुन परम तपस्वी है, क्योंकि वे शास्त्र और शस्त्र दोनों में ही निष्नात है। परन्तप की संज्ञा वास्तव में उसे दी जाती है, जिसने योग के माध्यम से मन पर विजय प्राप्त कर लिया है तथा चित्त एकाग्र है। अतएव निष्काम कर्म प्रारंभ करने के लिए भगवान श्रीकृष्ण ने अर्जुन के माध्यम से यह संदेश देते है, कि मनुष्य को यौगिक साधना के माध्यम से इन्द्रिय निग्रह का प्रयास करना चाहिए तथा समदमादि साधनों से पूर्ण होना चाहिए। वस्तुतः कर्मयोगी के लिए यह पूर्व प्रशिक्षण का मंत्र है, जो अभ्यास के माध्यम से प्राप्त किया जा सकता है। सिद्धान्त के रूप में मनुष्य निष्काम कर्म की अवधारणा सहज ही समझने में समर्थ हो सकता है परंतु आचरण के स्तर पर उसे रूपांतरित करना अत्यंत ही दुष्कर माना जाता है। परंतु यदि मनुष्य सत्य संकल्पित है तो इस साधना को अभ्यास के माध्यम से लक्ष्य तक पहुँचाने में समर्थ हो सकता है।

गीता के दूसरे अध्याय के 47 वें श्लोक को निष्काम कर्म का आधार माना जाता है। इस श्लोक का उल्लेख पूर्व में किया जा चुका है। इस श्लोक के पहले भाग 'कर्मण्येवाधिकारस्ते' के संदर्भ में पूर्व में ही कहा जा चुका है कि मनुष्य का केवल कर्म

पर अधिकार है। दूसरे भाग में 'मा फलेषु कदाचन' अर्थात फल पर मनुष्य का अधिकार कदापि नहीं है। मनुष्य के कर्मों के फल का निर्धारण पूर्व जन्म कृत कर्म के आधार पर निर्धारित होता है। इस जन्म में मनुष्य पूर्व जन्मकृत पापों के तथा धर्मों के फलों को भोगने के लिए बाध्य होता है। प्रारब्ध कर्म तथा संचित कर्म साधारणत: वर्तमान जीवन में हस्तक्षेप करता है। परंतु यह भी सत्य है मनुष्य में ईश्वर के प्रति निश्चल भक्ति, यौगिक साधना, शास्त्रों का अध्ययन तथा उन शास्त्रों के द्वारा स्थापित आचारों के अनुपालन से मनुष्य सहज ही पूर्वकृत कर्मो के फल से शीघ्र ही मुक्त हो जाता है। वास्तव में यह क्षण मनुष्य के लिए लक्ष्य निर्धारण का क्षण माना जाता है। इस जीवन में मनुष्य के सामने दो मार्ग खुले रहते हैं–पहला मार्ग सांसारिक भोग–विलास की ओर मनुष्य को ले जाता है। यह अत्यंत ही आकर्षक होता है। क्षणिक इन्द्रिय सुख प्राप्त होने के पश्चात् कोई भी व्यक्ति दैहिक सुख और सांसारिक भोग–विलास में लिप्त हो जाता है। कहा जाता है कि मनुष्य जितना भोग–विलास करता है उतना ही भोग–विलास के लिए तृष्णा तीव्र हो जाती है। इस संदर्भ में निम्नलिखित श्लोक का उल्लेख किया जाता है–

नजातु काम: कामानामुपभोगेन शाम्यति।
हविषा कृष्णवर्त्मेव भूय एवाभिवर्धते।।[4]

तात्पर्य यह है कि जिस प्रकार प्रज्वलित अग्नि में घी डालते हैं तो अग्नि की ज्वाला तीव्रता के साथ भड़क उठती है, उसी प्रकार काम के उपभोग करने से इच्छा का शमन नहीं होता है, प्रत्युत और भी तीव्र होता रहता है। यह काम के उपभोग के द्वारा प्राप्त सुख का मार्ग है। यह वास्तव में क्षणिक दैहिक सुख का मार्ग है। इसमें सुख और दुख दोनों का ही प्रभाव मिश्रित रहता है। सांसारिक सुख प्राप्त करने की ललक मनुष्य को चैन से बैठने नही देती और वह बेचैन रहता है। इस प्रक्रिया की तार्किक परिणति अशांति, अराजकता तथा स्वभाव की उच्छृंखलता में होती है। यह मार्ग सकाम कर्म का मार्ग है। दूसरे मार्ग को निष्काम कर्म का मार्ग कहा जाता है। इस पथ पर चलने वाले पथिक को आध्यात्मिक यात्री कहा जाता है। इस यात्री की तार्किक परिणति जीवन मुक्ति में होती है। जिसका साधन निष्काम कर्म है।

यह असमंजस की स्थिति है, क्योंकि मनुष्य के सामने दो मार्ग खुले हुए रहते हैं। एक दैहिक भोग–विलास और सांसारिक भोग एश्वर्य का निमंत्रण देता है, जो अत्यंत ही सम्मोहित करता है। मनुष्य दैहिक सुख की ओर अनायास ही खींचा हुआ चला जाता है। दूसरा मार्ग निष्काम कर्म का है, जो मार्ग संयमित जीवन का आग्रही होता है, अपरिग्रह, अस्तेय के गुणों से युक्त होता है तथा साधना के माध्यम से इस आध्यात्मिक यात्रा की पूर्ति होती है। अतएव ऋषिगण इस मार्ग को दुर्गम अथवा कठिन कहते हैं। कठोपनिषद् का निम्नलिखित श्लोक उल्लेखनीय है–

उत्तिष्ठत जाग्रत प्राप्य वरान्निबोधत।
क्षुरस्य धारा निशिता दुरत्यया दुर्गं पथस्तत्कवयो वदन्ति।।[5]

अर्थात् उठो लक्ष्य का संधान करो। परंतु ऋषियों का कहना है कि मार्ग अत्यंत ही दुर्गम है, क्योंकि यह तलवार की धार पर गुजरता है। स्पष्ट है, कि यह मार्ग दुर्गम होते हुए भी मनुष्य के लिए श्रेयस्कर है। क्योंकि इस मार्ग के पथिक जीवन में शांति का अनुभव

करते हैं और आध्यात्मिक आनंद में विचरण करते हैं।

बाल गंगाधर तिलक के चतु: सूत्र की पूर्व भाग का विश्लेषण किया गया है। उत्तरार्द्ध में भी दो सूत्र विद्यमान है। इन दो सूत्रों के द्वारा निष्काम कर्म के साधक को सावधान किया गया है–

मा कर्मफल हेतुर्भूर्माते सड़गोस्वत्कर्मणि।

इस प्रकार निष्काम कर्म में तीसरा सूत्र है–मा कर्मफल हेतुर्भू: अर्थात् निष्काम कर्म के पथिक को कर्मो के फल का हेतु नही होना चाहिए। इसमें अकर्त्तृत्व भाव अंतर्निहित है। यदि मनुष्य कोई अच्छा कार्य करता है तो उसे यह नही समझना चाहिए कि उस कार्य का कर्ता वही मनुष्य है। यदि कोई मनुष्य के द्वारा किसी का उपकार होता है तो उसे यह नहीं समझना चाहिए कि उसका हेतु वह स्वयं है। श्रीमद्भगवद् गीता में कहा गया है–

प्रकृते: क्रियमाणानि गुणै: कर्माणि सर्वश:।
अहंकारविमूढ़ात्मा कर्ताहमिति मन्यते।।[6]

अर्थात् संसार में सभी कार्य प्रकृति अपने तीनों गुणों के माध्यम से संचालित करती रहती है। केवल जो मनुष्य अहंकारी और मूर्ख है वही स्वयं को कर्त्ता मानता है। इस प्रकार सांसारिक कार्यों के निष्पादन करते हुए भी मनुष्य को अकर्त्तृत्व भाव से समन्वित होना चाहिए।

चतुर्थ सूत्र इस प्रकार है– मा ते संगोऽस्त्वकर्मणि अर्थात् मनुष्य का कर्म न करने में आसक्ति नहीं होना चाहिए। यह अंतिम सूत्र अत्यंत ही महत्वपूर्ण है। क्योंकि इसके द्वारा संशय का निवारण होता है। मनुष्य के मन में यह शंका उत्पन्न होती है कि यदि वह कोई कर्म करता है तो उसका फल संचित होता है। अत: निष्काम कर्म के कारण मनुष्य का पूर्वकृत कर्म निशेष हो जाता है, परंतु वह कर्म करता रहता है, तो उसका भी फल संचित होता रहेगा। अर्थात फलाफल के योग के लिए उसे पुन: पुन: जन्म और मृत्यु के चक्र में रहना होगा। मनुष्य इसका समाधान निष्क्रियता में करना चाहता है। अतएव इस सूत्र के द्वारा भगवान श्रीकृष्ण ने स्पष्ट किया है कि मनुष्य निष्काम कर्म के मार्ग पर चलकर जीवन मुक्त अर्थात स्थितप्रज्ञ की अवस्था को प्राप्त करता है तो उसके प्रत्येक कार्य संसार के सभी प्राणियों के कल्याण के लिए किया जाता है और ये कार्य जीवन मुक्त के द्वारा अनायास होते रहते हैं। इस तरह के कर्म के कारण मनुष्य का फल निशेष ही रहता है क्योंकि वह स्वहिताय कोई कार्य नहीं करता है प्रत्युत परहिताय करता है।

निष्कर्ष- मनुष्य को अकर्मणि अर्थात् निष्क्रियता के प्रति उसके मन में आसक्ति कदापि नही होनी चाहिए। वो सामान्य जीवन में जितना कार्य करता है, उससे अधिक सभी प्राणियों के कल्याण के लिए सक्रिय होकर कार्य करता रहता है। निम्नलिखित श्लोक द्रष्टव्य है

लभन्ते ब्रह्मनिर्वाणमृषय: क्षीणकल्मषा:।।
छिन्नद्वैधा यतात्मान: सर्वभूतहिते रता:।।[7]

अर्थात् जिस मनुष्य के सभी पाप नष्ट हो गये हैं तथा जिनके सभी प्रकार के संशय ज्ञान के द्वारा निवृत्त हो गये हैं तथा जो मनुष्य सम्पूर्ण प्राणियों के हित में रत है वे

निश्चल भाव से आत्मा में स्थित है, परम शांति को प्राप्त करते हैं। वस्तुत: यह अवस्था स्थितप्रज्ञ की अवस्था है और इस अवस्था को निष्काम कर्म के माध्यम से मनुष्य प्राप्त कर सकता है। उदाहरण के रूप में गीता के निम्न श्लोक में भगवान श्रीकृष्ण ने जनक आदि का उल्लेख किया है–

कर्मणैव हि संसिद्धिमास्थिता जनकादय:।
लोकसङ्ग्रहमेवापि सम्पश्यन्कर्तुमर्हसि।।[8]

वस्तुत: निष्काम कर्म के माध्यम से मनुष्य आध्यात्मिक आनंद की चरम अवस्था को प्राप्त करता है तथा परम शांति का अनुभव करता है। ऐसे मनुष्य सांसारिक कार्यों का सम्पादन करते हुए संसार के सभी प्राणियों के हित साधन के लिए गतिशील रहता है। यह संयम से प्रारंभ होता है और परमशांति की अवस्था में पहुँचता है। श्रीमद्भगवद्गीता का यह व्यावहारिक संदेश है।

संदर्भ सूची-

1. श्रीमद्भगवद्गीता, 2/47
2. श्रीमद्भगवद्गीता, 2/7
3. श्रीमद्भगवद्गीता, 2/3
4. महाभारत आदि पर्व, 75/50
5. कठोपनिषद्, 3/14
6. श्रीमद्भगवद्गीता, 3/27
7. श्रीमद्भगवद्गीता, 5/25
8. श्रीमद्भगवद्गीता, 3/20

ISSN 0975-4083

9 770975 408002

Registered under M.P. Society Registration Act, 1973
Reg. No. 1802, Year 1997

Published by
Dr. Gayatri Shukla on behalf of
Gayatri Publications
Rewa- 486001(M.P.) and Printed at
Glory Offset, Nagpur